दूरस्थ शिक्षा

स्व.अध्ययन सामग्री

पाठ्यक्रम का नाम – एम.ए. हिन्दी पूर्वार्ध

वर्ष – प्रथम

प्रश्न–पत्र क्रमांक – 4(अ)

प्रश्न–पत्र का शीर्षक – विशेष कवि का अध्ययन (अ) निराला

म.प्र. भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय, भोपाल
राजा भोज मार्ग, कोलार रोड, भोपाल

दूरस्थ शिक्षा

स्व–अनुदेशात्मक सामग्री

पाठ्यक्रम का नाम	–	एम.ए. हिन्दी पूर्वार्ध
वर्ष	–	प्रथम
प्रश्न–पत्र क्रमांक	–	4 (अ)
प्रश्न–पत्र का शीर्षक	–	विशेष कवि का अध्ययन (अ) निराला

वाग्देवीं ता मुपास्महे

म.प्र. भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय, भोपाल

राजा भोज मार्ग, कोलार रोड, भोपाल

पाठ्यक्रम का नाम– एम.ए. हिन्दी पूर्वार्ध

प्रश्न पत्र – चतुर्थ (अ)

दूरस्थ शिक्षा

स्व–अनुदेशात्मक सामग्री

म.प्र. भोज मुक्त विश्वविद्यालय, भोपाल

एम. ए. पूर्वार्द्ध : **हिन्दी**

चतुर्थ प्रश्न–पत्र : **विशेष कवि (निराला) का अध्ययन**

प्रथम खण्ड :

इकाई–1. निराला का व्यक्तित्व विश्लेषण

इकाई–2. निराला का समग्र साहित्य एक परिचय

इकाई–3. निराला की काव्य यात्रा

अ. निराला का प्रबंध काव्य

ब. निराला का गीति काव्य

लेखक

प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित

....

लखनऊ

सम्पादक

प्रो. हरिमोहन बुधौलिया

इकाई–1

निराला का व्यक्तित्व–विश्लेषण

सरंचना –

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 निराला का व्यक्तित्व

1.4 निराला का व्यक्तिव विधायन

1.5 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

1.6 अपनी प्रगति जाँचिए

1.7 नियत कार्य/गतिविधियाँ

1.8 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

1.9 सन्दर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.1. प्रस्तावना

इस अध्याय में आधुनिक हिन्दी काव्य, विशेष रूप से छायावाद के प्रतिनिधि कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' पर विचार विमर्श करना अपेक्षित है। निराला जी ने लगभग पचास वर्षों तक साहित्य की सेवा की। उनकी स्कूली शिक्षा तो बहुत साधारण थी, किन्तु स्वाध्याय द्वारा उन्होंने हिन्दी के अतिरिक्त बँगला, संस्कृत, अंग्रेजी और उर्दू, फारसी का पर्याप्त ज्ञान अर्जित कर लिया था। निरालाजी जन्मजात प्रतिभाशाली थे। उनके पास असाधारण स्मरण–शक्ति थी। वे मौलिक कल्पनाओं के धनी थे। भाषा पर उनका गहन अधिकार था। उन्होंने बड़े आत्म विश्वास के साथ यह घोषणा की थी– "गद्य में, पद्य में समाभ्यस्त" तथा –"एक एक शब्द बधाँ, ध्वनि मय साकार।

निराला जी ने एक खण्ड काव्य "तुलसीदास" की रचना की और आधा दर्जन कविता संकलन एवं गीत संग्रह प्रस्तुत किए। कविता के अतिरिक्त उपन्यास, कहानी, निबंध, आत्मसंस्मरण, रेखाचित्र, जीवनी, बाला साहित्य, अनुवाद, व्याकरण लेखन और संपादन के क्षेत्र में भी उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया।

निराला का व्यक्तित्व आरम्भ से बड़ा विवादास्पद रहा है। वे वेदान्त दर्शन के कवि थे, साथ ही जन जागरण के भी उनके साहित्य में प्रेम–सौन्दर्य, प्रकृति–चित्रण, रहस्य दर्शन अध्यात्म, भक्ति भावना नारी भावना दलित दर्शन आत्मवेदना, आत्मविश्वास, मृत्यु बोध संघर्ष और पलायन के भाव यत्र–तत्र प्रकट हुए हैं।इतना वैविध्य कम ही रचनाकारों में प्राप्त होता है। शिल्प क्षेत्र में भी उन्होंने विभिन्न प्रकार के प्रयोग किए हैं। कहीं सस्कृत गर्भित संस्कृत भाषा, कहीं उर्दू शब्दावली और कहीं जनपदीय लोक शब्दावली। कहीं पारम्परिक छंद, कहीं मुक्त छंद। उनकी रचनाआकं में चरित्रों की नयी–नयी परिकल्पना दिखायी देती हैं। इन सब पर विचार करते हुए यही मानना पड़ता है कि निराला का व्यक्तित्व सर्वथा निराला ही था।

1.2 उद्देश्य

इस अध्याय का उद्देश्य है, निराला के समूचे व्यक्तित्व का विश्लेषण करना।

व्यक्तित्व विश्लेषण को दो भागों में विभाजित किया जा सकता हैं–

1. निराला का प्रामाणिक जीवन वृत्त
2. उनके व्यक्तित्व के विधायक तत्वों का विवेचन।

इस क्रम में यह विचारणीय है कि उनके साहित्य में इतना वैविध्य क्यों और कैसे आया हैं? उनकी पूरी साहित्यिक यात्रा पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है, कि निराला का रचना संसार बड़ा व्यापक था। बंगाल में रहते हुए वे गुरूदेव रवीन्द्र नाथ, शरचन्द्र, बंकिमचंद, गिरिशचन्द घोष विवेका नंद आदि से समय–समय पर प्रभावित हुए। हिन्दी साहित्य का अध्ययन करते हुए उन्होंने महाकवि तुलसीदास से पर्याप्त प्रेरणा प्राप्त की। संस्कृत के महाकवि कालिदास को उन्होंने मनोयोगपूर्वक पढ़ा और अंग्रेजी के कई साहित्यकारों को आत्म सात किया। इस प्रगाढ़ अध्ययन के कारण उनका आत्मविश्वास जागृत हो गया। उन्होंने स्वयं कहा भी हैं–

दिए हैं मैंने जगत को फूल–फल

किया हैं अपनी प्रभा से चकित चल....।

उलट दिया अर्थागम बन कर तूफान।

निराला का यह क्रान्ति कारी व्यक्तित्व बहुत दिनों तक सक्रिय रहा। 1940 के आस–पास उनके लेखन में दो परिवर्तन हुए–

1. भक्ति और आध्यात्म परक गीत संकलनों (अर्चना, आराधना) की रचना।
2. कुकुरमुत्ता और नए पत्ते में आम आदमी की समस्याओं पर जन भाषा में जनजीवन का चित्रण।

तीसरा मोड़ गतिपुंज और सान्ध्य काकली में दिखायी देता हैं, जहाँ वे जीवन के महाभारत में परास्त योद्धा पितामह भीष्म की भाँति अनुभूतियों की शर सैया पर लेटे हुए, मृत्यु की पद–चाप सुन रहे हैं। इन समस्त परिवर्तनों का समाहार करने पर ही निराला के व्यक्तित्व की सही पहचान हो सकती हैं। यही इस अध्याय का मूल उद्देश्य हैं।

1.3 निराला का व्यक्तित्व

निराला जी उच्चकोटि के कवि, कथाकार, निबन्धकार और पत्रकार रहें हैं। उन्होंने छायावाद, स्वछन्दतावाद रहस्यवाद प्रगतिशील चेतना प्रयोगवाद नई कविता नवगीत आदि अनेक प्रवृत्तियों विचारधाराओं और विधाओं के प्रवर्तन में ऐतिहासिक भूमिका का निर्वाह किया हैं। निःसन्देह वे हिन्दी के विरल साहित्यकारों में से हैं। एक शब्द में उन्हें निराला ही कहा जा सकता है।

निराला जी का जीवन वृत्त अभी पूरी तरह से स्थिर नहीं हो पाया है। उन्हें भक्तों ने लीजेण्डरी कैरेक्टर बना दिया हैं। उनकी जीवनी अनेक प्रकार की जनश्रुतियों से ग्रस्त दिखाई देती हैं। निरालाजी स्वयं चूँकि अपने जीवन में बहुत अस्त–व्यस्त या मनमौजी रहे हैं इसलिए किसी साक्ष्य को वे सुरक्षित नहीं रख पाये। उनकी लिखी और प्रकाशित पुस्तकों की प्रामाणिक सूची इसीलिए अभी नहीं बन पायी हैं। उनकी प्रकाशित ग्रंथवलियां बहुत अध् ूरी हैं।

प्राप्त तथ्यों के आधार पर निराला जी का जन्म बंगाल के मेदिनीपुर जिले की एक स्टेट मलिषादल में माघ शुक्ल एकादशी, संवत 1953 तदनुसार 21 फरवरी मंगलवार 1896 ई. को हुआ था। इस तिथि को भ्रमवश या सोद्देश्य बसंत पंचमी से जोड़ दिया गया हैं और अनेक ग्रंथों में निराला का जन्म वर्ष 1899 लिखा गया है। अनेक समीक्षकों ने बैसवारा (ग्राम गढ़ाकोला, जिला उन्नाव) को उनकी जन्म स्थली घोषित कर दिया है। वस्तु स्थिति यह है कि निराला के पितामह सिधारी पंडित (शिवाधारी तिवारी) गढ़ा कोला में आकार बसे थे। गाँव के जमींदार ने उन्हें कुछ कृषि भूमि दे दी थीं। सिधारी के चार पुत्रों में राम सहाय तिवारी अर्थोपाजन के उद्देश्य से महिषादल आकर वहाँ के राजा शक्ति प्रसाद गर्ग की फौज में जमादार हो गये थे। वहीं उन्हों एक पुत्र की प्राप्ति हुई, जिसका नाम रखा गया था सुर्जकुमार। बालक के जन्म के कुछ माह बाद ही माँ रूक्मिणी देवी का निधन हो गया। तब पिता पण्डित राम सहाय ने पूरे लाड़–प्यार के साथ इस बालक का पालन–पोषण किया। राम सहाय स्वभाव से सैनिक थे, कट्टर अनुशासन प्रेमी थे। हनुमानजी के भक्त थे और शरीर तथा चरित्र की दृढ़ता पर बहुत ध्यान देते थे। वे रूढ़ियों के विरोधी थे, और जातीय संस्कार के प्रति निष्ठावान थे। राम सहाय ऊपर से कठोर थे, भीतर से कोमल उनके इन संस्करों का गहरा प्रभाव निराला जी पर पड़ा। वैसी ही पहलवानी कद्काठी वैसी ही बड़ी–बड़ी आँखें और आकर्षक मुखाकृति।

सुर्ज कुमार का बचपन बड़े आनन्द से बीता। वे राज महल के परिसर में रहते हुए अन्य राजकुमारों की देखा–देखी काफी ठाट–बाट से रह रहे थे। कुश्ती संगीत और साहित्य में उनकी विशेष रूचि थी। पिता के आत्यन्तिक प्यार दुलार के कारण सुर्ज कुमार कुछ नटखट और जिद्दी स्वभाव के हो चले थे। इससे चिंतित होकर पिता ने बालक को बंगला पाठशाला में भर्ती कर दिया, लेकिन पढ़ाई में सुर्ज कुमार का मन नहीं लगा।

आठ वर्ष की अवस्था (1904) में पहली बार बालक सुर्ज कुमार गढ़ाकोला आये, जहाँ उनका यज्ञोपवीत संस्कार संपन्न हुआ। लौटकर महिषादल में उन्होंने प्रवेशिका परीक्षा दी। पर उसमें उत्तीर्ण न हो पाये। इन दिनों सुर्जकुमार का मन कभी पहलवानी की ओर जाता, कभी वेदान्त की ओर और कभी नेता, अभिनेता और खिलाड़ी बनने की ओर। उनके पास अद्भूत स्मरण शक्ति थी, असाधारण कण्ठ कांकली थी, विशिष्ट अभिनय कला थी। बस पाठ्य पुस्तकों में कोई अभिरूचि नहीं थी।

सुर्जकुमार की इस गतिमति पर अंकुश लगाने हेतु ग्यारह वर्ष की अवस्था (1910) में उन का विवाह कर दिया गया। उनकी पत्नी मनोहरादेवी डलमऊ जिला रायबरेली की रहने वाली थी। वे रामचरित मानस पढ़ लेती थी और भजन, गजल, दादरा, कजली बहुत अच्छा गा लेती थी। खड़ी–बोली में भी उनकी अच्छी गति थी। तब तक सुर्जकुमार भली भाँती खड़ी बोली नहीं लिख बोल पाते थे। उनकी मातृ भाषा बंगला थी और घरेलू बोलचाल की भाषा बैसवारी थी। मनोहरा से प्रेरित होकर उन्होंने पत्र–पत्रिकाओं की सहायता से खड़ी बोली का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया और स्पर्द्धाभाव से संगीत का काफी रियाज किया। अब तक सुर्जकुमार को एक पुत्र और एक पुत्री हो चुकी थी। इस बीच परीक्षा में असफल हो जाने के कारण पिता ने उन्हें घर से निकाल दिया। फलतः सुर्जकुमार के सामने अपने और परिवार के भरण–पोषण का प्रश्न उपस्थित हो गया। इस बीच कई आपदाएं घटीं। सन् 1918 की संक्रामक बीमारी में मनोहरा देवी का आकस्मिक निधन हो गया। निराला के कई परिजनों की मृत्यु हो गयी। कुछ ही दिनों के बाद उनके पिता का भी शरीर नहीं रहा।

इतना बड़ा संयुक्त परिवार और आर्थिक संसाधन न के बराबर। सुर्ज कुमार को ससुराल से पर्याप्त सहायता मिलती रही, फिर भी आजीविका की विकट समस्या उनके मनोस्तिष्क में छायी रही। प्रयास करने पर उन्हें राजा महिषादल ने अपनी कचेहरी में नौकरी दे दी। सुर्जकुमार एकाकी वहाँ रहने लगे, लेकिन बहुत दिनों तक वे नहीं रह पाये। 1921 में एक विवाद में फसँकर उन्होंने नौकरी छोड़ दी

इस बीच उनके साहित्यिक जीवन का मंगलारम्भ हो गया था। पहले वे बंगला में कविता करते थे। चौदह वर्ष की अवस्था में उन्होंने संस्कृत के कुछ पद रचे थे। 1961 से वे हिन्दी में उतर आये। उन्होंने कलकत्ता से प्रकाशित होने वाली पत्रिका समन्वय में भारत में श्री रामकृष्ण अवतार नामक लेख प्रकाशित कराया जो काफी सराहा गया। इसी बीच उनकी भेंट प्रेमानन्द जी तथा स्वामी माधवानन्द जी से हुई। उनकी संस्तुति करते हुए आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने एक पत्र में लिखा–कि यह मेरा परखा हुआ हीरा है। इसी बीच सुर्जकुमार जी ने 1920 ई. की प्रभा में जन्मभूमि नामक अपनी पहली कविता प्रकाशित करायी और दिसम्बर 1920 की सरस्वती में बंगला भाषा का उच्चारण नामक अपना लेख छपवाया। इस सबका सुपरिणाम यह हुआ कि वे समन्वय में सहायक संपादक नियुक्त हो गये। बंगीय प्रभाव से उन्होंने अपना नाम रख लिया 'सूर्यकान्त त्रिपाठी' वे एक ओर वेदान्त दर्शन में पूरी तरह से रम गये, दूसरी तरफ बंगीय साहित्य के विभिन्न प्रयोगों से प्रेरित होते गये। जैसे– बंगलानाटककार गिरीश घोष से प्रभावित होकर पंचवटी प्रसंग नामक नाट्य गीत की रचना उन्होंने की, जो काफी सफल सिद्ध हुआ।

सूर्यकान्त जी जिन दिनों समन्वय के संपादन में सक्रिय थे, उन्हीं दिनों उनका संपर्क बाबू महादेवप्रसाद सेठ से हुआ, जो शिवपूजन सहाय और मुंशी नवजादिक लाल के साथ बँगला पत्र अवतार की स्पर्द्धा में एक हास्य व्यंगपूर्ण पत्रिका के प्रकाशन में सक्रिय थे। उन्होंने सूर्यकान्त जी को इस योजना से जोड़ लिया और सब ने मिलकर उन्हें मतवाला के तर्ज पर निराला उप नाम दे दिया।

मतवाला का पहला अंक 26 अगस्त 1923 को निकला। इसमें निराला रचित मोटो का और कई छद्म नामों से रचित निराला जी की अनेक रचनाएं थीं। उनके अन्य नाम थे– पुराने महारथी, जनाबआली, गरगज सिंह वर्मा, शौहर एकदार्शनिक आदि। मतवाला के 18वें अंक में उनकी जुही की कली कविता प्रकाशित हुई, जिसकी रवचना स्वयं निराला जी के कथनानुसार 1961 में हो गयी थी, किन्तु यह कथन विश्वसनीय नहीं लगता हैं। इसलिए कि इस कोटि की रचना सात वर्षों तक अप्रकाशित नहीं रह सकती थी। यह भी कहा गया है कि इसे आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती से लौटा दिया था। यह स्मरणीय है कि 1920 तक निराला जी की रचनाएं सरस्वती में

छपती रहीं हैं। दूसरे, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 1920 में सरस्वती से अवकाश ले लिया था।

मतवाला में भी निराला जी विवादों से नहीं बच पाये। विवश होकर उन्हें 1924 में कलकत्ता छोड़कर गढ़ाकोला आना पड़ा। इस बीच उन्होंने कई जीवनी ग्रथं लिखे, कई कृतियों के अनुवाद किये। और काफी समय गाँव में रह कर बिताया।

कालान्तर में वे लखनऊ आ गये तथा सुधा पत्रिका के संपादन से जुड़ गये। यहाँ भिन्न–भिन्न स्थानों पर वे लगभग बारह वर्षो तक रहे। इस बीच निराला जी ने गीतिका, अनामिका, परिमल, और कुकुरमुत्ता की रचना की। उनके पाँच उपन्यास तीन कहानी संकलन, दो निबन्ध संकलन और काफी स्फुट साहित्य इस बीच प्रकाशित हुआ। कुछ दिनों मतवाला की स्पर्द्धा में उन्होंने रंगीला नामक पत्रिका का संपादन किया। किंतु यह प्रयास सफल नहीं हो पाया। इसी बीच 1935 में उनकी पुत्री सरोज की मृत्यु हो गयी, जिस पर सरोज स्मृति नामक शोक काव्य रचा गया। 1938 में उनके पुत्र रामकृष्ण का यहीं विवाह संपन्न हुआ। लखनऊ प्रवास के दौरान निराला जी के साथ अनेक साहित्यकार रहे। जैसे–राम विलास शर्मा, राम रतन भट्नागर, चन्द्रप्रकाश सिंह अमृतलाल नागर, पढ़ीस, सुमन आदि। निराला की कुछ रचनाओं को लेकर इस बीच विशाल भारत के संपादक बनारसी दास चतुर्वेदी ने घास लेटी साहित्य का आन्दोलन चलाया। दूसरी ओर कई जगह निराला का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। उनके द्वारा आविष्कृत मुक्त छन्द, उनकी संगीत साधना और रहस्य दर्शन से युक्त उनका छायावादी भावबोध सर्वत्र चर्चा का विषय बन गया।

उनका अन्तिम प्रवास रहा प्रयाग में, 1943 से 1961 के बीच। कुछ समय उन्होंने उन्नाव और वाराणसी में बिताया। यों अधिकांशतः वे श्रीनारायण चतुर्वेदी, महादेवी वर्मा, नन्ददुलारे वाजपेई आदि के संपर्क में रहे। दारागंज निवासी कलाकार कमलाशंकर सिंह के कमरे में उन्होंने बारह वर्ष व्यतीत किये। वह कन्ट्रोल का समय था। राशन, कपड़ा तेल सबका अभाव था। निराला ने इस बीच काफी यातनाएँ झेलीं। साहित्यिक दलबन्दी के आघात–प्रत्याघात साथ–साथ चल रहे थे। उन्हें झेलते हुए निराला ने अर्चना, आराधना के गीत लिखे, बेला की गजलें लिखीं, गीत गुंज में नवगीत का पुट डाला और चोटी की पकड़ तथा काले कारनामे जैसे उपन्यास लिखें जो अधूरे रह गये। इस कालावधि में निराला कई बार अस्वस्थ हुए और अन्ततः मानसिक असंतुलन से ग्रस्त हो गये। निराला की सहायता हेतु कुछ व्यवस्था मासिक वृन्ति नेहरू जी ने अज्ञात रूप से करा दी थी यों निराला इस बीच सत्ता–व्यवस्था विरोधी बन गये थे। वे हार्निया, जलोदर जैसे रोगों से ग्रस्त थे, किन्तु सरकारी अस्पताल जाने को कदापि तैयार नहीं थे। अन्ततः 15 अक्टूबर 1961 को उनका देहावसान हो गया। मरणोपरान्त उन्हें व्यापक जन संवेदना प्राप्त हुई। संप्रति वे महाकवि महाप्राण, महामानव, नीलकण्ठ, साहित्य देवता आदि उपाधियों से अलंकृत किये जा रहे हैं और कवि कर्म के आदर्श प्रतीक माने जा रहे हैं।

निराला का जीवन अभी विचाराधीन है। उसके स्थिर हो जाने पर उसके सहारे उनके व्यक्तित्व का पूर्ण व्यावहारिक विश्लेषण किया जा सकात है। उनकी स्वभावगत प्रमुख प्रवृत्तियाँ जो उनके साहित्य में भी परिलाक्षित हो रही हैं, इस प्रकार हैं–

1. निरालापन –

अपने उपनाम के अनुकूल के सचमुच विलक्षण व्यक्ति थे। कहीं बहुत विनम्र, कहीं महा स्वाभिमानी। कभी महाकृपण कभी महादानी। उनके मन में किसी के प्रति कोई स्थायी राग द्वेष नहीं रहता था। वे गाँधी जी की

गति–मति से असहमत थे। पर रवीन्द्र नाथ जी जब चरखे का उपहास किया तो निराला जी ने उनका मुखर विरोध किया। यद्यपि रवीन्द्र कविता कानन वे लिख चुके थे। मानी तब रवीन्द्र के वे परम प्रशंसक थे। इसी प्रकार प्रेमचन्द्र जी से उनकी ठनी रहती थी। किन्तु उनके अन्तिम दिनों में उनकी असहायावस्था को देखकर निराला ने एक लेख लिखकर उनके लिए दस साल की याचना परमात्मा से की थी। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल से निराला बराबर असहमत रहें, किंतु उनके सम्मान के लिए सदैव सजग रहे। इन तथ्यों के सहारे यही कहना पड़ेगा कि वे स्थायी राग–द्वेष से परे, अतिशय संवेदनशील और अत्यधिक भावुक व्यक्ति थे।

2. देहात्म बोध–

निराला जी को अपनी कद–काठी पर बड़ा गर्व था। मन में गामा–ए–हिन्द बनने की धुन थी, विकोरिया क्रास और नोबुल प्राइस की ललक थी। अपनी आकृति–प्रकृति पर बहुधा वे मुग्ध दिखते रहें हैं। छायावादी काव्यकाल में वे बड़े–बड़े घुघुराले कुंतलों तथा बंगीय परिधान से ओर–प्रोत का विवेश के कारण नयानाभिराम दिखतें रहे हैं। परवर्ती परिस्थितियों के कारण वे मूर्ति भंजक बन गए और फिर स्वयं मग्न मूर्ति हो गये।

3. परम वेदान्तिक –

वेदान्त दर्शन की गहरी छाप निराला पर पड़ी थी। उन्होंने दरिद्र नारायण की सेवा को अपना लक्ष्य बना लिया था। इस कारण उनका साहित्य लोक मंगल, विद्रोह और व्यर्थता बोध से जुड़ गया।

4. किसान संस्कार –

निराला जी मूलतः बैसवारे के किसान का बानक लेकर चलते रहे हैं। वे अपने को धुर देहाती मानते थे। इसी लोकचेतना वश उनका साहित्य जन–मन के साथ जुड़ता चला गया। निराला जी ने अनुभव क्षेत्र में आये अनेक व्यक्तियों को अपने साहित्य से याद किया है। और इस प्रकार यथार्थ को व्यवाहारिक अतियथार्थ का रूप दे दिया है।

5. नये रूपों के प्रयोक्ता–

निराला जी ने आवृत्ति प्रायः नहीं की हैं। उन्होंने नये–नये चरित्र नायक बनाये हैं, जिनमें मर्यादा पुरुषोत्तमराम से लेकर लघु मानव चतुरी चमार तक सबका अपना–अपना महत्तव है। निराला ने अनेक प्रकार के भाषिक प्रयोग किये हैं। कहीं समास बहुला तत्सम भाषा और कहीं बोलचाल की भाषा। छन्दों में उन्होंने कई प्रकार के कला करतब दिखाये हैं। उनके काव्यरूपों में भी बड़ा वैविध्य है। निष्कर्ष यह कि –निराला को सतत विकसनशील साहित्यकार के रूप में प्रस्तुत करना ही तर्क संगत होगा। हाँ अपनी आकृति–प्रकृति के कारण वे काफी कुछ विलक्षण भी थे, जिसको मात्र कुतूहल वृत्ति द्वारा नहीं , बल्कि मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है।

1.4 निराला का व्यक्तिव विधायन

निरालाजी को उनके समूचे प्रकृति परिवेश के साथ समझने के लिए हमें तीन प्रकार के स्रोतों का सहारा लेना होगा–

1. निराला के अन्तःसाक्ष्य – अर्थात् लेखक द्वारा समय–समय पर अपने संबंध में व्यक्त किये गये विचार ।
2. बाह्य साक्ष्य अर्थात् निराला के समकालीन अथवा परवर्ती शोधकों समीक्षकों और प्रबुद्ध पाठकों द्वारा प्रकट की गयी प्रतिक्रियाएँ। इनमें कुछ समीक्षक, लेखक उनके प्रशंसक हो सकते हैं और कुछ निन्दक भी। हमें उनका औसत निकालना होगा।
3. लेखक की रचनाओं में चित्रित चरित्र और उनसे निर्गत सन्देश।

1. निराला के अन्तःसाक्ष्य –

निराला जी ने स्वतन्त्ररूप से कोई आत्मकथा नहीं लिखी है, पर स्फुटरूप से अपने बारे में बहुत लिखा है। उनका सारा साहित्य आत्मप्रक्षेपण एवं आत्म कथ्यों से भरा पड़ा है। कुल्ली भाट नामक अपने चरितोपन्यास में वे अपने चरित नायक कुल्ली की अपेक्षा अपना जीवन चरित कहीं ज्यादा विस्तार पूर्वक लिख गये हैं। कारण उनका आत्म बहुत प्रबल था। वे बराबर घोषित करते रहें हैं– "मैंने में शैली अपनायी तथा केवल मैं, केवल मैं।" यह मैं शैली एक ओर कवि के व्यक्तिवादी चिन्तन की उपज है तो दूसरी ओर उसकी आत्म परकता की देन हैं। निराला जी ने जिन कृतियों में आत्म के संबंध में बहुत लिखा, वे हैं– कुल्ली भाट, सुकुल की बीवी, मौन कवि, (चाबुक) प्रभावती, कुकुरमुत्ता मेरे गीत और कला (प्रबन्ध पद्म) अणिमा अपरा गीतिका, सरोज स्मृति, जानकी (देवी) प्रिया के प्रति (परिमल) प्रिया से (अनामिका) काव्य साहित्य (चाबुक) ध्वनि(अपरा) हताश (अनामिका) क्या दूँ (परिमल) हिन्दी के सुमनों के पूर्ति (परिमल) वर्तमान धर्म (प्रबन्ध प्रतिमा) पंत जी और पल्लव (प्रबन्ध पद्म) नाटक समस्या (प्रबन्ध ा पल्लव) पतनोंन्मुख (परिमल) अर्चना, चयन, प्रांतीय साहित्य सम्मेलन फैजाबाद (प्रबन्ध प्रतिमा) साहित्य के बिरह में जोशी बन्धु (प्रबन्ध प्रतिमा) गांधी जी से बातचीत (प्रबन्ध प्रतिमा) मनसुखा को उत्तर (प्रबन्ध प्रतिमा) उक्ति (अपरा) नन्द दुलारे बाजपेई (चयन) स्नेह निर्झर(अपरा) कला की रूप रेखा, आराधना गीत गुंज अधिवास (परिमल) विफलवासना (परिमल) आदि।

तात्पर्य यह हैं। कि निराला का लगभग सारा साहित्य उनके आत्म कथनों से भरपूर है। निराला जी ने दूसरों के जो संवाद दिये हैं, उनके भीतर भी उनका अपना स्वर सुनाई दे जाता है। जैसे राम की शक्ति पूजा में जब राम रोते हुए कह पड़ते हैं– धिक जीवन जो पाता ही आया विरोध तो स्पष्ट महसूस होने लगता हैं कि यह निराला का अपने प्रति व्यक्त किया गया उद्गार भी है।

निराला के इन आत्म कथनों की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि इनमें आठ वर्ष से लेकर उनके अन्तिम क्षणों तक की सभी मुख्य–मुख्य घटनाएँ और कवि की उद्भावनाएँ क्रम बद्ध रूप से प्रकट हो गयी हैं। इसीलिए इनकों परस्पर गूँथ कर मैंने दुःख ही जीवन की कथा रही नाम से उनकी एक आत्म कथा प्रस्तुत की है, जिसे देखकर निराला के पूरे अन्तः बाह्रय जीवन की झलक प्राप्त की जा सकती हैं।

2. बाह्य साक्ष्य–

निराला पर बहुत लिखा गया है। निन्दा–स्तुति दोनों चरम सीमा पर। प्राचीन समीक्षकों में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ. श्याम सुन्दर दास, लाला भगवान दीन मिश्र बंधु, पद्म सिंह शर्मा, गुलाब राय आदि निराला को प्रायः नहीं समझ पाये। यहाँ तक की आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अज्ञेय, रामेश्वर शक्ल अंचल भगवती चरण वर्मा भुवनेश्वर आदि भी उनका सही मूल्यांकन नहीं कर पाये।

दूसरी ओर सक्रिय थे निराला के समर्थक, उनके समान धर्मा और उनके अनुयायी। इस समुदाय को निराला मण्डल कह दिया जाता है। निराला जी को स्थापित करने वाले आचार्य रहे हैं नन्द दुलारे बाजपेई। उन्होंने कवि निराला पुस्तक के माध्यम से उनकी सर्वप्रथम स्तरीय समीक्षा की। माधुरी संपादक रूप नारायण पाण्डेय सुधा-संपादक दुलारे लाल भार्गव मतवाला, संचालक महादेव सेठ, तथा मिश्र बन्धुओं ने निराला जी को काफी महत्तव दिया। निराला के अनुयायियों में डॉ. राम विलास शर्मा जानकी वल्लभ शास्त्री चन्द्र प्रकाश सिंह शिवमंगल सिंह सुमन, गंगाप्रसाद पाण्डेय रामरतन भटनागर, शिवगोपाल मिश्र की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इन समीक्षकों ने निराला की कला और मीमांसा पर जो दृष्टिपात किया उसका परिविस्तार परवर्ती समीक्षकों द्वारा किया गया हैं और किया जा रहा हैं।

3.. लेखक की रचनाओं में चित्रित चरित्र–

निराला जी की कई ऐसी कृतियाँ हैं, जिनमें वे स्वयं पात्र का रूप धारण करके प्रकट हुए हैं। तुलसीदास में जिस प्रकार रत्नावली उन्हें प्रेरणा देती है, लगभग वैसी ही प्रेरणा उन्हें अपनी पत्नी मनोरमा से मिली थी। मध्य युगीन भारत की दुर्दशा देखकर जिस प्रकार तुलसीदास ममहित एवं संघर्षत हुए थे, लगभग उसी प्रकार निराला भी अपने देशकाल से प्रेरित हुए थे। तभी वे लिखते हैं–

'वह जागा कवि अशेष छवि धर
इसका स्वर भर भारती मुखर होयेगी।

(तुलसीदास)

राम की शक्तिपूजा में श्रीराम साधना के भंग होते समय जो दर्द और आकोश प्रकट करते हैं– 'धिक जीवन जो पाते ही पाया विरोध उसे पढ़ते हुए लगता है, स्वयं निराला अपने भाग्य को कोस रहें हैं। सरोज स्मृति में तो वे खुलकर सामने आ जाते हैं। कुकुरमुत्ता में वे सर्वहारा के प्रतीक बन कर प्रकट होते हैं। अपनी कथा कृतियों में निराला जी कई बार प्रतिबिंबित हुए हैं। कुल्ली भाट, चतुरी चमार देवी, सुकुल की बीवी, काव्य साहित्य कला की रूप रेखा प्रांतीय साहित्य सम्मेलन फैजाबाद गांधी जी से बातचीत नेरहरू जी से दो बातें, वर्तमान धर्म आदि में वे प्रत्यक्ष रूप से प्रकट हुए हैं, जबकि निरूपमा में कुमार के रूप में अप्सरा में राज कुमार के रूप में चोटी की पकड़ में प्रभाकर के रूप में मानी किसी न किसी जुझारू युवा के रूप में सामनों आये हैं। निराला जी को विद्रोही युवा पात्र बहुत पसन्द रहें हैं। उनकी नायिकाएं भी काफी बोल्ड हैं। उनके ये पात्र जाति-पाँति, दहेज, पर्दा आदि का विरोध करते हैं। और अन्तर्जातीय विवाह विधवा विवाह वेश्या विवाह आदि का समर्थन करते हुए नई सामाजिक, आर्थिक कांति का आह्वान करते हैं।

निराला जी चूँकि राम कृष्ण मिशन में रहते हुए विवकानन्द दर्शन से अथवा उनके जन-जागरण से बहुत प्रभावित थे और दूसरी ओर बैसवारें की सामंती प्रथा, सवर्णों की अभिजात्य वादी प्रवृत्ति और सरकारी अधिकारियों के अत्याचार से वे बहुत पीड़ित थे। इसलिए उन्होंने इन सब का हटकर विरोध किया। वे पहले रचनाकार थे, जिन्होंने रजवाड़ों को महत्व नहीं दिया। छतर पुर में तीन सप्ताह नामक लेख में उन्होंने लिखा –'हम साहित्य के बादशाह हैं। अंधे क्या जाने? ' निराला जी एक स्वतंत्र लेखक और पहुँचे हुए दार्शनिक थे। किसी के प्रति अंध श्रद्धा वश

Touch-frontBlackMA Hindi Paper IV Nirala 1-192 #1

नहीं बल्कि तर्कों के सहारे वे अपनी धारणाएँ बनाते थे। गांधीजी और नेहरू जी का मूँल्याकन उन्होंने इसी आध ाार पर किया हैं।

ईंट का जवाब पत्थर से देना यह निराला जी का स्वभाव था। उन्होंनें आचार्य द्विवेदी आचार्य शुक्ल, प्रेमचन्द्र बनारसी दास चतुर्वेदी और सुमित्रा नन्दन पंत में से किसी को क्षमा नहीं किया। उन्हें अवसर पा कर भरसक ललकारा भी। कभी–कभी बैठे ठाले विवाद शुरू कर दिया। यद्यपि किसी के प्रति कोई बद्धमूल धारणा उनके मन में नहीं रहती थी। उन्हें यह बराबर अनुभव होता था कि वे ब्राह्ण समाज में तिरस्कृत अछूत की तरह जी रहे हैं। उन्हें बराबर लगता रहा कि वे हिन्दी समाज द्वारा बहिष्कृत किये गये हैं। उनके आत्म कथ्य हैं–

बाहर मैं कर दिया गया हूँ........।

मैं अलक्षित हूँ, यही कवि कह गया है।

मैं पढ़ा जा चुका पत्र न्यस्त।

यह हिन्दी का स्नेहोपहार।

मैं अकेला देखता हूँ आ रही मेरे दिवस की सांध्यबेला।

स्नेह निर्झर बह गया है,

रेत ज्यों तन रह गया हैं।

गहन है यह अंधकार आदि।

उनकी रचनाओं में जहाँ हताशा और कुंठा है, वहीं प्रचंण्ड आत्म विश्वास भी है, जो मेरा अन्तर बज्र कठोर मैं ही बसंत का अग्रदूत , अभी न होगा मेरा अन्त, आदि रचनाओं में व्यक्त हुआ हैं।

तात्पर्य यह है कि निराना का व्यक्तित्व अनेक अन्तर्विरोधों से ग्रस्त है। वे स्वभाव वश विरोध के सीधे रास्ते चलते रहें हैं। उनकी कुण्डली में चूँकि दो विवाह लिखे हुए थे, इसलिए उन्होंने दूसरा विवाह नही किया और कुण्डली फाड़ डाली उन्होंने लिखा–

खण्डित करने को भाग्य अंक

देखा भविष्य के प्रति अशंक।'

पुत्री का विवाह करते हुए उन्होंने तमाम विधि निषेधों को तोड़ते हुए स्वयं पुरोहित और नाई का काम किया, बिना जलसा और बिना दहेज के, सीधा सादा विवाह किया। कुल्ली के श्राद्ध में स्वयं पुरोहित कर्म किया। बंगाल में रहते हुए वे मांसाहारी हो गये थे, जो बैसवारी ब्राह्मणों को स्वीकार नहीं था, अतः उन्हें सोसल बॉय काट झेलना पड़ा। उसके बावजूद मुक्त मांसाहार उन्होंने नहीं छोड़ा। उनका घर हाउस आर्फ कामन्स बना रहा है। वे खुद चक्की पीसकर बच्चों का भरण पोषण करते रहे और जातीय महन्तों महाजनों तथा जमींदारों का बराबर कोसते रहे यथा–

जमीदार की बनी महाजन धनी हुए हैं।

बैठे हैं बाबा झारे बहारे

राजे ने अपनी रखवाली की आदि।

उन्होंने बार–बार प्रबोध दिया कि बैंक किसानों का खुलवाओं जल्द जल्द चलो कदम बढ़ाओं तथा देश में बट जाये जो पूँजी तुम्हारी मिलमें हैं। इस प्रकार सामाजिक, राजनीतिक, आर्किक, सांस्कृतिक और साहित्यिक स्तर पर निराला जी कुछ नई अवधारणाएँ लेकर चले, जो तत्कालीन रूढ़िवादियों को रास नहीं आयी, किन्तु अन्ततः वे ही निराला की उपलब्धियों सिद्ध हुई।

निराला जी को यह बराबर महसूस होता रहा कि हिन्दी जगत् वैचारिक रूप से बहुत पिछड़ा हुआ हैं इसलिए उनका सही मूल्यांकन नहीं हो पा रहा है। दरअस्ल हर जीनियस के साथ अक्सर ऐसा होता रहा है। निराला जी कहा करते थे कि मुझे समझने वाले 15–20 वर्ष बाद पैदा होगें। उन्होंने राम की शक्ति पूजा में जो तत्सम बहुला समस्त पदावली गढ़ी उस पर कुछ समीक्षकों ने आरोप किया कि यह बहुत कृत्रिम, क्लिवट और प्रयाससाध्य है। उन्होंने पारसी उर्दू में जो गजलें लिखीं उनका कट्टर पंथियों ने उपहास किया और फिर अपनी बैसवारी जनपदीय अवधी भाषा से ओत–प्रोत जब बोल–चाल की भाषा उन्होंने अपनायी तो आरम्भ में उन्हें भी काव्योपम नहीं माना गया। उनका मुक्त छन्द तो बराबर विरोध का विषय रहा। उसे किसी ने केंचुआ छन्द कहा किसी ने कंगारू छन्द। निराला जी ने गीत कवित सवैया, दोहा पद सॉनेट और ब्लैंक बस आदि अनेक छन्दों का प्रयोग किया, जो आरंभ में भले ही असहमति के लक्ष्य रहे हो कालान्तर में वे ही पूरे युग के आदर्श मान लिये गये। आज 90 प्रतिशत हिन्दी कविता मुक्त छन्द में और बोलचाल की भाषा में लिखी जा रही है। निराला ने जिसप्रकार दलित और स्त्री समाज अथवा सर्वहारा को महत्तव दिया वही आज सारे साहित्य में छाया हुआ हैं। तात्पर्य यह है कि इन दिनों निराला जी प्रायः सभी रचनाकारों के आदर्श बने हुए हैं।

निराला के व्यक्तित्व की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि वे एक साथ छायावाद, फिर उसके विरोध में चलने वाले आन्दोलन प्रगतिवाद फिर उसकी प्रतिकिया में आरम्भ किये गये प्रयोगवाद और फिर उसी के परिविस्तार एवं परिष्कार रूप में स्थापित नयी कविता और नवगीत के प्रवर्तक माने जा रहे हैं। विगत लगभग सौ वर्षों में निराला जी की जो छवि निर्मित हुयी है, उसे देखते हुए यही कहा जा सकता है कि वे तुलसी प्रसाद आदि की परंपरा के कवि मनीषी थे और उनका व्यक्तित्व सर्वथा विचित्र एवं विलक्षण अर्थात् निराला था।

बोध प्रश्न–

1. निराला के व्यक्तित्व के अंतःसाक्ष्य को समझाइए।

____

____

____

____

2. निराला के व्यक्तित्व के बाह्य साक्ष्य को समझाइए।

1.5 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

इस अध्याय का मुख्य निष्कर्ष यह है कि निराला जी के जीवन और साहित्य में बराबर उतार चढ़ाव आता रहा है। उन्होंने जहाँ जीव जगत ब्रह्म पर चिन्तन किया, वही महमू, झींगुर, चतुरी, कुल्ली आदि का भी वर्णन किया। एक ओर राम की शक्तिपूजा में राम का उदात्त चरित्र है और दूसरी ओर कुकुरमुत्ता है। कहीं टकसाली भाषा, कहीं बोल–चाल की। कहीं तुलसीदास वाला जटिल छन्द तो कहीं मुक्त छंद। यह वैविध्य उनके निरालापन की देन हैं। इसके अनेक मनोवैज्ञानिक कारण हैं, जिनका विवेचन इस अध्याय में किया गया हैं।

1.6 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला के व्यक्तित्व को विस्तार से समझाइए।
2. निराला की रचनाओं में चित्रित पात्र चरित्र पर प्रकाश डालिए।

1.7 नियत कार्य/गतिविधियाँ

निराला के व्यक्तित्व को समझने के लिए उनकी रचनाओं तथा निराला पर लिखित विविध लेखकों एवं समीक्षकों की पुस्तकों की सहायता ली जा सकती है।

1.8 चर्चा तथा स्प टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

1.8.1 चर्चा के लिए बिन्दु

1.8.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

1.9 सन्दर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1. निराला की साहित्य साधना – डॉ. रामविलास शर्मा
2. दुःख ही जीवन की कथा रही– संपादक डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
3. कवि निराला–आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी
4. क्रान्तिकारी निराला–डॉ. बच्चन सिंह
5. निराला समग्र– डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित
6. निराला रचनावली–संपादक डॉ. नंद किशोर नवल।

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 1.4 का. 1
2. देखिए 1.4 का. 2

'निराला का समग्र साहित्य : एक परिचय'

संरचना –

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 निराला का काव्य
2.4 निराला का कला साहित्य
2.5 निराला की कहानियाँ
2.6 संस्मरण एवं रेखाचित्र
2.7 निराला के निबंध
2.8 निराला की अनूदित कृतियाँ
2.9 निराला का स्फुट लेखन
2.10 बाल साहित्य प्रणयन
2.11 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें
2.12 अपनी प्रगति जाँचिए
2.13 नियत कार्य/गतिविधियाँ
2.14 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु
2.15 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री
2.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.1. प्रस्तावना

निराला जी ने बहुविधि साहित्य का सृजन किया है। इससे उनका निरालापन प्रकट हुआ है। वस्तुतः जीवन और साहित्य दोनों क्षेत्रों में वे विशिष्ट अर्थात् निराले ही थे। उनके साहित्य की इस विविधरूपता से प्रेरित होकर समीक्षकों ने उन्हें बाजपेयी के अनुसार, निरालाजी मुख्यतः अध्यात्म, भक्ति, रहस्य, दर्शन और लोक संस्कृति से सम्पन्न साहित्यकार थे। डॉ. रामविलास शर्मा के अनुसार वे मूलतः जनवादी चेतना के साहित्यकार थे। इसी प्रकार अन्यान्य समीक्षकों ने अपने–अपने मतानुसार उन्हें क्रांतिकारी, वेदान्ती, आत्महन्ता महाप्राण, साहित्य देवता, युगकवि, विश्वकवि आदि नाम दिये हैं। इन सब कथनों के पीछे मात्र आंशिक सत्य है। तथ्य यह है कि निराला जी किसी भी विचारधारा और शिल्प से बँधकर नहीं रहे। इसे स्पष्ट करने के लिए उनके समूचे साहित्य का विकास–विश्लेषण और सर्वेक्षण आवश्यक है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है निराला के सम्पूर्ण रचना संसार से पाठकों को अवगत कराना निराला जी के साहित्य की सूची अभी तक अन्तिम रूप से प्रस्तुत नहीं की जा सकती है। उनकी कई रचनाएं उपलब्ध नहीं हैं। दूसरे, उनके प्रकाशनकाल भी यत्र–तत्र संदिग्ध प्रतीत होते हैं। उनकी कई रचनाएँ विवादास्पद हैं। उदाहरणार्थ 'जुही की कली' को ले लें। निराला जी के कथनानुसार, इसकी रचना 1916 में हुई थी। डॉ. रामविलास शर्मा ने इसे परवर्ती माना है। 'परिमल' में यह रचना 1929 में प्रकाशित हुई है। इसी प्रकार 'अनामिका' का प्रथम संस्करण आज उपलब्ध नहीं है। उनकी अन्तिम कृति 'सांध्य का कली' उनके मरणोपरान्त प्रकाशित हुई थी। उसमें 'गीत गुंज' के कई गीत शामिल कर लिये गये हैं। इसी प्रकार 'कुकुरमुत्ता' के अलग–अलग दो संस्करणों में बीच–बीच में काफी परिवर्तन हुआ है। स्फुट रूप से निराला जी ने घनाक्षरी, दोहा, पद, पैरोड़ी, लोकगीत आदि की भी समय–समय पर रचना की है, जो अधिकतर असंकलित है। उनके उपन्यास अप्सरा, अलका, निरुपमा, प्रभावती और कुल्लीभाट तो प्रकाशित हैं, जबकि काले कारनामे, चोटी की पकड़ और चमेली अपूर्ण हैं। निराला जी ने लगभग 50 कहानियाँ लिखी थीं, जो लिली, चतुरी–चमार, सुकुल की बीवी और 'देवी' में संकलित हैं, शेष बिखरी हुई हैं। उन्होंने प्रबन्ध पद्म, प्रबन्ध प्रतिमा, चावुक, चयन और संग्रह में विभिन्न विषयों पर लगभग 75 निबन्धों, आत्म संस्मरणों और समीक्षाओं को स्थान दिया है। 'बिल्ले सुर बकरिहा' नामक उनका रेखाचित्र स्वतंत्र रूप से प्रकाशित किया गया है। उनके कई निबन्ध अभी संकलित नहीं हो पाये हैं। यही स्थिति उनके द्वारा किये गये अनुवादों की है। उन्होंने बंग्ला से लगभग 20 कृतियों का हिन्दी में रूपान्तरण किया। इनमें कुछ अनुवादों को मौलिक रचना समझ लेने के कारण बीच–बीच में कई विवाद उठ खड़े हुए हैं। इसी प्रकार बाल साहित्य के क्षेत्र में निराला जी ने लगभग छह पुस्तकें प्रकाशित करायीं थी जिनकी सही जानकारी अभी नहीं हो पाई है। यही नहीं, निराला के नाम से हम सात संपादित पत्रिकाओं के नाम गिनाये जाते हैं 'समन्वय' मतवाला, सुधा, रंगीला, कला, सरोज, मौजी। इनमें अन्तिम तीनों पत्रिकाएँ अप्राप्त हैं।

तात्पर्य यह हुआ कि निराला जी के नाम से प्रकाशित साहित्य काफी विवादास्पद हैं। इस इकाई का मुख्य उद्देश्य यह है कि उनके प्रामाणिक साहित्य का विधापरक एवं काल क्रमानुसार विवरण प्रस्तुत किया जाये।

2.3 निराला का काव्य

प्राप्त प्रमाणों के अनुसार निराला रचित प्रथम कविता है 'जन्म भूमि' जो प्रभा (कानपुर) में 1920 में प्रकाशित हुई थी। उन्होंने 1920 से 1962 तक एक दर्जन काव्य ग्रंथ प्रकाशित किये जो इस प्रकार हैं–

1. अनामिका (1923)–

यह इन दिनों अप्राप्य है। इसकी अधिकांश कविताओं को परिमल में संकलित कर लिया गया है।

2. परिमल–

इसका प्रकाशन 1929 में हुआ। इसमें 'जुही की कली' पंचवती प्रसंग, अधिवास, बादलराग, तोड़ती–पत्थर, संध्या सुन्दरी, शिवाजी का पत्र आदि महत्वपूर्ण कविताएँ संगृहित हैं। इसकी भूमिका में मुक्त छन्द का विवेचन किया गया है। इन कविताओं के माध्यम से निराला के स्वच्छन्दतावाद की झलक मिलती है। इनमें प्रकृति, प्रेम–सौन्दर्य, वेदना, क्रांति, अध्यात्म, दर्शन और नवजागरण के स्वर सन्निहित है। इस संग्रह में 45 मुक्त छन्द और 30 छन्दोबद्ध प्रगीत रचनाएँ संगृहीत हैं। 'पंचवती प्रसंग' नामक काव्य नाटक, जो 1920 में रचा गया था इसी में द्रष्टव्य है।

3. गीतिका–

यह 1937 में प्रकाशित एक सौ एक गीतों का संकलन है, जिसमें सौन्दर्य, श्रृंगार, रहस्य, दर्शन आदि की मनोरम व्यंजना हुई है। साथ ही खड़ी बोली के अपने संगीत तथा लोक संगीत की बानगी भी दी गयी है। वर दे वीणा वादिनि कौन तम के पार, सखि बसन्त आया प्रिय यामिनी जागी आदि जैसे प्रसिद्ध गीत इसमें समाहित हैं।

4. अनामिका–

इसका प्रकाशन 1938 में हुआ। इसमें प्रथम अनामिका का कोई अंश नहीं है। कवि ने रवीन्द्रनाथ तथा विवेकानंद के कुछ अनुवाद यहाँ प्रस्तुत किये हैं और साथ ही 'राम की शक्ति पूजा' सरोज स्मृति जैसी कालजयी कृतियाँ भी। इन कविताओं में छायावाद, रहस्यवाद, प्रगति–प्रतीक एवं प्रयोग की प्रतिनिधि कई रचनाएँ हैं।

5. तुलसीदास–

इसे खण्ड प्रबन्ध भी कहा जा सकता है और लम्बी कविता भी। यह कुल सौ छन्दों में रचा गया है। इसमें कवि ने तुलसी के आरम्भिक जीवन पत्नी द्वारा दिये गये प्रबोध और तुलसी के गृह त्याग की घटना को काव्यबद्ध किया है। इसका छन्दो विधान पूर्णतः नया है। भाषा भी विशिष्ट कोटि की है। इसका प्रकाशन 1938 में हुआ था।

6. अणिमा–

युग मंदिर, उन्नाव से निराला का यह गीत संग्रह 1943 में प्रकाशित हुआ था। इसमें भक्ति, करुणा तथा प्रशस्ति से सम्बन्धित 45 रचनाएँ हैं। निराला की कई श्रेष्ठ कविताएँ, जैसे– मैं अकेला स्नेह निर्झर बह गया है आदि इसी में प्राप्य हैं।

7. बेला–

हिन्दुस्तानी पब्लिकेशन, इलाहाबाद द्वारा 95 गीतों का यह संग्रह 1946 में प्रकाशित किया गया था। इसमें निराला जी ने गजल विधा को अपनाया है। उनकी गजलों में प्रकृति चित्रण, अध्यात्म, भक्ति, रहस्यानुभूति, युगबोध एवं प्रेम सौन्दर्य के भाव यदा–कदा विद्रोही स्वरों के साथ मुखर हुए हैं। इन गजलों की भाषा सरल तथा मुहावरेदार है। यहां निराला जी हिन्दी और उर्दू को मिलाते दिखायी पड़ते हैं। कुछ विद्वानों ने इस खिचड़ी भाषा को निराला के साहित्यिक उत्कर्ष में बाधक माना है। इतना निश्चित है कि निराला की छायावादी काव्य प्रवृत्ति यहां समाप्त सी हो गयी और लोक चेतना ज्यादा मुखर हो गयी है।

8. नये पत्ते–

हिन्दुस्तानी पब्लिकेशन द्वारा 1946 में प्रकाशित यह काव्य हिन्दी की नयी कविता का नमूना बन कर प्रकट हुआ है। इसमें 'देवी सरस्वती' नामक लम्बी कविता है तो 'डिप्टी साहब आये, झींगुर डटकर बोला, मँहगू महँगा रहा, कुत्ता भोंकने लगा,' राजे ने अपनी रखवाली की आदि राजनीतिक एवं सामाजिक विद्रूपताओं से जुड़ी कई गद्यात्मक कविताएँ भी हैं। नये पत्ते की अधिकांश कविताएँ हास्य–व्यंग्यपूर्ण हैं, जैसे–खजोहरा, स्फटिक शिला आदि। कवि यहाँ यथार्थ के धरातल पर उतर आया है, इसलिए अब उसे ऊबड़–खाबड़ भाषा के अनगढ़–भदेस प्रयोगों और मानवीय विकृतियों से कोई परहेज नहीं रहा।

9. अर्चना–

इस काव्यसंग्रह का प्रकाशन 1950 ई. में कला मंदिर, प्रयाग से हुआ था। इसके अधिकांश गीतों में भक्तिरस की धारा प्रवाहित हुयी है। कुल 112 गीतों के इस संग्रह में 35 गीत शरणागति से प्रेरित हैं। भवसागर से पार करो हे। कठिन यह संसार जैसे भाव प्रायः हर गीत में हैं। यह उल्लेखनीय है कि निराला के प्रथम काव्य संग्रह 'अनामिका' में 'माया' नामक कविता में जो भक्ति भाव प्रकट हुआ था, वही यहाँ पूरे संग्रह में व्याप्त हो गया है। इसमें प्रकृति–चित्रण तथा श्रृंगार से सम्बन्धित 15–15 गीत हैं। कुछ गीतों में लोक धुनों के प्रयोग किये गये हैं। कुछ रचनाओं में निराला मृत्युबोध प्रकट हुआ है।

10. आराधना–

इसका प्रकाशन 1953 में महादेवी जी के 'साहित्यकार संसद' द्वारा किया गया था। इसमें 1949 से 1952 तक रचित 96 गीत हैं, जिनमें श्रृंगार, प्रकृति प्रेम, सौन्दर्य, लोक करुणा, निराशा आक्रोश और लोक मंगल के भाव व्यक्त हुए हैं। कुछ गीत कीर्तन–भजन जैसे प्रतीत होते हैं। यथा–

'रहते दिन, दीन शरण भज ले'।
'कृष्ण–कृष्ण, राम–राम'! आदि।

इस संग्रह में नूतन पुरातन, दोनों का समन्वय हुआ है। इसमें अधिकतर गैर छायावादी कविताएँ हैं। कई गीतों में प्रपत्ति का भाव है, काफी आत्मपरकता है और रूपात्मक विकृति भी।

11. गीतगुंज–

1953 में 26 गीतों का यह संग्रह हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय बनारस से प्रकाशित हुआ था। इसमें कुछ श्रेष्ठ प्रकृति परक कविताएँ हैं। कुछ लोक धुनों पर आधारित गीत हैं। निराला के शारीरिक और मानसिक अवरोह के लक्षण इन रचनाओं में देखे जा सकते हैं।

12. सान्ध्य का कली–

इसका संकलन 1964 में किया गया था। इसमें कई अपूर्ण कविताएं हैं, और कई कविताएं ऐसी हैं, जिन्हें अबूझ कहा जा सकता है।

इस प्रकार इन एक दर्जन संग्रहों में निराला का प्रकृति–प्रेम, सौन्दर्य, लोक जीवन, भक्ति–अध्यात्म, दर्शन, वेदना, विद्रोह, हताशा, लोक जागरण आदि के भाव व्यक्त हुए हैं। इनमें नई भाषा, नया छन्द, नये प्रतीक और नये बिंब उभरे हैं, जिनका ऐतिहासिक महत्व है।

2.4 निराला का कथा साहित्य

इस विधा के अन्तर्गत, उपन्यास, कहानी, संस्मरण, रेखाचित्र और जीवनी इन पाँच काव्य रूपों की गणना की जानी चाहिए।

2.4.1 निराला के उपन्यास–

निराला जी ने चार प्रकार के उपन्यास लिखे हैं–

1. समाजिक उपन्यास– 1. अप्सरा 2. अलका 3. निरुपमा 4. काले कारनामे 5. चोटी की पकड़
2. ऐतिहासिक उपन्यास– प्रभावती
3. आंचलिक उपन्यास– चमेली (अपूर्ण)
4. हास्य व्यंगपरक चरितोपन्यास– कुल्ली भाट।

'अप्सरा' में निराला ने छायावादोचित प्रेम सौन्दर्य तथा मानवीय संवेदना के नये रूप–रहस्यों का संयोजन किया है। 'अलका' में वे प्रथम बार यथार्थ का स्पर्श करते दिखायी देते हैं।

निराला का कथा साहित्य पर्याप्त प्रयोगपरक है। उसमें प्रधानतः उनकी चार मनोवृत्तियाँ उद्घाटित हुई हैं–

1. स्वच्छन्द प्रणय, सौन्दर्य बोध, बंगीय भावुकता और रोमांटिक चेतना।
2. युग यथार्थ तथा व्यंग्य विद्रोह का भाव।
3. लोक संवेदना एवं आंचलिकता बोध।
4. लेखक का 'आत्म'।

निराला के उपन्यास आदर्श तथा यथार्थ के समन्वय को लेकर चले हैं। उन्होंने बंकिम, शरत, रवीन्द्र, प्रेमचन्द, प्रसाद आदि के उपन्यासों से शुद्ध स्पर्द्धा करते हुए अपने इन उपन्यासों का ढाँचा तैयार किया है। इनमें वे स्वयं प्रतिबिंबित हो उठे हैं। उदाहरणार्थ–निरुपमा का कुमार द्रष्टव्य है। कुमार एक विश्वविद्यालय की सेवा से वंचित होकर जड़ समाज के विरुद्ध संघर्ष करता है। उसका प्रतिद्वन्द्वी एक रईसजादा यामिनी बाबू पहले उसे परास्त कर देता है, जीविका के क्षेत्र में और फिर प्रेमिका के क्षेत्र में भी। कुमार सामाजिक न्याय की माँग करता है, इसलिए जड़–व्यवस्था की यातनायें झेलता है, लेकिन अन्त में अपनी प्रणयिनी नीरू की सहायता से वह दोनों क्षेत्रों में प्रतिद्वन्द्वी को पिछाड़ देता है। 'अलका' की नायिका इसी प्रकार सामाजिक समस्याओं के विरुद्ध एकाकी संघ्वर्ष करती है। जमींदार मुरलीधर उसका शोषण करना चाहता है। अलका उसकी हत्या कर देती है और अपने पूर्व विवाहित पति को खोज निकालती है। ऐसी साहसी और स्वावलम्बिनी नायिका की परिकल्पना आज से वर्षों पूर्व बड़ी ही विलक्षण सिद्ध हुई होगी। यही स्थिति 'काले कारनामे' की भी है। इसका नायक मनोहर जमींदार के विरुद्ध संघर्ष करता है। 'चोटी की पकड़' का नायक प्रभाकर स्वदेशी आन्दोलन का नेतृत्व करता है। बीसवीं शती में, लार्ड कर्जन के शासनकाल में और बंगभंग आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में सामन्तों की ऐश्वर्य लीला, राजकीय कूटनीति और जन–उत्पीड़न का बड़ा प्रभावी वर्णन इस अपूर्ण कृति में प्रस्तुत हुआ है। इसी कोटि का संघर्ष 'प्रभावती' में है। बैसवारे के इतिहास से खोजकर निकाला गया एक वीरांगना का यह चरित्र निस्सन्देह बड़ा प्रेरक है। 'चमेली' की विषयवस्तु तो और भी विचित्र है। आंचलिक परिप्रेक्ष्य में यहाँ एक साहसी युवती की संघर्ष गाथा वक्त हुई है, जो अधूरी होकर भी बड़ी प्रभावी है। 'कुल्लीभाट' संस्मरणों से युक्त एक सफल चरितोपन्यास है। मानवीय चरित्र–परिकल्पना की एक नयी शुरूआत इसके द्वारा हुई है।

निराला जी की ये कथा–कृतियाँ उपन्यास–कला की दृष्टि से विचारणीय है। 'अप्सरा' का कथानक सुरम्य कल्पना पर आधारित है। प्रेम–रोमांस, सौन्दर्य–सम्मोहन और प्रगल्भ रागचेतना का संयोजन यहाँ कथा–ब्याज से किया गया है। लेखक ने जातीय जड़ता से जूझते हुए यहाँ अन्तर्जातीय प्रणय–परिणय की पहल की है। 'चोटी की पकड़' में तो उसने जासूसी तिलिस्म तक का सन्निवेश किया है। 'अलका' में बैसवारे की सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था अर्थात् अकाल, महामारी, सामन्ती शोषण आदि का आँखों देखा सत्य है। 'निरुपमा' में अस्तित्व–संघर्ष की

व्यथा–कथा है। तात्पर्य यह है कि इन उपन्यासों में कहीं कथा की आवृत्ति नहीं हुई है। निराला जी के इन पात्रों में भी बड़ा वैविध्य है। एक ओर अन्याय से जूझते हुए युवा नर–नारी पात्रों का चित्रण किया गया है, जैसे कुमार, मनोहर, प्रभाकर आदि तो दूसरी ओर निराला जी ने अपने निकटवर्ती पात्रों का यथावत् रूप चित्रित कर दिया है। 'कुल्ली भाट' ऐसा ही पात्र है। निराला के नारी–पात्र अपेक्षाकृत अधिक सजीव हैं। वे सहज मानवीय मनोभावों से ओतप्रोत हैं। उनके नायक अधिकतर विद्रोही रूप में चित्रित किये गये हैं। नायिकाएं भावनात्मक अन्तर्द्वन्द्व से दिखती हैं। वे प्रायः कोमलांगी हैं, किन्तु परीक्षा के क्षणों में कर्तव्य कठोर भी। 'प्रभावती' तो पूर्ण वीरांगना है। इनमें कुछ बेजोड़ चरित्र भी हैं, जैसे–चमेली तथा 'चोटी की पकड़' की मुन्नावादी और एजाज। निराला जी ने नव–जागरण की पृष्ठभूमि में नारी को प्रतिशोध के लिए प्रेरित किया है। फिर भी अपेक्षाकृत संवेदनशील नारी पात्रों को उन्होंने अधिक मनोयोग के साथ सँवारा है। कनक(अप्सरा) शोभा (अलका) नीरु, प्रभावती, यमुना आदि की रूप–रचना छायावादी भाव–भूमि पर हुई है और चमेली, मुन्ना आदि की रचना विद्रोही मनोभूमि पर। पात्रों के संलाप या कथोपकथन की दृष्टि से ये उपन्यास बड़े रोचक बन पड़े हैं। 'अलका', 'अप्सरा' और 'निरुपमा' में कवित्वपूर्ण संभाषण हैं तो 'चोटी की पकड़' में हाजिर जवाबी से भरी हुई जुमलेबाजी है। रोचकता तथा पात्रानुकूलता इन संवादों की प्रमुख विशेषता है।

देशकाल और परिस्थिति का निर्वाह भी निराला जी ने संयम के साथ किया है। 'अप्सरा' में बंगीय परिवेश है। 'अलका' में बैसवारे का स्वातंत्र्यपूर्ण जनजीवन है, जो विश्व–युद्ध के आतंक की छाया से संत्रस्त है। 'निरुपमा' में लखनऊ की ब्रिटिश कालीन रईसी की छाप है। 'चोटी की पकड़' में लेखक ने संक्रान्ति युग का चित्र खींचा है। अंग्रेजी शासनकाल के विघटन का लेखा–जोखा है 'काले कारनामे' में। 'प्रभावती' की कथा–भूमि पूर्णतः ऐतिहासिक है। कान्यकुब्ज शासनाधीन बैसवारे का एक राज्य घटना के केन्द्र में हैं। प्रभावती और यमुना दोनों किलेदारों की पुत्रियाँ हैं। इस ऐतिहासिक रोमांस के पीछे एक क्षेत्रीय इतिहास को खोज निकालने का हौसला भी दिखाई देता है। 'कुल्ली भाट' में असहयोग आन्दोलन का परिवेश चित्रित हुआ है और चमेली में जर्जर ग्रामीण व्यवस्था का। तात्पर्य यह है कि ये कथा–भूमियाँ निराला जी के अनुभव–जगत से सम्बद्ध हैं। अधिकतर पात्रों में उनके आत्म का प्रक्षेपण हुआ है, इसीलिए इनकी रूप–रचना बड़ी सहज और सजीव ज्ञात होती है।

निराला जी के ये उपन्यास सोद्देश्य और साभिप्राय हैं। इनमें एक ओर प्रभुत्व–दर्पभ्रान्त शासकों के अत्याचारों का भण्डाफोड़ किया गया है तो दूसरी ओर तथाकथित अभिजात वर्ग के छद्म चरित्र का पर्दाफास हुआ है। इसके पीछे नई चेतना और नवजागरण का संदेश है। शोषित समाज के प्रति निराला जी ने सक्रिय सहानुभूति व्यक्त की है। समाज के तिरस्कृत वर्गों–मुख्यतः विधवाओं और वेश्याओं के प्रति निराला जी की नयी संवेदना उभरकर आयी है।

इन उपन्यासों की भाषा प्रायः पात्रानुकूल है। उसमें कवित्व का पुट भी है। आरम्भिक कृतियों में आलंकारिक भाषा रखी गई है। 'प्रभावती' की भाषा में देशकाल का यथेष्ट निर्वाह किया गया है। 'चमेली' की भाषा में ठेठ अवधी के देशज शब्दों की भरमार है। परवर्ती कृतियों में मुहावरेदार बोलचाल की भाषा का प्रवाह दिखाई देता है। भाषा कायह वैविध्य कथाकार निराला का अपना वैशिष्ट्य है।

विचारधारा की दृष्टि से ये कृतियाँ पर्याप्त प्रासंगिक हैं। इन उपन्यासों में कुल मिलाकर जाति–संप्रदाय का निषेध, आर्थिक वर्ग भेद का विरोध, छुआछूत, दहेज, अनमेल विवाह, बहुविवाह, बाल–विवाह आदि की वर्जना है, साथ ही विधवा विवाह और वेश्या विवाह को प्रोत्साहन दिया गया है। अभिशप्त नारी जीवन के प्रति संवेदना, उसके अस्तित्व संघर्ष की प्रेरणा और अन्य सामाजिक समस्यायें निराला के उपन्यासों की मुख्य बिन्दु हैं। सामाजिक अव्यवस्था के यथार्थबोध की दिशा में लेखक निरंतर प्रयत्नशील रहा है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना, दर्शन, प्रणय, सौंदर्य, हास–परिहास और आंचलिकता बोध भी इन उपन्यासों में यथा प्रसंग व्यक्त हुआ है। स्पष्ट

है कि निराला की उपन्यास–कला में बड़ा वैविध्य और वैचित्र्य है। एक ओर इनमें कवित्व से ओतप्रोत, रास रंगपूर्ण स्वच्छन्द प्रेम और उन्मुक्त सौंदर्य की अर्थवाही कथा–भूमियां हैं, तो दूसरी ओर घोर यथार्थ को समेटे हुए सामाजिक विकृतियों का भंड़ाफोड़ करने वाली कृतियाँ भी हैं। निराला जी प्रायः हर क्षेत्र में सिद्धहस्त दिखते हैं। वर्तमान की कुरूपता और ऐतिहासिक रोमांस का उन्होंने साथ–साथ निर्वह किया है। समस्याओं का सृजन और समाधानों का अन्वेषण, दोनों यहाँ अपनी परिपूर्णता में परिलक्षित हो रहे हैं। वस्तुतः निरालाजी के उपन्यास उनके व्यक्तित्व के विधायक भी हैं और बिम्ब–प्रतिबिम्ब भी।

2.5 निराला की कहानियाँ

निराला जी का कहानी साहित्य वस्तु–शिल्प की दृष्टि से पर्याप्त महत्वपूर्ण है। उन्होंने यों तो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक इन सभी समस्याओं से प्रेरित होकर कहानियाँ लिखी हैं, लेकिन उन्हें सर्वाधिक सफलता मिली है, उन संस्मरणात्मक कहानियों में, जिनमें सामाजिक बिडम्बना का व्यंग्य–विद्रूप प्रकट हुआ है। उनके कहानी–संकलनों में 'लिली', 'चतुरीचमार', 'सुकुल की बीवी' तथा 'देवी' में लगभग पचास कहानियाँ हैं और ये विषयानुसार अनेक वर्गों से सम्बद्ध हैं। इनमें कुछ आरम्भिक कहानियाँ अध्यात्म–दर्शन से सम्बन्धित हैं, जैसे–'अर्थ' एवं 'भक्त और भगवान'। 'अर्थ' में एक भावुक–भक्त योग–वैराग्य से प्रेरित होकर नवविवाहिता पत्नी को त्याग कर ईश्वर की खोज में निकल पड़ता है। कई विषम परिस्थितियों को पार करके वह साहित्य–लेखन में लग जाता है। निराला का निष्कर्ष है कि 'ईश्वर ही अर्थ है'। सांसारिक जीवन में स्थूल अर्थ आध्यात्मिक स्तर पर सूक्ष्म अर्थ बन जाता है। 'भक्त और भगवान' का निरंजन हनुमान का भक्त है, जिसकी स्वर्गीया प्रिया अंजना रूप में प्रकट हो जाती है। इस कहानी में भगवान का विराट बिम्ब निर्मित किया गया है, जो 'राम की शक्ति पूजा' में महा दुर्गा की परिकल्पना से अद्भुत साम्य रखता है। इसे कथानायक में निराला का अपना विधुर–जीवन भी व्यक्त हुआ है। कुछ इसी प्रकार की धार्मिक आस्था अथवा ईश्वरीय चमत्कार 'हिरनी' और 'परिवर्तन' जैसी कहानियों में भी व्यंजित है। तात्पर्य यह है कि 'समन्वय' के सम्पादन काल में, रामकृष्ण मिशन में रहते हुए वेदान्त और वैष्णव भक्ति से प्रभावित होकर निरालाजी ने इस प्रकार की कई धार्मिक कथाओं की रचना की थी, जिनमें पौराणिकता का प्रभाव है और रहस्य–दर्शन का भी।

निराला रचित दूसरी कोटि की कहानियाँ सामाजिक संचेतना से सम्बन्धित हैं। इनमें अभिजात वर्ग के अध ःपतन, मुख्यतः कुलीन ब्राह्मणों के जातीय दम्भ का रहस्योद्घाटन किया गया है। किसानों पर होने वाले सामंती उत्पीड़न का प्रामाणिक विवरण इन कहानियों में मिलता है। यहाँ कल्पना गौण है और अनुभूति प्रधान। लेखक ने सर्वाधिक चर्चा की है–वैवाहिक समस्याओं की। बहु–विवाद, अनमेल विवाह, बाल विवाह, विधवा–विवाह और अन्तर्जातीय विवाह के अनेक प्रसंग इन कहानियों में वर्णित हैं। 'सुकुल की बीवी' में उसने पुखराज को पुष्कर कुमारी बनाकर कट्टर कनौजियों की उपस्थिति में सुकुल के साथ प्रणय–परिणय कराया है। श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी में अनमेल विवाह पर व्यंग्य प्रहार किया गया है। षोडसी सुपर्णा अपने पूर्व प्रणयी मोहने से हताशा होकर बयोवृद्ध शास्त्री जी की सहधर्मिणी बनती है और समाज–सेवा, स्त्री–चिकित्सा, साहित्य–रचना तथा राजनीति के छल छद्म द्वारा जीवन–यापन करती है। 'परिवर्तन' कहानी में दो राजपरिवारों के बीच दासी–पुत्री के विवाह षड़यंत्र चित्रित हुआ है। 'श्यामा' कहानी में बंकिम नामक पात्र जमींदार से आहत बुधवा नामकएक अंत्यज व्यक्ति की सेवा करता है और उसके निधनोपरान्त उसकी अनाथ पुत्री श्यामा से विवाह करके उस गांव–समाज का परित्याग कर देता है। 'कमला' कहानी में एक ऐसे युवक की कथा है, जो नवोढ़ा पत्नी से सामाजिक सुधारों की सैद्धान्तिक चर्चा करता है, लेकिन तभी यह सूचना पाकर कि कमला बाल विधवा है, उस पर वह लांछन लगाते हुए उसका परित्याग कर देता है। कालान्तर में यही पति–परायणा कमला किसी दंगे में आहत इस पति की सेवा छद्म रूप से करती हुई उसे सम्मोहित कर लेती है और पुनः उसे पति रूप में प्राप्त कर लेती है। 'ज्योतिर्मयी' कहानी में एक बारह वर्षीया

बाल विधवा से पहले तो अनजाने वीरेन्द्र नाम का युवक प्रेम सम्बन्ध स्थापित करता है, किंतु बाद में वस्तु स्थिति से अवगत होकर उसके विवाह–प्रस्ताव को ठुकरा देता है। लेखक ने दहेज लोभी उसके पिता को प्रभावित करके बुद्धि बल द्वारा यह विधवा विवाह सम्पन्न करा दिया है। 'पद्मा और लिली' कहानी में एक अपरिचित युवक से प्रेम–विवाह कराया गया है। पद्मा अपने पिता के निधनोपरान्त प्रणय–परिणय करके उसकी जातीय दुर्बलता से जो प्रतिशोध लेती है, वही इस कहानी का मूलोद्देश्य है।

जातीय जागरण निराला की कहानियों का मूल स्वर है। 'चतुरी चमार' इस दृष्टि से प्रतिनिधि कहानी है। चतुरी निर्गुनिया भगत है। वह कबीर पंथी है और जूते बनाने में प्रवीण है। जमींदार के सिपाही को उसे दो जोड़ा हर साल देना पड़ता है। इस शोषण से वह दुखी है। लेखक ने आत्म संस्मरणों के सहारे उसके अस्तित्व–संघर्ष का चित्रण किया है और व्यवस्था के विरुद्ध उसकी विजय घोषित की है। 'श्यामा' कहानी में एक सवर्ण पात्र और निम्नवर्गीय कन्या का आर्य समाजी ढंग से विवाह सम्पन्न हुआ है। यहां विद्रोह की अपेक्षा सुधार संकल्प मुखर हुआ है।

'निराला' की कुछ कहानियां ऐसी हैं, जिनमें लोक संवेदना का स्वर है। उदाहरणार्थ 'देवी' कहानी को लें। इसमें एक अनाथ पगली का आँखों देखा विवरण है। अपनी अवैध संतान के प्रति उसके मन में अगाध वात्सल्य है। एक दिन किसी नेता के जुलूस में उसका बच्चा कुचल जाता है। पगली की यातनाओं का अंत नहीं है, फिर भी वह मातृत्व की तपस्या करती रहती है और लेखक की दृष्टि में देवी बन जाती है। इस प्रकार की कहानियां निराला के भोगे हुए यथार्थ की देन है। ये कहानियां उनकी मानवीय संवेदना की उपज भी हैं। निराला की कई कहानियों में व्यंग्य–विनोद ही मूल विषय बनकर उभरा है। 'सुकुल की बीवी' श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी, चतुरी चमार तो इस क्षेत्र में अग्रगण्य हैं ही, उनकी कुछ कहानियां मूलतः विनोद प्रेरित हैं, जैसे–'प्रेमिका परिचय'। बाबू प्रेम कुमार अपने व्यक्तिगत–सम्मोहन (आत्मरति) के मिथ्या दंभ से ग्रस्त हैं। विवाहित होकर भी वे परकीया प्रेम के प्रति लालायित रहते हैं और अपनी ही पत्नी शांति द्वारा छिपकर लिखे गये प्रेम पत्रों से उत्तेजना के झटके अनुभव करते हुए उसके इंगित पर इधर–उधर भटकते रहते हैं। निराला जी की कुछ कहानियों में रहस्य–रोमांस अथवा कथा–कुतूहल का प्राधान्य है। जैसे 'कला की रूपरेखा' और 'क्या देखा' आदि में। आत्म संस्मरणों की तो इनमें आदि से अन्त तक भरमार है ही।

निष्कर्ष यह है कि निराला जी ने मुख्यतः पांच प्रकार की कहानियां लिखी हैं–

1. अध्यात्म–दर्शन से प्रभावित अथवा रहस्य प्रतीकों से युक्त धार्मिक कथायें।
2. जातीय समीकरण, अन्तर्जातीय प्रणय–परिणय अर्थात् सामाजिक सुधार या जन–जागरण–संकल्प से युक्त सामाजिक कहानियां।
3. व्यवस्थात विडम्बना तथा विद्रूपता से प्रेरित हास्य व्यंग्य–विनोदपरक कहानियाँ।
4. कथा–कुतूहल से ओत–प्रोत रोमांचक कहानियां।
5. आत्मसंस्मरणात्मक कहानियां।

इन कहानियों में 'आत्म' का पुट अपेक्षाकृत अधिक है। आरम्भिक कहानियों में छायावादोचित भावुकता तथा रागात्मक संवेदना का स्वर है और परवर्ती कहानियों में विद्रोही विचारधारा तथा व्यंग्य प्रहार का। भाषा सर्वत्र विषयानुकूल, प्रायः पात्रानुकूल है। इनमें अधिकतर कहानियां रचनाकार की वैचारिक क्रिया–प्रतिक्रिया की उपज

हैं, इसलिए ये कालजयी नहीं हो पायी हैं। कुछ कहानियां निरालाजी के व्यक्तित्व–विश्लेषण की दृष्टि से आज भी प्रासंगिक बनी हुई है।

2.6 संस्मरण एवं रेखाचित्र

निराला जी का अधिकांश लेखन किसी न किसी रूप में आत्म–सम्बद्ध रहा है। वह विभिन्न विषयो से प्रेरित होकर भी कहीं न कहीं 'आत्म' से परिचालित दिखता है। कथा–कृतियों में तो उनका 'आत्म' प्रगल्भ हो उठा है। इसका एक उदाहरण है–'कुल्ली भाट', जो प्रमुख रूप में एक व्यक्तित्व का रेखांकन है अथवा चरितोपन्यास है, लेकिन यथा प्रसंग लेखक का अपना जीवन वृतान्त मुखरित हो उठा है और अनुपात से बहुत ज्यादा हो गया है। यही स्थिति कई और गद्य कृतियों में दिखलाई देती है, जैसे–'सुकुल की बीवी', 'देवी', 'कला की रूपरेखा', 'क्या देखा', 'चतुरी चमार', स्वामी माधवानन्द जी महाराज और मैं, 'देवर का इन्द्रजाल' आदि कहानियाँ। निराला के आत्म कथ्य भी इसमें सहायक सिद्ध होते हैं। उन्होंने अपने लिखित पत्रों में, पुस्तकों की भूमिकाओं में, उनके समर्पणों में और सर्वाधिक तो आत्मसंस्मरणात्मक निबन्धों में अपने सम्बन्ध में बहुत कुछ लिख डाला है। उदाहरणार्थ–'गांधी जी से बातचीत', 'नेहरूजी से दो बातें', 'प्रान्तीय साहित्य सम्मेलन फैजावाद', 'काव्य साहित्य', 'भौन कवि', 'पं. नन्ददुलोर बाजपेयी', 'पंतजी और पल्लव' आदि निबन्ध विचारणीय हैं। इन निबंधों में उन्होंने अपनी वंश–परम्परा, दाम्पत्य जीवन, बैसवारा, लखनऊ, काशी, कलकत्ता और प्रयाग–प्रवास तथा वहाँ के साहित्य–संघर्ष का प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत किया है। निराला का निरालापन, उनकी दृढ़ता, साफगोई और संघर्ष–शक्ति का दस्तावेज इन रचनाओं में सुरक्षित है। इनके अनुशीलन के बिना निरालाजी के व्यक्तित्व–कृतित्व का सही आकलन असम्भव है। अन्तः साक्ष्य की दृष्टि से इस संस्मरणात्मक लेखन की विषय–वस्तु तो उपयोगी है ही, इसकी शिल्प–संरचना कम विलक्षण नहीं है। निराला जी ने एक विशेष प्रकार की भाषा–शैली का यहाँ प्रयोग किया है। शब्दावली बोलचाल की, लेकिन अद्भुत ऊर्जा से युक्त। शैली में भी बड़ा तेवर है, क्योंकि अधिकतर संस्मरण उनके आवेग से प्रेरित हैं। इनमें आत्मस्पष्टीकरण अथवा औरों की छवि–हनन का सोद्देश्य अभियान नहीं दिखलायी देता, लेकिन इनमें लोकशील का मिथ्याडंबर भी नहीं है। जो कुछ कहना है, वह बेलाग और दोटूक ढंग से कहा गया है। भले ही निरालाजी के ये कथन तब जनसाधारण की सोच या अभिरूचि के अनुकूल न रहे हों, पर वे नितान्त निराधार नहीं हैं। अपने संस्मरणों में उन्होंने बड़ी–बड़ी विभूतियों का विश्लेषण किया है। गांधी, नेहरू, टैगोर, महामना मालवीय, राजर्षि टंडन, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, सुमित्रानंदन पंत, बनारसीदास चतुर्वेदी, भुवनेश्वर, जोशी बन्धु आदि कितने ही महानुभावों की गतिमति पर उन्होंने प्रहार किया है। किंतु फिर भी किसी के प्रति कोई बद्धमूलधारणा निराला के मन में नहीं रही है। वे गांधीजी की 'हिन्दुस्तानी–नीति' का विरोध करते हैं। किंतु गुरुदेव रवीन्द्रनाथ जब गांधी के चरखा–आन्दोलन की हंसी उड़ाते हैं तो सबसे पहले निराला जी ही गांधी की अर्थनीति का समर्थन करते हुए इस विवाद में कूदते हैं। टैगोर को उन्होंने पहले अपना प्रतिस्पर्धी और आदर्श माना। अपनी पहली पुस्तक उन्होंने 'रवीन्द्र कविता कानन' के नाम से लिखी, लेकिन (किसी ग्रंथ से प्रेरित होकर ही सही पर) उन्हें अपना चरितनायक नहीं बनाया, जबकि उस युग के शत–प्रतिशत हिन्दी लेखक उन्हें अपना आदर्श बनाये थे। नेहरू को निरालाजी भारत का युवा हृदय सम्राट मानते रहे, पर उनके समाजवाद से असहमत रहे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पर एक जवाबी प्रतिक्रिया में निराला जी ने पैरोड़ियां लिखीं और यथासमय श्रद्धा विगलित होकर उनके प्रति श्रद्धांजलि भी अर्पित की। यही स्थिति उनके कई अन्यान्य अभियोगियों की है। तात्पर्य यह है कि निराला का पारदर्शी मन राग–विराग युक्त रहा है। उस मन का समूचा बिम्ब उनके इस संस्मरणात्मक लेखन में प्रतिबिम्बित हुआ है।

संस्मरणों के साथ–साथ निराला के आत्मकथ्यों में भी कई व्यक्तित्व–विधायक उपादान दिखाई देते हैं। ये आत्मकथ्य प्रायः उनके 'विवादी लेखन' के माध्यम से प्रकट हुए हैं। यह उल्लेखनीय है कि छायावादी काव्यान्दोलन, मुक्तछंद, निजी भाषिक संरचना और अपनी दार्शनिक अंतर्दृष्टि के कारण निरालाजी को सबसे अधि

क प्रतिवाद झेलने पड़े थे। उनका जुझारू व्यक्तित्व इसीलिए चाहे–अनचाहे विवादों से घिर गया। केवल सैद्धान्तिक विवाद ही नहीं, बल्कि अनेक प्रकार के वैयक्तिक मर्मान्तक जनापवाद भी। उनके तथ्योद्घाटन में निरालाजी की जो व्यथा–कथा प्रकट हुई है, वह एक ओर व्यावहारिक मनोविज्ञान का सत्य है या किसी के जीवन–वृतान्त का ऐतिहासिक तथ्य–कथ्य है तो दूसरी ओर वह हिन्दी खड़ी बोली के जीवन्त गद्य का अत्यन्त उत्कृष्ट उदाहरण हैं। बोलचाल की मुहावरेदार भाषा, जुझारू, शब्दावली, चुटीले वाक्य, तल्ख और पैनी धारदार शैली, बीच–बीच में व्यंग्य–विनोद, तात्पर्य यह है कि संवेदना के धरातल पर अद्भुत मनोरंजन करने वाली ये गद्य–रचनायें उनके निरालापन की सबसे बहुमूल्य निधि हैं। 'वर्तमान धर्म और साहित्यिक सन्निपात', 'कला के विरह में जोशी बन्धु', 'मनसुखा को उत्तर', 'बनारसीदास का अंग्रेजी ज्ञान', 'भुवनेश्वर की तारीफ', 'पंत और पल्लव' आदि रचनाओं में और साथ ही निरालाजी के स्फूट उद्गारों में (कविताओं में भी) ऐसे अनेक आत्मकथ्य फूट निकले हैं, जो निरालाजी के व्यक्तित्व–विवेचन के हेतु हैं। निष्कर्ष यह है कि उनका संस्मरणात्मक लेखन महत्वपूर्ण हैं। 'कुल्लीभाट' में संस्मरण के साथ–साथ रेखांकन भी है जबकि 'बिल्लेसुर बकरिहा' शुद्ध रेखाचित्र है। लेखक ने अपने ही प्रकृति–परिवेश से अर्थात् बैसवारे के गांवों और गलियारों से बिल्लेसुर के व्यक्तित्व के परमाणुओं का संचय किया है। यहां प्रकट रूप से निराला का आत्ममुखर नहीं है, पर आत्मानुभव का विस्तार उसमें पर्याप्त रूप में हुआ है। इस चरित्र के माध्यम से निरालाजी ने एक लघुमानव को विशिष्टजन के रूप में परिणत कर दिया है। पुस्तकीय ज्ञान से वंचित होकर भी बिल्लेसुर जीवन के व्यावहारिक ज्ञान में कितने पारंगत हैं, अर्थात् छोटे से छोटे व्यक्ति में भी मानवीय जीवन की महत्ता की कैसी–कैसी सम्भावनायें निहित हैं, यही इस रेखाचित्र का प्रमुख प्रतिपाद्य है। इसकी सहजता और सघनता अन्य कृतियों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रभावोत्पादक है।

तात्पर्य यह है कि निराला जी का संस्मरणात्मक रेखाचित्रों से युक्त यह चरितात्मक लेखन पर्याप्त मूल्यवान है।

2.7 निराला के निबन्ध

विषय–वैविध्य की दृष्टि से निराला के निबन्ध अनेक स्तरों का स्पर्श करते हैं। कहीं वे स्वच्छन्दतावादी, सौष्ठववादी या आदर्शोन्मुख हैं तो कहीं वस्तुन्मुखी, वैयक्तिक और सांस्कृतिक भूमियों पर अधिष्ठित हैं। अपने निबन्ध संकलनों–'प्रबन्ध प्रतिमा', 'प्रबन्ध पद्म', 'चाबुक', 'चयन' एवं 'संग्रह' में उन्होंने अनेक समस्याओं पर विचार किया है। कतिपय निबन्धों में लेखक का 'आत्म' इतना अधिक प्रतिबिम्बित हुआ है कि उन्हें 'निबन्ध' स्वीकार करना ही दुष्कर है। निराला ने स्वानुभूतियों का अन्तस्साक्ष्य देकर इन रचनाओं को 'आत्मसंस्करण' का रूप दे दिया है। 'गांधीजी से बातचीत', 'नेहरूजी से दो बातें', 'प्रान्तीय–साहित्य–सम्मेलन, फैजाबाद' आदि ऐसे ही शीर्षक हैं, जहाँ आत्मघटित तथ्य अधिक भास्वर हुए हैं। हम उन्हें चाहें तो संस्मरणात्मक निबन्ध कह सकते हैं, किंतु आत्मसंस्मरणों के रूप में उन्हें पृथक् रूप से स्वीकार करना अधिक युक्ति–युक्त है। कुछ निबन्ध अपनी निबन्धोचित सीमा को तोड़कर 'लघु प्रबन्ध' का रूप धारण कर लेते हैं। जैसे 'पंतजी और पल्लव' को 'निराला' ने समीक्षा का रूप दे दिया है। इसी प्रकार के और भी कुछ निबन्ध हैं, जिनमें निबन्धात्मकता गौण है। इस श्रेणी के निबन्ध आलोचना में गण्यमान है। शेष निबन्धों में लेखक ने अनेक विषय और विभिन्न मतवाद स्पष्ट किए हैं। निराला का निबन्ध–साहित्य स्थूल रूप से तीन कोटियों में विभाज्य है–

1. तत्त्व मीमांसा विषयक निबंध–

'निराला' के विवेचनात्मक निबन्धों की श्रेणी में उनके आध्यात्मिक एवं दार्शनिक निबन्ध विशेषतः ध्यातव्य हैं, जहां लेखक ने सूक्ष्म रहस्यों का मर्मोद्घाटन किया है। इन दर्शन–प्रधान निबन्धों में सृष्टि के उद्भव, स्थिति और प्रलय का मूल रहस्य है। शून्य और शक्ति के विचारक्रम में लेखक का तत्त्व–चिंतन अत्यन्त गूढ़ है।

इन निबन्धों में यद्यपि कहीं-कहीं वैचारिक तारतम्य का अभाव है, तथापि इनका तात्विक चिंतन प्रायः बड़ा गूढ़ और गम्भीर है। असंतुलन के कारण, उनकी आनुषंगिक विचारणा कहीं कुछ खण्डित-सी हो गई है। इस तात्विक मीमांसा को समसामयिक साहित्यिक उपलब्धियों में घटित करके निराला ने अपने कथ्य की प्रामाणिक पुष्टि की है। यत्र-तत्र कटु, व्यंग्य, मार्मिक प्रहार तथा रोचक रहस्योद्घाटन भी हुए हैं, जिन्हें अधिक संयत तो नहीं कहा जा सकता है, किंतु वहां अनुभूति की सच्चाई असंदिग्ध रूप से है। इस दर्शन को लेखन ने जीवन-दर्शन और किंचित काव्य-दर्शन के रूप में स्थापित किया है। इसी श्रेणी में कुछ और भी विवेचनात्मक रूप हैं, जहां वैचारिक पक्षों का प्राचुर्य है, किंतु इन निबंधों में लेखक का विधेयात्मक रूप धीरे-धीरे निषेधात्मक (ध्वंसात्मक), दृष्टिकोण धारणकर लेता है। निराला की स्वस्थ मनःस्थिति में लिखी गयी रचनाएं वस्तुतः बड़ी समृद्ध सिद्ध हुई है।

निराला के ये निबन्ध उनके दार्शनिक रूप के परिचायक हैं। लेखक वैदान्तिक विचारधारा स बहुत अभिभूत रहा है। 'बाहर-भीतर' शीर्षक निबन्ध में वे संसार को प्रवाह सिद्ध करते हैं, जिसमें उत्थान-पतन की लहरें हैं और उस प्रवाह के नीचे स्वतंत्रता का मोती है। इस दार्शनिक चिंतन के बीच निराला तत्कालीन स्वातंत्रता संग्राम का भी निर्देश करते हैं।

'प्रवाह' शीर्षक निबंध में वे ब्रह्म और शक्ति की व्यापकता का दिग्दर्शन कराते हैं। विश्व की कल्पना चंचल, अतः गतिशील है। परिवर्तन ही प्रवाह का कारण है और वही माया है। परिवर्तन को लेखक ने व्यष्टि या समष्टि का जीवन स्वीकार किया है और जीवन को भी प्रवाह माना है।

इसी क्रम में सामाजिक युगान्तर और नवोद्बोधन उपस्थित करके निराला ने रामकृष्ण, विवेकानंद, दयानन्द आदि महर्षियों का मूल्यांकन भी किया है। युगीन आवश्यकता के अनुसार स्वामी दयानंद की उपयोगिता निर्धारित करते हुए वे अपने भावुक उद्गार प्रकट करते हैं-'वह अपार बौद्धिक ज्ञान-राशि के आधार-स्तम्भ-स्वरूप अकेले बड़े-बड़े पण्डितों का सामना करते हैं। एक ही आधार से इतनी बड़ी शक्ति का स्फुरण होता है कि आज भारत के युगान्तर साहित्य में इसी की सत्ता प्रथम है।..... महर्षि दयानन्दजी से बढ़कर मनुष्य होता है-इसका प्रमाण प्राप्त नहीं हो सकता।' 'प्रबंध प्रतिभा' में निराला नारी की दिव्यता के पूजक हैं। समुद्र-मंथन के रूपक के आधार पर वे समुद्र को ब्रह्म और देव-दैत्यों को सत्-असत् प्रवृत्ति सिद्ध करते हैं। चौदह रत्नों में लक्ष्मी सर्वोपरि है। इसलिए नारी गृहलक्ष्मी है। अन्य रत्नों में 'उर्वशी' कला, गति और गीति की प्रतिमा मानी जाती है। लेखक के धारणानुसार- प्रत्येक स्त्री में एक प्रियाभाव है। इस भाव का भोक्ता संसार में केवल उसका पति है। यही उर्वशी का भाव है। प्रिया भाव में गीति और गति के साथ रचना भी आती है। वह ललित वाक्य-रचना ही छंद-रचना है। निराला की व्याख्या के अनुसार शब्दों के साथ काव्य और ताल के साथ नृत्य-यही देवी सरस्वती का रूप है। सौन्दर्य-बोध में नारी के अप्सरा भाव का प्राधान्य रहता है। कला में नारी-स्वभाव प्रधान होता है। यह कोमलता की प्रकृति है। निश्चय ही निराला के ये नारी-विषयक विचार बड़े प्रेरणास्पद हैं। सुधार के क्षेत्र में निराला यहां कुछ विधेयात्मक परामर्श प्रस्तुत करते हैं उनका एक कथन है-"हर गांव में प्रतिदिन जितनी भीख निकलती है, यदि उतना अन्न रोज एकत्र कर लिया जाए तो गांव में ही एक छोटी-सी पाठशाला खोली जा सकती है।"

श्री रामकृष्ण की विचाराधारा (मिशन) से प्रभावित होकर निराला ने अनेक रचनाएं प्रस्तुत की हैं। उनका गौरव-गायन करते हुए वे कहते हैं-"श्री रामकृष्ण के सहस्र-सहस्र पोत इस समय संसार में ज्ञानमणियों का प्रचार-व्यापार कर रहे हैं। मैं शाक वणिक बाजार के एक तरफ बैठा हुआ असम्प्रज्ञात सुनता रहा हूं। लोगों ने ऐश्वर्य की मदिरा बहुत पी, अब शुष्कतालु प्रेमीपीयूष पान करना चाहते हैं।(संग्रह, पृष्ठ-33)

निराला ने श्री रामकृष्ण को एक सिद्ध पुरुष और युगावतार सिद्ध किया है, जिन्होंने भारत के धार्मिक पतझड़ को अपने किसलय साधनाकुल मृदुल बसंत स्पर्ष से पूरा किया।"(संग्रह, पृष्ठ-35) निराला ने उनका जीवनवृत्त और

माहात्म्य स्पष्ट करते हुए हर धर्म में उनकी सर्वव्यापकता प्रमाणित की है। श्री राम–कृष्ण को विज्ञानविद् सिद्ध करते हुए वे कहते हैं कि परमाणुओं के संघात से जो शक्ति पैदा होती है, वे उसके नियामक हैं। श्री रामकृष्ण की अद्वैत साधना, उनके सम्प्रदाय और भारतीय जन–जीवन में उनकी व्यापक पृष्ठभूमि का निरुपण करते हुए निराला उनके शक्ति जागरण तथा अवतार के हेतु पर प्रकाश डालते हैं और उनका तुलनात्मक मूल्यांकन करते हैं। इसी प्रकार 'वेदान्त केसरी स्वामी विवेकानंद' शीर्षक निबंध में लेखक ने उनके जीवनवृत्त, उनकी वाग्मिता, उनकी सहस्रमुखी प्रतिभा और मुखमण्डल की दीप्ति का संस्मरणपूर्वक स्तवन किया है। इन निबन्धों में निराला का 'कविर्मनीषी' रूप भास्वर हुआ है।

2. सामाजिक विचार–विश्लेषणपरक निबन्ध :–

सामाजिक वैचारिक तत्त्वों का भी 'निराला' के निबंधों में पर्याप्त पुट है। लेखक ने लौकिक जीवन की अन्तर्बाह्य स्थितियों पर सूक्ष्म दृष्टि डाली है। यहां उसकी स्वच्छंद मनोवृत्ति के साथ विद्रोह भरी कर्कश आवाज भी फूट निकली है। व्यंग्य एवं विनोद की दृष्टि से ये निबन्ध अनुपम हैं, साथ ही विषय–वस्तु और शिल्प के क्षेत्र में भी पूर्ण प्रकृष्ट हैं। भारत के सामाजिक स्वरूप पर लेखक ने अपने विचार निर्भीकता और सत्साहस के साथ स्पष्ट किये हैं। 'हमारा समाज' इसी प्रकार का लेख है।

लेखक की धारणा है कि स्वतः अनुशासन और अन्तर्जातीय संगठन से नया युग–प्रवर्तन सम्भाव्य है। वर्तमान हिन्दू समाज के प्रति 'निराला' असहिष्णु हैं। निराला की कालजयी वाणी है–'प्राचीन नालियाँ गंदगी से भर गई हैं। सामाजिक स्वतंत्रता के अनेक सुधारक हुए हैं, किंतु उससे परम्पराओं का विरोध ही हुआ है। इस सामाजिक परिस्थिति के भीतर जो तूफान उठ रहा है, उसमें दिग्यंत्र से दिशाओं का निर्णय भले ही हो, पर विक्षुब्ध तरंगों से सुधार का पोत आगे नहीं बढ़ पाता।' लेखक वर्तमान की कटु स्थिति का रेखाचित्र प्रस्तुत करता हुआ हमारे चारित्रिक पतन, कर्मकाण्ड, जातीय वैषम्य, संकीर्ण ज्ञान–विस्तार और अन्य विरोधी वृत्तियों का परिचय प्रस्तुत करता है। भारत में उत्पन्न होने वाली वर्णसंकरता का प्रमाण देकर वर्ण–व्यवस्था की आडम्बर प्रियता का 'निराला' ने यहां प्रत्यक्ष परीक्षण किया है। जातीयता के समर्थक न होकर भी निराला ने वर्णाश्रम धर्म की उपयोगिता सिद्ध की है। वे ध्वंसात्मक या वर्जनात्मक दृष्टिकोण नहीं स्वीकार करते। उनके मतानुसार–'जाति–पांति तोड़क मण्डल' के स्थान पर 'जाति–पांति योजक मण्डल' स्थापित करने चाहिए। प्रसंगवश वे ब्राह्मण धर्म की श्रेष्ठता प्रतिपादित करके वर्णाश्रम की महत्ता घोषित करते हैं। समाज के वैधानिक उन्नयन, उसके प्राकृतिक सुधार और भविष्यत् की मंगलाशा के प्रति अपने अभिमत प्रकट करते हुए उनके उद्‌गार हैं कि–शूद्र शक्तियों से यथार्थ भारतीयता की किरणें फूटेंगी। वहीं भविष्य के ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हैं और ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि दृप्त जातियाँ शूद्र हो गई हैं। उनका कर्म–क्षेत्र में उतरना ही भारतीय स्वाधीनता है। निराला द्वारा युगों पूर्व घोषित की हुई ये उक्तियाँ आज चरितार्थ हो रही हैं। यह भविष्यवाणी इस तथ्य का प्रमाण प्रस्तुत करती है कि वे भविष्यद्रष्टा थे। उनकी अन्तर्दृष्टि इन निबन्धों में अवलोकनीय है। निराला ने गांधी को वैश्यत्व का प्रतिनिध माना है और उनमें उन्हीं गुणों का समावेश किया है। वे पुरातन वर्ण–व्यवस्था के समर्थक हैं, किंतु उसके विकृत रूप के नहीं। नागरिक जीवन में पराधीन वृत्ति के कारण समाज के शूद्रताजन्य व्यापार हमारी सात्विकता को प्रतिक्षण नष्ट कर रहे हैं। निराला की व्याख्या है कि आज भावात्मक 'सत्' के क्षीण हो जाने से समाज 'भूतसंज्ञक' हो गया है। लेखक वास्तविक सुधार के लिए यथार्थ तत्त्वों पर बल देता है। सामाजिक जीवन को चरितार्थ करने वाले साहित्यकारों पर भी लेखक ने स्फुट विचार किये हैं। उसके मतानुसार प्रेमचंद यदि आदर्श न लिखकर वास्तविक सत्य लिखते तो अधिक हितेय होता। संसार समाज से सहयोग करता रहे, इसलिए औदार्य की अपेक्षा है। लेखक आज की स्थिति का नग्न स्वरूप प्रदर्शित करने में भी संकोच नहीं करता। इन शब्दों में उसके कथन की तीक्ष्णता देखिए–'देश के लोग अपना ही मांस नोच–नोचकर खाते हैं।' लेखक ने प्रदर्शनमूलक धर्म के प्रति कटु व्यंग्य किया है। जैसे–जब तक क्रिया और भावना का आदान–प्रदान नहीं होता, 'जनेऊ का दण्ड–धारण करके शामियाने के मण्डल में लंगोटी का स्वाँग' केवल अहम का प्रस्फुटन है।

2outFrontBlackMA Hindi Paper IV Nirala 1-192 #1

इन शब्दों में देखिए—विक्षोभ भरा हुआ कितना असंतोष व्यक्त हो रहा—'पहले आदमी बनाइए, सुधार तब होगा।' (प्रबंध प्रतिमा—147) इस प्रकार के निबन्धों में लेखक की बौद्धिक विचारणा और प्रतिपाद्य के प्रति उसकी रागात्मक सहानुभूति द्रष्टव्य है। शिल्प और कथ्य यहां अपने आज में प्रकृष्ट हैं।

3. साहित्यिक निबंध :—

'निराला' के कतिपय निबंध साहित्यिक प्रतिवादों और बौद्धिक वितर्कों पर आधारित है। युगीन समस्याओं के संदर्भ में उनके ये वाक्कलह भी उनके मनोबल का परिचय देते हैं। 'साहित्यिक सन्निपात' सिद्ध करने वाला पत्र—पत्रिकाओं के कटु एकांगी लेख को उद्धृत करते हुए लेखक ने अपने 'विचारकों की संकीर्ण मनोवृत्ति का उल्लेख किया है। विषय—वस्तु के मध्य यह प्रतिपादन पद्धति सायास और सोद्देश्य तो है, पर वहां तटस्थ वृत्ति का मुक्त चिंतन नहीं है। उसमें पूर्वाग्रह या 'हठ धर्म' बड़ा प्रबल है। रहस्यवाद की दार्शनिकता को स्पष्ट करता हुआ लेखक पौराणिक प्रतीकों की गहन गवेषणा प्रस्तुत करता है और यत्र—तत्र गहरे व्यंग्य भी प्रस्तुत करता है, जैसे—'अनेक स्त्रियों के एक मियाँ, वही कश्यप। नदियां और नारियां पर कुछ सृष्टि के अक्षय वट। यानी न वह मुर्गी है और न अंडा।' इस कथन में कई रोचक रूपक हैं—''हम कुम्भकर्ण हैं। सोते हैं तब नासिका गर्जन द्वारा मेघनाद बनते हैं, दसों दिशाएं दस सिर बन जाती हैं और सुप्ति रहती है अमर—अभ्र गर्जन में मेघनाद और दृष्टि होती है सरस्वती। 'चरखा' में रवीन्द्र के प्रति यहाँ विरोध व्यक्त हुआ है—''डेढ़ भाषा में यह चपत का जवाब घूंसा है।'' (प्रबंध प्रतिमा) महात्माजी के चरखा आन्दोलन के प्रति रविन्द्र बाबू ने जो असंतोष प्रकट किया था, उसी का व्यग्र प्रतिक्रिया यहां अंकित हुई है। महात्माजी को लेखक जीर्ण जाति का प्राण और रवि बाबू को गौरव मुकुट मानता हुआ भी उनके मत का खण्डन करता है। निराला की गूढ़ोक्ति है कि उनकी बुद्धि का घोड़ा डबल मार्च या क्विक मार्च दौड़ रहा है, परंतु पश्चिमी सिद्धांतों पर ही चक्कर काटता हुआ चला जाता है, ठहरता नहीं। इस प्रकार वाद—विवाद, संवाद स्थापित करते हुये ये प्रतिवाद विचारणीय हैं। इन विचारों में कुछ—कुछ उलझाव है, किंतु इन सिद्धांतों के पीछे नैतिक बल है। यहां किसी के प्रति कोई बद्धमूल धारणा नहीं है।

समीक्षा की अनेक पद्धतियां निराला के इन निबंधों में प्राप्य हैं। उन्हें व्याख्यात्मक, तुलनात्मक, निर्णयात्मक, परिचयात्मक, विश्लेषणात्मक और गवेषणात्मक आदि सभी रचना—विधान स्वीकार्य रहे हैं। आक्रोशपूर्ण आलोचना में वे दोष—दर्शन—प्रधान कटु तर्कों सहित कटू दृष्टि अपनाते हैं और व्यंग्यात्मक प्रहार भी करते हैं। प्रमाणस्वरूप विचारणीय हैं, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के प्रति उनकी ये पंक्तियां—''रबड़ छन्द को एक आंख से न देख सकने वाले द्विवेदी जी कभी—कभी रबड़ छन्द के लकडदादा छन्द की सृष्टि कर बैठते हैं—यह हमें आज ही मालूम हुआ।'' पन्त के स्वभाव में इसी प्रकार ''फीमेल ग्रेसेज'' का आरोप करना एक आपेक्षक कथन है। यह व्यंग्य विधा उनके साहित्य में बहुधा व्यवहृत है। प्रशंसात्मक दृष्टिकोण अपनाने पर वे आलोच्य विषय को अत्यधिक गौरव प्रदान कर देते हैं। अर्थ और शब्दों के औचित्य की विशिष्ट पहचान निराला को प्राप्त थी। 'पल्लव' के पुस्तकालोचन में वे प्रत्येक वाक्य, समस्त शब्दावली और तत्सम्बन्धी प्रत्येक प्रयोग की शव परीक्षा करते हैं। ब्रज भाषा, खड़ी बोली, मुक्त एवं कवित छन्द, रीति काव्य एवं वर्तमान काव्य, इन सारे प्रश्नों पर उनके निष्कर्ष बड़े स्वस्थ एवं संयत हैं। रवीन्द्र साहित्य में उनका गंभीर प्रवेश रहा है। बंगला साहित्य में उन्हें अधिकार प्राप्त था। निराला औचित्य के उन्मुक्त समर्थक रहे हैं। इन समीक्षा—कृतियों में बंगला, उर्दू, संस्कृत और प्राचीन भाषाओं के अन्य अनेक कवियों को परखते हुए हिन्दी की प्रत्येक विधा—नाटक, उपन्यास, गीत, भाषा—विज्ञान आदि से सम्बन्धित उन्होंने कई मौलिक स्थापनाएं की हैं। आधुनिक हिन्दी साहित्य और उसकी विभिन्न विधाओं के प्रति उनके परामर्श विचारणीय हैं। सिद्धांत वाक्यों में वे प्रायः सूत्र प्रणाली अपनाते हैं, यथा—''जिस तरह व्याकरण भाषा का अनुगामी है, समालोचक उसी तरह कृति का।'' यह कथन व्याख्या के लिए पर्याप्त अवकाश चाहता है। भावुकता की स्थिति में वे कवित्वपूर्ण शैली का आश्रय लेते हैं, जहां कल्पना वैदग्धयुक्त कोई विराट रूपक रहस्य—सौन्दर्य के साथ अनुप्राणित हुआ है, यथा—''आकाश की नील

नीलम ताराओं से टंकी छत, शुभ्र चन्द्र और सूर्य का शीतोष्ण एक ही स्वर की सरस सृष्टि सरस्वती।" इस रूपक में लेखक ने रंगमंच का प्रत्यक्ष दृश्य अंकित किया है। भावुकतापूर्ण प्रसंगों में उनका कवि जाग जाता है, जिससे उनके कथ्य में सरसता एवं प्रेषणीयता आ जाती है।

निष्कर्ष यह है कि निराला जी के ये आलोच्य निबन्ध गद्य की अनेक शैलियों का समर्थ संवहन करते हैं। हास्य–व्यंग्य–विनोद, बौद्धिक विश्लेषण, कवित्वपूर्ण भावोद्रेक, रूपकात्मक तथा काल्पनिक चित्रण और अन्ततः वाणी की विदग्धता यहां प्रभूत मात्रा में विद्यमान है। निबंधों की भाषा भावानुकूल, सरस, सुबोध एवं प्रवाहपूर्ण है। तत्सम, तद्भव, देशज सभी प्रकार की शब्दावली और प्रचलित मुहावरेदारी यहां प्रयुक्त हुई है। सुरुचि सम्पन्न रोचक सामग्री लेखक को विशेष प्रिय है। मुक्त चिंतन के क्षणों में प्राप्त लेखक के ये निष्कर्ष बड़े विचारोत्तेजक हैं। बौद्धिक तर्कों में असंतुलन और पक्षपातपूर्ण भाव भी खोजे जा सकते हैं, फिर भी लेखक का सत्साहस और उसकी अन्तःस्फूर्ति इतनी मर्मस्पर्शिणी है कि इन छिद्रों की ओर ध्यान ही नहीं जाता। निबंध–कला की दृष्टि से उपर्युक्त गद्य–कृतियां निश्चय ही महिमा मण्डित हैं।

2.8 निराला की अनूदित कृतियाँ

बंगला निराला जी की मातृभाषा थी, इसलिए उन्होंने बंकिमचंद के इन ग्यारह उपन्यासों के अनुवाद हिन्दी में किये–

1. आनन्द मठ 2. कपाल कुण्डला 3. चन्द्रशेखर 4. दुर्गेश नन्दिनी 5. कृष्णकान्त का बिल 6. युगांगुलीय 7. रजनी 8. देवी चौधरानी 9. विष वृक्ष 10. राज सिंह 11. राजरानी।

इनके अतिरिक्त उनके द्वारा अनूदित अन्य कृतियाँ हैं–

1. रथ यात्रा (नाटिका) रवीन्द्रनाथ टैगोर
2. गोविन्द दास पदावली
3. श्री रामकृष्ण वचनामृत (चार खण्ड)
4. राजयोग (स्वामी विवेकानंद)
5. परिव्राजक (भारत में विवेकानंद)
6. वात्स्यायन कामसूत्र (संस्कृत से हिन्दी)
7. रामयण बालकाण्ड, विनय खण्ड (खड़ी बोली पद्यानुवाद)

इनके अतिरिक्त उनके कुछ अनुवाद अधूरे ही रह गये हैं, जैसे–चंडीदास पदावली, सीताराम आदि। निराला जी अनुवाद में भाव, भाषा, शब्दावली मुहावरे दानी आदि का यथोचित निर्वाह करते दिखायी देते हैं। यह अनुवाद कार्य उन्होंने जीविकोपार्जन हेतु किया था और हिन्दी भाषा साहित्य के विकास हेतु भी।

2.9 निराला का स्फुट लेखन

इसके अंतर्गत निराला के द्वारा सम्पादित चार साहित्यिक पत्रिकाएं विचारणीय हैं–

1. **समन्वय :–**

इससे वे 1922 से जुड़े। इसमें वे सहायक सम्पादक थे और 'एक दार्शनिक' के नाम से नियमित लेखक भी। रामकृष्ण मिशन कलकत्ता के इस साम्प्रदायिक पत्र में निराला ने लगभग ढ़ाई वर्षों तक कार्य किया।

2. **मतवाला :–**

यह बाबू महादेव सेठ द्वारा कलकत्ता से शुरू किया गया हास्य–व्यंग्य प्रधान साहित्यिक पत्रिका थी। इसके तुकान्त पर ही उन्हें 'निराला' उपनाम दिया गया था। इसमें निराला जी ने 'साहित्य शार्दूल', शौहर, जनाबआली, गरगज सिंह वर्मा, पुराने महारथी, जैसे छद्म नामों से रचनाएं की हैं। निराला को स्थापित करने में इस पत्र की बहुत बड़ी भूमिका रही है। उन्होंने मुक्तछन्द, काव्यानुराग और युग परिवर्तन के अनेक प्रयोग इस पत्र से किये हैं।

3. **रंगीला :–**

पारस्परिक विवाद के कारण 'मतवाला' से अलग होकर निराला जी ने जून 1932 में अपना यह नया पत्र प्रकाशित किया, लेकिन यह लोकप्रिय नहीं हो पाया।

4. **सुधा :–**

लखनऊ से प्रकाशित इस पत्र में निराला ने सहायक रूप में लगभग 12 वर्षों तक कार्य किया। उनका यह सम्पादकीय रूप सर्वथा सराहनीय है।

2.10 बाल साहित्य प्रणयन

निराला जी ने किशोर–मनोविज्ञान को ध्यान में रखकर कई अमूल्य कृतियाँ हिन्दी जगत को दी हैं। इनमें विचारणीय हैं–भक्त प्रहलाद, महाराणा प्रताप, भीष्म, भक्त ध्रुव, मनहर चित्रावली, महाभारत और रामायण की अन्तर्कथायें। 'भक्त ध्रुव' की भूमिका में उन्होंने लिखा था–'किसी देश को उन्नति के शिखर पर संस्थापित करने का सबसे उत्तम उपाय यही है कि उसके बालकों की सार्वभौमिक शिक्षा की ओर ध्यान दिया जाए। उनके सामने देश के आदर्श बालकों के चरित्र रखे जायें।' 'भक्त प्रहलाद' की भूमिका में वे फिर कहते हैं–'ऐसे बालक के चरित्र का प्रचार पथभ्रष्ट कर देने वाली कुशिक्षा से बचाने के लिए देश क बालकों के लिए अवश्य होना चाहिए।' 'भीष्म' जैसे महापुरुष और 'महाराणा प्रताप' का लोकोज्जवल चरित्र बालकों को सम्बोधित है। चरितात्मक साहित्य में तो वे गण्यमान हैं ही। इनमें एक ऐतिहासिक आख्यान है, शेष पौराणिक। 'महाराणा प्रताप' इतिहासपरक कृति है। इसमें अकबर को भ्रष्ट शासक और महाराणा को 'हिन्दी कुल गौरव' सिद्ध किया गया है। निःसंदेह यहां निरालाजी राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना से बहुत प्रभावित हैं। ध्रुव, प्रहलाद जैसी कृतियां, भक्ति भावना, पौराणिक आस्था, साथ ही भारतीय जीवन के पारम्परिक उच्चादर्शों से ओत–प्रोत हैं। महाभारत और रामायण का अवगाहन करते हुए निराला जी ने अपने संस्कृति बोध का प्रमाण दिया है। इनके आधार पर यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि–इन कृतियों में वीर पूजा (हीरो वर्शिप) की भावना मुखरित हुई है, जिसका स्रोत है–निराला का पारंपरिक परिवेश और संस्कार। इसकी परिणति या प्रतिक्रिया परवर्ती लघु मानवों, जैसे कुल्लीभाट, चतुरी, बिल्लेसुर आदि में हुई है। यह सहज विकास भी है और 'ऐण्टी क्लाइमेक्स' भी। 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' का उदात्त चरित्र अंकित करने के कारण निराला जी ने इन लघु मानवों का चित्रण करते हुए भी धूर्ताख्यान नहीं लिखे हैं, बल्कि लघु में विराट की सम्भावनायें प्रदर्शित की हैं।

इन कृतियों को देखने के बाद निरालाजी को मूलतः विद्रोही कविया आद्यंत क्रांतिकारी विचारक कहना एकपक्षीय होगा।

इन चरित ग्रंथों में एक विशेष प्रकार की मुहावरेदानी और भाव–भंगिका का प्रयोग हुआ है, जो उनक विकासात्मक विवेचन में बहुत उपादेय होगा।

निराला जी ने इनका लेखन मुख्यतः प्रकाशकीय आग्रह पर किया था, लेकिन फिर भी अर्थ शुचिता का निर्वाह करते हुये जीवनी लेखन–कला का उन्होंने भरसक सदुपयोग इनमें किया है। अहिन्दी भाषी क्षेत्र में रहने के कारण उन्होंने भाषा का विषयानुरूप व्यावहारिक अनुप्रयोग किया है और बाल–पाठकों को ध्यान में रखकर इसकी विषय–वस्तु को युगबोध से जोड़ दिया है। इसी विचार–क्रम में निराला लिखित महाभारत, रामायण की अन्तःकथायें आदि पुस्तकें भी अवलोकनीय हैं। निःसन्देह यह उनका प्रथम कोटि का साहित्य नहीं है, लेकिन इन सबका सांगोपांग अवगाहन किये बिना निरालाजी का पूरा व्यक्तित्व परिलक्षित नहीं हो पायेगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि निराला ने विशाल वांग्मय की रचना की है, जो परिमाण और स्तर दोनों दृष्टियों से महत है। उन्होंने केवल नाटक एकांकी, गद्य में नहीं लिखे अथवा वे प्रकाशित नहीं हुए। हालांकि नाट्य लेखन में उतरने का उद्घोष उन्होंने किया था। उन्होंने मंचन कार्यक्रम में भी भूमिका निभायी थी लगता है। उनकी नाट्य रचनाएं कहीं खो गयीं। उनका शेष साहित्य सुरक्षणीय है।

बोध प्रश्न–

1. निराला की काव्य रचनाओं के नाम लिखिए।
2. निराला के कथा साहित्य पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।
3. निराला के संस्मरण एवं रेखाचित्र पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।

2.11 इकाई सारांश

निराला जी ने एक दर्जन काव्य कृतियां लिखी, जिनमें एक खण्ड काव्य है, शेष मुक्तक। उन्होंने कुल सात उपन्यास और लगभग साठ कहानियों की रचना की। उनके द्वारा रचित रेखाचित्र "बिल्लेसुर बकरिहा" और लगभग आधा दर्जन जीवनी ग्रंथ भी काफी महत्वपूर्ण हैं। निराला जी के चार संकलनों में लगभग 50 कहानियां संकलित हैं। इसी प्रकार उनके पांच निबन्ध संकलनों में लगभग 60 निबंध संकलित हैं। उन्होंने 20 से अधिक कृतियों के अनुवाद किये। चार पत्रों का सम्पादन किया और काफी कुछ स्फुट लेखन किया। स्पष्ट है कि नाटक विधा के अतिरिक्त गद्य–पद्य की समस्त विधाओं में उन्होंने अपनी विशिष्ट छाप छोड़ी है।

2.12 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला की काव्य रचनाओं पर प्रकाश डालिए।
2. निराला के कथा साहित्य को विस्तार से समझाइए।
3. निराला के निबंधों पर प्रकाश डालिए।
4. निराला के अनुवाद साहित्य पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।

2.13 नियत कार्य/गतिविधियाँ

निराला के समग्र साहित्य को समझने के लिए निराला के साहित्य पर लिखी गई विविध लेखकों एवं समीक्षों की पुस्तकों का सहारा भी किया जा सकता है।

2.14 चर्चा तथा स्प टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

2.14.1 चर्चा के लिए बिन्दु

2.14.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

2.15 संदर्भ : अतिरिक्त पठन सामग्री

1. निराला की साहित्य साधना (तीन खण्ड) डॉ. रामविलास शर्मा।
2. निराला रचनावली– नंदकिशोर नवल– राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
3. निराला समग्र– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
4. निराला का गद्य– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
5. निराला ग्रंथावली– सम्पादक– ओमकार शरद आदि।

2.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 2.3
2. देखिए 2.4
3. देखिए 2.6

निराला की काव्य यात्रा

संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 निराला का प्रबन्ध काव्य

3.4 तुलसीदास

3.5 राम की शक्ति पूजा

3.6 कुकुरमुत्ता

3.7 निराला का गीति काव्य

3.8 इकाई सार/स्मरण योग्य बातें

3.9 अपनी प्रगति जाँचिए

3.10 नियत कार्य/गतिविधियाँ

3.11 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

3.12 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

3.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.1 परिचय

निराला का काव्य–क्षेत्र अत्यन्त विशद है। उन्हें किसी एक वाद की सीमा में बाँध पाना कठिन है। उन्होंने जो आरम्भिक कविताएं रचीं, उनमें छायावादी काव्य प्रवृत्तियाँ दिखायी देती हैं। इसीलिए निराला को छायावाद के प्रर्वतकों में से एक माना गया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तथा कुछ अन्य समीक्षकों को उनके इस आरम्भिक काव्य में स्वछन्दतावादी तत्तव दिखायी पड़े हैं। इसी अवधि में निराला ने रहस्य–दर्शन से युक्त कई कविताएँ लिखीं, जैसे– **तुम और मैं, पचंवटी प्रसंग, कहाँ मेरा अधिवास कहाँ, कौन हम के पार, पास ही रे , हीरे की खान, खोजता उसे कहाँ नादान** आदि। इन कविताओं के आधार पर कुछ समीक्षकों ने उन्हें रहस्यवादी सिद्ध करने का प्रयास किया। कालान्तर में ' कुकुरमुत्ता ' और 'नये पत्ते' की रचना करते हुए निराला जी ने सामाजिक यथार्थ से प्रेरित होकर हास्य–व्यंग्य और विद्रोह से ओत–प्रोत जो कविताएँ लिखी, उनमें समीक्षकों को प्रगति और प्रयोग के लक्षण दिखायी दिये। इसी अवधि में एक मोड़ आया, जब उन्होंने 'बेला' नामक काव्य संग्रह में उर्दू बहुला भाषा में गजलें लिखी, जिनमें श्रृंगार भी हैं और युग बोध भी। दूसरा मोड़ आया, जब उन्होंने भक्ति परक् गीत लिखे, जो

'अर्चना' और 'आराधना' में संकलित हैं। उनके अंतिम मोड़ की कविताएँ 'गीत गंज' और 'साध्य की कली' में दष्टव्य हैं। इनमें गहरी निराशा मृत्युबोध और विक्षेप के लक्षण दिखाई देते हैं।

निराला की यह काव्य यात्रा वैविध्यपूर्ण हैं। भाव और भाषा, दोनो दृष्टियों से उनकी कविताएँ सर्वथा विशिष्ट हैं। उनके काव्य के सही मूल्यांकन हेतु उसे दो वर्गों में विभाजित किया जाना चाहिए–

1. प्रबन्ध काव्य

2. गीति काव्य

3.2 उद्‌देश्य

इस इकाई का उद्‌देश्य है निराला के काव्य का प्रवृत्ति परक विश्लेषण। यह उल्लेखनीय है कि निराला ने छायावाद, प्रगतिशील चेतना, प्रयोग शील काव्य धारा, नई कविता और नवगीत की मूल भूत प्रवृत्तियों का न्यूनाधिक समावेश अपनी काव्य में किया है। उन्होंने छायावादी भावबोध से प्रेरित होकर ऐसी कई सारी कविताएँ रची है। जिनमें प्रगाढ़ प्रणय भावना है। सूक्ष्म सौन्दर्य बोध है, रहस्य चेतना है, स्वछन्दतावादी प्रवृत्ति है और जिनमें छायावृत्ति प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। इन कविताओं में उन्होंने प्रकृति का मानवीकरण किया है। कवि ने विशेषण विपर्यथ का प्रयोग खूब किया है और नये–नये बिम्बों रूपकों तथा प्रतीकों की रचना की है। इन कविताओं में कहीं कल्पना की उड़ान है और कहीं अतीत के प्रति अनुराग। इस श्रेणी की श्रेष्ठ कविताएँ हैं– जूही की कली, पंचवटी प्रसंग, तुम और मैं, अधिवास, कौन तन के पार, पास ही–रे, हीरे की खान, सन्ध्या सुन्दरी, सखि बसन्त आया, यमुना के प्रति, रेखा, बहू, शेफालिका, शिवाजी का पत्र, बादल संग , जागो फिर एक बार, आदि।

इसी अवधि में निराला जी ने जन–जीवन से जुड़ी हुई कई कविताएँ लिखीं, जैसे–वन बेला, भिक्षुक, विधवा दान आदि।

प्रगतिवादि चेतना से प्रभावित होकर उन्होंने एक ओर राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना को स्वर दिया जो सहस्राब्दि और यमुना के प्रति जैसी कविताओं में व्यक्त हुयी हैं। दूसरी ओर उन्होंने व्यंग्य विक्षोम का सहारा लिया, जो 'कुकुरमुत्ता' गर्म पकौड़ी, रानी और कानी, मैं बम्हन का लड़का, आना रे गंगा के किनारे, खजोहरा, मास्को ड़ाइलाग्स, वह तोड़ती पत्थर, स्फटिक शिला आदि में दष्टव्य है।

नये पत्ते में उनकी, जो कविताएँ संकलित हुई हैं वे अपेक्षाकृत काफी प्रयोगपूर्ण हैं, जैसे महँगू महँगा रहा, झींगुर ड़टकर बोला आदि। गीत गुंज की गीतों में नई कविता और नवगीत के लक्षण दिखायी देते हैं। इन सभी का परिचय कराना इस इकाई का मुख्य उद्‌देश्य है।

3.3 निराला का प्रबन्ध काव्य

निराला जी ने मात्र एक खण्ड काव्य की रचना की है, वह हैं 'तुलसीदास' यद्यपि काव्य शास्त्रीय आधार पर इसे भी शुद्ध प्रबन्ध काव्य या खण्ड काव्य नहीं कजा सा सकता, क्योंकि यह एक की कम में रचे गये सौ छन्दों की एक लंबी रचना है। कवि न तो इसे सर्गों में विभाजित किया और न आरम्भ में मंगलाचरण तथा अन्त में भर वाक्य का विधान किया हैं। इसमें गोस्वामी तुलसीदास के जीवन का स्थूल दिग्दर्शन कराते हुए उनके योगदान का यशोगान किया गया है। नियमानुसार इसे लम्बी कविता ही कहा जा सकता है। वस्तुतः छायावादी काव्य धारा में

प्रबन्ध काव्य के लिए यथोचित गुंजायश ही नहीं थी छायावाद तो मुक्तक्षणों की वाणी थी। प्रसाद जी ने 'कामायनी' की रचना करके निराला ने तुलसीदास लिखकर और सुमित्रा नन्द पंत ग्रंथि लोकायतन तथा 'सत्यकाम ' की रचना करके अपनी प्रबन्ध पटुता का प्रमाण दिया है। इसी प्रकार निराला ने राम की शक्ति पूजा नामक लम्बी कविता में प्रबन्धात्मकता का निर्वाह किया हैं। इसलिए इस संदर्भ में इन दोनों का परिचय अपेक्षित है।

3.4 तुलसीदास

यह निराला की कालजयी काव्य कृति है। प्रख्यात कथावस्तु पर आधारित यह एक प्रबन्धात्मक रचना है। मध्ययुगीन भारत की सांस्कृतिक चेतना को काव्यात्मक रूप देने का कार्य निराला जी ने अपनी इस लंबी कविता के माध्यम से किया है। कुल एक सौ छन्दों में व्याप्त इस कृति में मुगल कालीन भारत की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक धार्मिक, परिस्थितियों का आरम्भ में ही विवेचन करते हुए देश की दुर्दशा का चित्रण किया गया है। फिर तुलसीदास का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। वे सुखमय दाम्पत्य जीवन यापन कर रहे थे। एक दिन मित्रमण्डली के साथ वे चित्रकूट–भ्रमण के लिए गये। वहाँ की प्रकृति से उन्हें प्रेरणा मिली। उनका मन अपनी पत्नी के प्रति मोहाविष्ट हो गया। घर आकर सूचना मिली की पत्नी मायके चली गयी है। वे उसी उन्मन्ता वस्था में ससुराल जा पहुँचे। उनकी इस गति मति पर पत्नी रत्नावली को बहुत क्षोभ हुआ और उसने प्रबोध देते हुए तुलसीदास को फटकार लगायी। उसके मर्म भरे वाक्यों से तुलसीदास की चेतना जागृत हो उठी। उन्होंनें इस जड़ मोह से मुक्त होने का संकल्प लिया। गृहस्थ जीवन छोड़कर वे वैरागी हो गये और निरन्तर साधना करते हुए इतने बड़े महात्मा और महाकवि बन गयें।

यह काव्य एक जन श्रुति पर आधारित है। नवीनतम खोजों से यह सिद्ध हो गया है कि मानसकार तुलसीदास आजन्म ब्रह्मचारी थें और रत्नावली किसी दूसरी तुलसीदास की पत्नी थी। कवि ने उनकी जन्मभूमि, राजापुर बाँदा मानी है। यह भी संप्रति विवादास्पद है। बहरहाल इस काव्य का महत्व तुलसी के जीवन वृन्त के कारण नहीं हैं। इसका महत्व है– ऐतिहासिक बोध और तुलसी की मनोवैज्ञानिक रचना प्रक्रिया के कारण। तुलसी दास ने अपने समकालीन सांस्कृतिक संकट से प्रेरित होकर रामचरित मानस के माध्यम से जो अभियान चलाया अपनी रचना धर्मिता द्वारा जनमानस में जिस स्फूर्ति का संचार किया, वह इस काव्य का प्रमुख पतिपाद्य है।

इस काव्य के कथानक को स्थूलतः तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है–

1. पृष्ठभूमि–

इसमें भारतीय संस्कृति के पराभव का चित्रण किया गया है और उसी विषम परिस्थिति में तुलसीदास के आंरभिक जीवन का वर्णन किया गया है। निराला का यह मत रहा है कि तुलसी ने ही भारतीय समाज को नई दिशा और नई दृष्टि दी हैं।

2. दूसरा चरण है–

तुलसी को प्राप्त अन्तःप्रेरणा। जब वे चैतन्य लाभ कर लेते हैं तो कहते हैं–

जागो, जागो आया प्रभात

बीती, वह बीती अन्धरात।

झरता नव ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वाच

बाँधो–बाँधों किरणें चेतन, तेजस्वी है तमजितजीवन

आती भारत की ज्योतिर्धनमहिमाबल।

कवि ने चित्रकूट की प्रकृति का वर्णन करते हुए उससे कई प्रकार के रहस्यात्मक संकेत प्राप्त किये। तुलसीदास को वहाँ सरस्वती जी के दिव्य दर्शन होते हैं। कवि के शब्दों में –

देखा शारदा नील वसना

थी सम्मुख स्वयं सृष्टि रशना।

जीवन समीर शुचि निःश्वसना वरदानी

वीणा वह स्वयं सुबादित स्वर

फूटी तर अमृताक्षर निर्झर

यह वश्वि हंस है चरण सुधर जिस पर श्री।

3. अन्तिमचरण में सरस्वती जी के अनुग्रह से तुलसी दास का मर्म जागृत हो उठता है। निराला जी लिखते हैं– वह जागा कवि अशेष छवि धर।

इसका स्वर भर, भारती मुखर होयेगी।

इस प्रकार तुलसी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास को इस कृति में समाहित किया गया है। निःसंदेह यह एक उत्कृष्ट काव्य है। प्रबन्ध विधान की दृष्टि से यह एक विशिष्ट प्रयोग है। इसकी आधिकारिक कथा बहुत संक्ष्प्ति है। कवि के अनुसार तुलसीदास शरीर से अत्यन्त हष्ट पुष्ट और शोभन थे। कवि के शब्दों में –

आयत दृग पुष्ट देह गत भय

अपने प्रकाश में निःसंशय

प्रतिभा का मन्दस्मित परिचयन्न

कवि ने तुलसीदास को समद्यीत काव्य, विद्या कौशल अर्थात् सर्वगुण सम्पन्न बताया है। वे रत्नावली के साथ सुखमय जीवन यापन कर रहे थे, किन्तु कुछ ज्यादा ही मोह मुग्ध थे, इसलिए जब उनके साले रत्ना को लिवा ले जाने के लिए आते हैं तो तुलसी को अच्छा नहीं लगता। वे कह पड़ते हैं–

जब देखो तब द्वार पर खड़े

उधार लाये हैं चले बड़े

दे दिया दान तब अड़े पड़े।

तुलसी मित्रमण्डली के साथ चित्रकूट भ्रमण के लिए चले जाते हैं। वहाँ की दिव्य प्रकृति में उन्हें सरस्वती रूप में रत्नावली दिखाई देती है। इससे उनको मोह और बढ़ जाता है। घर लौटने पर उन्हें सूचना मिलती हैं कि रत्नावली मायकें चली गयी है। मोहावेश वश तुलसी ससुराल पहुँच जाते हैं। वहाँ रत्नावली जो प्रबोध दती है, उससे उनके ज्ञान नेत्र खुल जातें हैं और फिर सब कुछ त्याग कर वे साधना में निमग्न हो जाते है।

इस काव्य में न कोई प्रासंगिक कथा है, न अवान्तर कथा है और न अन्तःकथा है। कवि ने घटना के घात–प्रतिघात भी नहीं रखे हैं। इस कथानक में तीन मोड़ है। एक–आरम्भ अर्थात् तुलसीदास का प्रारम्भिक जीवन। दूसरा–विकास अर्थात् चित्रकूट में जाग्रत रत्नावली के प्रति मोह और उसके मायके चले जाने के कारण उत्पन्न होने वाला मोहावेश। तीसरा मोड़ है–रत्नावली का प्रबोध पाकर मन में जाग्रत होने वाले विराग। वस्तुतः तुलसीदास का जीवन वृन्त यहाँ बहुत संक्षेप में रखा गया है। ज्यादा विस्तार से वर्णित है तुलसी का देशकाल। कवि ने कई छन्दों में मुगलों के आक्रमण से उत्पन्न राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का विश्लेषण किया है। उसने तुलसीदास के अन्तर्द्वन्द्व को भी विस्तार पूर्वक प्रस्तुत किया है। इसे देखकर लगता है कि यहां निराला का अपना जीवन और अन्तः संघर्ष चित्रित हुआ है।

इस काव्य में प्रमुख रूप से दो ही पात्र आये हैं। एक–तुलसीदास, दूसरी रत्नावली। इनका संवाद भी अति संक्षिप्त है। रत्नावली का वक्तव्य और तुलसीदास का स्वगत कथन अपेक्षाकृत काफी विस्तृत है।

इस काव्य का अंगी रस है– विप्रलम्भ श्रृंगार। कवि ने इसका उदात्तीकरण किया है। प्रकृति चित्रण में संयोग श्रृंगार को स्थान दिया गया है। शारदाजी ने दर्शन से इस उज्जवल रस से जोड़ दिया गया है।

इस काव्य की भाषा सर्वथा विशिष्ट है। इसमें कवि ने नये–नये शब्द गढ़े हैं। जैसे–प्रभापूर्ण की जगह, अस्त की जगह अस्तमित आदि। इसका पहला छन्द है– भारत के नभ का प्रभा पूर्य, शीतलच्छाय सांस्कृतिक सूर्य।

अस्तमित आज रे तमस्तूर्य.....।

यहाँ तत्सम शब्दावली है। सन्धि और समास का इसमें अधिकाधिक प्रयोग किया गया है, इसलिए भाषा कृत्रिम तथा क्लिष्ट हो गयी है। फिर भी इस भाषा का अपना एक आकर्षण है।

इसका छन्दोविधान बहुत महत्वपूर्ण है। निराला जी ने चूँकि मुक्त छन्द का प्रचलन किया था इसलिए कुछ समीक्षकों को यह भ्रम हो गया था कि शायद छन्द शास्त्र का ज्ञान उन्हें नहीं हैं। उसी आरोप से प्रतिक्रिया प्रेरित होकर निराला ने इसमें एक ऐसा छन्द गढ़ा, जिसमें एक–एक पंक्ति में तीन–तीन अन्तर्तुकान्त हैं। इतने जटिल छन्द का निर्वाह कर पाना सर्वसाधारण के लिए संभव नहीं है।

इस कृति का उद्देश्य महान हैं। इसके माध्यम से तुलसीदास के व्यक्तित्व का स्तवन किया गया है। वस्तुतः तुलसी ही निराला जी के आदर्श रहे हैं, इसलिए यहाँ चरित नायक रूप में इनकी प्रतिष्ठा की गयी है। यह काव्य निःसन्देह उच्च कोटि का है।

3.5 राम की शक्ति पूजा

यह निराला की ही नहीं, बल्कि पूरे हिन्दी जगत की एक श्रेष्ठ लम्बी कविता है। इसकी रचना 1936 में हुई थी। सबसे पहले इसका प्रकाशन इलाहाबाद से प्रकाशित भारत नामक पत्र के 26 अक्टूबर 1936 के अंक में हुआ था। बाद में इसे अनामिका और अपरा में संकलित किया गया।

काव्य शास्त्रीय कसौटी पर प्रबन्ध विधान की दृष्टि से इसका विवेचन करते हुए कहा जा सकता है कि–

1. इसकी कथावस्तु पौराणिक है। यह राम कथा से संबंधित एक महत्वपूर्ण घटना पर आधारित है। इस घटना के सूत्र शिव महिम्न स्तोत्र, देवी भागवत कालिका पुराण आदि में मिलते हैं। विस्तापूर्वक यह घटना बंगला की कृतिवास रामायण में दी गयी है। कृतिवास ने वैष्णव मत की तुलना में शाक्त मत का महत्व स्थापित करते हुए इस काव्य की रचना की थी। निराला जी ने इसमें वैष्णव और शाक्त दोनों का समन्वय करते हुए श्रीराम के उदात्त

चरित्र पर प्रकाश डाला है। इसमें उन्होंने जहाँ कुछ सूत्र पुराख्यानों से लिये हैं, वहीं कुछ नयी उद्‌भावनायें भी की हैं। उन्होंने राम का जो रूप चित्रित किया है, वह ईश्वरीय भी हैं और मानवीय भी। इसकी कथावस्तु विख्यात भी है और नव कल्पित भी। इसमें राम की जय–पराजय का जो द्वन्द्व प्रस्तुत किया गया है। उसमें निराला का अपना अन्तः संघर्ष भी प्रतिध्वनित हुआ है। इस कविता में नाटकीयता का गहरा पुट है। कवि ने इसमें फैन्टेसी का भी प्रयोग किया है। निराला जी ने इसमें एक ओर जय की कथा लिखी है और दूसरी ओर पराभव की। उनके राम एक बार परास्त होते है। तो राम भक्त हनुमान सप्ताकाश पर विजय प्राप्त करते हैं। इसक कविता में जहाँ युद्ध के बहाने वीर रस की निष्पत्ति हुई हैं, वहीं शक्तिपूजा के क्रम में भक्ति रस का परिपाक किया गया है। पूरी कविता का संदेश यह है कि सच्चे मनुष्य का मन यदि हार कर भी पराजय स्वीकार न करेगा तो कभी न कभी उसे विजय अवश्य प्राप्त होगी।

इस कविता में जहाँ भौतिक संघर्ष चित्रित हुआ है, वहीं देवी–दर्शन के बहाने अलौकिक सत्ता का भी निदर्शन किया गया है। निराला जी ने यत्र–तत्र अति प्राकृतिक तत्त्वों का उल्लेख किया है। यों आधुनिकता बोध ा को अधिक महत्तव दिया है।

इसके काव्य रूप को लेकर समीक्षकों में विवाद रहा है। आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री ने इसे प्रबन्ध काव्य की संज्ञा दी। डॉ. विजयेन्द्र स्नातक ने इसे महाकाव्य सिद्ध किया। आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने इसे गाथा काव्य की उपज कहा। अब यह विचार स्थिर हो गया है कि यह एक लम्बी कविता है। जिसकी भाव भाषा में महाकाव्योचित गरिमा है।

हिन्दी के प्रगतिशील समीक्षक, जो शक्तिपूजा की दार्शनिकता, पौराणिक पृष्ठभूमि और आध्यात्मिक चेतना का समर्थन नहीं कर सकते थे यह मानते हैं कि कवि की हताशा ही अध्यातम में परिणत हो गयी है। दूसरे यह भी कि यह कविता जनवादी और जनद्रोही शक्तियों के संघर्ष से प्रेरित है। तीसरे इसमें उपनिवेशवाद का विरोध ा किया गया है। कुछ विद्वानों ने इसे स्वतंत्रता आन्दोलन से भी प्रेरित माना है। और कुछ ने इसे निराला की आत्म प्रेरित माना है। निरालाजी ने महाशक्ति की मौलिक कल्पना करते हुए नवीन पुरूषोत्तम की रचना की है, इसलिए इस कविता में नूतन–पुरातन सभी प्रकार के चिंतन–स्रोत सन्निहित हो गए हैं।

राम की शक्ति पूजा की कथा संक्षेप में इस प्रकार हैं–रावण पक्ष के सभी योद्धा मारे जा चुके हैं। अब केवल राम और रावण का निर्णायक युद्ध होना है। रावण ने शिवशक्ति की आराधना करके चूँकी भगवती को अपने पक्ष में कर लिया था, इसलिए आज के युद्ध में रावण की सहायता करने के लिए वे युद्ध में साक्षात प्रकट हो जाती हैं। उस रात शिविर में लौटकर निराश–हताश राम यह घोषणा कर बैठते हैं कि महाशक्ति से नहीं लड़ा जा सकात है, इसलिए अब न विजय संभव है और न सीता का उद्धार। तभी जांबवान उन्हें प्रबोध देते हैं कि क्यों नहीं आप शक्ति की दुगनी उपासना करके उन्हें अपने पक्ष में ले लेते हैं। इस परामर्श से प्रेरित होकर श्री राम नवरात्रि में देवी की पूजा आरम्भ कर देते हैं। वे यौगिक साधना षटचक्र भेदन करते हुए भगवती को प्रभावित कर लेते हैं। तभी देवी के मन में यह इच्छा जाग्रत होती है कि राम की निष्ठा की परीक्षा ली जाय। वे उनकी पूजा के अंतिम पुष्प को छिपा देती हैं। श्री राम जब पूजा का अन्तिम पुष्प (108वाँ कमल) नहीं प्राप्त कर पाते, तो साधना को खंडित होता देखकर एक बार हताश हो जाते हैं, किन्तु तभी उन्हें एक युक्ति सूझती हैं कि माँ उन्हें राजीवन नयन कहा करती थी। इसका तात्पर्य यह कि अभी उनके पास दो कमल हैं। यह निश्चय करके जब वे अपना एक नेत्र देवी के चरणों पर चढ़ाने हेतु उद्यत हो जाते हैं तो देवी प्रकट हो कर उन्हें विजय का वरदान देती हैं। और रामशक्तिमान हो जाते हैं।

आठ दिनों की इस घटना को निराला जी ने एक स्थान और वैष्णव भक्ति का सुन्दर समाहार किया गया है।

इस कविता में चित्रित मुख्य पात्र है, राम सुग्रीव जाम्बवान और महाशक्ति। इसमें संवाद केवल राम–सुग्रीव और जामवन्त के बीच रखे गये हैं। लक्ष्मण को इसमें केवल क्रोध करते दिखाया गया है। शेष पात्र इसमें कौन हैं या नेपथ्य में हैं।

इस कविता में एक प्रासंगिक कथा है– फैन्टेसी शैली में हनुमान के उड़डयन की घटना। हनुमान को जब यह प्रतीत होता है कि उनके आराध्य आज शक्ति के पक्षपात के कारण दुःखी हो गये हैं तो वे सप्ताकाश पर आक्रमण कर देते हैं। तब शिव जी अपनी शक्ति को समझाते हुए कहते हैं कि– तुम अपनी लीला का आश्रय लेकर इस एकादश रूद्र को रोको। फलतः महाशक्ति हनुमान की माँ अंजना का रूप धारण करके हनुमान को समझाती है, जिससे शान्त होकर वे अपने स्थान पर उतर आते हैं।

इस कविता के अंगी रस को लेकर भ्रम की स्थिति बनी हुयी है। इसमें चूँकि आदि से अन्त तक ओजपूर्ण भाषा शब्दावली का प्रयोग किया गया है, इसलिए कई समीक्षकों ने वीर रस का इसका अंगी रस मान लिया है। वस्तु स्थिति यह है कि अंगी रस का निर्णय पलागम के आधार पर किया जाता है। इस कविता के शीर्षक में प्रमुख शब्द है पूजा। इसका फलागाम है इेवी का वरदान इसलिए भक्ति रस को ही इसका अंगी रस मानना होगा।

राम की शक्ति पूजा का सर्वोपरि वैशिष्ट्य है, इसका भाषा–विधान। इसमें कवि ने समस्त पदावली का प्रयोग किया है। आरम्भ में 'रवि हुआ अस्त' से लेकर 'रावण संवर' तब एक लम्बा वाक्य रखा गया है, जिसमें समास, सन्धि से जुड़ी संस्कृत की तत्सम शब्दावली की भरमार है।

बीच–बीच में कुछ अति संक्षिप्त वाक्य भी रखे गये हैं, जैसे– लौटे युगदल या निशि हुई विगत। इस कविता में लम्बे–लम्बे सांग रूपक रखे गये हैं जैसे– देखो बन्धुवर!

सामने स्थित यह भू–धर।

शोकित शत् हरित् गुल्म तृण से पृथ्वी सुन्दर।

अथवा–

देखा राम ने सामने श्री दुर्गा भाहवर।

निराला जी ने इस कविता में नये–नये बिम्बों और सुन्दर–सुन्दर प्रतीकों का प्रयोग किया है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण है–

नयनों का नयनों से गोपन प्रिय संभाषण
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान पतन।
काँपते हुए किसलय, मरते पराग समुदय।
गाते खग नव जीवन परिचय, तरू मलय वलय।।

इस प्रकार की टकसाली काव्य भाषा सबके लिए सहज संभव नहीं होगी।

स्पष्ट है कि अपने काव्य सौष्ठव और महान संदेश के कारण यह कविता सर्वथा असाधारण बन पड़ी है। इस कविता को पूर्ण प्रबन्ध काव्य न कह कर लम्बी कविता कहना ही न्यायोचित होगा। यों, अपनी प्रबन्धात्मकता के कारण निराला जी ने प्रबन्ध काव्यों में यह सर्वोपरि हैं।

3.6 कुकुरमुत्ता

यह एक लम्बी प्रबन्धात्मक कविता है। इसकी रचना 1940 में की गयी थी। 1945 में इसका कुछ संशोधित संस्करण प्रकाश में आया। इसका मूल उद्देश्य रहा है–नया भाव, नयी भाषा तथा काव्य–कला का आधुनिकीकरण। निराला जी ने इसके माध्यम से युग प्रवर्तन किया है। वे यहाँ छायावादी भाव भूमि से परे होकर बोल–चाल की भूमि पर उतर आये हैं। इसकी कथा ग्राम्य कथा जैसी है। इसमें कवि ने प्रगति और प्रयोग की नयी बानगी दी है। इस रचना के पीछे मुख्य ध्येय रहा है विदेशी आधुनिकता का विरोध और हिन्दी जाति का स्वाभिमान। टी0एस0 इलिएट के 'वेस्ट लैण्ड' से प्रभावित होकर हिन्दी के नये समीक्षक जब उसकी जय जयकार करने लग गये तो निराला ने कुकुरमुत्ता की रचना करके यह दिखाया कि हिन्दी कविता इस क्षेत्र में इलिएट से आगे हैं।

इस कविता में एक कथा है। इसके केन्द्र में हैं एक नवाब जिन्होंने अपने बाग में तरह–तरह के गुलाब लगावा रखे थे। एक दिन नवाब जादी अपनी सहेली मालिन की बेटी के साथ गुलाब बाटिका का निरीक्षण करने निकली तो मालिन को गुलाबों के बीच कुकुरमुत्ते दिखायी दे गये। उसने उन्हें तोड़ लिया और नवाबजादी को बताया कि इसका कवाब बहुत स्वादिष्ट होता हैं। नवाब जादी ने उसके घर जा कर कवाब खाया तो उसके स्वाद से अभिभूत होकर उसने अपने पिता से उसकी तारीफ की। नवाब ने माली को बुलाकर आदेश दिया कि बगीचे में गुलाब की जगह कुकुरमुत्ते लगा दिये जायें। तभी माली ने कहा कुकुरमुत्ता स्वयंभू होता है अर्थात् वह एक नैसर्गिक देन है। यहीं कविता समाप्त हो जाती है।

इस कविता में कुकुरमुत्ता द्वारा एक लम्बा वक्तव्य दिया गया है। वह गुलाब को ललकारता है और उसे कोसता हुआ कहता है कि तू जनसाधारण का पुष्प नहीं है। कुकुरमुत्ता आत्म ग्लाथा करता हुआ अपनी महत्ता का बखान करता है। और गुलाब को वह अन्ततः तुच्छ घोषित कर देता है।

इस प्रकार यहाँ कवि ने एक 'नेटिव' स्वदेशी वस्तु को विलायती वस्तु की तुलना में बेहतर सिद्ध किया है। इसमें साधारण की असाधारणता घोषित की गयी है। इस कविता में विभिन्न प्रकार के संदर्भ हैं जो ऊपर से मजाकिया तर्ज में अतिशयोक्तिपूर्ण लगते हैं, किन्तु प्रतीक रूप में बड़े गूढ़ हैं। इसमें निराला का विश्वज्ञात प्रकट हुआ है। हिन्दी–उर्दू मिश्रित मुहावरे दार उनकी भाषा और किस्सागोई वाली शैली इसमें बहुत सफल हुयी हैं। इसकी संदर्भ बहुलता सर्वथा सराहनीय हैं। इस कविता के संदर्भ में अनेक भ्रम विद्यमान हैं इसमें चूँकि एक जगह कैप्टलिस्ट शब्द का प्रयोग हो गया है इसलिए प्रगतिवादी समीक्षकों ने इसे जनवाद से जोड़ दिया है। कुछ समीक्षकों ने गुलाब का प्रतीकार्थ– पण्डित नेहरू, और सुमित्रा नन्दन पंत से मानिकाला है। वस्तुस्थिति यह है कि कुकुरमुत्ता है नेटिवकलम और गुलाब है पश्चिमी आभिजात्य से प्रेरित प्रतीकवाद की नयी कलाबाजी। जिसका प्रतिनिधि कवि माना गया वेस्ट लैण्ड का रचयिता इलियटं इसके नवप्रतीकवाद से प्रभावित होकर हिन्दी के शूड़ों बुद्धजीवी जब उस आयातित कला दर्शन की जयजयकार करने लगे तो निराला ने उससे क्षुब्ध होकर बैसवारी तेवर तथा बोली बानी के सहारे कुकुरमुत्ता की रचना की। इसमें निराला जी ने एक नयी शैली अपनायी। उन्होनें आत्म मूल्यांकन करते हुए कुकुरमुत्तों में यह दावा किया–

आप अपने से उगा मैं

तूँ नहीं मैं ही बड़ा।

इस प्रकार इसमें लघु मानव की विजय का जो उद्घोष किया गया है, उसके कारण भाव और भाषा दोनों दृष्टियों से इस कविता की एक पहचान बन गयी। अस्तु तुलसीदास राम की शक्तिपूजा और कुकुरमुत्ता को निराला द्वारा रचित सर्वथा सफल एवं भाव–भाषा दोनों दृष्टियों से उत्कृष्ट प्रबन्धात्मक काव्य माना जाना अभीष्ट है।

3.7 निराला का गीति काव्य

इस दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण संग्रह हैं– गीतिका अर्चना, अराधना और गीत गुंज। कवि ने परिमल अधिमा एवं सान्ध्य का कली में भी कुछ गीत रखे हैं। कुल मिलाकर उनके गीतों की संख्या 200 के आस–पास है। यह उल्लेखनीय है कि निराला जी बहुत बड़े संगीतज्ञ थे। शास्त्रीय संगीत का उन्होंने अच्छा अभ्यास किया था। तन्मयता के क्षणों में वे स्वयं हारमोनियम बजाते हुए अपने गीत गाते थे। उनके कंठ में बड़ा लालित्य था। लोक धुनों पर भी उनका अच्छा अधिकार था। उन्होंने शास्त्र और लोक को मिलाकर अपनी कुछ नयी धुनों का आविष्कार भी किया था। गीतिका की भूमिका में उन्होंने संगीत शास्त्र की बारीकियां उजागर की हैं। निष्कर्ष यह है कि गीति काव्य निराला को काफी रूचिकर था। उनके गीतों की सफलता का यही मुख्य कारण रहा है।

निराला जी ने विभिन्न विषयों से जुड़े हुए गीत रचे हैं। जैसे–

1. प्रकृति परक गीत –

निराला जी ने अपने गीतों में प्रकृति के विभिन्न रूपों, रंगों, छवियों और छटाओं का वर्णन किया हैं। इस कोटि के प्रमुख गीत हैं–

सखि बसन्त आया।

सुमन भर न लिये, सखि बसन्त गया।

रूठी री यह डाल वसन वासन्ती लेगी।

अलि घिर आये घन पावस के।

गहरी विभावरी शीत की आदि।

षट ऋतु के साथ–साथ निराला ने सागर सरिता, निर्झर धारा सूर्य, चन्द्र नक्षत्र चाँदनी आदि का वर्णन इन गीतों में किया है। उन्होंने विभिन्न जीव जन्तुओं, वनस्पतियों की ओर भी दृष्टि दौड़ाइ है। उनके कुछ गीत बहुत लोकप्रिय हुए हैं, जैसे– बासन्ती, बसन्त समीर, घन आये घन श्याम न आये, सरि–सरि कल–कल सरसों मुक्ता दल जल बरसो।

बरसे झूम–झूम कर सावन

श्याम गगन नव घन मड़लाये।

बरसों मेरे आँगन बादल

फिर नभ घन घहराएँ। आदि

निराला को अपने क्षेत्रीय पशु–पक्षी बहुत याद आयें हैं। वनस्पतियों में उन्होंने हरसिंगार, पारिजात, शतदल शेफालिका, पलाश, मालती, रजनीगंधा, कुंद आदि का बारम्बार स्मरण किया है।

निष्कर्ष यह है कि उनके गीत प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण हैं।

2. सौन्दर्य श्रृंगार परक गीत –

निराला जी ने नायिका ने नख–शिख वर्णन और समस्त रूप सौन्दर्य में विशेष रूचि प्रदर्शित की हैं। उनके प्रमुख श्रृंगार परक गीत हैं–

प्रिय यामिनी जागी

मौन रही हार

प्रिय पथ पर चलती सब कहते सिंगार।

देख दिव्य छवि लोचन हारे।

नयनों के डोरे लाल.........। आदि।

परवर्ती काव्य में उन्होंने विद्रूपता को भी वाणी दी हैं। यों कुल मिलाकर श्रृंगार के मिलन और विरह दोनों पक्षों को उन्होंने तल्लीनता पूर्वक चित्रित किया है।

2. प्रेम परक गीत –

निराला जी ने अपनी स्वर्गीया पत्नी के प्रति और साथ ही अज्ञात प्रेमिका के प्रति जगह–जगह भावोद्गार व्यक्त किये हैं। उनके प्रतिनिधि प्रेम गीत हैं–

आओ बैठ लें कुछ देर।

मुझे स्नेह क्या मिल न सकेगा?'

तुम्हीं गाती हो अपना गान, व्यर्थ में पाता हूँ सम्मान।'

एक बार भी यदि अजान के स्वर से' आदि।

इन गीतों में कवि के सूक्ष्म प्रणय की अभिव्यक्ति हुई हैं।

3. राष्ट्रीयगीत –

निराला जी ने भारत राष्ट्र की वन्दना करते हुए अनेक गीतों की रचना की हैं, जैसे

भारति जय–विजय करें।

उन्होंने जन्म भूमि, सहस्राब्दि, यमुना के प्रति, जागो फिर एक बार, शिवाजी का पत्र आदि कविताओं में भी अपनी राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना को स्वर दिया है।

4. दार्शनिकगीत –

निराला जी का गहरा संबंध वेदान्त दर्शन से था। उससे प्रेरित होकर उन्होंने कई गीत लिखे हैं, यथा–

कौन तम के पार रे कह।

पास ही रे हीरे की खान।

कहाँ मेरा अधिवास कहाँ' आदि।

उनकी कई कविताएँ जैसे पंचवटी प्रसंग राम की शक्ति पूजा, तुम और मैं आदि भी दर्शन से ओत–प्रोत हैं।

3out-frontBlackMA Hindi Paper IV Nirala 1-192 #1

6. भक्ति परक गीत –

इस क्षेत्र में निराला का सबसे लोकप्रिय गीत हैं–

वर दे वीणा वादिनि, वर दे!'

उन्होनें अर्चना और अराधना में ऐसे अनेक गीत रखे हैं, जिनमें शरणागति का भाव हैं।

7. लोक धुनों पर आधारित गीत –

निराला जी ने अवध क्षेत्र में प्रचलित लोक धुनों के सहारे कई गीत रचे हैं, जैसे

मार दी पिचकारी कौन री रंग रँगी प्यारी।

कई गीतों में उन्होंने फाग, कजरी, चैती आदि राग– रागनियों का समावेश किया हैं। गीत गुंज अणिमा में इस प्रकार के गीत भरे पड़े हैं।

8. आत्म वेदना परक गीत –

अपने संघर्षपूर्ण जीवन से त्रस्त होकर जब–जब निराला जी भावाकुल हुए हैं। तब इस प्रकार के गीत फूट पड़े हैं–

स्नेह निर्झर बह गया हैं!'

मैं अकेला देखता हूँ, आ रही मेरे दिवस की सांध्य बेला

अभी न होगा मेरा अंत

गहन है यह अंधकारा

मेरा अन्तर बज्र कठोर आदि।

तात्पर्य यह है कि निराला जी ने जीवन की प्रायः प्रत्येक अनुभूति से जुड़कर गीतों की रचना की है। उनके ये गीत भाव और भाषा के साथ–साथ संगीत कला की भी दृष्टि से बेजोड़ हैं। इधर यह माना जा रहा है। कि गीत गुंज के गीतों द्वारा निराला जी ने नवगीत का प्रवर्तन किया है। वस्तुतः उनका गीति काव्य सर्वथा अनमोल हैं।

बोध प्रश्न–

1. निराला के प्रबंध काव्य पर प्रकाश डालिए।

2. निराला के श्र ंगारपरक गीत को लिखिए।

3. निराला के दार्शनिक गीत को लिखिए।

3.8 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

निरालाजी के काव्य को स्थूलतः दो भागों में विभक्त किया जा सकता हैं

1. प्रबन्धात्मक काव्य– तुलसीदास, राम की शक्ति पूजा और कुकुरमुत्ता।
2. गीति काव्य – इसके अन्तर्गत गीतिका, अणिमा आराधना अर्चना और गीत गुंज मुख्य हैं। यो उन्होनें परिमल में भी कई सुन्दर गीत रखे हैं। इन गीतों को विषयानुसार आठ भागों में विभाजित करके देखना उपयुक्त होगा। उनके कुछ गीत बहुत गूढ़ है और कुछ अत्यन्त सहज उनमें उच्चकोटि की भाव–भाषा के साथ–साथ संगीत कला का भी सम्थक् निर्वाह् हुआ हैं।

3.9 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला के प्रबन्ध काव्य तुलसीदास पर प्रकाश डालिए।
2. निराला की रचना राम की शक्तिपूजा पर प्रकाश डालिए।
3. निराला की रचना कुकुरमुत्ता पर प्रकाश डालिए।
4. निराला के गीति काव्य को समझाइए।

3.10 नियत कार्य/गतिविधियाँ

निराला की काव्य यात्रा को विस्तार से समझने के लिए निराला पर लिखी गई अनेक लेखकों की पुस्तकों की सहायता ली जा सकती है।

3.11 चर्चा तथा स्प टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

3.11.1 चर्चा के लिए बिन्दु

3.11.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

3.12 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1. निराला की साहित्य साधना – डॉ. रामविलास शर्मा खण्ड 3
2. कवि निराला – आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी
3. निराला समग्र – डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित
4. महाप्राण निराला – गंगा प्रसाद पाण्डेय
5. निराला रचनावली – डॉ. नवल किशोर नवल

3.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 3.3
2. देखिए 3.7
3. देखिए 3.7

म.प्र. भोज मुक्त विश्वविद्यालय, भोपाल

एम. ए. पूर्वार्द्ध : हिन्दी

चतुर्थ प्रश्न–पत्र : विशेष कवि (निराला) का अध्ययन

द्वितीय खण्ड :

इकाई–1 निराला के काव्य में भावाभिव्यक्ति

इकाई–2 निराला के काव्य में प्रकृति चित्रण

इकाई–3 निराला की काव्य भाषा

लेखक
प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित
....
लखनऊ

सम्पादक
प्रो. हरिमोहन बुधौलिया

एम. ए. पूर्वार्द्ध : **हिन्दी**

चतुर्थ प्रश्न–पत्र: **विशेष कवि (निराला) का अध्ययन**

द्वितीय खण्ड :

खण्ड परिचय–

इस खण्ड की प्रथम इकाई में निराला के काव्य में भावाभिव्यक्ति का विस्तार से विवेचन किया गया है। दूसरी इकाई में निराला के काव्य में प्रकृति की तरह चर्चा की गई है। तीसरी इकाई में निराला की काव्य भाषा का विस्तार से विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

इस खण्ड की प्रथम इकाई में निराला के काव्य में भावाभिव्यक्ति का समग्र अध्ययन करने को मिलेगा।

इस खण्ड की दूसरी इकाई में निराला के काव्य में प्रकृति चित्रण का विस्तार से अध्ययन करने को मिलेगा।

इस खण्ड की तीसरी इकाई में निराला के काव्य भाषा का विस्तार से अध्ययन करने को मिलेगा।

इकाइयों के अन्त में संदर्भ–ग्रन्थों की सूची प्रस्तुत की गई है, जिनका अध्ययन विषयों की विस्तृत विश्लेषण के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

इकाइयों के अंत में संदर्भ ग्रन्थों की सूची भी प्रस्तुत की गई है, जिनका अध्ययन विषयों की विस्तृत, विश्लेषण के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

सभी इकाइयों में बोध प्रश्न दिए गए हैं। अध्ययन के पश्चात बोध प्रश्नों के उत्तरों का इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलान कर सही उत्तर देने का प्रयास कीजिए।

इकाई 1

निराला के काव्य में भावाभिव्यक्ति

सरंचना –

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 निराला की काव्य यात्रा (विशाल क्रम)

1.4 आरंभिक स्थिति

1.5 निराला काव्य का वस्तु–शिल्प–वैशिष्ट्य

1.6 नई भाषा संरचना

1.7 विभिन्न काव्यों रूपों के परोधा

1.8 नयी–नयी विचार धाराओं का उन्मेष

1.9 सौंदर्य दर्शन

1.10 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

1.11 अपनी प्रगति जाँचिए

1.12 नियत कार्य/गतिविधियाँ

1.13 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

1.14 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.1. प्रस्तावना

निराला जी ने जो काव्य कृतियाँ समय–समय पर लिखी हैं, वे उनके बारह गंथों में संकलित है। उनकी कुछ कविताएँ असंकालित अपूर्ण और अप्राप्त भी हैं।

उन्होंने 1916 से 1962 तक अर्थात् लगभग 46 वर्षों तक जो काव्य यात्रा की उसमें मोड़ दिखायी देते है। उनकी आरम्भिक कविताएँ छायावाद से जुड़ी हुयी है। कुकुरमुत्ता और नये पत्ते में वे प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के काफी निकट दिखायी देते हैं इन कविताओं में नयी कविता तथा समकालीन कविता की अनेक प्रवृत्तियाँ

परिलक्षित होती है। गीत गुंज में नवगीत के कई लक्षण विद्यमान है। तात्पर्य यह है कि निराला के प्रायः प्रत्येक युग प्रवृत्ति से संबद्ध रहें है।

वस्तुशिल्प की दृष्टि से उनका काव्य वैविध्यपूर्ण है। इन सभी बिन्दुओं का परिचय देना इस संदर्भ में अपेक्षित है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है निराला के काव्य का सर्वांगीण विवेचन ताकि उन्हें परिपूर्ण रूप से देखा परखा जाय। उनके सम्पूर्ण काव्य को देखे बिना उनका खण्डित व्यक्तित्व ही सामने आयेगा। इस समस्या का समाधानं खोजते हुए यह सामग्री प्रस्तुत की जा रही है।

1.3 निराला की काव्य यात्रा (विकासक्रम)

निराला की काव्य यात्रा 1920 से 1962 तक व्याप्त है। इस बीच उनके 1 दर्जन काव्य ग्रन्थ प्रकाशित हुए–अनामिका(1923), परिमल(1929), तुलसीदास(1934), गीतिका(1935), कुकुरमुत्ता(1940), अणिमा (1943), बेला नए पत्ते (1946), अर्चना(1950), आराधना, गीतगुंज(1954), सांध्यकाकली(मरणोपरांत) तथा बाद में संकलित स्फुट कविताएँ।

1.4 आंरम्भिक स्थिति

निराला का काव्य–क्षेत्र अत्यन्त विशद है। उन्हें किसी वाद की सीमा में आबद्ध करना कठिन है, यद्यपि लोग उन्हें विविध वादों के अन्तर्गत घसीटने की चेष्टा करते हैं। छायावाद के आधार स्तम्भों में निराला जी गण्यमान हैं। आचार्य शुक्ल एवं कुछ अन्य समीक्षक उनके काव्य में स्वच्छन्दतावाद देखते रहे हैं। व्यंग्यपरक रचनाओं के बाद उन्हें प्रगतिवादी और प्रयोगवादी कहा जाने लगा। परवर्ती आत्मनिवेदनपरक कृतियों को अंतश्चेतनावाद की संज्ञा दी गई। इस प्रकार निराला जी के काव्य में विविध वाद ढूँढ़े गये, जबकि सत्य यह है कि वे भले ही आशा अथवा आक्रोश अथवा भक्ति के स्वर लेकर चले हों, उनके हृदय में मानव जीवन के प्रति गहरी आस्था का दीप सदैव जलता रहा है।

वस्तुतः निराला जी की साहित्य–साधना समीक्षकों की दृष्टि से ओझल नही रही। विद्वानों ने निराला के काव्य की विभिन्न रूपों में समीक्षाएँ की हैं। कुछ ने इतिहास के रूप में उनके साहित्य की समीक्षा की है तो अन्य समीक्षकों ने अन्यान्य कई दृष्टियों से निराला को देखा और परखा है।

निराला की कविता और हिन्दी आलोचना का सम्बन्ध कम दिलचस्प नहीं है। उन्होंने जब लिखना शुरू किया, तब हिन्दी कविता में द्विवेदी–युग चल रहा था। स्वभावतः निराला की कविता का व्यापक विरोध हुआ। इस विरोध में रीतिवादी आलोचक ही नहीं, बल्कि द्विवेदी–युग की दो महान् युगान्तरकारी प्रतिभाएँ भी शामिल थीं। पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल। 1916 ई. में रचित निराला की प्रथम रचना 'जुही की कली' 'सरस्वती' पत्रिका में छापने के लिए जब पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी के यहाँ भेजी गयी, तो उसे इस सुझाव के साथ वापस कर दिया गया कि 'आपके भाव अच्छे हैं, पर छन्द अच्छा नहीं। इस छन्द को बदल सकें, तो बदल दीजिए।'

1927 की सरस्वती पत्रिका में सुकवि किंकर के नाम से द्विवेदी जी ने छायावादी कवियों के विरोध में जो अपना प्रसिद्ध लेख लिखा, उसमें कहा– 'शुद्ध लिखना तक सीखने से पहले ही वे कवि बन जाते हैं। और अनोखे–अनोखे अनामों की लाँगूल लगा कर अनाप–शनाप लिखने लगते हैं।'

पंचवटी प्रसंग पर भी उनकी प्रतिक्रिया बहुत अनुकूल न थी। वे कहते हैं– अविशष्टांश मुझे भेजने की जरूरत नही। ठीक है, पूरी कर डालिए।'

'सुधा' पत्रिका में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी प्रसिद्ध कविता में(जो उन्होंने छायावादी कवियों पर प्रहार करने के लिए लिखी थी) निराला को ही लक्ष्य बनाया–

भाषा है, न भाव है, न भूति भाँपने की आँख,
शिक्षा की सुभिक्षा भी न पायी कभी एक कन।
गाँधते है गर्वभरी गुरू ज्ञान गूदड़ी वे
चुने हुए चीथड़ों से, किए ब्रह्मलीन मन।
रहीं बंग–भंग–पद चकती चमक रही,
कहीं अंगरेजी अनुवाद का अनाड़पन।
ऐसे सिद्ध साइयों की माँग मतवालों में है,
काव्य में झूठे स्वाँग खींचते कभी हैं मन।'

बाद में आचार्य शुक्ल ने निराला को कुछ कुछ जाना–पहचाना और कहा–'बहुवस्तु स्पर्शिनी प्रतिभा निराला जी में हैं। 'अज्ञात–प्रिय' की ओर इशारा करने के अतिरिक्त इन्होंने जगत के अनेक प्रस्तुत रूपों और व्यापारों को भी अपनी सरल भावनाओ के रंग में देखा हैं।'

निराला की कविता का प्रारम्भ ही विवादास्पद रहा। उनकी प्रथम कविता है– 'जूही की कली' लेकिन इसका प्रकाशन 'अनामिका' के बाद हुआ। निराला जी की काव्य कृति 'अनामिका'(1923) अप्राप्य है, अतः अनामिका की समस्त कविताओं को सन् 1929–30 ई. में प्रकाशित परिमल में रखा गया। निराला जी की कुल प्रकाशित 12 काव्य कृतियां यहा विचारणीय है।

1.5 निराला काव्य का वस्तु–शिल्प–वैशिष्ट्य

निराला के काव्य के भाव पक्ष तथा शिल्प पक्ष को लेकर अनेक प्रकार की समीक्षाएँ प्रकाश में आयीं है। इन समीक्षाओं के मुख्य मुद्दे रहे हैं–

1.5.1 निराला का सामाजिक चिंतन–

निराला जी ने जिन पौराणिक प्रसंगों ऐतिहासिक प्रकरणों समसामयिक युगीन समस्याओं और सार्वकालिक सामाजिक बिन्दुओं को उभारा है, उन पर पक्ष–विपक्ष में बहुत लिखा गया है। आचार्य बाजपेयी जी जहाँ उनके

सांस्कृतिक चिंतन से अभिभूत रहे हैं वही डॉ. रामविलास शर्मा उनके सर्वहाराबोध से प्रभावित दिखते है। इसी विचार क्रम में अन्यान्य समीक्षकों ने निराला के व्यक्ति विधायन में उनके समाज–मनोविज्ञान का सापेक्षिक विश्लेषण करते हुए उन्हें एक विकासनशील कवि सिद्ध किया है। निराला का प्रायः संपूर्ण काव्य युगबोध में केन्द्रित है। अनेक समीक्षकों ने उनकी सामाजिक संचेतना की पुष्टि की है साथ ही उनकी नारी भावना सर्वहारा के प्रति संवेदना सामंतवाद के विरूद्ध क्रान्ति दमनकारी अंग्रेजी साम्राज्यवाद की निन्दा पुरोहितवाद सं असहमति, प्राचिन रूढ़ियों का खण्डन आदर्शोन्मुख यथार्थ और लोक जीवन आदि की मीमांसा की है।

3.5.2 अपने युग प्रवृत्तियों का प्रवर्तक–

छायावाद से लेकर स्वतंत्र भारत के पांच दशकों में निराला का साहित्य आज कवि कर्म का प्रतीक बना हुआ है। तुलसी और कबीर के बाद वे हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि के रूप में प्रतिष्ठित है। उन्होंने छायावाद के प्रर्वतन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है तो दूसरी ओर प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता और नवगीत तक में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। यह वस्तुतः एक विरल संयोग है, इसलिए कि छायावाद, प्रयोगवाद प्रगतिवाद आदि परस्पर विरोधी आंदोलन रहे है। छायावाद से जुड़े प्रसाद, पंत, महादेवी आदि रचनाकार उस युग के समाप्त होते ही अप्रासंगिक मान लिए गए, जबकि निराला जी इन सभी परवर्ती आंदोलनों के भी पुरोधा बने हुए हैं।

1.5.3 नये छंदों के प्रयोक्ता–

निराला जी ने हिन्दी कविता को नया छंद दिया है। छायावाद युग तक तुकान्तता कविता पर हावी रही है। निराला ने 'परिमल' की भूमिका में लिखा है कि जैसे आत्मा की मुक्ति होती है उसी प्रकार की कविता की मुक्ति भी आवश्यक है, इसीलिए निराला ने अपने इस छंद का नाम दिया अमित्र या मुक्त छंद। इस छंद में याति–गति, लय–ताल आदि का विधान तो है, किन्तु उसमें तुकान्त या अंत्यानुप्राप्त नहीं लगता है, उदाहरणार्थ उनकी प्रसिद्ध कविता 'जूही की कली' का एक अंश द्रष्टव्य है–

'सोती थी,

जाने कहो कैसे प्रिय आगमन वह!'

इसमें विषम मात्राएँ हैं, लेकिन प्रवाह है। यहाँ भाव प्रधान है और कविता अनुभूति के स्तर पर पूरी तरह से मुक्त है। इस छंद की उपयोगिता को न समझ पाने के कारण परम्परावादी आलोचकों ने इसे रबड़ छंद, कगांरू छंद आदि नाम दिये और यह सिद्ध करना चाहा कि निराला को पिंगल का ज्ञान नहीं है। निराला जी ने इन आरोपों को ध्वस्त करते हुए अपने एक काव्य तुलसीदास में एक ऐसे जटिल छंद की रचना की जिसके भीतर तीन–तीन अन्तर्तुकान्त हैं, जैसे–

'जागो–जागो आया प्रभात

बीती, वह बीती अन्धरात

झरता नव ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वाचल

बाँधों–बाँधों किरणें चेतन

तेजस्वी है तमज्जित जीवन

आती भारत की ज्योतिर्धन महिमाबल।'

इस छंद में प्रभात, रात, प्रपात तीन अन्तर्तुकान्त है और पूर्वाचल, महिमाबल बाह्य तुकान्त है। इस प्रकार एक छंद में आठ तुकान्त दिये गए हैं, जबकि पुराने छंदों में प्रायः चार तुकान्त पाये जाते हैं। निराला का यह छंदोविधान निस्संदेह बड़ा।

1.5.4 रहस्य, अध्यात्म एवं दर्शन–

आधुनिक हिन्दी कविता में चिन्तन दर्शन के क्षेत्र में यदि कोई सर्वाधिक चर्चा के केन्द्र में रहा है तो निश्चत रूप से वे निराला हैं। मुक्तभावभूमियों का मुक्त मानव मूल्यों का यह मसीहा कटु आलोचनाओं–प्रत्यालोचनाओं की सूली पर बारंबार चढ़ाया भी जाता रहा है। छायावादी कवियों ने अपने काव्य में दार्शनिक मन्तव्यों को बहुत स्थान दिया है। वस्तुतः काल्पनिक उड़ान के बाद जब छायावादी कवि यथार्थ की ठोस धरती पर उतरने लगे, तब उनका ध्यान गूढ़–गम्भीर दर्शन से हटकर अपनी प्रतिबद्धता के अनुरूप एक दिशा की ओर उन्मुख हो गया। जयशंकर प्रसाद ने प्रत्यभिज्ञा दर्शन, पंतजी ने अरविन्द दर्शन, महादेवी वर्मा ने बौद्ध दर्शन तथा निरालना ने स्वामी विवेकान्द तथा रामकृष्ण परमहंस के वेदांत दर्शन को अपनी कविता में प्रस्तुत किया। निराला ने अपने एक लेख में लिखा है–'मैं एक पहुँचा दार्शनिक, जिसके आगे कोई और नहीं, जिससे आगे और जाया नहीं जा सकता।' अपना स्रोत बताते हुए वे लिखते हैं– 'बंगाल में रहकर परमहंस श्री रामकृष्ण दवे तथा स्वामी विवेकान्द जी के सिद्धान्तों से मैं परिचय प्राप्त कर चुका था। दो–एक बार रामकृष्ण मिशन बेलूर, दरिद्रनारायणों की सेवा के लिए भी जा चुका था। परमहंस के शिष्य श्रेष्ठ पूज्यपाद स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज को महिषादल में अपना तुलसीकृत रामायण का सस्वर पाठ सुनाकर उनका अनुपम स्नेह तथा आशीर्वाद प्राप्त कर लिया था।' निराला आजीवन स्वंय को परमहंस की मानस प्रजा और अभिनव विवेकानंद मानते रहे हैं।

निराला जी ने अपनी कविताओं में जिस दर्शन का प्रतिपादन किया है वह दो प्रकार का है। एक आध्यात्मिक दर्शन, जिसका सम्बध ब्रह्म, जीव–जगत और माया से है। इस दर्शन का आधार तो है वेदान्त का अद्वैत दर्शन किन्तु इसको निराला जी ने नव्य–वेदान्त के प्रभाव में ग्रहण किया था।एक तत्व की प्रधानता तो यहाँ भी स्वीकार्य है, किन्तु जगत के मिथ्यात्व की परिभाषा नये रूप में की जाती है। हिन्दी समीक्षकों ने निराला के दर्शन में वेदान्त के प्रखर स्वर को प्रमुखता से रेखांकित किया है। निराला ने स्वंय स्वीकार किया है कि उन्हें 'कवि का हृदय और दार्शनिक का मस्तिष्क मिला है। निराला जी का जीवन–दर्शन मूलतः मानवतावादी है, जिससे भारतीय अद्वैत को कई प्राणतत्व मिले हैं। मानवता में उनकी दृढ़ आस्था रही है, जो निस्संदेह उनकी सामाजिक अनुभूति के साक्षात्कार का सहज प्रतिकलन है। इस तथ्य को सर्वप्रथम जिन समीक्षकों ने चिन्हित किया उनमें है वाजपेयी जी और शर्मा जी। सन् 1947 ई. में डॉ. रामविलास शर्मा निराला को अद्वैतवादी न मानते हुए यह सिद्ध करना चाहा कि वे उनका दर्शन सांप्रदायिक आध्यात्मिक दर्शन न होकर मात्र समाजदर्शन है। वे कहते हैं– 'वह अद्वैतवादी नहीं है जो अपने को 'अन्तर वज्र कठोर' कहकर समाज के आगे ताल ठोंकता है। वह समाज के और सैकड़ों लोगों जैसा संघर्ष से जूझने वाला सिपाही है, जो दुश्मन को ललकारता है।' तथ्य यह है कि शर्मा जी निराला को मात्र प्रगतिवादी सिद्ध करने हेतु आमादा थे फलतः इतने बड़े तथ्य को तोड़ने–मरोड़ने की असफल चेष्टा उन्होंने की। शर्मा जी का तर्क था कि 'निराला आचार्य शंकर के गतिहीन अद्वैतवाद के स्थान पर गतिशील अद्वैतवाद को स्वीकृति देते है। डॉ. रामविलास शर्मा ने निराला की अधिवास शीर्षक कविता की समीक्षा के सन्दर्भ में इस तथ्य को स्थापित किया है। वे कहते हैं–

'निराला संन्यास एवं अद्वैतवाद के पक्षधर होते हुए भी मानवीय पीड़ा, संत्रास तथा दुःखों से आँख मिलाने संघर्ष करने को बुलन्द हौसला देते हैं। भागने नहीं भोगने और टकराने का प्रेरणास्पद मंत्र देते है।'' अधिवास के अतिरिक्त यदि तुम और में, कौन तम के पार, पास हीरे हीरे की खान, पंचवटी प्रसंग, राम की शक्ति पूजा, तुलसीदास आदि पर विचार किया जाता है तो इसका निष्कर्ष कुछ भिन्न होता। निराला काव्य की इस दार्शनिकता की अनुभूति एवं अभिव्यक्ति पक्ष को बहुशः स्वीकार गया है। जिन्होंने उनके इस नवीन दर्शन को प्रतिपाद्य बनाया है ने निराला के वेदान्त योग दर्शन और शास्क्त वैष्णव सिद्धांतों से अभिभूत अवश्य हुए हैं। उनकी दार्शनिक विचार धाराओं पर विचार करके सन् 1947 ई. में डॉ. बच्चन सिंह लिखते हैं–

निराला के काव्य में दार्शनिक तथ्य कवि के भावों और अनुभूतियों में तदाकार परिणत होकर अद्वैत हो गये है। इसके साथ ही काव्य–शिल्प के अनुकूल होकर वे कवि की कला में आत्मसात् हो गए है। निराला का दर्शन जड़, जीन जगत माया में केन्द्रित है समाजदर्शन जीवन दर्शन से जुड़ा है और यह तर्क शास्त्र से भी संबद्ध है। यह भी उल्लेखनीय है कि निराला का यह दर्शन तुलसी से बहुत प्रेरित रहा है।

निराला जी ने जीवनभर तमाम आंघात–प्रतिघातों के बीच संघर्ष किया, अतः बच्चन सिंह लिखते है कि विषम परिस्थितियों ने उन्हें दार्शनिक बना दिया था जबकि वे जन्मना इसी प्रवृत्ति के थे। हां इतना अवश्य है कि इन भौतिक विपत्तियों से त्राण पाने में इनके दार्शनिक ने उन्हें अच्छी सहायता पहुचायी।

निराला की मातृभक्ति शक्तिसाधना रामकृष्ण परमहंस के दार्शनिक सिद्धान्तों के अनुकूल रही है। निराला के हृदय में इस भाव की पुष्टि बंगाल में रहने के कारण और दृढ़ता के साथ हुई है। राष्ट्र के प्रति प्रेम की भावना निराला जी में कूट–फूट कर भरी हुई थी। दूसरे निराला ने स्वाभाविक रूप से मानवतावाद या मानव मात्र की स्वतन्त्रता का समर्थन किया है। वे वर्षो बेलूउ मठ में सन्यासियों की तरह गैरिक वस्त्र धारण कर साधना रत रहें हैं।

निराला का दर्शन भारतीय सउ्दर्शनों में केन्द्रित है।– इस तथ्य को पहचान, कर सन् 1952 ई. में डॉ. रामरतन भटनागर ने लिखा है–

हिन्दू राष्ट्रीयता के उन्नायक रामकृष्ण परमहंस और विवेकानन्द की मंत्र–छाया में रहकर और बंग–विच्छेद काल के बंगाल का परिचय प्राप्त कर कोई भी कवि देशप्रेम की स्फूर्ति से अलग नहीं रह सकता था। परिमल से पहले ही निराला दिल्ली जैसी कविताएं लिखकर देश–भक्तिपूण्र काव्य की एक नई शैली दे चुके थे। परिमल की कुछ बहुत सुन्दर कविताओं में निराला उत्कृष्ट शिल्पी–चित्री के साथ–साथ उत्कृष्ट देशप्रेमी के रूप में हमारे सामने आते हैं। महाराज शिवाजी का पत्र सहस्राब्दि तुलसीदास आदि कृतियां उनके इस राष्ट्र दर्शन की साक्षी है।

महान दार्शनिक कवि अपने चिन्तन को काव्य का अंग बनाकर ही प्रस्तुत करता है। वह भावना के पंख लगाकर अज्ञान के अछोर अन्तराल को पार करते हुए मानवीय और आध्यात्मिक आत्मीयता के शाश्वत और सनातन संयोग को प्राप्त कर लेता है।

प्रत्येक दर्शन की अन्तिम परिणति होती है– मानवता में। इस तथ्य को स्वीकारते हुए सन् 1965 ई. में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने निराला काव्य में बापू मानवतावादी दृष्टिकोणको स्पष्ट करते हुए लिखा कि बादल राग वह तोड़ती पत्थर, चरखा दान आदि का मूल बिन्दु है मानव मानव से नहीं भिन्न तथा दलित जन पर करो करूणा।

निराला के काव्य में मावोचित सहृदयता और तन्मयता के साथ उच्च कोटि का दार्शनिक अनुबंध है, अतएव उनके गीत भी मानव–जीवन के प्रवाह से निखरे हुए, फिर प्रकाश में चमकते हुए है। इस भाव की प्रमुख कविताएं हैं– दीन , मंहगू महँगा रहा, झीगुंर उटकर बोला मानव जहाँ बैल घोड़ा आदि। इस दृष्टि से विचार करते हुए बाजपेयी जी निराला के सम्बन्ध में कहतें हैं–

निराला हिन्दी काव्य के प्रथम दार्शनिक और सचेत कलाकार हैं।'. उन्होने महामानव से लेकर लद्युमानवों तक की प्रतिष्ठा की है।

सैकड़ों वर्षों पहले बनाये गये इन उपनिषद् तत्वों के आधार पर स्वामी विवेकानन्द ने कहा था यदि तुम भलाई चाहते हो तो अपने आडम्बरों को दूर फेक दो। सजीव देवता की, मनुष्य देवता की मानय रूप धारी सबकी आराधना करो।

श्री रामकृष्ण विवेकानन्द साहित्य का हिन्दी अनुवाद करना, श्रीराम कृष्ण आश्रम की पत्रिका समन्वय का सम्पादन करना आदि कार्य निराला को इन दोनों महापुरूषों की विचारधाराओं से बाँधे रखने में सहायक रहे। इसे अनके समीक्षकों ने महसूस किया है।

सन् 1965 ई. में डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय ने लिखा था–

निराला पर स्वामी विवेकानन्द की व्याख्या का उपनिषदों के मंत्रों का विशेष प्रभाव पड़ा है। इसका परिणाम यही हुआ कि विवेकानन्द की तरह निराला जागरण पंचवटी प्रसंग जैसी कविताओं को छोड़कर दार्शनिक ऊहापोह में नहीं पड़ते। उनका ध्यान बराबर जीवन और जगत की स्थिति उन्नति और अभ्युदय की ओर रहता है। जीवन की महानता के लिए आत्मवाद का सिद्धान्त उन्हें मान्य है, किन्तु घोर पीड़ा और करूणापूर्ण क्षणों में वे विवेकानन्द के समान ही पहले रोटी पीछे धर्म की घोषणा करने लगते हैं।

तात्पर्य यह है कि निराला अभिनव वेंदातं के समर्थक और दरिद्र नारायण के पोषक थे। युगानुरूप भारतीय अध्यात्म और संस्कृति को वे कथा, रूप देना चाहते थे।

सन् 1965 ई. में डॉ. रामरतन भटनागर जी के मतानुसार निराला का ध्येय था कि–

समस्त विश्व को आर्य बनाने का हमारा संकल्प अपने घर से ही आरम्भ हो। विश्वव्यापी भय से आक्रान्त मानव मन अब अपनी क्षुद्रता से उबरना चाहता है। निराला का काव्य इसी वेदान्त चिन्तन को आधार शिला बनाकर उस पर कला के ताजमहल उठाता है। निराला तप को ही संस्कृति मानते है, क्योंकि उसमें कला धर्म के ही नहीं, जीवन के धर्म को भी निर्वाह है। इस योग का निर्वाह निराला ने मनसा, वाचा, कर्मणा किया है।'

निराला में बुद्धि पक्ष का प्राचुर्य है। फिर भी कवि की दिव्य अनुभूतियों के कारण सरसता भी पर्याप्त है। इस बुद्धि–तत्व के सम्बन्ध में सन् 1965 ई. डॉ. धनंजय वर्मा ने लिखा–

निराला काव्य में बौद्धिकता और दार्शनिकता आरोपित अथवा सायास नहीं है। यह बौद्धिक और दार्शनिक उन्हीं अर्थों में है जिन अर्थों में उनका व्यक्तित्व है। बौद्धिक काव्य और काव्य की बौद्धिकता में अन्तर होता है। बौद्धिक काव्य में बुद्धि ही काव्य को आच्छादित करती है। काव्य की बौद्धिकता में कवि का चिन्तन और दर्शन भी अभिव्यक्त होता हैं।'

निराला का यह दर्शन उनकी प्रथम कविता जुही की कली के साथ प्रकट हुआ है। जुही की कली नामक कविता को पढ़कर बहुत से लोगों को उसमें उन्मुक्त एवं उच्छृंखल प्रेम–वासना की गन्ध अनुभूत हुई। इस भ्रान्ति का मुख्य कारण निराला के सौन्दर्य परक रहस्यवाद को न समझ पाना है।

डॉ. धनंजय वर्मा ने इस विषय में ठीक ही लिखा है कि इस कविता में माया में फँसी हुई सुषुप्त आत्मा का परमात्मा से साक्षात्कार का आनन्द भी वर्णित है। यह पूर्ण भुक्ति का चित्र है और निराला के छन्दों में तमसो मा ज्योतिर्गमय की काव्य में उतरी हुई तरस्वीर सुप्ति का ताप्तपर्य तप का है और प्रिय के साक्षात्कार से तात्पर्य ज्योति का है।

सांस्कृति चेतना की व्याप्ति का एक आयाम निराला के काव्य की दार्शनिक भाव–भूमि से संबद्ध है। अद्वैतवाद तथा वेदान्ती प्रभावों से युक्त यह दार्शनिकता सच पूछा जाय तो निराला के काव्य की गरिमा बनकर ही उपस्थित हुई है। क्योंकि उनके कृतित्व में उसकी व्याप्ति चिन्तन की गूढ़ताओं से उतना संपृक्त नहीं है, जितना उसकी विवृत्ति से।

निराला की प्रसिद्ध दार्शनिक कविताओं की चर्चा करते हुए सन् 1966 ई. में प्रो. शिवकुमार मिश्र ने लिखा है।–

इन की भूमि बौद्धिक न होकर भावात्सक है। बौद्धिक चिन्तन तथा मनन के उपरान्त कवि जो कुछ पा सका है, उसकी अभिव्यक्ति हृदय के स्तर पर की है। उसने काव्य को दर्शन का विषय नहीं बनाया। दर्शन उनके काव्य का विषय बनकर उपस्थित हुआ है। तुम और मैं, तुलसीदास एक बार बस ओर नाच तू श्यामा तथा ऐसी ही अन्य रचनाओं में भावना से समन्वित उसके दर्शन के इस स्वरूप को स्पष्टतः देखा जा सकता है।'

1.5.5 भक्ति भावना–

निराला जी के काव्य में केवल दार्शनिक विचारधारा ही नहीं मिलती है, भक्ति भावना का सुन्दर प्रकाशन भी हुआ है। वे न पलायनवादी थे और न ही संसार को भोगने की बात करते थे। उनकी रचनाएँ अपने–आप में अनूठी है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय वर्ण व्यवस्था का क्या स्वरूप होगा, इस सम्बन्ध में निराला के विचार अनुशीलनीय है।

तथ्य यह है कि अपने कई निबंधों में निराला ने अपना मत व्यक्त किया है। सन् 1971 ई. में डॉ. भगीरत मिश्र इसे लक्ष्य करते हुए लिखा–

सूक्ष्म दृष्टि से देखे तो निराला जी का मानवतावादी दर्शन परस्पर विरोधी विचारधाराओं की आधारशिला पर खड़ा है। निराला जी पर वेदान्त का प्रभाव था और वे वैष्णव धर्म तथा ब्राह्मणवाद के एक हद तक प्रशंसक भी थे। किन्तु अपने युग के नवजागरण को भी वे अलक्षित न कर सके अतः एक ओर उनकी मानवतापरक रचनाओं में आदर्शात्मकता है तो दूसरी ओर यथार्थता।

निराला का रचनात्मक व्यक्तित्व मूलतः बुद्धिवादी एवं तर्क धार्मिता से भावात्मकता की ओर अग्रसर होता हुआ प्रतीत होता है। भाव–प्रधान दर्शन, रहस्य एवं विनय की ओर तथा चिन्तन उन्हें वेदान्त के कर्मयोग की ओर ले जाता है।

निष्कर्ष यह कि दर्शन निराला का व्यसन न होकर जीवन मिशन रहा है। उससे ऊर्जा मिलती रही है उन्हें। निराला के जीवन में ऐसे कई दुखान्त मोड़ आते है जो उन्हें बार–बार तोड़ते हैं, ध्वस्त करते हैं पर वे अपनी अदम्य जिजीविषा व आस्था से उनसे उबर आते हैं, बिखर कर जुड़ जाते हैं। हार उन्हें शिथिल नहीं करती वरन संघर्ष के लिए उद्यत करती है। भीतर का संकल्प और उनकी वेदान्ती दृष्टि उन्हें लम्बी यात्रा का पाथेय देती है। निराला ने वेदान्त को स्वीकारा पर उसे कर्मयोगिता से जोड़कर ही अपनाया। वेदान्त समर्थित कर्मयोग उन्हें जीवन तथा मानवता के प्रति गहरी सदाशयता देता हैं।

निराला जी के अद्धैत वेदान्त की चर्चा करते हुए सन् 1997 ई. में विजयेन्द्र स्नातक ने कविवर निराला के भक्ति भाव पर विचार किया है–

सोऽहम् और तत्वमसि सूत्र ब्रह्म और जीव के पारस्परिक सम्बन्ध को जिस रूप में व्यक्त करते है, वह अभेद सम्बन्ध स्थापित करने वाले हैं। यही अद्धैत वेदान्त दर्शन का सार है। निराला की एक प्रसिद्ध कविता है– तुम और मैं। उस कविता में तुम के रूप में किसी विराट् शक्ति का वर्णन किया गया है और मैं के रूप में जीवात्मा का वर्णन है, किन्तु दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध कवित्व के धरातल पर बहुत सुन्दर बन पड़ा है। इस भाव की अन्तिम परिणति भक्ति में हुई है।

वस्तुतः दार्शनिक एवं गम्भीर वैचारिक भूमिका से पुष्ट होकर ही किसी रचनाकार की कोई काव्य–कृति देशकाल की सीमाओं का अतिक्रमण कर शाश्वत कीर्ति और स्थायी महत्ता की अधिकारिणी बन पाती है। निराला का काव्य इसका प्रभाव है।

निराला जी की दार्शनिक चेतना मूलतः भारतीय अद्धैतवाद में सन्निहित है। उनके काव्य की महत्वपूर्ण दार्शनिक पीटिका अद्धैतवादी वेदान्त–दर्शन पर आधारित है। भारतीय वेदान्त–दर्शन की परिधि में ज्ञान–योग, भक्ति–योग, तथा कर्म योग तीनों समाहित है। निराला जी के काव्य में उक्त तीनों योगों की विवृति दिखाई देती है, तथापि वे मूलतः ज्ञान–मार्गी दर्शन के अनुपायी कहे जा सकते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि निराला जी के काव्य में वैदान्तिक–दर्शन की अभिव्यक्ति अनेक रूपों में हुई है, किसी ने उनके काव्य में तत्वचिन्तन का रूप पाया तो किसी ने योग–साधना का। किसी ने रहस्यात्मक रूप में देखा, तो किसी ने उनके काव्य में मानवतावादी रूप के दर्शन किये। कभी उनके दर्शन में प्रेम और सौन्दर्यवादी आदर्शों का समावेश हुआ तो कभी भक्तिपरक भावनाओं ने परम् शान्तिमय वातावरण एवं आत्मानन्द की अनुभूति कराई।

निष्कर्षतः निराला का वेदान्त–दर्शन शंकर के निवृत्तिमूलक अद्धैत दर्शन की बजाय स्वामी विवेकानन्द स्वामी रामतीर्थ आदि आधुनिक चिन्तकों की सामाजिक भावनाओं से युक्त वेदान्त–दर्शन है। नवयुग के इन विचारकों ने वेद उपनिषद् गीता, वेदान्त तथा वैष्णव धर्म को मिलाकर एक ऐसे नव–वेदान्त को जन्म दिया जो देश की प्राचीन दार्शनिक परम्परा से होता हुआ वर्तमान युग की सामाजिक आवश्यकताओं के अनुकूल था। निराला ने प्रारम्भ में जिस अद्धैत दर्शन से प्रेरणा ग्रहण की थी, वह शुद्ध वेदान्त का दर्शन न रहकर भक्तितत्व से संचालित होकर निर्गुण के साथ सगुण के समीप भी आ गया। इसमे युगीन भावबोध को यथेष्ट स्थान मिला है। वह अध्यात्म से ज्यादा यथार्थ–जीवन के निकट आ गया है। फलतः देश की पराधीनात, दरिद्रता, शासकों और पूँजीपतियों के अत्याचार, रूढ़िवादी पाखण्ड आदि के खण्डन को स्थान मिला। इस तरह अध्यात्म की गुफा से निकलकर वह लोकोपकारी बन गया।

निराला जी ने अपने काव्य में अद्वैत की एक नवीन पीठिका की स्थापना की है, जिस पर आधारित भविष्य का मंगल–भवन स्थापित किया जा सकता है। आज की मनोग्रन्थियों में उलझे जीवन को निराला ने ऐसे सूत्रा दियें है जिसका सम्बल युग–जीवन के लड़खड़ाते पैरों में शक्ति का संचार कर सकता है और सहृदयता देकर श्रेय के पथ पर अग्रसर कर सकता है क्योंकि सहृदय जीवन–दर्शन मानव के लिए वरदान स्वरूप है। भीषण संघर्ष के क्षणों में भी निराला–काव्य दर्शन हमें सघर्ष से लड़ने की शक्ति देता हुआ नवोत्कर्ष की ओर प्रेरित करता है।

अतः निराला जी को आधुनिक हिन्दी–कविता में भारतीय वेदान्त–दर्शन का हम प्रतिनिधि कवि मान सकते हैं।

1.5.6 संगीतात्मकता–

छायावादी युग के काव्य वैभव का एक बहुत बड़ा भाग उसके गीतों मे सुरक्षित हैं। प्रायः सभी छायावादी कवि प्रबंध–रचना मे निष्णात होते हुए भी प्रमुख रूप से गीतकार रहे हैं। इस युग के सर्वाधिक क्रान्तिदर्शी कवि निराला ने गीति के शिल्पविधान में कई नवीन आयाम स्थापित किये हैं।

सामान्यतया गीति काव्य में शब्द–माधुरी व लय का होना अनिवार्य माना जाता रहा है पर शनैःशनै उसमें अंतर्जगत का अत्यधिक चित्रण होने लगा और आत्मभिव्यक्ति ही उसका प्रधान गुण बन गया। अतएव गीति–काव्य का प्रधान गुण भावावेश हो गया पर भारतीय साहित्य में तो उसमें भावावेश के साथ–साथ स्वर–साधना अर्थात् संगीत को भी प्रमुख माना गया और गीतिकाव्य का निर्माण ही संगीत के उच्च आदर्शो पर होने लगा।

निराला की संगीत कला गीतिका में सफल हुई है। जितना उदात्त काव्य है उतना ही संगीत भी। निराला जी के कथानानुसार–मैंने अपनी शब्दावली को काव्य के स्वर में मुखर करने की कोशिश की है। यद्यपि प्रत्येक गीत व्यक्तित्व का प्रकाश और अभिव्यक्ति होता है तो भी गीतों को शास्त्रीय संगीत की नियमावली के अनुरूप ढालना और संगीत को काव्य से मुखर करना ही यहाँ प्रधान उद्देश्य रहा है। वस्तुतः जितना महत्व बंगाल में रवीन्द्र संगीत का है, उतना ही महत्व पूर्ण है हिन्दी में निराला संगीत। संगीत की स्वर–साधना के बावजूद भाव–सौन्दर्य का स्खलन निराला के किसी भी गीत में नहीं हुआ। रवीन्द्र संगीत की कोमल भावोच्छलता के स्थान पर निराला–संगीत मैं पौरूष और आज का स्फुरण ज्यादा मिलगा।

इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए सन् 1947 ई. रामविलास शर्मा ने लिखा–

निराला बंगाल की सुरम्य संगीतमयी धारा में जन्मे थे। उन्होंने महिषादल के राजसी वैभव में अपने बाल्यकाल में ही शास्त्रीय संगीत की शिक्षा प्राप्त की थी। संगीत मर्मज्ञ होने के साथ–साथ वे स्वयं बहुत अच्छे गायक भी थे। वे मस्ती में गाते थे। स्वयं अपने आप सधे हुए लगते और शब्दों की ध्वनि के साथ स्वर का ऐसा योग देते कि भाव में और भी गहराई आ जाती। उनके स्वर में पिघले सोने का सा मार्दव था, आवाज तार–सप्तक के लायक न तो महीन थी, न मंद्र के लायक अति गम्भीर। गले में कहीं खरास न थी। धीमें शान्त स्वर सहज ही रेशम के लच्छों जैसे निकलते।"

वस्तुतः बचपन से ही बंगाल में पलने–बढ़ने के कारण निराला जी में वहाँ के संस्कारों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक भी था। यह संगीत निराला के बंगाली–संस्कारों की देन थी। इस सन्दर्भ में सन् 1950 ई. में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी लिखते हैं–

जैसे और सब बाते की, वैसे ही संगीत के अंग्रेजी ढंग की शुरूआत सबसे पहले बंगाल में हुई थी। इस नये ढंग की ओर निराला जी सबसे अधिक आकर्षित हुए और अपने गीतों में इन्होने इसका पूरा जौहर दिखलाया। संगीत को काव्य और काव्य को संगीत के सबसे निकट लाने का श्रेय निराला जी को ही है।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी जी ने निराला–संगीत की स्वछंद–शैली को इस प्रकार अभिव्यक्त किया–

उनके कुछ गीत शास्त्रीय राग–रागिनियों में बंधे है। निराला के अनेक गीत शास्त्रीय संगीत का अनुवर्तन करते हैं। एक दूसरा है–स्वछन्द संगीत। इसमें कवि पय भारतीय लयों, ग्राम्य–गीतों का समन्वय मिलता है। निराला जी के अनेक गीत इस स्वच्छन्द शैली में लिखे गये हैं।''

इस प्रकार निराला ने काव्य में संगीत का प्रयोग किया। निराला जी की संगीत–साधना के विषय मे उनके पुत्र संगीतज्ञ रामकृष्ण त्रिपाठी ने कहा–

'आरम्भ से ही निराला जी की अभिरूचि संगीत की ओर थी। संगीतज्ञों की संगति में रहकर उन्होंने इस कला का अभ्यास किया। हारमोनियम आदि वाद्यों पर ये ठुमरी, ध्रुपद भजन, बँगला के गीत आदि बहुत ही सस्वर तथा सफलतापूर्वक गा लेते थे। इसी कारण वे राजा से प्रजा तक और विद्यार्थियों से प्राध्यापकों तक सभी को प्रिय थे।'

छायावादी कवियों में सर्वप्रथम निराला ने ही काव्य संगीत का अभिन्न सम्बन्ध स्थपित किया है। उनके प्रथम गीत–संकलन गीतिका में यह विशेषता पूर्ण रूप से विद्यमान है।

निश्चय ही काव्य और संगीत की उनकी साधना गीतिकाव्य में बहुत सफल हुई है। इनमें किसी को भी प्राथमिक या गौण नहीं कहा जा सकता। जितना उदात्त उनका काव्य है, उतना ही संगीत भी।

निराला काव्य में संगीत का प्राचुर्य होने के कारण उसकी भाषा में भी संगीतात्मकता है। निराला की भाषा में लय–संगीत की प्रधानता है।

इस संगीत को कुछ ने कष्ट साध्य भी माना है। दरअसल निराला जी की कविता में संगीत इतना प्रधान है कि शब्दों के सामान्य रूप से परिचय रखने वाले पाठक गड़बड़ा जाते हैं और उन्हें विलष्ट भी कह देते हैं। संगीत तत्व को बनाये रखते में ध्वन्यात्मक शब्द ही सहायता करते है और निराला जी ऐसे शब्द चुन–चुन कर रख देते हैं कि उनकी ध्वन्यात्मकता से संगीत की रक्षा के साथ काव्य सौन्दर्य भी बढ़ जाता है। उदाहरणार्थ–

मौन रही हार
प्रिय पथ पर चलती सब कहते श्रृंगार
कण–कण पर कंकण, मृदु किण–किण रव किंकिणी
रणन–रणन नूपुर उर लाज लौट रंकिणी
और मुखर पायल स्वर करे बार–बार
प्रिय पथ पर चलती सब कहते श्रृंगार।

यहाँ लययुक्त प्रवाह पश्चिमी संगीत की सी गत्यात्मकता और साथ ही मंथर–मंथर गति से आगे बढ़ती हुई स्वदेशी रागात्मकता इन सभी का समन्वय करते हुए कुंद मिश्रित ढंग से राग रचे गए है।

निराला के कुछ गीतों की गति बिल्कुल आर्केस्ट्रा की सी स्वरलहरियाँ जगाती है तो कुछ गीत धीरे–धीरे दूर से सुनाई देती वीणा के स्वरों की याद दिलाते हैं। ऐसे गीतों में वार्णित, और मात्रिक दोनों तरह के छंदों के नियम टूट जाते हैं किन्तु लय, प्रवाह राग और अर्थ का एक सिलसिला बना रहता है।

गीतिका के गीत शास्त्रीय संगीत की नियमावली के अनुरुप अनेक राग–रागनियों में बँधे हुए पूर्णतः गेय है। कवि का शास्त्रीय संगीत–ज्ञान इन गीतों में दिखाई देता है।

विशेष रूप से गीतिका में निराला ने गीत और संगीत दोनों का सामंजस्य करके काव्य और संगीत की साध ना के एक नये आयाम को प्रस्तुत किया है।

निराला जी ने संगीत और गीत काव्य की पूरी रक्षा एक साथ की है। उनके संगीत–काव्यकों समीक्षकों ने अपने–अपने ढंग से समीक्षित किया है। किसी ने निराला–संगीत को हिन्दी में बँगला की नकल बताया तो किसी ने पाश्चात्य एवं भारतीयता का समिश्रण कहा। किसी को उनकी भाषा ने प्रभावित किया, तो किसी ने उनके खड़ी बोली गीतों को स्वरबद्ध करने में कठिनाई बतायी। अधिकतर लोगों ने छन्दोवद्धता और संगीतात्मकता को एक साथ जोड़कर उनकी समीक्षा की है।

निष्कर्ष यह है कि निराला काव्य में संगीत का विशिष्ट प्रयोग हुआ है। निराला के खड़ी बौली गीतों पर यह आक्षेप बराबर लगाया जाता रहा है कि वे गाये नहीं जा सकते। परन्तु गीतिका अर्चना, आराधना, आदि गीतों द्वारा निराला जी ने यह सिद्ध कर दिया कि खड़ी बोली में भी लचीलापन मधुरता एवं शास्त्रीय संगीत में ढलने की क्षमता है। निराला जी को सुर और लय बहुत गहराई से आकर्षित करते रहे है। उनका संगीत उनके हृदय में बजता हुआ, बाहर आता मालूम पड़ता है। उनके गीतों को पढ़ते हुए बराबर यह लगता है कि उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व सुर से सधा हुआ था। सुरों और रंगों के इसी संयोग ने कभी–कभी उन्हें बैसवारी लोकगीतों की ....'ट्यून' की ओर आकर्षित किया है। रंगमयता की दृष्टि पावस एवं बसन्त ऋतुएं उन्हें बहुत प्रिय लगी है। होली गीतों का मधुर स्वर उनके गीत 'मार दी पिचकारी' में अनुगुंजित हुआ है।

वस्तुतः साहित्य और संगीत का समन्वय यदि किसी आधुनिक कवि ने सच्चे अर्थो में किया है तो वह एक मात्र निराला जी है। उन्हें गीतों में संगीत का पुट देने का शौक था संगीत के बिना वे काव्य को निष्प्राण मानते थे।

1.5.7 छन्दों विधान–

छन्द–प्रयोग में निराला जी ने विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है वे एक अनुपम काव्य–शिल्पी थे। उन्होंने अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनो ही क्षेत्रों में परम्परा के पिष्ट–पेषण के स्थान पर नूतन पथ का अवलम्ब ग्रहण किया। छन्दों की दिशा में भी उन्होंने परम्परागत रूढ़ियों को विच्छिन्न करके मौलिक प्रयोग किये। इनकी छन्द योजना में उनका क्रान्तिकारी स्वरूप हुआ है। निराला जी कविता की मुक्ति के लिए छन्दों की मुक्ति की आवश्यकता पर बल देते हुए परिमल की भूमिका में कहते हैं–

'मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है। मनुष्यों की मुक्ति कर्मो के बंधन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छन्दों के शासन से अलग हो जाना है।'

इस प्रकार निराला ने कविता में मुक्त छन्दों के प्रयोग की आवश्यकता प्रतिपादित की है और जब उन्होंने पहले पहल इस छन्द का प्रयोग किया तब कुछ आलोचकों ने मजाक उड़ाने के लिए उसे 'रबड़ छंद' या 'केंचुआ छंद' कहा। पर अब अधिकांश विचारक यह स्वीकार करते हैं कि–

निराला जी ने हिन्दी काव्य को मुक्त छंद की अमर विभूति प्रदान की निश्चय ही अत्यन्त स्तुल्य कार्य किया है।'

निराला की प्रथम कविता 'जुही की कली' आरम्भ में जिसका रचना काल 1916 बतलाया जाता है। इसी प्रयोग को लेकर चली। इस मुक्त छंद का विरोध भी हुआ।

सन् 1938 ई. में पं. रामचन्द्र शुक्ल निराला जी के मुक्त छन्द के बारे में कहते हैं–

'सबसे अधिक विशेषता आपके पद्यों में चरणों की स्वच्छन्द विषमता है। कोई चरण बहुत लंबा कोई बहुत छोटा कोई मझोला......... ।'

इस नये प्रयोग के लिए उस समय निराला का कसकर विरोध हुआ। मुक्त छन्द की महत्ता स्पष्ट करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने सन् 197 ई. में लिखा–

'मुक्त छन्द की महत्ता इस बात में नहीं कि वह बन्धन हीन है या मुक्त भावो का वाहन है, वरन् इसमें है कि उसने मात्रिक छन्दों की एक लय को भंग किया। वह हिन्दी कविता में बोलचाल की लय की विविधता लाया। उसने भाषा में की छिपी हुई शक्ति उद्‌घाटित की। हिन्दी के कवित्त छन्द में यह विविधता है।'

निराला के मुक्त छन्द पर सन् 1956 ई. में प्रकाशित डॉ. रामविलास शर्मा की यह टिप्पणी अत्यंत महत्वपूर्ण है–

मुक्त छन्द वास्तव में अर्द्ध–नारीश्वर है कभी–कभी एक ही कविता में पुरूषता और सुकुमारता दोनो गुण दिखते है। निर्गुण आत्मा की तरह यह पुरुष भी बनता है और स्त्री भी। निराला ने अपने मुक्त छन्दों को कवित्त की गति ही नहीं दी, उसकी सानुप्रास शब्दावली भी अपनाई। मुक्त छन्द के चरणों में उन्होंने अनुप्रासों के घुँघरू बाँधे। इन घुँघरूओं से जब जैसी इच्छा हुई वैसी ध्वनि निकाली। मुक्त छन्द में सहज भावोद्‌गार वाली कविताएँ उन्होंने कम लिखी। वर्णनात्मक, नाटकीय, वक्तृत्व कला–प्रधान कविताएं ही अधिक लिखी। मन का सहज प्रकाशन, भावों का अकृतिम चित्र उनके मुक्त छन्द में प्रायः नहीं है। स्वतः स्फूर्ति गेयता की जगह नाटकीय रचना–कौशल मुक्त–छन्द में लिखी हुई कविताओं की विशेषता है।'

स्पष्ट है कि निराला के कुछ छंद की प्रयोजनीयता को शर्मा जी ने पहले पहल पहचाना। इसे परवर्ती समीक्षकों ने आगे बढ़ाया। इसका आचार्य नंद दुलारे बाजपेयी जी ने भी समर्थन दिया। इसी बीच सन् 1947 ई. में डॉ. बच्चन सिंह ने क्रांतिकारी कवि निराला पुरस्तक में निराला के छंदों का वर्गीकरण किया। उनके अनुसार निराला ने मुक्त छन्द की विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। प्रमुख शैलियां हैं

1. दार्शनिक प्रगीत –जागरण और रेखा
2. लघु प्रगीत –जुही की कली, शेफालिका

3. दीर्घ प्रगीत– जागो फिर एक बार, कवि, स्मृति–चुम्बन

4. पत्र प्रगीत – शिवाजी महाराज का जयसिंह के नाम पत्र

5. गीत नाट्य – पंचवटी प्रसंग

उपयुर्क्त सूची से यह स्पष्ट हो जाता है कि निराला के इस छन्द में भाव वैविध्य को बहन करने की पूर्ण क्षमता है। श्रृंगार–चित्रण से लेकर अध्यात्म दर्शन के निरूपण तथा राष्ट्रीय संस्कृति–प्रेम सौन्दर्य आदि के धरातल पर उद्‌बोधन का पूरी सामध्य निराला ने मुक्त छन्द मे सिद्ध किया है।

कवि निराला सन् 1955 ई. में आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी जी ने मुक्तछन्द की चर्चा करते हुए कहा कि निराला मूलतः प्रगीत–कवि है। इस सन्दर्भ में आधुनिक साहित्य की भूमिका द्रष्टव्य है। वे लिखते है–

निराला का मुक्त–छन्द काव्य की छन्दोगत परतन्त्रता का निराकरण था। उसने काव्य को मुक्ति तो दी ही, साथ ही नये युगोपयोगी परिधान से भी सज्जित किया। उन्होंने स्वयं मुक्त–छन्द में लय की सुधारता ला दी। मुक्त–छन्द की इस आयोजना के कारण ही उनकी कविता में सुकुमार प्रासधन कल्पना की बारीकी और अनावश्यक आमरण नहीं है। इसलिए स्वच्छंन्दता का जो अबोध स्वरूप निराला की रचनाओं में देखा जाता है उसकी तुलना दूसरे कवि से नहीं हो सकती।'

वस्तुतः यह सर्वस्वीकार्य रहा है कि मुक्तक छन्द का श्रीगणेश निराला जी ने किया। छन्दों की विविधता और प्रयोगवादी परम्परा उन्होंने प्रारम्भ की। तुक और लय–स्वर में नूतनता का प्रवेश करने में निराला जी का प्रयत्न जागरूकतापूर्ण है।

निराला अपने जन्म काल से लेकर इस छन्द के रचना काल तक बंगाल में रहे विवेकान्द की अनेक रचनाओं का अनुवाद उन्होंने बंगला से हिन्दी मे किया और रवि ठाकुर पर तो एक समीक्षा–ग्रन्थ ही लिखा यही से मुक्त छंद की शुरूआत हुई।

निराला जी ने इस मुक्त–छन्द का सम्बन्ध वेदों से स्थापित किया है। गायत्री मंत्र को वे आर्यो की स्वच्छन्द प्रकृति का सबसे बड़ा परिचायक छंद मानते हैं। वस्तुतः जब लोगो ने यह कहकर विरोध किया कि यह तो विदेशी प्रभाव है तब उन्होंने खोज करके मुक्त छन्द को वेदों से जोड़ दिया वे इस छन्द के आविष्कर्ता है या प्रथम प्रयोक्ता यह विचारणीय है। कुछ का मत है कि बिहार बन्धु (1881) में प्रकाशित महेश नारायण की कविता स्वप्न सर्वप्रथम मुक्त छंद में रची गयी है। खैर, इसके प्रचलन का श्रेय निराला जी ही देय है।

निराला के मुक्त–छन्दों को देखने से लगता है उन्होंने मुक्त छन्द–रचना में कुछ नियम मना रखे ये इसी प्रसंग में सन् 1965 ई. में आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने लिखा कि निराला जी की राम शक्ति पूजा दीर्घ प्रगति है। अब उसे लंबी कविता कहा जा रहा है, जो शास्त्रीय अभिधान नहीं है। निराला के गीतिका अर्चना आराधना गीतगुंज आदि में तरह–तरह के गीत रचे और बेला में गजले लिखी।

'अणिमा में उन्होने सानेट लिखे। दोहे, चौपाई पद घनाक्षरी कवित्त सवैया, पैराडी, लोकगीत, यानि भांति–भांति के छन्द रचे। तुलसीदास का जैसा बहुअन्तुर्तकान्त छंद तो वस्तुतः दुस्साहस है और इस कथन का प्रमाण है कि निराला पिंलग के आचार्य थे। निराला के मुक्त छन्द में बाह्य नियमाविलयाँ उपेक्षित हो गयी किन्तु उसकी

आत्मा, लय एवं ताल सुरक्षित है। निराला ने छन्द में बहुविध प्रयोग किये है पर कवि छन्दों को लयात्मकता और उसके प्रवाह को सुरक्षित रखने में सदा सजग रहा है।

अपने प्रगीतों में निराला जी ने रसानुकूल छन्दों को ग्रहण किया और स्वच्छन्द छन्दों का आविष्कार किया। अपने आख्यानक काव्यों में जिन छन्दों को अपनाया वे भी छंद शास्त्र के अनुकूल होन पर भी कुछ परिवर्तन के साथ आये।'

छन्द की स्वच्छन्दता अधिक पूर्णरूप में वहीं देखी जाती है, जहाँ इन्होंने किसी भी मात्रा या वर्ण–संख्या की आवृत्तियों की योजना न करके अनवरत प्रवाह की गति या लय को ही स्वीकार किया है।

प्राचीन छंद शास्त्रियों के कट्ट नियमों के कारण भावो की उपेक्षा हुई तुकबंदी तथा चमत्कार को बढ़ावा मिला इसलिए निराला जी ने भावभिव्यक्ति में पूर्णता लाने केलिए कम से कम छांदसिक अनुशासन स्वीकार करने की बात की।

निराला पिंगल के आचार्य थे। निराला के मुक्तछन्द में बाह्य नियमावलियाँ उपेक्षित हो गयी, किन्तु उसकी आत्मा लय एवं ताल सुरक्षित है। निराला ने छन्द में बहुविध प्रयोग किये है, पर उनका कवि छन्दों की लयात्मकता और उसके प्रवाह को सुरक्षित रखने हेतु सदा सजग रहा है।

अपने प्रगीतों में निराला जी ने रसानुकूल छन्दों को ग्रहण किया है और कई प्रकार के स्वच्छन्द छन्दों का आविष्कारा किया है। अपने आख्यानक काव्यों में उन्होंने जिन छन्दों को अपनाया वे छंद शास्त्र के अनुकूल होने पर भी कुछ परिवर्तन के साथ आये हैं।

छन्द की स्वच्छन्दता अधिक पूर्णरूप में वहीं देखी जा सकती है, जहाँ इन्होनें किसी भी मात्रा या वर्ण–संख्या की आवृत्तियों की योजना न करके अनवरत प्रवाह की गति या लय को ही स्वीकार किया है।

प्राचीन छंदशास्त्रियों के कट्टर नियमों के कारण भावों की उपेक्षा हुई थी। तुकबंदी तथा चमत्कार को बढ़ावा मिला था, इसलिए निराला जी ने भावाभिव्यक्ति में पूर्णता लाने के लिए कम से कम छांदसिक अनुशासन स्वीकार करने की बात की।

इस प्रकार स्पष्ट है कि छन्दोंबंध के क्षेत्र मे निराला का काव्य उच्चस्तरीय है।

1.6 नई भाषा–सरंचना

निराला जी ने हिन्दी कविता को सर्वथा एक नई भाषा दी है। वे दावा करते रहे है कि कवि शब्दों को प्राणाधि ाक प्यार करता है। उनकी गर्वोक्तियाँ थीं–

1. गद्य में पद्य में समाभ्यस्त
2. एक–एक शब्द बँधा ध्वनियम साकार।

अर्थात् उनकी कविता का हर शब्द सुगठित है, ध्वन्यात्मक और बिम्ब विधानपूर्ण है। काव्य भाषा के ये ही तीन प्रमुख गुण होते है। गद्य को निराला के जीवन संग्राम की भाषा कहा है। उन्होंने भाषा के कई रूप प्रस्तुत किये

है। एक ओर रमा की शक्ति पूजा वाली तत्सम परिनिष्ठित समस्त पदावली है, जिसमे उन्होंने अठारह–अठारह पंक्तियों के वाक्य लिखे हैं– दूसरी ओर छोटे से छोटे वाक्य है यथा–

रवि हुआ अस्त

निशि हुयी विगत आदि।

शक्ति पूजा की भाषा जितनी टकसाली है, उनकी परवर्ती कविता की भाषा उतनी ही मनमानी है। कुकुरमुत्ता में वे बेधड़क बोलचाल की भाषा का प्रयोग करते है। नये पत्ते की कविताओं में उनकी बैसवारी जनपदीय अवधी के ठेठ देशज प्रयोग दिखाई देते हैं। गीतिका और परिमल की रचनाओं में बाँग्ला शब्दावली का प्रभाव परिलक्षित होता है। निष्कर्ष यह है कि निराला की भाषा जितनी परिनिष्ठित है, उतनी ही प्रयोगपूर्ण है। उसमें लोकभाषा और काव्य भाषा का सुंदर सम्मिश्रण हुआ है। निराला जी ने स्वयं अनेक नये–नये शब्द बनाये हैं, कहीं अत्यन्त क्लिष्ट कहीं अत्यन्त सरल। वस्तुतः उनका भाषिक प्रयोग निराला ही था। यों रोजमर्रा की भाषा को भाषा को कवित्वपूर्ण बनाए रखना अपेक्षाकृत कठिन होता है। हिन्दी फिल्मी गीतों ने इसे अपनाया है और भवानी प्रसाद मिश्र नागार्जुन जैसे कवियों ने इस जनभाषा के सहारे अपनी जनसवेदना के संप्रेषण में यथेष्ट ख्याति प्राप्त की है। हिन्दी की अपनी इस भाषिक प्रकृति और संस्कृति की प्रतिष्ठा का श्रेय निराला को हैं।

1.7 विभिन्न काव्य रूपों के पुरोधा

निराला जी ने गद्य–पद्य की अनेक शैलियाँ अपनायी है। उन्होंने तुलसीदास नामक खण्डकाव्य लिखा। राम की शक्ति पूजा, शिवा जी का पक्ष, वनबेला, सरोज स्मृति जैसी लम्बी कविताएँ लिखी। उन्होंने गीतिका, गीतगुज अर्चना, आराधना, अणिमा, सांध्य काकली अैर परिमल में सैकड़ों प्रकार के गीत लिखे। पंचवटी प्रसंग जैसा काव्य नाटक लिखा और साथ ही रवीन्द्रनाथ विवेकानन्द गोविन्ददास चंडीदास व तुलसीदास आदि की रचनाओं के काव्यानुवाद किये।

पद दोहा, चौपाई सवैया, गजल सभी छंदों में उनकी गति थीं इसीलिए वे कई काव्य रूपों के पुरोधा सिद्ध हुए।

1.8 नयी–नयी विचारधाराओं का उन्मेष

निराला जी का लेखन एक ओर जहाँ विवेकानन्द के वेदान्त– दर्शन से प्रभावित है, तो दूसरी ओर समकालीन जीवन दर्शन से भी। उन्होंने रामकृष्ण आश्रम में साधुओं का सा जीवन बिताते हुए वेदान्त योग शाक्तमत तथा वैष्णव उपासना पद्धति को निष्ठापूर्वक आत्मसात किया था, किन्तु अन्ततः इन सबको उन्होंने एक नये युगबोध ा के रूप में परिणत कर दिया था, किन्तु अन्ततः इन सबको उन्होंने एक नये युगबोध के रूप में परिणत कर दिया था। उनका अद्धैतवाद दरिद्रनारायण की उपासना में बदल गया। निराला अनुभव करने लगे कि अमीर–गरीब सब एक ही ब्रह्म हैं, इसीलिए शोषितों के प्रति उनके मन में संवेदना प्रबल हो उठी। उनकी अनेक कविताएँ जैसे–भिक्षुक, विधवा, वह तोड़ती पत्थर आदि इसी लोक संवदेना से परिपूर्ण है। एक गीत में वे समर्थ समाज से कहते हैं–

छोड़ दो जीवन यों न मलो।

यह भी तुम जैसा ही सुन्दर।

....तुम भी अपनी ही डालों पर फूलों और फलों।

यहाँ जियों और जीने दो का सिद्धान्त मुखरित हुआ है। यह भारतीय साम्यवाद समाजवाद निराला की कई कविताओं में दिखाई देता है। इसका स्रोत कदापि मार्क्सवाद न होकर शुद्ध भारतीय वेदान्त है। निराला जी ने अधि ावास नामक कविता में लिखा कि जब मैं मोक्ष की दिशा में बढ़ रहा था, तभी मुझे एक दुखी भाई दिखाई पड़ा। मैं उसकी सेवा में लग गया, अर्थात् माया से बँध गया, फलतः मोक्ष का मार्ग अवरुद्ध हो गया, लेकिन उसकी कोई चिंता मुझे नहीं।

मैंने मैं शैली अपनाई।

देखा एक दुःखी निज भाई

दुःख की छाया पड़ी हृदय में मेरी

झट उमड़ वेदना आयी।

जनसाधारण के प्रति निराला के मन में बड़ी करुणा रही हैं। भिकुक की दशा पर द्रवित होते हुए वे कहते हैं–

ठहरो हमारे हृदय में है अमृत, मैं सींच दूँगा

अभिमन्यु जैसे हो सकोगे तुम

तुम्हारा दुःख मैं अपने हृदय में खींच लूँगा।

इस शोषित जनता के प्रति निराला ने मात्र शाब्दिक सहानुभूति ही नहीं प्रकट की है, बल्कि सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष करते रहने की प्रेरण भी प्रदान की है। पत्थर, तोड़ने वाली मजदूरिन उनकी दृष्टि में आदर्श है जो परिस्थितियों से जूझ रही है, लेकिन परास्त नहीं हुई है। कवि के शब्दों में–

देखो मुझे उस दृष्टि से,

जो मार खा रोई नहीं।

निराला के अनेक पात्र जैसे चतुरी, चमेली, पुखराज आदि परिस्थितियों से टकराते है और अन्ततः सफलता प्राप्त करते है।

1.8.1 नई पात्र परिकल्पना–

निराला जी ने एक और धीरोदान्त नायकों का चित्रण किया है, जेसे शक्तिपूजा और पंचवटी प्रसंग के राम, लक्ष्मण, हुनमान और जाम्बवान आदिं और शिवाजी तथा तुलसीदास नामक काव्य के तुलसी भी। साथ ही उन्होंने आर्थिक विवशतावश भीष्म, प्रह्लाद और महाराणा प्रताप पर जीवनी ग्रन्थ लिखे, अर्थात् पारम्परिक पौराणिक पात्रों का भी चित्रण किया। दूसरी ओर उन्होंने लघु पात्रों को प्रतिष्ठा दी जैसे कुल्ली, चतुरी, बिल्लेसुर, चमेली, महँगू, झींगुर आदि। इन लघु पात्रों पर तरस न खाकर उन्होंने इनका मुक्त गौरव–गान किया, इसीलिए वे नीचे से ऊपर उठते दिखते हैं। एक ओर उनके राम हैं, जो अंतिम कमल के लुप्त हो जाने पर अपनी आँख चढ़ा देने का संकल्प लेते है और दूसरी ओर चतुरी जैसा लघुपात्र है, जो परिस्थितियों से भी हार नही मानता। निराला की यह पात्र–परिकल्पना वस्तुतः बड़ी प्रेरक है।

1.8.2 विषयगत वैविध्य

निराला जी ने अपनी रचनाओं में एक ओर दर्शन का दिग्दर्शन कराया है, जैसे तुम और मैं, अधिवास, पंचवटी–प्रसंग, कौन तम के पार, पास ही रे हीरे की खान, आदि में तो दूसरी ओर वे सामाजिक नवजागरण की दिशा में सक्रिय रहे हैं। उन्होंने यह दशक पहले बेला की इन पंक्तियों में यह माँग की थी–

बैंक किसानों का खुलवाओ।'

देश में बँट जाये जो पूँजी तुम्हारी मिल में है।

कुकुरमुत्ता में निराला ने गुलाब को कुलीन, शौकिन और विलायतीपन से लालायित पूँजीवादी नव धनाढ्य वर्ग का प्रतीक मानते हुए और कुकुरमुत्ता को उपेक्षित देशी सत्ता का प्रतिनिधि मानते हुए वर्ग संघर्ष को वाणी दी है। उनकी रचनाओं में समसामयिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चिंतन भरा पड़ा है। ग्रामीण व्यवस्था और लोकजीवन, विशेष रूप से बैसवारा अंचल के प्रति उनके मन में विशेष अनुरक्ति है। वे इनके विकास के लिए कटिबद्ध दिखते हैं जैसे–

जल्द–जल्द चलो, कदम बढ़ाओ।

धोबी, पासी चमार सबकी लगेगी पाठशाला।

रात के अँधेरे में खोलेगे, जमींदार की हवेली का ताला।

एक पाठ पढ़ो, फिर टाट बिछाओ।

1.8.3 यथा स्थिति के प्रति क्रान्ति का स्वर

निराला जी मूलतः क्रान्तिकारी कवि रहे है। केवल कथनी में ही नहीं बल्कि करनी में भी। सरोज स्मृति कविता इसका उदाहरण है। वे आजीवन रूढ़ियों का विरोध करते रहे है। काव्य के क्षेत्र में भी और जीवन में भी। सत्ता का उन्होंने बराबर निषेध किया और जीवन पर्यन्त कभी राज्याश्रय नहीं ग्रहण किया। उन्हें बराबर पेट के लाले रहे, लेकिन सामंतों या सत्ताधीशों के आगे झुकना उन्होंने स्वीकार नहीं किया। वे बराबर कहते रहे–

हम साहित्य के बादशाह है,
अन्धे क्या जाने।

वस्तुतः तुलसीदास उनके आदर्श रहे हैं। आज इसीलिए तुलसी और निराला बुद्धिजीवी कलमकार वर्ग के आदर्श हैं।

निराला जी की विद्रोही चेतना को विषयानुसाद पाँच वर्गों में विभाजित करना समीचीन होगा–

1. राजतंत्र का विरोध
2. धर्मतंत्र का विरोध
3. सामाजिक व्यवस्था का विरोध
4. अर्थ व्यवस्था का विरोध
5. साहित्य क्षेत्र में आरोपित अनुशासनों का विरोध।

1. राजतंत्र का विरोध–

निराला जी प्रायः सामन्ती व्यवस्था के विरोध में रहे। उनकी एक कविता है राजे ने रखवाली की। उसमें राजन्य व्यवस्था का भण्डाफोड़ करते हुए वे कहते हैं कि राजाओं ने अपनी रक्षा के लिए किले बनवाए फौज रखी कवि और कलाकारों को पाला और खून की नदियाँ बहाई। उसकी हिंसक प्रवृत्ति एवं भोग–विलास वृत्ति से त्रस्त प्रजा ने अन्त में महसूस किया कि यह कल्याण राज्य नहीं है। निराला की कई कृतियों में ऐसे विद्रोही पात्र आए हैं जो राजतंत्र को चुनौती देते हैं। जैसे– काले कारनामें में , मनोहर, चोटी की पकड़ में, प्रभाकर, मुन्नाबादी लका में विजय और निरूपमा में कुमार। अलका में राजा का प्रतिनिधि है जमीजदर मुरलीधर। निराला की नायिका शोभा, अलका, का सर्वस्व हड़पने के लिए जब वह आमादा हो जाता है तो अलका उसे गोली मार देती है। चतुरी चमार जमीदार द्वारा जबरन मुत में प्रति वर्ष दो जोड़ी जूते बनवाने की व्यवस्था का विरोध करता है। चोटी की पकड़ में लेखक(1944) लार्ड कर्जन के बंग–विच्छेद का विरोध करता हुआ स्वदेशी का नारा देता है। वहीं राजा राजेन्द्र प्रताप के उत्सव में सुराजियें का विद्रोह व्यक्त होता है। अलका का विजय संन्यासी बनकर राजा को चुनौति देता हुआ अपनी देश भक्ति का परिचय देता है। कुल्ली भाट में निराला जी टैक्स वसूली का विरोध करते हुए खादी और किसान–आंदोलन को समर्थन देते हुए दिखायी देते है। निरूपमा का कुमार ताल्लुकदारों की यूनिवर्सिटी द्वारा किए गए अन्याय के प्रतिरोध स्वरूप जूता पॉलिश का कार्य शुरू कर देता है, पर आत्म समर्पण नहीं करता। निराला ने ऐसी अनेक कविताएँ लिखी है जिनमें सरकारी अधिकारियों का विरोध किया गया है। जैसे कुत्ता भूकने लगा, झीगुंर, डर का बोला, मँहगू मँहगा रहा, तथा डिप्टी साहब आए। उनका एक पात्र महादेव मालकि बख्तावर सिंह को मारता है तो निराला खुश होते हैं अप्सरा का एक अंग्रेज अधिकारी हेमिल्टन युवती कनक को जब बरबस अपनाने की चेष्टा करता है तो राजकुमार डट कर उसका विरोध करता है। निराला जी की एक कहानी है राजा साहब को अँगूठा दिखायां इसमें उन्होनें राजतन्त्र की अन्धेर गर्दी को उजागर किया है। निराला ने सत्ता से जुड़े हुए राजनीतिज्ञों का भी कभी समर्थन नहीं किया। वे नेहरू को कभी स्वीकार नहीं कर पाए। उनकी ये रचनाएँ इस कथन की साक्षी हैं–

> काले काले बादल छाए न आए वीर जवाहर लाल।
>
> आजकल पंडित जी देश में बिराज़ते हैं
>
> लक्ष पित का यदि कुमार होता शिक्षा पाता में अरब समुद्र पार
>
> देश की नीति के मेरे पिता परम पंडित(वनबेला)

निराला ने अपने निबंध नेहरू से दो बातें में हिन्दी के प्रति नेहरू की अवमानना का विस्तृत विवरण दिया है। उनका एक निंबध है प्रान्तीय हिनदी साहित्य सम्मेलन फैजाबाद। इसमे वे टंडन जी से टकराते दिखायी देते हैं। टण्डन जी ने चाहा था कि साहित्यकार आजादी के आन्दोलन में हमारा साथ दे। निराला उत्तर देते हैं कि इस प्रदेश के राजनीतिज्ञ जहाँ पहुँचे है, कवि उनसे आगे हैं और यह भी कि सरस्वती राजनीति की दासी नहीं है। सरकार के प्रति विरोध भाव रखने के कारण उन्होंने कभी कोई पद, पुरस्कार, अनुदान आदि स्वीकार नहीं किया। रेडियों से अपना कोई प्रसारण तक नहीं होने दिया और मरते–मरते भी सरकारी अस्पताल जाना स्वीकार नहीं किया। उनके अनुसार स्वंतत्रता आंदोलन में बुद्धि जीवियों का नेतृत्व होना चाहिए था। उनके अनुसार यह आजादी अधूरी है।

वे कभी राजा, नेता और हाकिम के सामने झुकने को तैयार नहीं हुए, इसीलिए ओरछा नेरश को अपना परिचय देते हुए उन्होंने कहा था कि मैं वह हूँ, जिसके अकड़दादा भूषण की पालकी में आपके लकड़दादा छंत्रसाल कथा लगाया करते थे। भूषण त्रिपाठी को अपना पूर्वज मान बैठे थे और दूसरी ओर। बोर बल त्रिपाठी को भी। इसी दृप्त स्वाभिमान के कारण वे किसी राज्यश्रम में ठहर नहीं पाए। महिषादल स्टेट में अपने पिता के निधनोपरांत उन्होंने

वहाँ कुछ दिनों नौकरी की लेकिन चाहकारिता और चुगल खोरी से त्रस्त होकर वे अलग हो गए। छतरपुर नरेश के यहाँ उन्होंने तीन सप्ताह बिताए पर वह अनुभव अच्छा न रहा। अपने पूरे साहित्य में उन्होंने मात्र चार राजाओं को महत्व दिया है। एक शिवाजी को (दृष्टव्य महाराजा शिवाजी का पत्र) दूसरे गुरू गोविन्द सिंह को(द्रष्टव्य–जागो फिर एक बार) तीसरे एडवर्ड आष्टम को(द्रष्टव्य–एडवर्ड अष्टम के प्रति) और चौथे कला कांकर नरेश सुरेश सिंह को जिन्हें कुकुरमुत्ताा काव्य समर्पित किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि समाज सेवी सत्साहसी और साहित्य नुरागी शासकों को उन्होंने महत्त्व भी दिया है। यों, अभिजात्य के प्रति बराबर उनके मन में विद्रोह भाव रहा है। उनका कुकुरमुत्ता गुलाब को धिक्कारते हुए कहता है।–

राजाओं रईसों का रहा प्यारा

इसीलिए औरों से तू न्यारा।

वस्तुतः निराला ने अपना एक अलग मनोराज्य बना लिया था।

2. धर्मतन्त्र का विरोध–

निराला जी को पाखण्ड से बड़ी चिढ़ थी इसीलिए उन्होंने महिषादल के पाखड़ी साधु का विरोध किया। उनकी एक कविता है प्रेमांनदजी से सम्बम्धित इसमें आश्रम को एक बंगाली साधु उत्तरी युवक का जब निषेध करते है तो प्रेमानंद जी उसकी भर्त्सना करते है। यह सुविदित है कि निराला जी हनुमत भक्त थे, देवी के उपासक थे और यदा–कदा वैष्णव हो आते थे। अर्चना और आराधना के गीतों में शरणागति मिशन में बिताए थे स्वामी माधवानंद जी के साथ उन्होंने समन्वय का सम्पादन किया था और संन्यासियों की वेशभूषा तथा उन्ही की जैसी दिन चर्या अपनायी थी इस अवधि में वे स्वामी शारदानंद जी से इतने चमत्कृत हुए कि उसे अंधविश्वास की कोटी में भी रखा जा सकता है। दूसरी ओर इसी अवधि में वे पारम्पिरिक अध्यात्म का विरोध करते हुए भी देखे जाते है। उनकी एक प्रसिद्ध कविता है अंधिवास। कवि चिन्तन कर रहा है कि उसका अधिवास पानी गंतव्य कहाँ है? तभी उसे रास्ते में एक दुखी दिखायी देता है। चिन्तन प्रक्रिया छोड़ कर उस गरीब को गले लगा लेते हैं। उकन मन में एक द्वंद्व छिड़ जाता है। अन्ततः वे दरिद्र नारायण का सेवाव्रत अपनाते हुए लिखते हैं–

छूटता है यद्यपि अधिवास

नहीं है इसका मुझको त्रास।

मैंने में शैली अपनायी।

यह मैं शैली निराला के व्यवस्था विरोधी व्यक्तित्व की सूचक है। उनका स्वतंत्र व्यक्तित्व नियति तक के विधान को नहीं स्वीकार कर पाया। उकनी कुण्डली में दो विवाह लिखे हुए थे। निराला ढान लेते है कि कुण्डली में लिखे हुए को खंडित कर देना है, इसलिए वे कुण्डली फाड़ कर फेंक देते है और लिखते हैं–

खंडित करने को भाग्य अंक देखा भविष्य के प्रति अंशक इसी प्रकार दान कविता में वे वैष्णव भक्तों की अमानवीयता को कोसते है, आनार के गंगा के किनारे में पण्डगीरी पर व्यंग्य करते हैं यदा–कदा मुस्लिम कट्ठता पर विचार करते है और विभिन्न संप्रदायों की संकीर्णता पर प्रकाश डालते हैं।

3. जड़ सामजिक व्यवस्था का विरोध–

संगोगवश निराला उच्च वर्ण और मध्य निम्न वर्ग से जुड़े हुए थे, पर मध्यवर्गीय अध्ययुगीन मानसिकता से वे मुक्त थे। यही कारण है कि उनके साहित्य में छुआ छूत खान पान के भेद–भाव दहेज नारी परतंत्रता वैधव्य व्रत वैश्या वृन्ति पर्दाप्रथा रोमैन्टिक मनोवृत्ति और व्यभिचार भ्रष्टचारा की सर्वत्र भर्त्सना की गयी है। कुल्ली भाट

की अछूत पाठशाला के छात्र निराला को जब दूर से फूलों का दोना पकड़ाते है तो निराला ममहित होकर कहने लगते हैं कि ये ऋषियों के वंशज है पर हमने उन्हें इस अधोदशा में पहुँचा दिया है कि अब हमें छूते हुए डर रहे हैं। चतुरी चमार में निराला किसी की चिन्ता न करके चतुरी के पुत्र को पढ़ाते हैं और अपने घर को हाउस ऑफ कामन्स बना देते है। यदा–कदा उन्हें चौके की छुआ–छुत का निर्वाह करते हुए स्वपाकी होते हुए भी देखा गया है। यों खान पान में वे आजीवन उन्मुक्त रहे घृत पक्व मसालेदार मांस और अण्डा सेवन का उन्होंने अकारण अनेकशः उल्लेख किया है। मुख्यतः कट्टर पंथियों को चिढ़ाने के लिए। सुकुल की बीबी में पुखराज को पुष्कर बना कर जब भोजन दिया जाता है तो उसमें वे कनौजियों को सम्मिलित देख कर खुश होते है। दहेज प्रथा का निराला ने बहुशः विरोध किया है। उनकी कहानियों जैसे–ज्योतिर्मयी, कमला हिरनी श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी आदि में उन्होंने देहज, लोभियों पर जम कर प्रहार किए हैं। सरोज स्मृति में अपनी कन्या के विवाह में उन्होंने दहेज प्रथा का यह कहते हुए विरोध किया कि अभी न ऐसा सुसमय है और न मैं इतना मूर्ख हूँ, कि पैतृक संपथ्तत बेंचकर दहेज जुटाऊँ। वे सारे तीज तोड़कर सादगी अपनाते हैं तुम करो ब्याह तोड़ता नियम मैं सामाजिक योग के प्रथम।

यद्यिप पुत्र राष्कृष्ण का विवाह उन्होंने धूम धाम से किया था पर सरोज का विवाह उनके शब्दो में आमूल नवल थां निराला ने वैवाहिक रूढ़ियों का अधिकाधिक विरोध किया है। उनकी कथा–कृतियों में दर्जनों पात्र है जिन्होंने प्रेम–विवाह किए है। इनमे कुछ विजातीय भी है। प्रणय परिणय की पहल प्रायः युवतियों ने की है। निराला ने विधवाओं दासी पुत्रियों और वेश्याओं के विवाह की भी भरसक युक्ति निकाली हैं। अप्सरा और कला की रूपरेखा में वे नर्तकी–गपिकाओं को कला की अधिष्ठात्री सिद्ध करते है और एक प्रसंग मे अल्ला रखा को गाधीजी से बेहतर घोषित करते हैं।

जातीय दम्भ निराला जी को सह्यय नहीं था। वे छुटभैया, कान्यकुन्ज थे पर हीनताबोध से मुक्त थे निरालाजी साम्प्रदायिकता एवं कठमुल्लापन के विरोधी थे। उनका बिल्ले सुर कनोजिया होता हुआ भी जीविकोपार्जन के लिए एक निम्नवर्गीय की चाकरी करता है। और अन्ततः बकरी पालन–उद्योग स्थापित करके मुक्ति बल से अपनी अच्छी हैसियत बना लेता है। उनका चरित नायक कुल्ली मुसलमानिन से विवाह करता है, हरिजन पाठशाला चलाता है। और जनसेवा करके उस क्षेत्र का पूज्य पुरूष बन जाता है। उसकी अत्येंष्टि में पुरोहित वर्ग के सम्मिलित न होने पर स्वयं निराला उसका श्राद्ध कर्म कराते है। कुकुरमुत्ता मे वे नवाब जादी गोली और मोना बंगालिन की जो घनिष्टता चित्रित करते हैं, चित्रित करते हैं वह भी साम्प्रदायिक सौहार्द और वर्गीय अभेद का उदाहरण है। निराला जी ने वर्ण व्यवस्था का भी समर्थन नहीं किया। वे कहते है कि ब्राह्मण की श्रद्धा गयी, क्षत्रिय का वीर्य गया वैश्य का व्यापार गया। अब शूद्र शक्ति से भारतीयता की किरणे फूटेगी। उनके अनुसार वेदऋर्षि और राजर्षि की जगह अब शूद्र ऋषि बनाने की आवश्यकता है। एक स्थल पर वे जाति–पाँति तोड़कर मण्डल की जगह जाति–पाति योजक मण्डल स्थापित करने की सकारात्मक सलाह देते हैं। निराला जी बंगीय क्षेत्रीयता के भी विरोधी रहे हैं पर अपने बैसवारापन के प्रति सपक्ष भी। रौमेन्टिक व्यभिचार को उन्होंने खुल कर कोसा है। उनकी नायिका चमेली गाँव घर के भ्रष्ट्राचारियों का भण्डाफोड़ करती है। स्पष्ट है कि जड़ सामाजिकता के वे आद्यन्त विरोधी रहे है।।

वर्तमान धर्म का गदा भी इसी मानसिकता की देन है।

4. पूँजीतन्त्र का विरोध–

निराला जी ने मुनाफाखोरों और पूँजीपतियों को जम कर कोसा है। वे कहते हैं–

जमीदार की बनी महाजन धनी हुए हैं।

उनकी कामना है– देश में बँट जाए जो पूँजी तुम्हारी मिल मैं है।

इसीलिए वे माँग करते है कि बैंक किसानों का खुलवाओ। बादल राग में वे कहते हैं धनी वर्ग सबसे डरपोक होता है– अंगना अंग से लिपटे भी

आतंक भवन मे काँप रहे है, धनी वज्र गर्जन से.....।

अपने जीवन में उन्होंने दो बार सेठश्रय ग्रहण किया। मतवाला का संपादन करते हुए बाबू महादेव सेठ का और सुधा का संपादन करते हुए दुलारे लाल भार्गव का। इनके लिए उन्होनें छद्म लेखन किया। जब स्वाभिमान को आघात लगा तो निर्ममता पूर्वक उन्हें छोड़ दिया। महादेव बाबू के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए वे कहते है कि वे न होते तो निराला न आया होता।

5. साहित्य क्षेत्र में आरोपित अनुशासनों का विरोध–

स्वतन्त्र चेता साहित्यकार किसी का वर्चरुव स्वीकार नहीं करता। युगाचार्य द्विवेदी जी ने जब छायावाद और मुक्त छंद का विरोध किया तो निराला जी ने डट कर उनका प्रतिरोध किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने जब छायावाद की हँसी उड़ायी तो निराला जी ने हमारे कालेज का बचुआ जैसी कविता लिखकर उनका उपहास किया। दूसरी ओर उनके निधन पर श्रद्धांजलि भी अर्पित की। प्रगतिशील लेखकों ने जो मास्कों डाइलाक्स प्रसारित किया निराला ने उस पर व्यंग्य किया। कुकुरमुत्ता में उन्होंने इलियट पंथी आयातित प्रयोगों का स्वयं नए पन के आग्रह के बावजूद विरोध किया।

साहित्यकारों से बैठे–ठाले छेड़खानी भी वे करते रहे है। जो कला के विरह मे जोशी बंधु जैसे निबंध में द्रष्टव्य है। वे अपनी निजी काव्य रूढ़ियों को भी तोड़ते रहे हैं। उन्हें सद्यः स्नाता का बिम्ब बहुत प्रिय था। जबकि ,खजोहरा कविता में वे उसका प्रत्याख्यान करते है। इसी प्रकार छायावादी प्रकृति चित्रण की जगह स्फटिक शिला कविता में वे कुरूपता को वाणी देते है। उनकी कई कविताएँ जैसे रानी और कासी, गर्म पकौड़ी, मैं बंभन का लड़का, इसी कुरूपता बोध की उपज हैं। वर्तमान धम्र का गद्य भी इसी मानसिकता की देन है।

वस्तुतः आत्म का विरोध भी निराला जी ने बहुत किया है। इसका एक उदाहरण है उनका एक गीत–

बाँधों न नाव इस ठाँव बंधु
पूछेगा सारा गाँव बंधु।

यहाँ कवि लोकापवाद के भय से अपने मन को मारता दिख रहा है।

एक बात और हिन्दी जगत की अवमानना उनके इस विरोध की मूलाधार रही है।

तात्पर्य यह है निराला के व्यवस्था विरोध में बड़ा वैविध्य है। उनकी पूरी साहित्यिक यात्रा मे चार महत्वपूर्ण मोड़ दिखायी देते हैं–

1. अनामिका परिमल, गीतिका, तुलसीदास का रचनाकाल, जहाँ वे प्रेम, सौन्दर्य वेदांत और छायावृत्ति से प्रेरित है।
2. कुकुरमुत्ता, अणिमा, और बेला की रचनावधि, जहाँ वे व्यंग्य विद्रोह को अपना आयुध बनाते हैं।
3. अर्चना, आराधना का रचनाकाल जहाँ वे भक्ति अध्यात्म और शरणागति मे केन्द्रित दिखायी देते हैं।
4. गींतगुज और सांध्यका कली का दौर जिसमें वे मृत्यु बोध और विक्षेप से ग्रस्त प्रतीत होते हैं।

इन सब पर समग्र दृष्टि से विचार करने पर ही यह सिद्ध किया जा सकेगा कि निराला क्रांति कारी थे, विद्रोही थे अथवा व्यक्तित्व विद्रोही थे। मेरे मतानुसार उनका क्रांक्ति दर्शन कई अर्न्तविरोधों से ग्रस्त है। यही उनका निराला पन है। मूलतः वे नवीनता के आग्रही रहे है। उनकी टेक थी–

नव गति नव लय ताल छंद नव नवल कंठ नव जलद मंद्रख नव नभ के नव विहग वृन्द को नव गति नव स्वर दे।

वे एक गीत मे प्रार्थना करते है कि प्रभु मेरे पुरातन प्रेम का हरण करों। वे मानते रहे हैं कि पुराने लड़ने वाले नए लड़ने वालों से बराबर हारे हैं। उन्होंने प्रायः प्रत्येक रचना की भूमिका में नए पन का दावा किया है। जैसे–'हिन्दी का नवीन पंथ' (अलका 1934), 'युग की चीज'(चोटी की पकड़) नए गीतों का संग्रह(बेला) भाषा आधुनिक –कुकुरमुत्ता नयी लच्छे दार भाषा (निरूपम) सभी तरह के आधुनिक पद्य (नये पत्ते) नयी कला (चतुरी चमार) आदि। इस नवीनता ने निराला को कुछ विचित्र कहने के लिए बाध्य किया हैं। वस्तुतः यही उनकी विद्रोही चेतना का मूल हेतु प्रतीत होता है।

6. राष्ट्रीयता–

निराला की बुनियादी राष्ट्रीयता अन्तर्वारा का प्रतिनिधित्व करने का श्रेय उनकी भारति जय–विजय करे, रचना को प्राप्त है, जिसमें उन्होंने महासरस्वती स्वरूपा भारतमाता का स्तवन किया है–

भारति जय, विजय करे।

कनक शस्य कमल धरे।

लंका पदतल शतदल

गर्जितोर्मि सागर जल,

धोता शुचि चरण युगल

स्तव कर बहु–अर्थ–भरे।'

(गीतिका)

निराला की इस राष्ट्रीयता तथा अद्वैतवादिता की व्यंजना अणिमा के कुछ गीतों में हुई है, जैसे–

भारत ही जीवन धन।

ज्योतिर्मय परम–रमण

सर–सरिता बन–उपवण

तपः पुंज गिरि–कंदर

निर्झर के स्वर–पुष्कर

दिक्प्रांतर मर्म–मुखर

मानव मानव–जीवन।'

(अणिमा–55)

'अणिमा' में निराला की एक प्रसिद्ध रचना है। 'सहस्राब्दि' जिसमें भारत के अतीत वैभव को विभिन्न स्तरों एवं रूपो में अभिव्यक्त किया गया है, जो निराला की अतीत के प्रति आस्था के साथ श्रेष्ठ राष्ट्रीय रचना भी है–

आ रहा याद वह वेदों का उद्धार ख्यात

वह श्रुतिधरता, ज्ञान की शिक्षा वह अनिर्वात

निष्कंप, भाष्य प्रस्थान, त्रयीधर, संस्थापन

भारत के चारों ओर मठों का संज्ञापन।'

(अणिमा–28)

है। उदाहरणार्थ 'सहस्त्राब्दि' और शिवाजी का पत्र' द्रष्टव्य है। उन्होंने 'बादल राग' रचना में नई सामाजिक चेतना को वाणी दी है।–

'अट्टालिका नहीं रे आतंक भवन

सदा पंक से ही होता जन विप्लव गायन।'

'जागो फिर एक बार 'कविता में 'गुरु गोविन्दसिह के माध्यम से भारतीयों' की गौरवगाथा प्रस्तुत की गयी है–

'सवा–सवा लाख पर एक को चढ़ाऊँगा.....।'

इसी तरह निराला की राष्ट्रीय भावना और सामाजिक संचेतना साथ ही भावी नवनिर्माण का उनका सपना स्वतः सिद्ध है।

7. व्यंग्य–विक्षोभ

'निराला' का साहित्य जहाँ मंगलाशाओं' से भरा पड़ा है, वहीं गहरी व्यंग्य विड़म्बना भी वहाँ दिखाई देती है। उनकी कई कविताएँ हास्य की मुद्रा में लिखी गई हैं, जैसे –'गर्म पकौड़ी', 'मैं बहन का लड़का', 'रानी और कानी', आना रे गंगा के किनारे', खजोहरा, बनवेला, मास्को डायलाम्स, स्फटिक शिक्षा, कुकुरमुत्ता, आदि। उन्होंने गांधी, नेहरू, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि पर पैरोड़ी बना कर कई प्रहार किये है–

बापू तुम मुर्गी खाते यदि', हमारे कालेज का बचुवा, काले–काले बादल छाए न आए वीर जवाहर लाल, आज कल पंडित जी देश में विराजते हैं, इतना ही नहीं लक्षपति का भी यदि कुमार होता मैं.., आदि उनके व्यंग्य–वेदना, व्यंग्य विद्रोह और व्यंग्य–विनोद के श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

इस प्रकार निराला का काव्य "वैविध्यपूर्ण अर्थात सर्वधा निराला है। वह यहां ठोस जमीन से जुड़ा दिखता है।, वहीं कल्पना लोक से भी। कैलाश में शरद जैसी कविता फैटेंसी रूप में लिखी गई है और 'सरोज स्मृति' जैसी खण्डित आत्मकथा भोगे हुए यथार्थ के रूप में। निराला जी ने एक और कवित्त, सवैया, दोहा, चौपाई , पद भजन यानी पारम्पारिक छन्दों की रचना की और दूसरी और गजल, गीत, मुक्तक और मुक्त छन्द की। भाषा के अनेक तेवर उनकी रचनाओं में है। विचार धाराओं की बहुविध छटा उनके काव्य में व्याप्त है। इतना बड़ा रचना संसार किसी अन्य आधुनिक साहित्यकार में नहीं दिखाई पड़ता। सबसे बड़ी विलक्षणता यह है कि निराला जी ने शब्द और कर्म में सामंजस्य स्थापित किया है। कविता के लिए आत्म वित्र्सन करना होता है। वह मात्र शब्द नहीं है, बल्कि जीवन संवेदना का अधिकरण है। यही निराला का मूल संदेश है और वही उसकी अनन्यता का मूल कारण है।

8. विश्व मानवतावाद

निराला की यह चिंतन धारा मूलतः मानवतावादी है। उसमें व्यष्टि से समष्टि तक सबसे लिए अपनत्व–भाव है, क्योंकि राष्ट्रीयता की यह भावना वेदांतवादी है। यह सभी प्रकार के अन्याय, शोषण एवं असमानता के विरुद्ध

संघर्ष शक्ति–जननी है। यही वेदांत स्वाधीनता आन्दोलन के लिए प्रेरक शक्ति बना है। वह सभी तरह की सामाजिक रूढ़ियों के नाश के लिये समर्थ है। वेदांत की व्याख्या लोग तरह–तरह से करते है। निराला की व्याख्या सबसे क्रांतिकारी है, इसलिए कि सामंत विरोधी किसान– आन्दोलन से उनका संबंध औरों से गहरा है। निराला पौराणिक रूपकों को नया अर्थ देते है। देवी–देवताओं को वे प्रतीक रूप में इस्तेमाल करते है। पुरानी आस्थाओं पर जब–तब कड़ी चोट भी करते हैं। इसका कारण यह है कि वे जन साधारण की रूढ़ियों से मुक्त करना चाहते हैं। उनकी युग चेतना का यही मूल उत्स हैं।

निराला का जीवन–दर्शन मानव केन्द्रित है। मानव उनकी जीवन–दृष्टि में ब्रह्म है, जिससे बड़ा अन्य कुछ नहीं है। इसीलिए निराला के जीवन–दर्शन में जाति, धर्म, सम्प्रदाय, देश आदि की मान्यताएं–धारणाएँ मानव को खण्डित नहीं करती और उसे विभाजित भी नहीं करती। निराला का सर्वव्याप्त यह विराट मानव–मानव में प्रेम, समता तथा सहयोग–सामंजस्य की स्थापना करता है। इसीलिए निराला–काव्य में सम्राट अष्टम एडवर्ड के प्रति समादर व्यक्त हुआ है, क्योंकि उन्होंने 'राजसिंहासन तथा उसकी संकीर्ण किन्तु वैभवशाली प्रतिष्ठा को त्यागकर एक साधारण नारी से विवाह किया। 'सम्राट अष्टम के प्रति' कविता में 'निराला इसी भावना को व्यक्त करते है:–

'मानव मानव से नहीं भिन्न
निश्चय ही श्वेत, कृष्ण अथवा
वह नहीं क्लिन्न,
भेंद कर पंक
निकलता कमल जो मानव को
वह निष्कलंक
हो कोई सर।'

'अर्चना' की इन पंक्तियों में भी निराला के विश्व मानवतावादी दर्शन को अभिव्यक्ति मिली है:–

'जल–थल–नभ आनन्द मास है,
किसी विश्वमय का विकास है
सलिल–अनिल ऊर्मिल विलास है
निस्तल–गीति–प्रीति की तलियाँ।'

निराला–साहित्य एवं दर्शन में वर्ग–वर्ण–भेद नहीं है। सभी मानव 'अमृतपुत्र' है। मनुष्य ही पूर्णता का अधिकारी है। मुक्ति या पूर्णता का यह अधिकार देवताओं को भी प्राप्त नही है। (संग्रह–63) इसी जीवन–दर्शन के कारण भारत को विशिष्टता प्राप्त हुई। भारत के प्राकृतिक नियमों की जाँच करने से उसके धर्म–जीवन का पूर्ण परिचय प्राप्त होता है। हिमालय जैसे गंभीर एवं सात्विक प्रकृति के लीला क्षेत्र के आते ही दर्शकों का मन स्वभावतः अन्तर्मुख होकर कवित्वमय भाव–राज्य में विचरण करने लगता है। गंगा–जैसी स्वच्छतोया नदियों का जल उसके मनोबल को धो डालने के लिए सर्वथा समर्थ है। प्रकृति की कुल चेष्टाएँ मानों भारत के धर्मधाम की रक्षा के लिए कर्मतत्पर हो रही हैं। दूसरी ओर, भारत अपने शब्दार्थ से भी अपनी धर्मप्राणता सूचित करता है। भारत ही विश्व में धर्म–देश तथ आध्यात्मिक चेतना का संदेशदाता है। यही कारण है कि निराला–साहित्य में मनुष्य की प्रतिभा तथा महत्ता का विशेष उल्लेख है। अपने आलेख 'भारत' में श्रीरामकृष्णावतार' में निराला लिखते हैं–

"अत्याचार पीड़ित और भोगाथ मनुष्यों को शांति का पता बताने के लिए भगवान श्रीरामकृष्णदेव अवतीर्ण हुए। इस बार फिर भारत शांति स्थापना का केन्द्र बना। संसार में आज जो आध्यात्मिक प्रवाह बन रहा है, उसकी

उत्पत्ति भगवान श्रीरामकृष्ण–महा अध्यात्मतत्त्व स्वरूप से हुई है। आज विश्व समाज में भ्रातृत्व बंधन की जो ध्वनि गूँज रही है, वह सबसे पहले भगवान श्री रामकृष्णदेव के पाद्–प्रांत पर समाप्त हुई थी। आज भारत में, एकता–लता पर जो फूल खिल रहा है, उसके निपुर्ण माली है– भगवान श्रीरामकृष्ण। (संग्रह–68)

निराला की अद्वैतवादी दृष्टि अपने व्यावहारिक धरातल पर सृष्टि को, विराट मानव के रहने योग्य, स्वर्ग बनाना चाहती है। वे लिखते हैं–

'दूर हो दुरित, सुख सरित फूटे बड़े,
विश्व होकर रहे स्वर्ग का सुस्थान।'
(आराधना–34)

इसी बिन्दु पर निराला नर को 'नरक त्रास' से मुक्त करने की प्राथना करते है–

'माँ अपने आलोक निखारो
नर को नरक–त्रास से वारो,
विपुल दिशावधि शून्य वर्ग जन,
व्याधि शयन जर्जर मानव–मन,
ज्ञान गगन स निर्जर जीवन
करुणा करो उतारो, तारो।
स्वर्ग धरा के कर तुम धारो।'
(अर्चना–124)

अपने उपर्युक्त व्यापक जीवन–दर्शन के कारण निराला की दृष्टि संपूर्ण विश्व–मानवता को अपने में समेटने का प्रयास करती हैं। वे स्वयं लिखते है– 'हमारे काव्य–साहित्य की दृष्टि बहुत व्यापक होनी चाहिए। तभी उसका कल्याण हो सकता है। पश्चिमी कवि के हृदय में पूर्व के लिए अपार सहानुभूति उमड़ चली है। उनका यही पौरुष और प्रेम आज संसार भर में फैला हुआ है। वर्डसवर्थ और उसके मित्र कालरिज ने इसीलिए पूर्व का वर्णन किया है।' (चयन 160)

निराला आत्मवादी होने के कारण ही परमात्वादी और व्यक्तिवादी होने के कारण ही विश्ववादी है। निराला की स्पष्ट धारणा है कि व्यक्ति का उन्नयन आत्मा से प्रारंभ होने पर ही सफल–सार्थक होगा। इस प्रकार प्रत्येक आत्मा का विकास, सम्पूर्ण मानव जाति तथा विश्व के उत्कर्ष में परिवर्तित हो जायेगा। इसीलिए निराला आत्म–शक्ति के विकास को सर्वाधिक महत्त्व देते हैं। आत्म–शक्ति के विकास में ही मानव की जय–यात्रा की सफलता का रहस्य छिपा हुआ है। इसलिए निराला मानव की आत्मा के शवदल को पूर्णरूप से प्रस्फुटित करने में विश्वास करते है। उनके द्वारा मानव को ब्रह्म, मानवी को शक्ति तथा सरस्वती मानने का अभिप्राय यहीं है। 'अर्चना' तथा 'आराधना' के अनेक गीतों में इस तथ्य को व्यापक रूप से अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। 'गीतिका' की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

'पास ही रे, हीरे की खान,
खोजता कहाँ और नादान।'
स्पर्श–मणि तू ही अमल, अपार

रूप का फैला पारावार,

व्यष्टि में सकल सृष्टि का सार।'

'गीतिका' के प्रथम गीत में ही कवि माँ सरस्वती से प्रार्थना करता है कि मानव के हृदय में वर्ण, जाति, ध र्म, सम्प्रदाय के बन्धनों की पतों को काट कर, पाप कालुष्य से पूरित भेद–वृद्धि के अंधकार को दूर करके ज्योतिर्मय निर्झर बहा दो और विश्व में प्रकाश भर दो। भारत में अक्षय–जीवन–चेतना और स्वातंत्र्य का मधुर संगीत भर दो। नव–चेतना और उल्लास से युक्त अनन्त और व्यापक जीवन प्रदान करो।

स्पष्ट है कि निराला राष्ट्रीय कवि होने के साथ ही विश्व–कवि है। अपनी जन्मभूमि के प्रति उनमें अगाध श्रद्धा तथा प्रेम–भाव है, लेकिन उनकी राष्ट्रीयता तथा राजनीतिक विचारधारा विशुद्ध सांस्कृतिक आधार पर अवस्थित है। यद्यपि निराला ने 'भारति जय विजय करे' तथा 'भारत ही जीवन धन' जैसे गीतों की रचना की हैं किन्तु उनकी राष्ट्रीयता भावना काल, धर्म तथा जाति से मुक्त अद्वैतवादी अध्यात्मिक पृष्ठभूमि पर ही विकसित हुई है। 'शिवाजी का पत्र' विशुद्ध राष्ट्रीय भावना का प्रतीक रचना है।

निराला की राष्ट्रीय एकता की परिकल्पना मूलतः मानवतावादी है। उनमें अतीत के प्रति गहरी आस्था है। 'यमुना के प्रति', 'खण्डहर', सहस्त्राब्दि, 'जागरण' आदि रचनाओं में अतीत के प्रति गहरी आस्था व्यक्त हुई है। वे सम्पूर्ण प्राचीन जीर्ण–शीर्ण व्यवस्था को भस्म कर देना चाहते हैं, लेकिन उनकी राष्ट्रीय विचारधारा में वैयक्तिक स्वतंत्रता को अधिक महत्व प्राप्त है। यह वैयक्तिक स्वतंत्रता एक प्रकार की वैयक्तिक स्वतंत्रता को अधिक महत्व प्राप्त है। यह वैयक्तिक स्वतंत्रता एक प्रकार की वैयक्तिक आत्मनिर्भरता है, जो मनुष्य को उसकी सम्पूर्ण एवं स्वतत्र क्षमताओं द्वारा प्राप्त होती है। 'बेला' और 'नये पत्ते' में निराला मानवीय समस्याओं को राष्ट्रीय आधार पर ही देखते है। कारण यह है कि निराला कवि के साथ स्वतंत्रता–संग्राम के भूतपूर्व सैनिक तथा ग्रामीण किसानों एवं शोषितों के प्रतिनिधि भी रहे हैं उनके शक्ति–दर्शन का केन्द्र ब्रह्म है, जो मानव–केन्द्रित होने के कारण सृष्टि में साम्य–भाव स्थापित करता है। ने राजनीतिक पाखण्ड के कट्टर विरोधी रहे हैं तथा राष्ट्रीय अशिक्षा, अज्ञान तथा निर्धनता को दूर करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रमों के पक्षपाती भी, ताकि व्यक्ति की आत्मनिर्भरता राष्ट्र को स्वतंत्र कर सके। निराला का मानवतावाद ही उनके विश्व–बन्धुत्व का आधार है, जो मानव केन्द्रित ब्रह्म के कारण विश्वातीत अद्वैतवाद की प्रतिष्ठा करता है। मानवतावादी काव्य ही विश्व–काव्य की भूमिका बनता रहा है। निराला का संपूर्ण सृजन मानवतावाद की प्रतिष्ठा का हेतु है, इसीलिए उसमें राष्ट्रीय, राजनीति तथा सांस्कृतिक विचारों की समस्त जीवन–ध ाराएँ अपने–अपने अस्तित्व के साथ विद्यमान है।

1.9 सौन्दर्य दर्शन

निराला–काव्य में सौन्दर्यपरक द्वैतदर्शन के चित्र बड़े वैविध्यपूर्ण है। 'गीतिका' के अनेक गीत इसी सौन्दर्यपरक द्वैतदर्शन की कोटि में आते है: जैसे–

'तुम्हारे सुन्दरि, कर सुन्दर मिलाये हुए स्वर अमर।

अनावृत सुकृत–स्नेह के प्राण अमृत ही अमृत, ज्ञान ही ज्ञान,

मृत्यु को अपने ही कर म्लान कर दिया तुमने प्रिये सुघर।

छिन्न कर जुड़े हुए सब पाश प्रण का खोल दिया आकाश,

मृत्यु में पैठ भंग–भू–लाल–रंग–दिखलाती हो सस्वर।'

(गीतिका–71)

निराला ने नर–नारी सौन्दर्य का बहुशः वर्णन किया है। आंगिक सौन्दर्य पंचवटी प्रसंग में देखने योग्य है। यथा–'देख यह कतोप कंठ बाहुवल्ली कर सरोज।' राम की शक्तिपूजा' में सीता की कुमारिका छवि, तुलसीदास में 'रत्नावली का रूप', 'सरोज स्मृति' में वयः सन्धि का सौन्दर्य, 'प्रिय यामिनी जागी' में कुलवधू का सौन्दर्य, साथ ही 'बहू' 'रेखा', प्रेयसी मौन रही हार, आदि कविताओं में नारी सौन्दर्य के नयनाभिराम दृश्य हैं। निराला ने अप्सरा सौन्दर्य से लेकर मजदूरिन तक की रूपच्छवियाँ चित्रित की हैं। कुरूपता का सौन्दर्य भी उनसे अछूता नहीं रहा है। उन्होंने श्रृंगार का उदात्तीकरण भी खूब किया है। इसी प्रकार 'अनामिका' की 'दान' रचना में प्राकृतिक सौंदर्यपरक दर्शन की ऐसी ही अभिव्यक्ति हुई है :–

'व्यंजित सुख का जो मधु–गुंजन, वह पंजीकृत वन–वन उपवन।
हेमहार पहले अमलतास, हँसता रक्ताम्बर वर पलास।
कुन्द के शेष पूजार्घ्यदान, मल्लिका प्रथम–यौवन–शयान।
खुलते–स्तवकों की लज्जाकुल नववदना मधुमाधवी अतुल।
निकला पहला अरविन्द आज, देखता अनिद्य रहस्य–साजं
सौरभ–वसना समीर बहती, कानों में प्राणों की कहती।
गोमती क्षीण–कीट नटी नवल, नृत्य पर मधुर–आवेश–पटल।'
(अनामिका–22)

'तुलसीदास' में दिव्य सौंदर्य दर्शन के अनेक चित्र हैः–

'देखा शारदा नील–वासना
है सम्मुख स्वयं सृष्टि–रचना
जीवन–समीर–शुचि निःश्वसना, वरदात्री
वीणा वह स्वयं सुवादित स्वर
फूटी तर अमृताक्षर–निर्झर,
यह विश्व–हंस है चरण सुधर जिस पर श्री।
(तुलसीदास–38)

निष्कर्ष यह है कि निराला जी के साहित्य में सौन्दर्यबोध विषयक पर्याप्त चिन्तन तथा चित्रण प्राप्त होता है। उन्होंने नर–नारी के विभिन्न अवयवों का रूपांकन करते हुए कुछ विशिष्ट सौन्दर्य–प्रतिमान प्रतिष्ठित किए हैं। निराला के सांगोपांग (आवयविक) रूप सौन्दर्य की आयोजना की है और विभिन्न अंगों का पृथक वैशिष्ट्य भी निरूपित किया है। उन्हें अंगों के गठन में वैषम्य (कन्ट्रास्ट) और एकरूपता (सिमेट्री) दोनों रुचिकर हैं। स्थूलता–सूक्ष्मता दोनों प्रिय है। वक्ष और नितंबों की पीनता निराला को मासलता की ओर ले गयी है। शूर्पणखा का वह सौन्दर्य वर्णन इसका प्रमाण है–

उन्नत उरोज, कटि क्षीण पट, नितंबभार
चरण सुकुमार गति मंद–मंद।
(पंचवटी प्रसंग)

शरीरी की सूक्ष्यमा (तनिया, तन्विंगता) उन्हें देहातीत–स्तर पर ले गयी है। निराला जी सौन्दर्य को ज्योति अर्थात अंगदीप्ति माननते है। लावण्य के आलोक के प्रति वे आकृष्ट हुए हैं। 'शक्तिपूजा' में कुमारिका सीता का

ज्योतिः प्रपात कमनीय' राम को तुरोयावस्था में पहुँचा देता है, सीता के राममय नयन राम के दृगों में प्रतिबिंबित हो उठते हैं तो वे 'विश्वविजय–भावना' से भर जाते हैं। 'सरोज–स्मृति' में निराला मण्डप के नीचे खड़ी अपनी वैवाहिता पुत्री के इसी सौन्दर्यलोक को उकेर रहे है–

नत नयनों का आलोक उतर

काँपा अधरों पर थर–थर–थर।'

निराला साहित्य में बड़ी–बड़ी पक्ष्मल आँखों के कई बिंब प्राप्त होते हैं। प्रिय का बाँकपन, आकुंचन, आगिक, मरोर, मुक्त कुंतल, लम्बी छरहरी काया आदि उन्हें प्रिय है। निराला की नारी कुलवधू है, यदी कदा अप्सरा, किन्नरी, वनकन्या और ग्राम बधूटी भी। पुरुष सौन्दर्य में निराला ने प्रायः आत्मप्रक्षेपण किया है। उनके 'तुलसीदास' आयत दृग पुष्ट देह गतभय' है। निराला ने वर्ण–सौन्दर्य में गौर के साथ श्यामल वर्ण को भी महत्व दिया है। कालिमा का सर्वाधिक प्रयोग उनके साहित्य में हुआ है। इसे उन्होंने नृतत्व और वर्ण मनोविज्ञान से जोड़ दिया है। वय: क्रम की दृष्टि से इन्हें किशोर काल सर्वाधिक प्रिय है। सौन्दर्य विरूपण के अन्तर्गत निराला जी ने 'जरा जीर्ण काया' और कुरूपता का भी मनोयोगपूर्वक प्रस्तुत किया है। स्पष्ट है कि प्रकृति सौन्दर्य तथा मानव सौन्दर्य के विविध रूपों का चित्रण निराला के साहित्य में हुआ है।

रागात्मक बाते–

निराला जी प्रगाढ़ प्रणय के कवि है। उनका बचपन माँ के अभाव में बीता। भरी जवानी में वे विधूर हो गए, फलतः मनोहरा के प्रति उनका राग गहरे स्तर पर जाग्रत हुआ। वे आजीवन प्रिया का स्मरण करते रहे। उनकी कुछ पंक्तियाँ इस दृष्टि से बड़ी सार्थक है, जैसे–'प्राणधन को स्मरण करने नयन झरते.........।' या 'एक बार भी यदि अजान के स्वर मे उठ कर आ जाती तुम। जीवन के संघर्षों से त्रस्त उनका कवि यहाँ तक कह उठता है– मुझको न मिल रें कभी प्यार।

इस राग का उदातीकरण करते हुए निराला ने तुम और मैं शीर्षक रचना में लिखा –

तुम वर्षो के बीते वियोग

मैं हूँ पिछली पहचान।

(परिमल–84)

तात्पर्य यह है कि उन्होने व्यष्टि प्रेम को समष्टि–प्रेम में पय्रवसित कर लिया। यों निराला पौरुष के कवि रहे हैं अतः आध्यात्मिक स्तर पर पहुँच जाने के बाद प्रेम गीत वे नहीं लिख सके। कालान्तर में दार्शनिक आधार पर वे नारी और पुरुष का भेद ही मिटा देते हैं। और अज्ञात के प्रति प्रणय निवेदन करने लगते है। वे सूफी कवियों की भाँति लौकिक प्रेम को नीवन शिल्प में ढाल कर अलौकिकता प्रदान करते हैं। पारस रचना मे ब्रह्म को सर्वाश्रय मान कर निराला उससे सम्बन्ध स्थापित करते हुए कहते हैं–

'कर–स्पर्श–रहित और क्या है– अपलक, असार।

मेरे जीवन पर प्रिय यौवन वन के बहार।'

(परिमल–74)

बसन्तरगमन के कारण कवि की आत्मा प्रिय से मिलने के लिए आतुर हो उठी है, अनेक विघ्न–बाधाओं को पार करती हुई वह उस लोक में पहुँची जहाँ ब्रह्म से तदाकारता के कारण केवल.....मैं.............सोउहं.......अथवा

'तत्त्वमसि' हो बच रहता है–

'इस प्रखर नव कर–धारा में अपनी नौका की पतवार

एकडूँ दृढ़ अनुकूल रहो तुम, पहुँचू प्रिय, जीवन के पार

चीर विषम प्रतिकूल तरंगे, भीम भयकर भँवर गहन,

दृढ़ सहता निःसग मौन रह, ज्योति सिन्धु–ज्वाला असहन।

स्पष्ट है कि निराला का काव्य प्रगाढ़ रागचेतना से अनुस्यूत है। यह वस्तु शिल्पगत वैशिष्टय निराला जी की सर्वोच्च सिद्धि है। इस दृष्टि से उनकी काव्ययात्रा अभिनंदनीय है।

बोध प्रश्न–

1. निराला के काव्य की आरंभिक स्थिति को समझाइए।

2. निराला की नई भाषा संरचना को समझाइए।

1.10 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

महाकवि निराला का काव्य उनके जीवन की तरह निराला है। उन्होंने जहाँ एक ओर राम की शक्तिपूजा, सरोज स्मृति, तुलसीदास जैसी कालजयी लम्बी कविताएँ लिखी है। वही बोल–चाल की भाषा में हास्य–व्यंग्य से जुड़ी हल्की–फुल्की रचनाएँ भी उन्होने एक ओर सस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया दूसरी ओर उर्दू फारसी बहुला बोलचाल हिन्दुस्तानी का और तीसरी ओर आंचलिक बैसवारी शब्दावली का। निराला ने जहाँ शास्त्रीय संगीत प्रेरित गीतों की रचना की वही गथात्मक मुक्तकों तथा तुक्तकों की रचना भी की। जीवन–जगत का कोई भी विषय उनके रचना संसार से पृथक नहीं रहा। ये सब स्मरणीय बाते इस इकाई में समाविष्ट हैं।

1.11 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला की काव्य यात्रा को विस्तार से समझाइए।
2. निराला काव्य के वस्तु–शिल्प एवं वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।
3. निराला की भक्ति भावना को समझाइए।
4. निराला के काव्य में सौंदर्य दर्शन को समझाइए।

1.12 नियत कार्य/गतिविधियाँ

निराला के काव्य में भावाभिव्याक्ति को समझने के लिए निराला तथा उनके काव्य पर लिखी गई विभिन्न लेखकों एवं समीक्षको की पुस्तकों की सहायता ली जा सकती है।

1.13 चर्चा तथा स्प टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

1.13.1 चर्चा के लिए बिन्दु

1.13.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

1.14 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

निराला जी के काव्य पर दर्जनों ग्रंथ प्रकाशित है, जिनमें इस संदर्भ में प्रयोजनीय है।

1. कविनिराला– नन्द दुलारे बाजपेयी
2. निराला की साहित्य साधना – डॉ. रामविलास शर्मा
3. कला सृजन प्रक्रिया और निराला– डॉ. शिवकरण सिंह
4. निराला का गति काव्य– डॉ. राम देव यादव
5. कवि निराला – डॉ. राम रतन भटनागर
6. राम की शक्ति पूजा, सरोज स्मृति, कुकुरमुत्ता– समीक्षाः भाव्य– डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित।

1.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 1.4
2. देखिए 1.6

इकाई–दो

निराला के काव्य में प्रकृति–चित्रण

संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 निराला का प्रकृति प्रेम

2.4 प्रकृति चित्रण के प्रेरणा स्त्रोत

2.5 निराला द्वारा चित्रित प्रकृति के विभिन्न रूप

2.6 निराला के प्रकृति चित्रण का वैशिष्ट्य

2.7 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

2.8 अपनी प्रगति जाँचिए

2.9 नियत कार्य / गतिविधियाँ

2.10 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

2.11 संदर्भ / अतिरिक्त पठन सामग्री

2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.1 प्रस्तावना

महाकवि निराला का काव्य प्रकृति–चित्रण की दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है; उन्होंने जहाँ–जहाँ अन्तर्लीन होकर प्रकृति का चित्रण किया है, वहाँ उनकी कविता शिखर पर पहुँच गई है। प्रकृति–चित्रण करते हुए निराला जी प्रायः दार्शनिक और आध्यात्मिक स्तर का स्पर्श करते हुए दिखाई देते हैं। (उदाहरणार्थ दृष्टव्य है "कौन तम के पार" शीर्षक गीत) इसी के साथ–साथ वे गॉवों की प्रकृति का जब चित्रण करते हैं तो लोक संस्कृति से जुड़ जाते हैं ओर लोक भाषा का आश्रय लेते हें। उनका प्रकृति–चित्रण छायावादी काव्य काल में जितना ललित कलित कल्पनाओं से ओत–प्रोत है, परवर्ती कृतियों में उतना ही यथार्थ ओर विद्रय भी है। प्रकृति की इतनी विविधता किसी अन्य कवि में दृष्टव्य नहीं है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है विद्यार्थियों को निराला–काव्य में चित्रित प्रकृति के भिन्न–भिन्न दृश्यों, रूपाकारों और कवि की ताद्विषर्यक मनोवृत्तियों से अवगत कराना। इसके लिए एक ओर प्रकृति परक कविताओं का सघन पाठ अपेक्षित है और दूसरी ओर उनकी व्याख्या–विवेचना भी। इस इकाई में भरसक यह प्रयास किया गया है कि निराला के प्रकृति–चित्रण का वैशिष्ट्य उद्घाटित हो जाए।

2.3 निराला का प्रकृति प्रेम

हिन्दी में प्रकृति–विषयक स्वतन्त्र काव्य का प्रायः अभाव सा रहा है। सूर–तुलसी प्रभृति महाकवियों के काव्य की प्राण चेतना थी प्रकृति, किंतु भक्तिकाल के नैतिकता–प्रधान काव्य में प्रकृति की स्वतन्त्रता की उपेक्षा हुई। सन्त–साहित्य में चूँकि संसार को माया बताया गया, इसलिए प्रकृति–सौन्दर्य एक छलावा ही लगा। सगुण भक्तों में कृष्ण–भक्ति शाखा के क़वियों ने अवश्य ही अपने आराध्य कृष्ण की लीला भूमि ब्रज के प्राकृतिक सौन्दर्य का अंकन किया है। रीतिकाल में प्रकृति का कोई स्वतंन्त्र अस्तित्व नहीं है। वह उद्दीपन रूप में कवि के इंगित पर नर्तन करने वाली कठपुतली मात्र है।

हिन्दी कविता में सर्वप्रथम द्विवेदी युग के कवियों ने प्रकृति के स्वतन्त्र अस्तित्व को स्वीकार किया। इसके अनन्तर छायावादी कवियों ने अपने काव्य में प्रकृति–चित्रण को विशेष रूप से अपनाया। पल–पल परिवर्तित ऋतुचक्र के ये सारे आरोह–अवरोह प्रत्येक छायावादी कवि के काव्य में खोजे जा सकते हैं। निराला में भी वे भरपूर मात्रा में हैं, पर अपने निरालेपर के साथ।

निराला–काव्य की लगभग समस्त प्रवृत्तियों का दिग्दर्शन उनके प्रकृतिपरक काव्य में होता है। उन्होंने अपनी रचना–प्रक्रिया में प्रकृति को सदैव सहचरी बनए हैं। चूँकि वे बंगाल और अवध के ग्रामीण अंचलों में पर्याप्त समय तक रहे, अतः वहाँ की प्रकृति–रमणी ने उन्मुक्त रूप से उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया।

सन् 1947 ई. में डॉ. रामविलास शर्मा, ने निराला के बादल तथा बादल–राग के विषय में उसका उल्लेख करते हुए कहा–

"उन्होंने बंगाल अवध (वैसावाड़ा) दोनों की ही बरसात देखी। शायद कोई भी हिन्दी का कवि मूसधार पानी में इतना ना भीगा होगा। बाहर घूमते हुए बारिश आ गई तो उन्हें घर लौटने की जरा भी चिन्ता नहीं। बादल घिरे हों तो भी दोस्तों को यह समझाते हुए कि पानी बरसने की जरा भी शंका नहीं है, वह उनके साथ घूमने देते।"

अन्य छायावादी कवियों की भाँति निराला ने प्रकृति का भरसक मानवीकरण किया। 'संध्या–सुन्दरी' जुही की कली, वनबेला नामक कविताओं में मानवीकरण की छटा और प्रकृति का अलंकरण विशेषरूप से किया गया है।

'संध्या–सुन्दरी' कविता में संध्या का यह चित्रण कदाचित् सारी भारतीय भाषाओं की रचनाओं में बेजोड़ है। इतनी व्यापक चित्रपटी और इतनी सहज कला जहाँ छायावाद के युग में अलभ्य थी, वहाँ इतने वर्ष बाद आज भी दुष्प्राप्य है।

सामाजिक स्वाधीनता और आत्ममुक्ति से छायावादी कवि को प्रकृति का जो नया परिचय प्राप्त हुआ, वह एक नूतन जीवन–दृष्टि के सूचक है। छायावाद कवि को ऐसा लगा कि यह आलोक स्वयं प्रकृति से ही आ रहा है। कवि को संसार का नया परिचय प्राप्त हुआ। इसीलिए निराला की प्रकृति चित्त का उदातीकरण करती है। 'तुलसीदास' के सन्दर्भ में कई समीक्षकों ने इस तथ्य की ओर संकेत किया है। वस्तुतः "निराला के तुलसीदास के सम्मुख जब चित्रकूट के तरुवीरूप आए तो उनके मन में नए भाव पैदा हुए। प्रकृति ने उसने ऐसी अभूतर्पूव भाषा में बातें की कि वे उसे अनुभव करते हुए भी ठीक–ठीक न समझ सके, जैसे ऊषा को कुहरे का टेढ़ा जाल घेरे हो, उसी तरह प्रकृति भी एक ऐसी भाषा में बातें कर रही थीं, जो पूरी तरह समझ में न आती थी–"

"वह भाषा–छिपती छवि सुन्दर

वह खुलती आभा में रंग कर

वह भाव कुरल कुहरे–सा भरकर भाया।"

फिर भी प्रकृति ने उन्हें एक ऐसी चेतना का पता दिया, जिसके स्पर्श से ही पाषाण–खण्ड हार बनते हैं, नहीं तो प्रकृति में झरने, झाड़ी, नदी, कगार, पशु–पक्षियों के बिहार को छोड़कर और कुछ नहीं है।

प्रकृति के प्रति कवि का यह अपना एक विशिष्ट दृष्टिकोण है। रहस्यात्मकता के कारण कहीं–कहीं निराला की प्रकृति का चित्र अतिरंजित हो उठा है, फिर भी, प्रकृति के ये चित्र बड़े सुन्दर बन पड़े हैं।

निस्संदेह "निराला ने प्रकृति के जड़चित्रों में अपनी कवि–कल्पना से जीवन–स्पंदन भी भरा है। कहीं–कहीं प्रकृति के कई चित्र बड़े सुन्दर बन पड़े हैं। कहीं–कहीं पंत की तरह निराला जी प्रकृति के व्यवहार व्यापारों के प्रति मात्र कुतूहल प्रकट करते हैं।, किन्तु पंत से निराला का अन्तर यह है कि निराला ने प्रकृति के व्यापक विशद रूप का अंकन किया है। प्रकृति के कठोर एवं कोमल दोनों रूप उन्हें समान रूप से प्रिय हैं। उनके काव्य में एक ओर 'जुही की कली' की सुरभि है, तो दूसरी ओर 'बादल राग' की गर्जना भी। प्रकृति की ओर निराला का एक और दृष्टिकोण है। उन्होंने प्रकृति, को रहस्यवादी और अद्वैतवादी दृष्टि से देखा है। आत्मा ओर परमात्मा के रूप का सुन्दर चित्रण 'जुही की कली' शीर्षक कविता में हुआ है। "

निराला जी बहुत दिनों तक बंगाल में रहे थे। अतः प्रकृति वर्णन में वहाँ का प्रभाव कहीं–कहीं लक्षित होता है।

एक बात और निराला की कृतियों में प्रकृति के प्रति दुहरा आकर्षण पाया जाता है। एक ऐसा आकर्षण, जहाँ प्रकृति के तत्व एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो जाते हैं, जैसे–रात दिन के प्रति आकर्षित है, जल पृथ्वी के प्रति, किरण लहर के प्रति, और लहर कमल के प्रति। अन्य कृतियों से 'अनामिका' में यह प्रवृत्ति अधिक मुखर हो उठी है। कहीं–कहीं इस आकर्षण में ऐन्द्रियता का भी पुट पाया जाता है, जैसे चन्द्रमा और धरती के मिलन में। निराला जी की कविता में प्राकृतिक वातावरण का सुन्दर चित्रण हुआ है। वह रम्य भी है, जैसे 'सखि बसंत आया' 'शोफलिका', 'यमुना के प्रति, देवी सरस्वती आदि। दूसरी ओर उनकी प्रकृति विषय भी है, जैसे– 'गहरी विभावती शीत की, खुला आसमान आदि। कुल मिलाकर उनकी प्रकृति शुभ है।'

निराला ने 'तुलसीदास' व 'राम की शक्ति–पुजा' में भावनाओं की भित्ति पर जिस वातावरण की सृष्टि की है, वह अद्भुत है। जिस प्रकार मन की भावना से सारा सृष्टि प्रसार अपना रूप बदल लेता है, उसका सर्वोत्तम रूप 'तुलसीदास' मिलता है। प्रकृति के आधार पर खड़ी हुई ये सृष्टियाँ भावनाओं के उत्थान–पतन स्पष्ट करती हैं।

तात्पर्य यह है कि निराला जी ने प्रकृति को कई रूपों में देखा है। उनका प्रकृति–चित्रण प्रायः सोद्देश्य रहा है। उन्होंने प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करके उसके भीतर निहित तत्वों का अनेक प्रकार से निरूपण किया है। उनके प्रकृति–चित्रण की अनेक पद्धतियाँ रही है। निराला काव्य में प्रकृति के यथार्थ और काल्पनिक दोनों ही प्रकार के वर्णन उपलब्ध हैं।

निराला के सृजनात्मक स्वर को वाणी देने के लिए प्रकृति ने अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रकृति से ही उनके काव्य में महान् प्रेरणा ग्रहण की है।

प्रकृति का उल्लसित और वैभवपूर्ण स्वरूप मानव जीवन के उल्लास और आनन्द का मूल उत्स है। निराला का प्रकृति चित्रण नव–निर्माण की ठोस भूमिका के रूप में आया है, चाहे उसमें प्रकृति का उल्लसित रूप हो अथवा दुर्धष रूप। निराला ने अन्तः प्रकृति को बाहल प्रकृति से प्रेरित (परस्पर अन्योन्याश्रित) दिखाया है। तुलसीदास चित्रकूट की प्रकृति की शोभा देखकर तन्मय हो जाते हैं और उनके मन में ज्योतिः प्रपात झरने लगता है। वनबेला को देखकर वही समानुभूति निराला के अन्तर्मन में जाग्रत हो जाती है।

निराला के काव्य में प्रकृति लोकमंगल कारिणी है। जीवन में नव–प्रभात का उदय एक व्यक्ति के लिए नहीं होता। करुणा की किरणों से पता नही कितने क्षुब्ध हृदय पुलकित होते हैं? गिनती नहीं हो सकती।

निराला काव्य में प्रकृति बहूद्देशीय भूमिका में दिखती है। निराला का प्रकृति–वर्णन उनके विचारों को यथातथ्य रूप में प्रकट कर देता है। एक प्रकार से वह 'निराला–फिलॉसफी' का दप्रण है। उनके प्रकृति–चित्रण में प्रकृति के मानवीकरण की प्रवृत्ति विशेष रूप से दिखलाइ पड़ती है। प्रकृति का प्रेरक रूप उन्होंने प्रत्यक्ष किया है। यह प्रेरणा प्रायः दार्शनिक, सामाजिक एवं सौन्दर्यपरक क्षेत्रों की दिशाओं में प्रकट हुई है। निराला जी का प्रतीकात्मक चित्रण ही उनका वैशिष्ट्य है। अतः परम्परगत प्रकृति–वर्णन की अपेक्षा उसका स्वच्छन्द रूप निराला जी के काव्य में अधिक विशदता से प्रतिफलित हुआ है।

2.4 प्रकृति चित्रण के प्रेरणा स्रोत

निराला का प्रकृति प्रेम उनके वेदांत लोक सांस्कृतिक लगाव और प्राचीन साहित्य के जुड़ाव से प्रेरित है। संस्कृत से लेकर प्रत्येक भाषा की कविता और प्रकृति का बहुत घनिष्ट संबंध है।

कांग्यम में (पृथिवी सूक्त में) ऋषि कवि ने प्रकृति मर पृथिवी की वन्दना करते हुए कहा था–

"दुल्हा चिछ यां वनस्पतीन्क्ष्मया दर्धर्ष्य ओलासा

यत ते अभ्रस्य विद्यतो दिवो वर्षन्ति वृष्टयः।"

अर्थात् जीवधात्री हमारी या, दृढ़ा है, विश्वंभरा है। द्योरछन्दा भूमि सागर अंबरा है। जिसकी गोद में शस्यम श्यामल प्राण खेले खुले हैं जिसके दूध से सब धुले हैं। वही प्रतिमा प्रभा या दिव्य हेमवती उमा है। मेघवर्णी वृष्टि

झंझा रसमयी रूपांबरा है। वह ऊर्ध्वगामी मन वनस्पति की शिख है। वह आग्नेयी है, सुधावर्षी सोमधारा है, वह पार्वतेयी चेतना है। कहीं वह स्रोतस्विनी हैख कहीं तेजस्विनी है। वह क्षमाशीला, सती तपसिन, स्वधा, स्वाहा उर्बरा है।

भूमि सूक्त ऋषिकवि अथर्वा ने वसुधा की वन्दना करते हुए कहा है कि यह मधुवंती हैं नदी की धाराएँ हैं इसकी बाहें। सागर हैं उसका आँचल। यह शास्र श्यामला धरती लक्ष्मीरूपा है, अन्नपूर्ण है, नवजीवन प्रदायिनी है और यह कृषकों की वास्तविक सीता सावित्री है।

यह उन्ममय सन्ता का स्वर है। यही प्राणमय चिन्मय निर्झर है। यह पृथिवी रसस्वदा मैमेयी है। यही आँगन में सोमवृष्टि करती है। उसके स्पर्श मात्र से स्पंदन पैदा हो जाता है।

उसी वैदिक परंपरा से प्रेरित होकर सस्कृत वाली प्रकृति तथा अपभ्रंश के कवि निरंतर प्रकृति चित्रण करते रहे। कालिदास, माध, भास, श्रीहर्षा, वाण, भवभूति, शंकराचार्य, जयदेव आदि ने जो प्रकृति–परिक्रमा की उसका गहरा प्रभाव हिन्दी कवियों पर पड़ा। हिन्दी कवियों में जायसी के बारहमासा, तुलसीदास, सूर के ऋतु वर्णन सेनापति, देव, पद्माकर, घनानंद आदि के षउकत वर्ण और भारतेन्दु, मैथिलीशरण, प्रसाद, पंत, महादेवी, दिनकर, अज्ञेय आदि के स्फुट या विविध वर्णनों को देखते हुए यह सहजतः स्वीकार्य होगा कि प्रकृति की रूपच्छवियों को हिन्दी कवियों ने पूरे मनोयोग के साथ उभारा है। इन पर बंगाल तथा अंग्रेजी का भी कुछ प्रभाव पड़ा है। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक काव्यधारा, जिसका उद्‌गम राष्ट्र की धरती से होता है, प्रायः प्रकृति प्रेम से ओत–प्रोत रहती है। छायावाद अपेक्षाकृत कुछ अधिक ही प्रकृति–परायण रहा है। इन कवियों का प्रकृति प्रेम देशप्रेम का हेतु प्रतीत होता है। राष्ट्र के मौलिक स्वरूप से मुग्ध ये कवि प्रकृति के प्रति प्रलुब्ध रहे हैं। इन कवियों के प्रकृति–प्रेम का मूल कारण था, व्यक्तिगत स्वतंत्रता की आकांक्षा। घुटन भरे सामाजिक जीवन से त्रस्त होकर ये कवि प्रकृति की ओर मुड़ गए थे। वस्तुतः छायावादी–प्रेम जड़ सामूहिकता की प्रतिक्रियावश जाग्रत हुआ था। प्रकृति द्वारा इनके जीवन के विभिन्न अभावों की भावनात्मक पूर्ति होती थी। छायावादी कवियों ने प्रकृति को विश्वसुन्दरी कहा ह।। उन्हें प्रकृति से ही सौन्दर्य– विधायिनी दृष्टि मिली थी। जड़ प्रकृति उन्हें आत्म चैतन्य की ओर प्रेरित करती रही है। प्रकृति नाना रूप धारण करके इनके काव्य में प्रकट हुई है।

निराला जी की छायावादी कविताओं में प्रकृति का एक आध्यात्मिक पक्ष भी दिखाई देता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने "प्रकृति के आध्यात्मिक मान को छायावाद" माना है। उनके अनुसार निराला जी एक निसर्ग कवि थे। प्रकृति उनके छायावादी सौन्दर्य बोध की मूल हेतु रही है। प्रकृति के सहचर्य वश वे सौन्दर्य स्वप्न दृष्टा तथा कल्पनालीवी कवि बने। प्रकृति–निरीक्षण और उसके सौन्दर्य सम्मोहन के कारण थे तत्व चिंतन की ओर अग्रसर हुए।

निराला जी ने प्रकृति के कोमल और कठोर सभी रूपों को चित्रित किया है। उसके कोमल रूप का चित्रण करते हुए प्रायः उसका मानवीकरण तथा नारीकरण किया है। इसका उदाहरण 'संध्या सुन्दरह', 'जुही की कली', 'शेपफालिका' आदि कविताओं में दृष्टव्य है। यहाँ प्रकृति अत्यन्त भावनामयी एवं रूपमयी है। कवि ने उस पर नारीत्व का आरोपण किया है।

निराला जी ने प्रकृति को जीवन में घटित होते दिखाया है। 'तुलसीदास' नामक काव्य में तुलसी में जो सौन्दर्य चेलना और युगीन अन्तदृष्टि जाग्रत होती है, उसका कारण है उनका प्रकृति दर्शन। निराला के अनुसार प्रकृति जड़ हृदय में भी चेतना का संचार कर देती है, जिससे उसका मन ऊर्द्धगामी होकर दर्शन की उदात्त भूमिका पर आरूढ़ हो जाता है। कवि का यह प्रकृति दर्शन उसकी रोमांटिक अनुभूति से प्रेरित है।

निराला का प्रकृति प्रेम उनकी अनुभूति से संबद्ध रहा है। उन्होंने स्वानुभूति तथा पर्यवेक्षण द्वारा प्रकृति का पर्याप्त ज्ञान आर्जित किया था। कहीं–कहीं उन्होंने कवि–प्रोढ़ोक्तियों का भी आश्रय लिया है। उनका प्रकृति चित्रण परम्पराबद्ध भी है और प्रयोगशील भी। इतना निश्चित है कि निराला ने प्रकृति का मात्र कौतुकी दर्शन ही नहीं किया है, बल्कि प्रकृति को आध्यात्मिक उन्नयन का साधन घोषित किया है। उन्होंने प्रकृति रूपों के अनेक स्वप्न दृश्य अंकित किए हैं और इस प्रकार कुरूप का भी सौन्दर्यीकरण किया है। निरालाजी ने प्रकृति को प्रायः आलम्बन रूप में स्वीकार किया है। इसे आचार्य शुक्ल ने 'रसानुभावी' कहा है। बच्चन जी का मत है कि 'जिनके दिल का पौधा मुरझा जाता है, वे ही प्रकृति को सींचते हैं, ("नींड का निर्माण फिर पृष्ठ......") किन्तु यह कथन निराला पर लागू नहीं होता। उन्होंने जीवन और प्रकृति दोनों में समन्वय किया है।

2.5 निराला द्वारा चित्रित प्रकृति के विभिन्न रूप

बाध्य प्रकृति के विभिन्न रूपों की ओर निरालाजी की दृष्टि गई है। उदाहरणार्थ उन्होंने पर्वतीय प्रकृति को बड़े मनोयोग के साथ अंकित किया है। 'राम की शक्ति पूजा' में उन्होंने महाशक्ति की परिकल्पना करते हुए पर्वत का एक विराट बिम्ब प्रस्तुत किया है–

"देखो बन्धुवर, सामने स्थित लो यह भूधर

शोभित शत हरित गुल्म तृण से शोभित सुन्दर।

पार्वती कल्पना है इसकी मकरंद बिन्दु।"

सागर सरिता एवं निर्झर का भी उनकी कविता में यत्र–तत्र वर्णन हुआ है। इस दृष्टि से उनकी तीन कविताएँ महत्वपूर्ण हैं। (1) तरंगों के प्रति (2) यमुना के प्रति (3) धारा।

कवि ने लहरों का मानवीकरण किया है–

किस अनन्त का नीला आँचल, हिला–हिला कर आती हो तुम सजी मण्डलाकार।

ये लहरें अपनी कटि में शैवाल जाल लपेटे हुए हैं। ये संगीत एवं नृत्य की मुद्रा में दिखाई देती हैं। कवि ने यमुना के 'बिलोल–हिल्लोल, चरण–प्रवाह' का सूक्ष्म चित्रण किया है। निराला को नदी की बाढ़ और पावस की प्रगल्भ धारा विशेष प्रिय रही है। उन्होंने 'पंक प्रवाहित सरि' अर्थात् मटमैले पानी से भरी लहराती हुई सरिता के उफान का कई स्थलों पर वर्णन किया। यमुना के तट का वर्णन करते हुए एक बड़ा विलक्षण प्रयोग उन्होंने किया है।

"चल चरणों का व्यकुल पनघट।"

निराला चूँकि बैसवारा एवं बंगाल से संबद्ध थे, इसलिए बाढ़ के जो दृश्य उन्होंने देखे थे, उन्हें अपने प्रचण्ड व्यक्तित्व के अनुरूप ढ़ालते रहे हैं। तात्पर्य यह है कि– 'चंचल तरगिणी की तरल तरंगें उन्हें बहुत प्रिय रही हैं।'

चन्द्र ज्योत्स्ना निराला जी को प्रायः अपनी ओर खींचती रहीं हैं। 'जूही की कली' में जब उनके पवन को चाँदनी की धुली हुई आधी रात याद आती है तो वह उन्मत हो जाता है। निराला ने आकाश के टिमटिमाते हुए एकांकी नक्षत्र को कई बार रूपांरित किया है। 'संध्या–सुन्दरी' कविता में उन्होंने नक्षत्र को निशा सुन्दरी की ऊतकों में गुँथे हुए पुण्य के रूप में चित्रित किया है।

"हँसता है तो ऊपर तारा एक।

गुँथा हुआ वह काले–काले घुँघराले बालों में निशा सुन्दरी का करता था अभिषेक।"

यही एकांकी नक्षत्र 'राम की शक्ति पूजा' में श्रीराम को शक्ति प्रदान करते हैं। "चमकती दूर ताराएँ ज्यों–ज्यों हों कहीं पास।"

ऊषाकाल निराला को विशेष प्रिय रहा है। उन्होंने पूर्व दिशा में उतरती हुई प्रकाश किरणों को सुरुची पूर्वक उकेरा है। तुलसीदास में वे लिखते हैं–

"देखा नीलम सोपानों पर

नभ के चढ़ती आभा सुन्दर पग धर–धर।"

'परिमल' की एक कविता में उन्होंने "रश्मि चमत्कृत स्वर्णालंकृत नवल प्रभात" के प्रति आकर्षण व्यक्त किया है। 'राम की शक्ति पूजा' में राम को जब 'नभ के ललाट पर प्रथम किरण' दिखाई देती है तो उनके भीतर नई अन्तज्योर्ति भर जाती है। " जागी रघुनंदन के छग महिमा ज्योति हिरण।"

मध्यान्ह धूप का वर्णन छायावादी कवियों में केवल निराला जी ने किया है। उनके शब्दों में देखिए–

"प्रखर से प्रखरतर, प्रखरतम

देखती दुपहर की धूप सी।"(परिमल)

वह तोड़ती पत्थर में ऐसी ही दोपहरी है–

"दिवा का तम तमामा रूप, उठी झुलसाती हुई लू रुई सी जलती हुई भू गर्द चिनगी छा गई, प्रायः हुई दुपहर।"

कवि को 'दिनकर के खर किरण जाल', भौवें ताने दिवा का प्रखर रूप ओर उत्तप्त दिग् मण्डल भी प्रिय लगा है।

निराला ने सूर्यास्त और संध्याकाल के कई दृश्य अंकित किए हैं। संध्या–सुन्दरी में उन्होंने उसका मानवीकरण किया है, देखिए–

"दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
यह संध्या सुन्दरी
परी सी
धीरे–धीरे–धीरे।"

संध्या अम्बर पथ से छाँह सी धीरे–धीरे उतरती हुई यहाँ दिखाई गई है। अन्यत्र भी कवि ने संध्या के पीताम एवं निर्धूम दिगन्त प्रसार का रूपायन किया है।

रात्रि कालीन प्रकृति विशेषतः उसका सघर अन्धकार निराला को प्रिय रहा है। 'रात की शक्ति पूजा' में वे लिखते हैं–

" है अभा निशा उगलता गगन घन अन्धकार
खो रहा दिशा का ज्ञान स्तब्ध है पवन चारे।"

उन्होंने जीवन में अन्धकार यानी वेदना, निराशा का बारम्बार अनुभव किया है। उनके शब्दों में–

"जीवन की गति कुटिल अन्धतम जाल
केवल अन्धकार।"

एक गीत में वे लिखते हैं–

"गहन हैं यह अन्धकारा
खड़ी है दीवाल तम की घेर कर
इस गगन में नहीं दिनकर नहीं हिमकर नही तारा।"

यहाँ बाध्य प्रकृति ओर अन्तः प्रकृति, दोनों एकाकार हो गई हैं।

प्रकृति के विभिन्न काल खण्डों में निराला जी ने सर्वाधिक वर्णन किया है– अर्द्धरात्रि का उनके अनुसार यह बेला कवि को भावाकुल कर देती है।

"अर्द्ध रात्रि की नीरवता में हो जाता जब लीन
कवि का बढ़ जाता अनुराग।
विरहाकुल कमनीय कंठ से

आप निकलता पड़ता तब एक विहाग।''

ऋतु सौन्दर्य के प्रति निराला जी सतत सचेष्ट रहे हैं। उन्हें सबसे प्रिय रही है वर्षा ऋतु। यों उन्होंने षड़ऋतु का प्रायः एक साथ कि वर्णन किया है जैसे–

'ब्रज बादल

उपल वृष्टि, फिर शीत घोर, फिर ग्रीष्म प्रबल।'

निराला को शरद पूर्णिमा अनछी लगी है। ''शरद पूर्णिमा की विदायी'' कविता में उन्होंने इसे ऋतुओं की रानी कहा है। हेमन्त की ठण्डक, हाड़ तक बेध जाने वाली उसकी शीतलहरी ओर कुहरे की भीषणता का भी उन्होंने वर्णन किया है। ओस–बिन्दुओं के प्रति उन्हें लगाव महसूस हुआ है। जैसे–''कुसुम कपोलों के वे लोल शिशिर कण।'' इसे उन्होंने गगन का पृथ्वी–चुंबन कहा है ''झरते हैं शिशिर से चुंबन गगन के।''

बसंत निराला की कविता में उल्लास का प्रतीक बनकर आया है। वे यह भी मानते हैं कि यह सौन्दर्य प्रायः कवि कल्पित होता है। 'कवि' नामक कविता में वे लिखते हैं–

''फूलते नहीं है फूल वैसे वसंत में

जैसे तब कल्पना की ड़ालों पर खिलते।''

निराला जी ने लगभग एक दर्जन बसंत विषयक कविताएँ लिखी हैं, जिनमें मुख्य हैं– बासन्ती, बसन्त समीर, दूत अलि ऋतु पति के आए सखि बसन्त आया, सुमन भरि न लिए सखि बसन्त गया, सखी री ये डाल बसन बासन्ती लेती आदि–

तुम और मैं कविता में कवि ने 'गन्ध कुसुम कोमल, पराग', 'मृदु गति मलय समीर', 'पिक कल कुँजन आदि का सुन्दर उल्लेख किया है।' तूलसीदास में चित्रकूट की यही बासन्ती प्रकृति चित्रित हुई है–

'पिक कुहरित ड़ाल–ड़ाल

है हरित विटप सब सुमन माल

हिलती लतिकाएँ ताल–ताल पर सस्मित

पड़ता उन पर ज्योतिः प्रभात हैं, चमक रहे सब कनक गात।'

'बेला' की एक गजल में ले यही दृश्य प्रस्तुत करते हैं–

''पल्लव–पल्लव हरियाली फूटी

बोली कलि की प्याली

मधु भरकर तरु पर उफनाई।''

ग्रीष्म का वर्णन निराला ने सर्वाधिक किया है। उन्होंने लू के तत्व झोंकों का, जलती भू-भूल का एवं प्रचण्ड मार्तण्ड का वर्णन करते हुए एक कविता में ग्रीष्म को 'सिद्ध योगी' घोषित किया है–

भोर जटा पिंगल मय

देव योग जन सिद्ध

उगलते आग धरा आकाश।

पावस प्रकृति निराला को बहुत प्रिय है। इस दृष्टि से सर्वोत्तम कविता है, 'बादल राग।' इसमें उन्होंने बादल के अनेक रूपों और ध्वनियों को प्रतिबिंबित तथा प्रति ध्वनित किया है।"

जैसे– 'झर–झर–झर निर्झर गिरि सर में

घर मरु तरु मर्मर सागर में

आनन–आनन में रव घोर कठोर

राग अमर अम्बर में भर, निज रोर।'

कवि को बादलों का गर्जन और जल प्रवाह दोनों प्रिय हैं। एक ओर सघन घोर गुरु गहन रोर और दूसरी ओर–

"धँसता दल–दल

हँसता है नद खल–खल,

बहता कहता कुल–कुल कल–कल–कल–कल।"

निराला जी का 'बादल–व्यक्तित्व' बादलों के साथ एकाकार हो गया है। मेघ मंद्र ध्वनि ओर जल प्रवाह की ध्वनियाँ उनकी कई कविताओं में भर गई है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं–

(1) "झर–झर झर–झर झर धारा झर"

(2) द्रुत समीर कंपित थर–थर थर।

(3) "झरती धाराएँ झर–झर–झर" (गीतिका)

(4) "उत्ताल तरंगा घात प्रलय घन गर्जन" (परिमल)

(5) "भेरी झर–झर झरर दमा में घोर नकारों की है चोपा।"

(6) "काड़ा काड़ा कड़ सन–सन बन्दूकें, अररर, अररर अररर तोप"।

(7) "छल–छल छल कहता यद्यपि जल वह मंत्र मुग्ध सुनता कल कल।"

(8) नीचे प्लावन की प्रलय धार ध्वनि हर–हर" (तुलसीदास)

(9) 'कुल–कुल कल–कल तलमल–तलमल' आदि।

निराला जी ने इस प्रकार की महाप्राण ध्वनियों का नियोजन सुरुचि पूर्वक किया है और यह घोषित भी किया है कि–

'निर्मल कल–कल में बँध गया विश्व सारा।'

उन्होंने पावस की फुहारों के साथ–साथ चमकती हुई बिजली, कूकते हुए पपीहों की ध्वनि, मेढ़कों की टर्र–टर्र आवाज आदि को भी सूक्ष्मता पूर्वक पकड़ा है। तात्पर्य यह है कि प्रकृति का प्रायः प्रत्येक रूप निराला की कविता में अंकित हुआ है। उनकी पावस विषयक प्रमुख कविताएँ हैं–

(1) 'अलि घिर आये घन पावस के'(अपरा)

(2) 'घन आये, घनश्याम न आये'(गीत गुंज)

(3) 'बरसे झूम–झूम कर सावन'(गीत गुंज)

(4) 'श्याम गगन नव घन मण्डलाए'(सांध्य का कली)

(5) 'गगन मेघ छये'

(6) 'फिर नभ घन घहराए'

(7) 'बरसो मेरे आँन बादल' (सांध्य का कली) आदि।

निराला जी ने बादलों को विप्लव का प्रतीक माना है। 'जलदि के प्रति' शीर्षक कविता में उसे नवजागरण का बाहक कहा गया है। इनका एक रूप सुन्दर है और दूसरा भीषण। कवि कहीं 'नील सिंधु में खिले कमल दल' से उनकी उपमा देता है, कहीं 'हरित ज्योति चपला' और 'किरण तूलिका से अंकित इन्द्र धनुष' का वर्णन करता है तो कहीं मूषलधार वर्षण, प्रचण्ड बज्र घोष, ओला वृष्टि आदि का वर्णन करता है। तात्पर्य यह है कि ऋतुप्रकृति के इन सभी रूपों के प्रति निराला जी ने अपनी आसक्ति व्यक्त की है।

पशु–पक्षियों और वनस्पतियों के प्रति भी उनके मन में आकर्षण रहा है। उन्होंने कुछ काव्योपम पशु–पक्षियों का उल्लेख करते हुए काव्येतर (क्षेत्रिय) पक्षियों के भी नाम गिनाय हैं जैसे– भुजैल, पिड़की, बया, रुक्मिन, ढ़ेख, महोख, सवन लोमड़ी, स्पार, चौमड़ा, नीलगाय, लकड़बग्घा, आदि। भ्रमर खद्योत तितली आदि भी यत्र–तत्र चित्रित हुए हैं। तात्पर्य यह है कि प्रकृति को उन्होंने पूरे आकार में ग्रहण किया हैं।

वनस्पतियों के प्रति निराला जी निरन्तर आकृष्ट दिखाई देते हैं। निराला की साहित्य साधना भाग–एक में उनकी जीवनी प्रस्तुत करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है कि जब वे लखनऊ में 'सुधा' का सम्पादन (1928–1940) करते हुए निवास कर रहे थे, उन दिनों वे लखनऊ के उन पार्कों और बगीचों को देखने अवश्य पहुँचते थे, जिनमें मौसम के अनुसार जुही, गुलाब, शेफालीख रजनीगंधा, मोगरा, चमेली आदि खिले हुए होते थे। निराला

जी ने अनेक प्रकार की वनस्पतियों का वर्णन किया है। वे रूप रंग और गंध, इन तीनों गुणों के अनुसार वनस्पति का चुनाव करते रहे हैं।

इस दृष्टि से उन्होंने सर्वाधिक महत्व दिया है, जुही, (चूपिका) रजनीगंधा अथवा यामिनीगंधा को। "जुही की कली" कविता में उन्होंने उसका एक रूपक रचा है। कवि के अनुसार–

"विजन वन वल्लसी पर
सोती थी सुहाग भरी
अमल कमल कोमल तनु तरुणी
जुही की कली
दृग बंद किए
सिकिल पतांक में।"

इस कविता में जुही को योवन मदमाती षोडसी सुन्दरी के रूप में चित्रित किया गया है। उसका प्रेमी पवन मिलनातुर होकर दूर देश से चलकर अर्द्धरात्रि में उसके पास पहुँचता है, पर निद्रालस्त जुही जब नहीं जागती तो पवन उसे झकझोरता है। जागने पर जुही जब पवन को अपने निकट देखती है तो खिल उठती है। इस कविता में एक अन्तः कथा है, पवन–प्रवाह और जुही के उल्लास जो विकास का एक रूपक है। स्वयं निराला जी ने उसकी व्याख्या की है, उसके अनुसार जुही की कली आत्म तत्व की प्रतीक है और पवन किसी लोकोत्तर सत्ता का प्रतीक है। अर्थात् यह कविता जितनी रोमांटिक है, उतनी ही आध्यात्मिक। यह भी स्मरणीय है कि यह निराला की प्रथम रचना है, जिसके माध्यम से 1916 में उन्होंने मुक्त छन्द का प्रवर्तन किया था। यह कविता आरम्भ में सम्पादकों द्वारा लौटा दी गई थी। इसीलिए इसका प्रकाशन बहुत बिलम्ब से हुआ। कुछ विद्वानों ने इस कविता को निराला के निजी मिलन प्रसंग से भी जोड़ा है युवा कवि निराला दूर देश (महिषादल) से चलकर अपनी प्रिया के पास पहुँचते हैं और फिर दोनों रस मग्न हो जाते हैं इसका सूक्ष्म संकेत भी इन स्मृति बिम्बों से निकाला गया है।

निराला जी को शेफाली भी बहुत प्रिय रही है। 'शेफालिका' कविता में वे कहते हैं–

"बन्द कंचुकी के सब तोड़ दिए प्यार से
यौवन उभार ने
पल्लव पर्यंक पर सोती शेफालि के।"

निराला जी को जिस पुष्प के साथ अपनापन महसूस हुआ है, वह है वन बेला। जंगल में खिला हुआ वन बेला प्रायः अनदिखा रह जाता है। उसे देखकर निराला को लगता है कि मैं भी इसी तरह अलक्षित और उपेक्षित पड़ा हुआ हूँ।

एक अन्य पादप जिसके साथ उन्होंने अभिन्नता स्थापित की है, वह है कुकुरमुत्ता। उन्होंने अपनी लम्बी कविता 'कुकुरमुत्ता' में कुकुरमुत्ता को सर्वगुण संपन्न सिद्ध करते हुए प्रतीक प्रस्तुत किए हैं, उनमें गुलाब है अभिजात वर्ग अथवा विदेशी चका चौंध वाला बाबू वर्ग और कुकुरमुत्ता है सर्वहारा वर्ग अथवा 'नेटिव' कमल। इस कविता में निराला जी कुकुरमुत्ता से जुड़ गए हैं। वे गुलाब को चुनौती देते हैं, उसका उपहास करते हैं और कुकुरमुत्ता को एक स्वयंभू शक्ति के रूप में स्थापित करते हैं। कुकुरमुत्ता गर्वोक्ति करता हुआ कहता है–

'आप अपने से उगा मैं'

उसका दावा है कि– ओम फलस ब्रह्मावर्त उसी में है। बड़े–बड़े दार्शनिक उसका लोहा मानते हैं। संसार की बड़ी–बड़ी राजधानियाँ उसके पैरों तले हैं। विभिन्न कलाओं में उसकी गति है। उसका पूरा व्यक्तित्व रसमय है। वह दावा करता है कि मैं बड़े काम का हूँ। चीन का बना छाता भारत का राजछत्र और पैरासूट मेरी नकल में बना है, मेरी आकृति विष्णु के सुदर्शन चक्र, यशोदा की मथानी, राम के धनुष और बलराम के हल जैसी है। मेरा आकार नाव के तल्ले, तराजू के पल्ले और नौका के पाल जैसा है। मैं जब चाहता हूँ पार लगा देता हूँ, या मजध ाार में डुबो देता हूँ। कुकुरमुत्ता संसार के विभिन्न वाद्ययंत्रों से अपनी तुलना करता है, विभिन्न नृत्य कलाओं का परिचय देता है और कहता है 'सब में मेरी ही गाठ' लगी हुई है। चूँकि उसके शरीर में काष्ठ नहीं है, केवल रस है, इसलिए सब उसी के रस में डूबे हुए हैं, सब उसी से सफेदी प्राप्त करते हैं। कुकुरमुत्ता का कलिया–कबाब तो इतना लजीज सिद्ध होता है कि नबाव अपने बगीचे में गुलाब की जगह कुकुरमुत्ता लगाने का निर्णय लेता है, किन्तु तभी माली यह सविनय निवेदन करता है कि कुकुरमुत्ता उगाए नहीं उगता अर्थात् वह एक नैसर्गक निधि है। निष्कर्ष यह है कि निराला जी ने अनेक फूलों, लताओं, वृक्षों तथा स्फुट वनस्पतियों के प्रति अनुराग प्रकट किया है। जिन वनस्पतियों का उन्होंने ज्यादा उल्लेख किया है, उनमें है कुंद, बेला, मल्लिका, मालती, पलास, कुरबक, पाटल, शतदल, बकुल, कुमुद, हरसिंगार, कर्णिकार,चमेली, माघवी, केतकी जयालक्तकख कचनार आदि। जंगली पुष्पों में उन्होंने झाऊ बहेड़ा को भी याद किया है और कई विदेशी पुष्पों को भी।

निराला जी ने कुछ वनस्पतियों का उल्लेख करते हुए जाने–अनजाने त्रुटियाँ भी की है जैसे उन्होंने कुरबक पुष्प को केतकी पुष्प मान लिया है, जबकि वह जंगली 'कटसरैसा' का फूल होता है।

निराला जी ने प्रकृति के प्रायः सभी रूप चित्रित किए हैं। शस्यश्यामला प्रकृति का भी और बीहड़ का भी। उनके काव्य में चाँदनी रात चित्रित हुई है तो गर्मी की दुपहरी भी। उन्होंने ज्योति, अधंकार, आँधी, बाढ़, इन्द्रधनुष, बसंत, पतझड़ यानी प्रकृति के सर्वस्व का साक्षात्कार किया है। निराला की प्रकृति एक मुद्रा नहीं है, बल्कि एक जीवंत संवेदना संचार है। उन्होंने परम्परा निर्वाह के लिए केवल नाम गणना नहीं कराई है, बल्कि प्रकृति के साथ आत्मीयता स्थापित की है। उनकी प्रकृति तंग भूमि एवं अवध की धरती से संबंधित है। यह प्रकृति उनकी मनःस्थिति के अनुसार बराबर बदलती रही है। चूँकि उनकी अधिकतर कविताएँ भावावेग से जुड़ी हैं, इसलिए प्रकृति का विराट रूप उन्होंने ज्यादा उभारा है। 'राम की शक्ति पूजा' में रात का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं–

उगलता गगन घन अंधकार

खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार।

अप्रति हत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल

भू–धर ज्यों ध्यान मग्न केवल जलती मशाल।

यह आवेग विशेषरूप से चित्रित हुआ है हनुमान की उड़ान के प्रसंग में। हनुमान जी पवन के पुत्र हैं। ये कैलाश पर आक्रमण करने जा रहे हैं। उनकी उड़ान से चारों ओर एक तूफान सा पैदा हो जाता है। समुद्र, पृथ्वी और आकाश सब हिल जाते हैं। कवि के शब्दां में–

"शत् घूर्णवर्त तरंग भंग उड़ते पहाड़

जलराशि राशिजल पर चढ़ता खाता पहाड़।

तोड़ता बंध, प्रतिसंघ धरा हो स्फीत वक्ष

दिग्विजय अर्थ प्रतिपल समर्थ बढ़ता समक्ष।"

यहाँ वात्या चक्र का वर्णन किया गया है– जो निराला के तूफानी व्यक्तित्व की देन है।

2.6 निराला के प्रकृति चित्रण का वैशिष्ट्य

प्राप्त तथ्यों से सिद्ध है कि निराला की कविता में प्रकृति के भाँति–भाँति के दृश्य अंकित हुए हैं। उनकी छायावादी कविताओं में बासन्ती प्रकृति है। वहाँ रह रहकर परियाँ, अप्सराएँ तथा दिग्कुमारिकाएँ उतरती हैं। चारों ओर परिमल बिखरा हुआ है, अर्थात् सब कुछ बड़ा रमणीय और शोभन है। उनकी परवर्ती कविताओं में देहाती, कुरूप तथा बीभत्स प्रकृति भी है। एक ओर उन्होंने तुलसीदास में जहाँ चित्रकूट की दिव्य प्रकृति का वर्णन किया है यथा–

'मग में पिक कुहरित ड़ाल–ड़ाल।'

तो दूसरी ओर 'स्फाटिक शिला' नामक कविता में उसी प्रकृति का कुरूप वर्णन भी किया है। एक ओर 'तट पर' विजयनी का चित्रण करते हुए उन्होंने संघस्नातर, की छवि अंकित की है तो दूसरी ओर 'खजोहरा' नामक कविता में सरोवर में स्नान करती हुई एक युवती की दुर्दशा भी उन्होंने की है। उनकी पावस प्रकृति रम्य भी है और भीषण भी। बहुत दिनों तक दुर्दिन होने के कारण गॉव की जनता पीड़ित हो गई है। जिस दिन वर्षा थमती है तो सबको राहत मिलती है। निराला लिखते हैं– "बहुत दिनों बाद खुला आसमान।"

यह भी उल्लेखनीय है कि प्रकृति देवी को निराला ने भगवती सरस्वती की उपमा दी है। 'देवी सरस्वती' नामक कविता में वे कहते हैं कि– यह खुली हुई गोचन भूमि भगवती का आँचल है। लहलहाती हुई हरी भरी फसलें देवी की वीणा है। इस धरती को जब जितनी बार जोता जाता है, लगता है वीणा से तरंगें उट रहीं हैं–

"बाँह–बाँह की वीणा बजी सुहाई

हरे भरे खेतों की सरस्वती लहराई।"

अपने प्रसिद्ध गीत 'भारती जय विजय करें' में निराला जी ने समूची भारत भूमि को भारत माता के रूप में अंकित किया है। हिमालय उनका किरीट है। वन–उपवन उनके बेल बूटेदार आँचल की तरह हैं। गंगा, यमुना की धाराएँ उनके गले में पड़ी मुक्ता माला जैसी हैं। तीनों ओर के समुद्र उनके पगपखार रहे हैं। लंका उनके चरणों में पड़े हुए कमल सदृश्य है। इस प्रकार के सांग रूपक निराला के प्रकृति प्रेम, राष्ट्र प्रेम और उनके कला–कौशल के प्रमाण हैं।

निराला के प्रकृति–चित्रण की एक और विशेषता है। वे अन्य छायावादी कवियों की तरह प्रकृति पर्यवेक्षण करते हुए केवल कल्पनालोक में ही विचरण नहीं करते, बल्कि बीच–बीच में धरती पर भी उतर आते हैं। उदाहरण के लिए दृष्टव्य है– 'सखि बसन्त आया' नामक गीत। इसमें पहले ये लता, मुकुल, परिमल, भ्रमर, कोकिल, शीतल मंद सुगंध समीर आदि का वर्णन करते हैं। तभी उन्हें ध्यान आ जाता है, उस किसान की याद आती है जो बसन्त ऋतु में रबी की पकी हुई फसल को देखकर प्रसन्न हो उठा है। निराला लिखते हैं–

'स्वर्ण शस्य अँचल पृथ्वी का लहराया,

सखि बसन्त आया।'

इस प्रकार स्पष्ट है कि निराला जी ने प्रकृति को अपने परिपूर्ण रूप में ग्रहण किया है। उन्होंने अपनी अन्तः प्रकृति के अनुरूप बाह्य प्रकृति का चित्रण किया है। उनकी यह प्रकृति काव्योंपम है और स्वानिभूति में केन्द्रित अत्यन्त यथार्थ भी। प्रकृति की इतनी विविध रूपता और किसी कवि में सुलभ नहीं है। हिन्दी कवियों में प्रकृति को प्रायः आलम्बन रूप में ग्रहण किया है। कहीं–कहीं वह दृष्टांत रूप में प्रस्तुत हुई है। पंत जी ने अवश्य प्रकृति को बहुत विस्तार के साथ चित्रित किया है, किन्तु उनकी प्रकृति मूलतः कमनीय है। निराला ने प्रकृति के कोमल, कठोर, सुन्दर–असुन्दर सभी रूपों को अंकित करके अपनी एक विशिष्ट छाप छोड़ी है।

बोध प्रश्न–

1. निराला प्रकृति प्रेमी हैं, संक्षिप्त में समझाइए।
2. निराला ने प्रकृति के कौन–कौन से रूपों का चित्रण किया है?

2.7 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

इस इकाई में कवि निराला की प्रकृति परक रचनाओं और उनकी प्रमुख उपलब्धियों का विवेचन किया गया है। इन तथ्यों से अवगत हो जाने पर यह स्पष्ट हो जाएगा कि निराला का काव्य उनकी अन्तर्बाह्य प्रकृति का दर्पण है। उन्होंने जड़ प्रकृति का दार्शनिक ओर आध्यात्मिक विवेचन किया है। उनके काव्य में प्रकृति के विभिन्न रूप अंकित हुए हैं, जैसे– विभिन्न ऋतुएँ, कालखण्ड, वनस्पतियाँ, पशु–पक्षी और विभिन्न दृश्य। उनकी प्रकृति सुन्दरम् भी है और सत्यम भी। वह आश्रम भी है ओर आलम्बन भी। बंगाल से लेकर अवध तक की सारी प्रकृति उनकी कविताओं में नाना रूप धारण करके प्रकट हुई है। इन बिन्दुओं का स्मरण करना अत्यावश्यक है।

2.8 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला को प्रकृति चित्रण की प्रेरणा कहां से मिली? समझाइए।
2. निराला द्वारा चित्रित प्रकृति के विभिन्न रूपों पर प्रकाश डालिए।
3. निराला के प्रकृति चित्रण के वैशिष्ट्य को समझाइए।

2.9 नियत कार्य / गतिविधियाँ

निराला के काव्य में विविध प्रसंगों में प्रकृति का चित्रण मिलता है। अतः प्रकृति चित्रण को समझने के लिए निराला की काव्य रचनाओं तथा विविध समीक्षकों की पुस्तकों का सहारा लिया जा सकता है।

2.10 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

2.10.1 चर्चा के लिए बिन्दु

2.10.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

2.11 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1. कवि निराला– आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी
2. निराला डॉ. रामविलास शर्मा
3. अलक्षित निराला–डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
4. निराला की साहित्य साधना (3 खण्ड) – डॉ. रामविलास शर्मा
5. क्रांतिकारी निराला–डॉ. बच्चन सिंह
6. निराला की आत्मकथा– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
7. निराला का व्यक्तित्व– कृतित्व डॉ. धनंजय वर्मा
8. निराला समग्र– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
9. निराला का अलक्षित अर्थगौरव–डॉ. शशिभूषण 'शीतांशु'
10. छन्द छन्द में कुमकुम– बहुवचन, म.गा.अ. हिन्दी विश्व. वर्धा।
11. छायावादी कवियों का व्यावहारिक सौन्दर्यशास्त्र–डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
12. निराला काव्य का अध्ययन–डॉ. भगीरथ मिश्र
13. राम की शक्ति पूजा, कुकुरमुत्ता, भाषा–समीक्षा–डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
14. राम की शक्ति पूजा–डॉ. नगेन्द्र
15. निराला अभिनन्दन ग्रंथ– हेम बरुआ

16. निराला का गद्य–डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
17. कला सृजन प्रक्रिया और निराला–डॉ. शिवकरन सिंह
18. उत्तर संस्कृति दलित विमर्श और निराला–डॉ. अवधेश नारायण मिश्र
19. कवि मनीषी निराला–सम्पादक. डॉ. सुधाकर सिंह
20. निराला काव्य में मानव मूल्य और दर्शन–डॉ. देवेन्द्रनाथ त्रिवेदी
21. महाप्राण निराला–सम्पादक–भूपति राम
22. निराला के काव्य बिम्ब और प्रतीक–डॉ. वीरव्रत शर्मा
23. निराला की काव्य भाषा–डॉ. शिवशंकर सिंह
24. निराला का गीतिकाव्य–डॉ. रामदेव यादव
25. निराला होने का अर्थ–सम्पादक राजेन्द्र कुमार
26. निराला की दो लम्बी कविताएँ–डॉ. जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव
27. युगकवि निराला– सम्पादक रजनीकांत
28. निराला– साहित्य और युगदर्शन– शिवशेखर द्विवेदी
29. निराला– परमानन्द श्रीवास्तव
30. निराला और मुक्तछन्द–शिवमंगल सिद्धन्तकर
31. निराला का कालपयी व्यक्तित्व केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय
32. निराला रचनावली सम्पादक–डॉ. नंद किशोर नवल

2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 2.3
2. देखिए 2.5

निराला की काव्य भाषा

संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 निराला भाषा सैष्ठव
3.4 छायावादी भाषिक संरचना
3.5 भाषा संवेदना
3.6 निराला की भक्ति प्रकृति
3.7 नाद व्यंजना
3.8 बिम्बधर्मिता
3.9 भाषा वैविध्य
3.10 लोक भाषा
3.11 विभिन्न भाषा शिल्प
3.12 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें
3.13 अपनी प्रगति जाँचिए
3.14 नियत कार्य/गतिविधियाँ
3.15 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु
3.16 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री
3.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.1 प्रस्तावना

निराला जी ने एक स्थल पर घोषित किया है कि कवि शब्दों को प्राणों की तरह प्यार करता है। वस्तुतः कविता अपने मूल रूप में शब्द है– सर्वोत्तम क्रम में विन्यस्त सर्वश्रेष्ठ शब्द। इस शब्द का संधान वह बड़े मनोयोग

के साथ करता है। निराला प्रायः शब्द सचेत कवि रहे हैं। उनकी गर्वोक्ति "गद्य में, पद्य में समाव्यस्त" तथा–"एक–एक शब्द बँधा ध्वनि मय साकार।' उनकी भाषा में बंधाव (संघटन) पदबंध विम्बधर्मिता और ध्वन्यात्मकता अपनी पराकाष्ठा पर है। वस्तुतः काव्यभाषा के क्षेत्र में उन्होंने अनेक प्रकार के प्रयोग किए हैं, जो इस सन्दर्भ में विचारणीय हैं।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है निराला जी के विभिन्न भाषा–प्रयोगों से परिचित कराना। उनकी काव्यभाषा के प्रमुख प्रकार हैं–

1. 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' वाली तत्सम संस्कृतनिष्ठ भाषा।
2. 'कुकुरमुत्ता' और 'बेला' में प्रयुक्त उर्दू बहुला हिन्दुस्तानी।
3. 'नए पत्ते' में प्रयुक्त लोक भाषा (वैसवारी अवधी) उनकी आरम्भिक कृतियों के बंगला का पर्याप्त प्रभाव परिलक्षित होता है। अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी उन्होंने खूब किया है। शब्द गढ़ने में वे विषात थे। उन्होंने शब्द संवेदना का भरसक अभ्यास करके उच्चकोटि की जीवंत काव्यभाषा निर्मित की है, जो आगामी युगों की मानक सिद्ध हुई है। इन समस्त भाषिक छटाओं से विद्यार्थियों को अवगत कराना इस इकाई का मूलोद्देश्य है।

3.3 निराला का भाषा–सौष्ठव

निराला की कविताओं में काव्य रस काव्यभाषा और कला का सम्यक् परिपाक हुआ है। उन्होंने जीवन तथा प्रकृति के विभिन्न रूपों से अनुभूतियों का चयन किया है। निराला का अधिकांश साहित्य आत्मकद्ध है। उसमें अनुभूति की ईमानदारी है। इसीलिए वे भाषिक संवेदना की तह में पहुँचकर मार्मिक प्रसंगों की सृष्टि करने में सफल हुए हैं। 'राम की शक्ति पूजा' में कवि ने मर्यादा पुरुषोत्तम से अंतः संघर्ष, उनकी मनोवेदना और उनके प्रचण्ड व्यक्तित्व को विभिन्न बिम्बों द्वारा इस कला–कुशलता के साथ प्रस्तुत किया है कि उसकी परिणति औदात्य में हो गई है। उदाहरणार्थ राम के व्यक्तित्व की विराटता की यह छवि द्रष्टव्य है–

'दृढ़ जटा मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल

फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर विपुल

उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशांधकार

चमकती दूर ताराएँ ज्यों हो कहीं पार।'

राम का यह वैरुप्य उनके भीषण मनोद्वेग का परिचायक है। कवि ने इस भयावह मनःस्थिति का अंतर्बोध बाह्य प्रकृति की विराटता द्वारा कराया है। राम के अंतर्मन में जो नैराश्यान्धकार है, जो दिग्भ्रम है, जो स्तब्धता है, (किंकर्तव्यविमूढ़ता है), जो अंतःक्रंदन और जो अंतर्दाह है, उसका आभास इस दृश्य द्वारा हो रहा है

'है अमा निशा, उगलता गगन घन अंधकार,

खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार।

अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल

भूधर ज्यों ध्यान मग्न, केवल जलती मशाल।'

(राम की शक्तिपूजा)

यहाँ भावभाष्य दोनों अन्योन्याश्रित तथा तद्रूप हैं।

यह प्रस्तुति राम के दुर्द्धर्ष व्यक्तित्व को सूचक है, साथ ही शक्ति तथा पौरुष के कवि निराला के औदात्य बोध की भी। कवि अपने विषय के साथ यहाँ एकाकार हो गया है। उसकी अनुभूतिगत भयानकता अविकल रूप में अभिव्यक्त हो गई है। इसी क्रम में कवि ने हनुमान का ऊर्ध्वसंचरण या उड्डयन चित्रित कर इस विषय वस्तु की विकरालता का साक्षात्कार करा दिया है। पवनपुत्र हनुमान पितृ पक्ष से प्राप्त 'उन्चास पवन' का प्रचण्ड वेग ध ारण कर जिस गति एवं ध्वनि के साथ सप्ताकाश की ओर अग्रसर होते हैं, वह इन पंक्तियों में प्रतिबिम्बित और प्रतिध्वनित हो उठी है–

शत घूर्णावर्त तरंग भंग उठते पहाड़।

जल–राशि राशि पर चढ़ता खाता पछाड़।

तोड़ता बंध–प्रतिसंघ धरा, हो स्फीत–वक्ष

'शत–वायु–वेग–बल, डुबा अतल में देश–भाव

जल राशि विपुल मथ मिला अनिल में महारव... ।'

इन शब्दों द्वारा उड़ान का चित्र तो प्रत्यक्ष हो ही जाता है, कवि ने उस क्रिया का ध्वनन भी कर दिया है। निराला का यह विराटता बोध मात्र मनः कल्पित नहीं है, इसके पीछे उनकी प्रबल अनुभूति और उनकी महाप्राण चेतना है। अपनी पौरुषमयी प्रवृत्ति के कारण ही वे इन प्रचण्ड प्रतीकों की परिकल्पना कर सके हैं। एक उदाहरण और–

'देखो बन्धुवर, सामने स्थित जो यह भूधर।

शोभित शत हरित गुल्म–तृण से श्यामल सुन्दर।

पार्वती कल्पना है इसकी मकरंद बिन्दु,

गरजता चरण–प्रांत पर सिंह वह, नहीं सिंधु,

दशदिक–समस्त है हस्त और देखो ऊपर।

अंबर में हुए दिगम्बर अर्चित शशिशेखर।।'

(राम की शक्तिपूजा)

महाशक्ति (दशभुजा) का यह पूजन–प्रतीक जहाँ धीरोदात्त नायक राम के पुण्य प्रताप का द्योतक है, वहीं निराला की प्राणोन्मुखी अनुभूति और उनके व्यक्तित्व के विराट भाव की भी बोधक है। इतना बड़ा रूपक वही बांध ा सकता है, जिसके पास भाषा की यथेष्ट क्षमता होती है।

यह विराटता बोध निराला के स्फुट बिम्बविधान में भी द्रष्टव्य है। उन्होंने जो विशद चित्र फलक स्थापित किए हैं और उस पर जो विस्तृत रेखा कृतियाँ अंकित की हैं, वे कवि हृदय की व्यापकता तथा भावस्फीति की साक्षी है। उदाहरणस्वरूप कवि का 'भारति जय विजय करे' गीत विचारणीय है। यहाँ उसने जिस प्रकार लंकाको भारत माता के पदतल पर पड़े शतदल रूप में अंकित किया है और हिन्द महासागर की उच्छल तरंगों को भारत–भू के चरणप्रांत को प्रच्छज्ञलित करते हुए दिखाया है, वह एक उत्कृष्ट कल्पना है। यही नहीं, महाकवि ने शस्य श्यामला भारत भूमि को आवृत्त करने वाले तरु–तृण बन लतओं को महाभारतीय के वस्र (परिधान) रूप में अंकित किया है, वन्य पष्पों को उसके अंचल में चित्रित बेलबूटे कहा है और गंगा की वर्तुलाकार धवल–धारा को भारती के कल कंठ में बँधे वक्षस्थलार्गलित हार की उत्प्रेक्षा दी है। निराला जी की यह बिंबधर्मी कल्पना उनकी उद्भावना शक्ति की परिचायक है और साथ ही उनकी भाव–भंगिमा की भी। कवि के ये चित्र एक विशिष्ट रसोद्रेक एवं भावोत्कर्ष के हेतु हैं। वस्तुतः निराला जी विराट चित्रों की परिकल्पना में बड़े पटु हैं। प्रकृति का मानवीकरण करते हुए उन्होंने सूक्ष्म और विराट् से विराट दृश्यों की योजना की है। कवि ने अपनी प्रकृति प्रिया का रूपांकन करते हुए पर्वतों को उसके उन्नत उरोज और सरिताओं को उकसे पयोधर रूप में प्रस्तुत किया है–

गिरिवर उरोज सरि पयोधार

(तुलसीदास)

अथवा

'पृथ्वी के उठे उरोज मंजु पर्वत निरुपम'

ये उद्भावनाएँ कुछ–कुछ भाषिक रूढ़ियों पर टिकी हैं ओर कुछ अपनी नई सूझ पर। इसी प्रकार कवि ने सरिता के वक्षस्थल पर प्रतिबिम्बित आकाश को उसका नीला अँचल और शैवाल जाल को उसके कटि प्रदेश में सुशोभित हरितांकुर रूप में प्रत्यंकित कर अपनी भावदीप्ति का परिचय दिया है–

'किस अनंत का नीला अँचल हिला–हिला कर

आती हो तुम सजी मंडलाकार

सोह रहा है हरा क्षीण कटि में अंबर शैवाल।'

यहाँ 'अंबर' शब्द श्लिष्ट होने के कारण गूढ़ार्थवाची हो गया है। कवि ने नारी रूप की रचना ओर उसके मानवीकरण द्वारा सौदर्य–सौकुमार्य की भी यथेष्ट व्यंजना की है। उनकी वासंती प्रकृति 'नवल लतिका' रूप में किसलयों के वस्र धारण किए हुए जिस प्रकार अपने प्रिय तरु का स्नेहालिंगन कर रही है, बसंत की सरसी जिस प्रकार अपने उरोज–सरोज से सुशोभित हो उठी है, कलियों की केशर गंधी–केशर वर्णी केशराशि जिस प्रकार लहरा रही है और पृथ्वी का स्वर्ण शस्य अँचल जिस प्रकार फहराता हुआ चतुर्दिक् शोभायमान हो रहा है, यह समस्त प्रकृति–परिवेश उनकी रस सौंदर्य स्निग्ध काव्यानुभूति का उत्कृष्ण उदाहरण है–

'किसलय वसना नव वय लतिका,

मिली मधुर प्रिय उर तरु पतिका,

आवृत्ति सरसी उर सरसिज उठे

केशर के केश कली के छुटे।

स्वर्णशस्य–अँचल पृथ्वी का लहराया।

सखि बसंत आया।' **(गीतिका)**

3.4 छायावादी भाषिक संरचना

निराला जी की छायावादी रसानुभूति प्रायः बड़ी व्यंजक है। जिस प्रकार आस्वाद पदार्थों (व्यंजनों) में व्याप्त रस और लावण्य को रसनेन्द्रिय द्वारा एकस्थ इंगित नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार उनके काव्य रस और उसमें सन्निहित सौन्दर्यानुभूति का अंगुलि–निर्देश नहीं किया जा सकता है। निराला का भाव रस–सौंदर्य इतना सूक्ष्म है कि उसकी मात्र अंतः प्रतीति ही संभव है। कवि ने यत्र–तत्र उक्ति वक्रता का प्रयोग किया है जैसे– 'चल चरणों का व्याकुल पनघट।' 'चलचरणों' कह कर उसने विशेषण विपर्यण द्वारा यमुना के घाटों पर होने वाली चहल–पहल की गति और ध्वनि को चित्रित कर दिया है। इसी प्रकार का एक उद्धरण और विचारणीय है–

'मूक आह्वान भरे लालसी कपोलों के

व्याकूल विकास पर

झरते हैं शिशिर से चुंबन गगन के।'

यहाँ कपोलों को जिस प्रकार आह्वान युक्त, लालसापूर्ण एवं भावाकुलतापूर्वक उल्लसित–विकसित होते चित्रित किया गया है और उन पर अंकित होने वाले चुंबन को जिस प्रकार आकाश से झर–झर झरते शिशिर कणों के रूप में अंकित किया गया है, वह काव्य सौष्ठव का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यहाँ छायावादी काव्य भाषा अपने प्रकष पर है।

यह व्यंजना महाकवि निराला के ऐंद्रिय सौंदर्य बोध की चरम परिणति है। कवि ने अपनी सूक्ष्म भावानुभूति को प्रायः काव्यगत सौंदर्य चेतना में परिणत कर दिया है। वस्तुतः उसकी आत्मानुभूति रसात्मक वाक्यों में व्यक्त होकर तद्रूप हो उठी है। उन्होंने अपनी संचित सौंदर्यानुभूति द्वारा विविध रूपों–भावों और दृश्यों की मानसी प्रतिमा स्थापित की है। साथ ही उसका साक्षात्कार भी कराया है। उदाहरणार्थ– 'राम की शक्तिपूजा' में चित्रित जनक–वाटिका प्रसंग में राम सीता के प्रथम 'लतांतराल मिलन' और उससे उद्भूत–चेष्टओं का यह दृश्य अवलोकनीय है–

'नयनों को नयनों से गोपन, प्रिय संभाषण

पलकों का नव नलकों पर प्रथमोत्थान, पतन।

काँपते हुए किसलय, झरते पराग समुदाय

गाते खाग नव जीवन परिचय, तरु मलय वलय।'

(अनामिका)

यहाँ एक ओर विदेह की वाटिका का चित्रण किया गया है, दूसरी ओर राम–सीता की सूक्ष्म रसानुभूतियों से प्रेरित आंगिक अनुभवों का भी। दो अपरिचितों का यह पूर्व राग, उनका पारस्परिक आकर्षण और उनकी भावभंगिमाएँ यहाँ काव्य में यथावत् रूपांतरित हो गई हैं। ये पंक्तियाँ अपनी व्यंजनातिशयता के कारण ही मन को प्रभावित करती है। इनका गूढ़ार्थ विचारणीय है। राम और सीता पारस्परिक साक्षात्कार के क्षणों में जब अकस्मात् एक दूसरे पर दृष्टिपात करते हैं तो सुकुमारी सीता के नेत्र स्री सुलभ शील–संकोच के कारण मुंदकर आत्मगोपन करने लगते हैं, किन्तु इस लुकाछिपी द्वारा मौन भाव से वे अपना अनुराग प्रकट कर ले जाती है। सीता की पलकें कुतूहलवश राम की नव (अपरिचित) पलकों पर एक बार उठती हैं अर्थात् दृष्टि परस्पर टकराती हैं और फिर स्वतः उनकी पलकें झँप जाती हैं। इस भावानुभूति के कारण उनके किसलय जैसे अरुणाधर आंदोलन हो उठते हैं। भावना का मकरंद (माधुर्य) प्रवाहित होने लगता है। वाणी रूपी खग शावक सुगबुगा उठते हैं और अपने अंतः कलराव द्वारा एक नए जीवन का संगीत छेड़ देते हैं। यह प्रणयी युगल मलयल की मृदु मंद तरंगों से हिल्लोलित तरु लता के समान परस्पर वलयीकृत (लोट–पोट) या आबद्ध हो जाता है। कवि ने इन श्रृंगारिक चेष्टाओं और सात्विक अनुभावों को प्रकृति चित्रण के ब्याज से रूपकातिशयोक्ति के सहारे इतनी सूक्ष्मता और वचन विदग्धता के साथ प्रत्यंकित किया है कि यहाँ उसकी रसानुभूति काव्य रस में परिणत हो गई है। इसी प्रकार कवि ने अपनी पुत्री की जो छवि अंकित की है, उसने 'वाल्य के केलियों का प्रांगण' पार कर धीरे–धीरे तारुण्यपथ की ओर पटक्षेप करती हुई अपनी आत्माजा का सौन्दर्यांकन कर जिस सात्विक साहस और जिस सुसंवेद्य सत्य का संमूर्तन किया है, वह रसानुभूति के संदर्भ में सर्वथा श्लाध्य है–

'कर पार कुंज तारुण्य सुघर

आई, लावघ्य भार थर–थर

काँपा कोमलता पर सस्वर

ज्यों मालकोस नव वीणा पर।'

3.5 भाषा संवेदना

निराला का भाषाबोध और काव्यबोध परस्परपूरक हैं। उनके काव्य–सौंदर्य में अनुभूति का सौंदर्य है। ये पंक्तियाँ अनुभूतिमूलक सहज–रस का आस्वाद कराती हैं। वस्तुतः छायावादियों की कल्पनाएँ कवि–कौतुक या बौद्धिक चमत्कार मात्र न होकर अंतस् से फूटी विवशकारिणी (कम्पल्सिव) भाववृत्ति जैसी प्रतीत होती हैं। वे अनुभूतियाँ सहृदय को अपने विविध विभावादि से व्यंजित स्थायीभावों का आस्वादन कराकर स्वयं रसत्व की स्थिति प्राप्त कर लेती है। निराला के काव्य में यह अनुभूति एक भावात्मक परिस्थिति और एक मनोदशा रूप में व्याप्त है। कवि की वेदना, उसका अंतर्द्वंद और उसके संवेग सहृदय को एक विशिष्ट भाव का आस्वाद कराते हैं और रस–सौंदर्य रूप में पर्यवसित हो जाते हैं। निराला की ये रचनाएँ, जिनमें कल्पना और बिम्ब का प्रतिविधान नहीं भी किया गया है, अपनी संवेगमयी अनुभूतियों के कारण रसस्पर्शी सिद्ध होती हैं। उनके काव्य में ध्वंसक आवेग, क्रांति की ऊर्जा और जीवन–संघर्ष का ओजस्वी स्वर है। उसमें टूटने का जो दर्द एवं एकाकीपन का जो विषण्णरोदन है और उसके साथ ही उसमें जो अध्यात्मोन्मुखी भावाकुलता, दर्प और दैन्य की जो उदात्तीकृत आत्म विश्रांति दिखाई देती है, वह निस्संदेह रसोद्बोधक है। कवि की ये उक्तियाँ 'मेरा अंतर बज्र कठोर', 'अभी न होगा अंत', 'मैं अकेला, देखता हूँ आ रही मेरे दिवस की सांध्य बेला', 'स्नेह निर्झर बह गया, रेत ज्यों तन रह गया है', 'देख चुका जो–जो आए

थे चले गए'– मेरे प्रिय सब बुरे गए सब भले गए, मन का समाहार, करो विश्वाधार; कोई नहीं और कहीं नहीं ठौर, दूर सब जन पौर, करो भव से पार। आदि वास्तव में रसोद्रेक मूलक हैं। तात्पर्य यह है कि निराला का रस–सौन्दर्य बिम्बों, कल्पनाओं आदि के माध्यम से भी प्रकट हुआ है और निराडंबर काव्य की सपाटता द्वारा भी। वस्तुतः स्वानुभूति मूलक सहज रस का सौन्दर्य निराला में सर्वाधिक है।

3.6 निराला की भाषिक प्रकृति

निराला ने एक विशिष्ट कोटि की काव्यभाषा दी है। काव्य की कला के चार उपकरणों का महत्व साहित्य–समीक्षकों ने स्वीकार किया है– रूप, शिल्प, भाषा तथा अभिव्यंजना। यद्यपि इन शब्दों को पकृति एकार्थक नहीं है, क्योंकि इन शब्दों की अर्थ–सीमाएँ पृथक्–पृथक् हैं, फिर भी काव्य कलागत अन्तर्धारा के अन्तर्गत इन शब्दों का लक्ष्य सम्मिलित रूप से एक पूर्णता का अभिव्यक्त करना ही होता है। इन सभी शब्दों की शक्ति भाषा में सन्निहित होती है। निराला ने अपनी काव्य–भाषा को अपने प्रयोगों द्वारा इस सीमा तक परिमार्जित करके समृद्ध बनाया है कि वह अपने पूर्व प्रचलित रूप से पूर्णतः भिन्न प्रतीत होती है। इस संदर्भ में आचार्य नंददुलारे बाजपेयी का यह कथन दृष्टव्य है–

'निराला की दूसरी विशेषता उनकी भाषा निर्मिति है, जहाँ उन्होंने अनेक प्रयोग किए हैं और कहीं–कहीं चिंत्य और चकित करने वाले प्रयोग भी बेहिचक कर डाले हैं। संस्कृत के एक सम्मानित पंडित ने कदाचित इसी कारण निराला के लिए 'मुरारेस्तु तृतीयः पन्थाः' कह कर उनके विलक्षण प्रयोगों की सूचना दी थी। यह सही है कि शब्द रचना और भाषा–निर्मिति की भूमि पर निराला अत्यधिक स्वाधीन रहे हैं। जिस प्रकार मिल्टन की भाषा के संबंध में कहा गया है कि अंग्रेजों की अंग्रेजी नहीं है– कुछ और है, उसी प्रकार निराला की भाषा के संबंध में भी कहा जा सकता है कि वह हिन्दी काव्य–परम्परा की हिन्दी नहीं है, कुछ और है।'

(कवि निराला–210)

उपर्युक्त 'कुछ और है' में निराला के सभी काव्य–भाषा–विषयक प्रयोग सम्मिलित हैं, जिनकी व्याख्या स्वयं उन्होंने भी की है। सर्वप्रथम निराला ने काव्य भाषा में कलावाद के बंधनों का विरोध कर भाषा को बंधन मुक्त किया और कला को आधुनिक जीवन की भूमिका प्रदान की। इस परिप्रेक्ष्य में सर्वप्रथम उन्होंने भाषा की प्रगतिशीलता को प्रमाणिक किया– 'भाषा के उत्थान–पतन पर विचार करते हुए मैंने देखा, वेदों से ब्रजभाष तक भाषा के पतन का एक मनोहर इतिहास तैयार होता है। बदली हुई भाषा क्रमशः सुखानुशायी होती गई है।'

(मेरे गीत और कला, प्रबंध प्रतिभा 199)

लेकिन भाषा की परिवर्तनशीलता के इस इतिहास के साथ निराला को अपनी देशी बानी पर गर्व है। अपने भाषागत प्रयोगों की विवेचन करते हुए निराला ने लिख–

'यह सब उलटापलट मैंने जानबूझ कर नहीं किया और यह उलटापलट है भी नहीं। इससे सीधा और प्राणों के पास तक पहुँचता रास्ता छन्दों के इतिहास में दूसरा नहीं। वेद इसीलिए वेद है। यह उलटपलट उसके लिए कहा जा सकता था जिसकी मातृभाषा हिन्दी न हुई होती। मेरी बैसवारी, माता–पिता की दी वाग्विभूति, जिससे सभी रसों के स्रोत मेरे जीवन में फूट कर निकले हैं, साहित्यिकों में प्रसिद्ध है।

(प्रबंध प्रतिभा)

कला, भाषा की प्राण शक्ति है। निराला जहाँ भाषा के स्तर पर कलात्मक प्रयोग करते हैं, वहाँ उनका ध्यान भाषा की कला पर भी केन्द्रित रहता है। उनके शब्दों में– 'नया जन्म जिस तरह, एक युग की संचित अनुभूतियों को अपने भीतर नया रूप और भाव पैदा करता है, वही युगांतर की कला है।' निराला अपने इसी आलेख में भाषा तथा कला–दोनों की, विवेचना साथ–साथ करते हुए कहते हैं– 'हम दोनों प्रकार की कलाओं को साहित्य में सन्निविष्ट करते हैं। जिस वृन्त पर वह कलिका खिलती है, वह है भाषा। भाषा भी समयानुसार अपना रूप बदलती रहती है। कला के विकास के साथ–साथ साहित्य में नई भाषा भी विकसित होती है। हरा कैड़ेदार मजबूत डंठल भी कृशांगी नवीन कला को चाहिए। कोमल और कठोर आत्मा और प्राणों का ऐसा ही संबंध रहा है। ब्रजभाषा पूर्ण भाषा है। खड़ी बोली हिन्दी के हृदय की अशांत आशा, सार्वदेशिक प्रसाद से लिपटी हुई, जड़ और चेतन के विश्व–संसर्ग से बंधनहीन भाषा है, चित्र और अचित्र।

(प्रबंध प्रतिभा)

3.7 नाद व्यंजना

स्पष्ट है कि निराला काव्यभाषा के क्षेत्र में सिद्धहस्त हैं।

निराला जी ने अपने कवि कर्म की व्याख्या करते हुए एक बड़ा महत्वपूर्ण सूत्र संकेत किया है। उनकी घोषणा है कि उनके काव्य का एक–एक शब्द बड़ा गठीला अर्थात् भावों के साथ सुसम्बद्ध है, ध्वन्यात्मक है और बिम्बविधान से परिपूर्ण है– "एक–एक शब्द बँधा, ध्वनिमय साकार।" शब्द के ध्वनि बिम्ब और अर्थ बिम्ब से युक्त जितने श्रेष्ठ प्रयोग निराला की कविता में मिलते हैं, उतने अन्यत्र कम ही हैं। उन्होंने रूपात्मक जगत् को अनेक श्रोत बिम्बों द्वारा अंकित किया है। निराला के काव्य में ध्वनि की व्यंजना कई प्रणालियों द्वारा की गई है। उन्होंने अन्तर्बाह्य प्रकृति के विभिन्न रूपों से मिश्रित ध्वनियों को सतकर्तापूर्वक ग्रहण किया है और प्रायः उन्हें ध्वन्यात्मकता के सहारे प्रतिध्वनित भी कर दिखाया है। वस्तुतः निराला की नादव्यंजना बड़ी विलक्षण है। नादतत्व कविता का प्राण है। आचार्य शुक्ल ने बहुत ठीक कहा है कि 'नाद से कविता की आयु बढ़ती है।' 'निराला' जी ने इसीलिए प्रत्येक शब्द को भावानुरूप निनादित करने का प्रयत्न किया है। उनके काव्य में कोमल और कर्कश, मृदु और उदात्त, व्यक्त (मूर्त) और अमूर्त कई प्रकार की ध्वनियाँ हैं। उन्होंने यदि एक ओर प्रलय–जलद, उल्का एवं झंझा की भीषण गुरु गर्जना को कर्णगत किया है तो दूसरी ओर स्वप्नों की निःशब्द आहट भी सुनी है। निराला ने समग्रतः नयनों और श्रवणों को अर्थात् दर्शन एवं श्रवण–व्यापार को एकाकार कर दिया है। 'रात की शक्ति पूजा' में जनक वाटिका के पूर्व राग का स्मरण करते हुए राम को वह दृश्य याद आता है, जब उनके और सीता के नेत्र परस्पर मूक संभाषण कर रहे थे और अपनी–अपनी अंतरंग अनुभूतियों का प्रथम दर्शन के माध्यम से सम्प्रेषण कर रहे थे– 'नयनों का नयनों से गोपन, प्रिय सम्भाषण।' यहाँ रूप और ध्वनि का जो समात्मभाव परिलक्षित होता है, वह निराला जी के नादसौष्ठव का अपना वैशिष्ट्य है। ध्वनि सौन्दर्य के प्रति निराला जी बड़े सचेष्ट रहे हैं। उनकी शब्द योजना प्रायः वर्णमैत्री, अर्न्तुकान्तता और ध्वन्यात्मकता पर आधारित है। वे जिस एक शब्द का प्रयोग करते हैं, उसके आगे उसी वजन के शब्दों का सार्थक विन्यास करना चाहते हैं। उदाहरणार्थ ये पंक्तियाँ लीजिए–

'शत श्री अकाल काल अनल धक–धक कर जला।

भस्म हो गए थे गुण, तापत्रय मृत्युंजय...।

'सिंही की गोद से छीनता रे शिशु कौन? मौन...

एक मेष माता ही रहती है निर्निमेष।'

(परिमल)

इसमें अकाल और काल, तापत्रय और मृत्युंजय, कौन और मौन, मेष ओर निर्मिमेष ऐसे शब्द हैं जो ध्वनि साम्य के कारण, किन्तु सार्थकतापूर्वक प्रयुक्त हुए हैं। शब्दों का यह बँधाव निश्चय ही निराला को अतिप्रिय है।

ध्वनितत्व से प्रेरित होकर निराला जी ने वीप्सा का भरसक प्रयोग किया हैं। वे भाव पर ज़ोर देने के उद्देश्य से एक शब्द को कई बाद दुहराते हैं, जैसे–

'जागो–जागो, आया प्रभात।

बीती, वह बीती अंध रात।

बाँधो–बाँधो किरणें चेतन।'

(तुलसीदास)

जहाँ जागो, बीती और बाँधो शब्दों की आवृत्ति ध्वन्यात्मकता से प्रेरित है। वस्तुतः अनुभूति ओर भाषिक ध्वनियाँ परस्पर अविभाज्य हैं। उनके अधिकांश शब्द सस्वर हैं, जो पंत जी के कथनानुसार 'झंकार में चित्र और चित्र में झंकार है।'

निराला जी ने भीषण और मसृण प्रायः सभी प्रकार की ध्वनियों को अंकित किया है। महाप्राण ध्वनियों के प्रतिवे अपेक्षाकृत अधिक लालायित हैं, इसीलिए वे अन्य छायावादी कवियों से कुछ भिन्न दिखाई देते हैं। उनके काव्य में नैसर्गिक ध्वनियों के भी कई–कई बिम्ब दृष्टिगत होते हैं, जैसे–'कोकिल कंठ' उन्हें बहुत प्रिय है। उनके ही शब्दों में 'कूजित पिक उर मधुर कंठ कुठा सब टूटी।' उन्होंने कई स्थालों पर 'पिक कल कूजन तान', (परिमल) 'पिक कुहरित डाल' (तुलसीदास), 'पिक ध्वनि भाषित भैरवी कुंज' (सांध्य काकली) आदि का उल्लेख किया है। भ्रमर गुंजार, कलरव, पत्रों के मर्मर आदि के प्रति भी उनके मन में आकर्षण है, किन्तु इनकी तुलना में पवन श्वसन का ध्वनि बिम्ब उन्हें कहीं अधिक प्रिय है।' 'जुही की कली' में निराला जी ने ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा पवन की गति को यथावत् कर दिया है–

'उपवन वन सहित गहन गिरि कानन' इसी प्रकार का ध्वनि बिम्ब है। वायुतरंग के साथ घन गर्जन, वर्षण और जल प्रवाह की ध्वनियाँ उनकी कविताओं में भरी पड़ी हैं। 'बादलराग' में उन्होंने द्वित्ववर्णों द्वारा बादल की गड़गड़ाहट तक को सशब्द कर दिया है–

'झर–झर–झर निर्झर गिरि सर में।

घर मरु तरु मर्मर सागर में–

राग अमर अम्बर में भर निज रोर।'

(परिमल)

इस कविता में बादलों के कई रूप हैं। कहीं 'सघन घोर गुरु गहन रोर' वाला भैरव गर्जन है तो कहीं प्रचं वज्रघोष प्रवाह।

मूसधार वर्षण करता हुआ बादल जो भेरी वादन करता है, उसे निराला ने अपने शब्दबन्ध द्वारा अविक रूप में उतार सा दिया है। जल वर्षण की ध्वनियाँ निराला जी को सर्वाधिक रुचिकर हैं। कुछ उदाहरण देखिए

झर–झर, झर–झर, झर धारा झर (गीतिका)

द्रुत समीर कम्पित थर–थर–थर।

झरती धाराएँ झर–झर–झर। (अपरा)

उत्ताल तरंगाघात प्रलय घनगर्जन जलधि प्रबल में (परिमल)

भेरी झर–झर–झरर दमामें घोर नगारों की है चोप

कड़कड़–कड़ सन–सन बन्दूकें, अररर–अररर, अररर तोप। (अनामिका)

छल–छल–छल कहता यद्यपि जल (तुलसीदास)

कलकल, कुलकुल, कलमल, टलमल,टलमल। (परिमल) आदि।

वस्तुतः यहाँ निराला के ही शब्दों में कहा जा सकता है कि 'निर्मल कलकल में बँध गया विश्व सारा।' यह विशेषतः उल्लेखनीय यह है कि निराला जी ने घन–घोष को ध्वनि गांभीर्य का आदर्श माना है और उसे 'मेघ मन्द्र ध्वनि' कहा है। कुछ उदाहरण लीजिए–

गरजो ये मन्द्र बज्र स्वर (गीतिका)

जीवन का स्वर भर छंद ताल मौन में मन्द्र (अनामिका)

कह उठे राम ज्यों मन्द्रित घन (राम की शक्ति पूजा)

नवल कंठ नव जलद मन्द्र रव (गीतिका)

हृदय कंप के जलद मन्द्र स्वर (गीतिका) आदि।

निःसंदेह यह मन्द्र रव तथा यह घनघोष उनके औदात्य और उनके विराट व्यक्तित्व का द्योतक है।

निराला जी ने प्रचंड ध्वनियों की सफल आयोजना की है। वायु विलोड़ित समुद्री तूफान, झंझा का हर-ह नाद और समुद्री ज्वार का यह विक्षुब्ध स्वर एक विरल उदाहरण है–

'शत घूर्णावर्त तरंग भंग उठते पहाड़।

जल राशि–राशि जल पर चढ़ता खाता पछाड़।

... शत वायु वेग बल डूबा अनिल में महाराव।'

(राम की शक्ति पू

यह उत्ताल तरंगाघात ध्वनि सौन्दर्य की दृष्टि से स्पृहणीय है।

मानवीय ध्वनियों में रमणी कंठ को निराला जी ने 'वीणानिन्दित वाणी' कहा है। 'तुलसीदास' में नारी कंठ को उन्होंने 'मधु शीकर निर्झर' की संज्ञा दी है। उन्होंने अट्टहास का एक बड़ा सुन्दर ध्वनि बिम्ब 'शक्ति पूजा' में रावण की भयावह हँसी के प्रसंग में प्रस्तुत किया है–

'फिर सुना हँस रहा अट्टहास रावण खलखल।' इस 'खलखल' शब्द में महाखल रावण जैसे भयावह व्यक्ति के अट्टहास का सुन्दर ध्वनिबिम्ब है।

कोमल ध्वनियों में निराला जी ने नुपूर ध्वनि को सर्वाधिक महत्व दिया है, जैसे–

कण–कण–कण कंकण प्रिय किण किण रव किंकिणी।

रणन, रणन नुपूर ध्वनि लाज लौट रंकिणी।

(गीतिव्य)

उन्होंने नुपूरयुक्त (आशिंजित) चरणों की आवृत्ति अपने काव्य में बीस बार से अधिक ही की है। वे पद गति पर मुग्ध हैं। नुपूर ध्वनि को उन्होंने संसार के समस्त छन्दों को परास्त करने वाली कहा है। यह उनका सर्वाधिक प्रिय श्रावणिक बिम्ब है। स्पष्ट है कि निराला जी ने अनुकरणात्मक ध्वनियों को बहुत महत्व दिया है। कोकिल की काकली, भ्रमर गुंजर, मर्मर, श्वसनं, घनगर्जनं, वर्षण, जलप्रवाह अर्थात् सभी रौद्र और सुकुमार ध्वनियाँ उनके काव्य में समाहित हैं। अपनी इस ध्वनि योजना द्वारा उन्होंने अमूर्त बिम्बों तक को प्रतिध्वनित किया है और इस प्रकार मौन को मुखर कर दिया है, साथ ही अकथित रंगों, गंधों एवं संवेगों को स्वर देते हुए इन्द्रियों को भी भाषा दी है।

3.8 बिम्ब धर्मिता

निराला की भाषा अधिकाधिक बिम्बमयी है। उन्होंने प्रतीकों, रूपकों और नई अद्भावनाओं के सहारे अपनी अनुभूतियों को रूपायित करने का यत्न किया है। 'राम की शक्ति पूजा' में राम महाशक्ति की जो परिकल्पना करते हैं, वह एक विराट् बिम्ब है–

'शोभित–शत हरित गुल्म तृण से श्यामल सुन्दर।

पार्वती कल्पना है इसकी मकरंदबिन्दु।

गरजता चरण प्रांत पर सिंह वह नहीं सिंधु।

दशदिक् समस्त हैं हस्त और देखो ऊपर,

अम्बर में हुए दिगम्बर अर्चित शशि शेखर।'

(राम की शक्ति पूजा)

ऐसे अनेक चित्रफलक निराला के काव्य में द्रष्टव्य हैं, जो कवि हृदय की भावस्फीति के साक्षी हैं। 'भारति जय विजय करे' गीत में उन्होंने जिस प्रकार लंका को भारतमाता के पदतल पर पड़े हुए कमल के रूप में अंकित किया है और हिन्द महासागर को चरण प्रक्षालित करते हुए दिखाया है, साथी ही शस्य–श्यामला भूमि को आच्छादित

करने वाले तरु तृण वन लता को उनका परिधान और वन पुष्पों को उनके चंचल में चित्रित बेलबूटे तथा गंगा की वर्तुल धारा को उनके कंठ में सुशोभित धवलहार कहा है, वह उनकी बिम्बधर्मी उद्‌भावना शक्ति का परिचालक है। इस प्रकार के बिम्ब निराला के भावोत्कर्ष के हेतु हैं।

निष्कर्ष यह है कि निराला का काव्य, स्वयं उनके उपर्युक्त आत्मकथ्यके अनुसार इन तीन बिन्दुओं के कारण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है– (1) शब्दबन्ध (2) ध्वन्यात्मकता (3) बिम्बविधान।

उनकी शब्दावली सर्वोत्तम क्रम में सर्वोत्तम शब्द से परिपूर्ण है। 'राम की शक्ति पूजा' का जैसा टकसाली शब्द प्रयोग हिन्दी कविता का अपवाद ही कहा जाएगा। उन्होंने समस्त पदावली, तत्समबहुला, परिनिष्ठित प्रयोगों में सर्वाधिक सपफलता प्राप्त की है। महाप्राणत्व के साथ–साथ यथा प्रसंग निराला जी ने कोमलकांत पदावली का भी वायु सुष्ठु प्रयोग किया है। इसके साथ ही उन्होंने आवश्यकतानुसार भाषा के रूढ़ प्रयोगों और उनके पारम्परिक ढाँचों को तोड़ते हुए बोलचाल की व्यंजनागर्भित, मुहावरेदार, किन्तु चुटीली भाषा का भी आविष्कार किया है। 'कुकुरमुत्त और नए पत्ते' की कई कविताएँ इस कथन का उदाहरण हैं। एक ओर 'तुलसीदास' की भाषा और दूसरी ओर परवर्ती रचनाएँ, निराला जी की भाषिक विविधता एवं शब्द शक्ति की साक्षी हैं। निःसंदेह वे शब्दों को प्राणी से अधिक प्यार करते रहे हैं, उन्हें बार–बार माँजते हैं, फिर तोड़ते हैं और नए रूप में गढ़ते हैं। छायावादी काव्य भाषा के विकास का यही मूलाधार है। यह शब्द–सामर्थ्य, यह ध्वनि–योजना और यह बिम्ब–विधान निराला जीकी अन्यतम देन है, जिसके लिए वे सदा सर्वदा स्पृहणीय तथा अनुकरणीय माने जाएँगे।

3.9 भाषा वैविध्य

निराला के काव्य में भाषिक संरचना के कई स्तर हैं। एक ओर 'राम की शक्ति पूजा' की परिनिष्ठत भाषा, दूसरी ओर गीतों की कोमलकांत पदावली और तीसरे कुकुरमुत्ता या परवर्ती कविताओं की खुरदरी शब्दावली। यही नहीं, निराला की आँचलिक एवं छायावृत्ति विहीन 'शब्दावली भी कहीं–कहीं अपनी अति पर है। यह भी उल्लेखनीय है कि निराला ने जनपदीय मुहावरों के सहारे भाषा और भाव की ध्वनि (टोन) तक को प्रतिध्वनित किया है, जैसे –तुलसीदास की यह उक्ति–'उधार लाए हैं चले बड़े' एक विशिष्ट लहजे की सूचक है। उत्कृष्ट भाव–भाषा के बीच ये प्रयोग बड़े विडम्बनापूर्ण लगते हैं। इनका घरेलूपर निश्चय ही छायावादोचित नहीं है।

जनपदीय शब्दों का यह बाहुल्य निराला के परवर्ती काव्य में विशेष दृष्टिगत होता है, जिसका मूल कारण है– उनका तुकांत–मोह तथा ग्राम्य संस्कार। उन्होंने सप्रयास तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया है और निरायास रूप से बैसवारी अवधे का। इन भेदस प्रयोगों द्वारा निराला ने प्रथम बार छायावादी भाषा के आभिजात्य पर प्रहार कर उसका 'निषेध' किया है और ऊबड़–खाबड़ भावों के अनुकूल खुरदरी शब्दावली की सृष्टि की है। निराला की आत्म स्वीकारोक्ति के अनुसार–'बन्द हुई जब उर की भाषा' अर्थात् इस स्तर पर पहले वाली संस्कारवती गिरा नष्ट हो गई है।

इसके अतिरिक्त निराला जी ने यत्र–तत्र उर्दू शब्दावली को भी स्थान दिया है, जैसे नायाबचीज, खुशजहान, रंजोगम, रश्मेअदा, लजीज, खुननसीब, आशियाँ, रंगोआब, (कुकुरमुत्ता) खुदरोदरख्त (नए पत्ते) आदि। ऐसे प्रयोग प्रायः परवर्ती काव्य में मिलते हैं। यह स्मरणीय है कि सिद्धांततः हिन्दी की उर्दवी शैली अथवा सरल हिन्दुस्तानी के विरोधी रहे हैं। 'गांधी जी से बातचीत', 'नेहरू जी से दो बातें' (प्रबन्ध प्रतिभा) आदि अध्यायों में उन्होंने सरलीकरण का स्पष्ट प्रत्याख्यान किया है। उनके मतानुसार भाषा सरल न हो, बल्कि उससे शब्द ज्ञान की वृद्धि हो।

'तुलसीदास', 'राम की शक्ति पूजा' आदि की सामासिक (समस्त) पदावली और तत्सम शब्दावली उनके इसी मिशन की सूचक है। किन्तु परवर्ती काव्यों में मनोभाव जनित विरूपण के कारण उनकी भाषा के छायावादी संस्कार शिथिल हो जाते हैं, अतः वे बैसवारी, उर्दू आदि का बेझिझक प्रयोग करने लगते हैं। इसके कुछ लक्षण यद्यपि उनकी छायावादी कविताओं में भी दिखाई देते हैं, फिर भी वहाँ कवि की सचेतन शब्द साधना के कारण ये तत्व उभर नहीं पाए हैं। कालान्तर में निराला में शब्द–विन्यास की कड़ियाँ चरमराकर और टूट कर बिखर जाती हैं। यहाँ तक कि उनकी भाषा अपना अर्थबोधन तक खो देती हैं, जैसे–

'कटा था जो फटा रह कर

डटा था जो हटा रह कर।'

पर ये पंक्तियाँ यहाँ व्यर्थ सी लगती हैं, वहाँ इनकी समकालीन दूसरी पंक्तियाँ पर्याप्त अर्थवत्ता तथा भाषायी कसावट लिए दिखाई देती है, जैसे–

'निस्पृह, निःस्व, निरामय, निर्मम

निराकाँक्ष निर्लेप निरुद्‌गम

निर्भय निराकर निःसम, शम।'

(सांध्यकाकली)

इसमें उपसर्गों का सधा हुआ प्रयोग है। ऐसा भाषाधिकार सिद्ध कवियों को ही मिल पाता है।

उपर्युक्त दोनों प्रयोग निराला के निरालेपन के सूचक है। इनकी अपेक्षा सबसे विलक्षण है भाषा का व्यर्थता बोध। काकु के सहारे और वर्णों को तोड़–तोड़ कर इन्हें जिस प्रकार उभारा गया है, वह सहजगम्य नहीं है। देखिए–

'ताक कमसिनवारि, ताक सिनवारि

ताक कमसिन वारि, सिनवारि, सिनवारि

ता ककमसि, नवारि ताक कमसि नवारि।'

'वारि वन नववारि...

वारिज बिपुलवारि, फुलवारि फुलवारि

दुमलता तुलवारि,

आकुल मुकुल वारि...'

(सांध्यकाकली)

संभव है कवि मानस में कोई अर्थ बिम्ब रहा हो, यों इसका संप्रेषण वाधित है। ये शब्द प्रयोग कवि के मनः क्षेप के सूचक हैं। ऐसे ही कुछ बीजाक्षरों का प्रयोग 'मंत्र भाषा' बनने के ध्येय से 'वर्तमान धर्म' नामक निबंध में भी उन्होंने किए थे।

3.10 लोकभाषा

निराला जी ने अपनी परवर्ती कृतियों में बैसवारी अवधी बोलचाल वाली लोकभाषा का उन्मुक्त प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

'लगा सावन सुमन भावन–झूलने घर–घर पढ़े...।'

'कर फूल माला साज सखियाँ तीज पूजन को चलो।' (आराधना–96)

'... झूला झूलती गाती है 'सावन'–

औरतें नहीं आस मन भावन।'

'लड़के पेंग मारते हैं बढ़बढ़कर ...।

... लोग रोज रात को अल्हा गाते ढोलामर।' (नए पत्ते–18)

'गाती बारहमासी सावन और कजलियाँ।' (अपरा–200) + 'किसान खेतों में लड़के अखाड़ों में आए (बोला–) उपर्युक्त पंक्तियों में पावस ऋतु में गाए जाने वाले लोक गीतों–जैसे 'आल्हा', सावन, बारहमासी, कजरी, नकटा आदि का उल्लेख है और 'तीज' (अक्षय तृतीय) एवंकजरीतोज जैसे लोकोत्सवों का संकेत भी।

सावन में बैसवाड़ा अंचल की शोभा नयनाभिराम दिखाई देती है। आषाढ़ के पहले 'दौंगरे' के साथ ही खेतों की हलचल तथा अखाड़ों व दग्लों का दलदल निराला जी को साक्षात 'सरस्वती' के रूप में दिखाई देता है। इन्हीं प्राकृतिक दृश्यों के प्रकाश में ये अंचल को महाभारतीया (शक्ति) के रूप में .... करते हैं। 'देवी सरस्वती' कविता में महाकवि निराला जी ने उसे एक विराट बिम्ब में घटित किया है–

'हरी भरी खेतों की सरस्वती लहराई'

बैसवाड़ा पलत के रूप में देवी सरस्वती की आराधना करता हुआ कवि उनका सांगोपाग रेखांकन करता है–

'... हँसते बढ़े ध्यान खेतों में

जल पर ही रेत जैसे ज्वारी नेतों में।'

अहीं उड़द काकुन सावाँ और कोदौं की

निकले कमल सरौं में और करुबयें लहरें...।

खेत निराती हैं बालाएँ कर लिए खुरपियाँ

...सिमटा पानी खेतों का 'ओठ' पर चले हल।

पांस खेत किए जो गए, जोत कर मखमल,

ऐसे 'बाँह–बाँह' की वीणा बजी सुहाई... (अपरा)

रेखांकित शब्द विशुद्ध आँचलिक शब्द हैं। उन्हें बैसवाड़ी की कृषि शब्दावली में सम्मिलित किया जा सकता है। इन वर्णनों द्वारा लेखक बैसावड़ी की कृषि प्रणाली जैसे पांस (खाद) देना, 'ओठ' (नमी) देखकर जुताई करना और कई बाँह (आवृत्ति) करके फसल बोना, फिर खुरपियों (कृषि उपकरणें) से खेत की निराई करना आदि का चित्रण किया है, दुसरी ओर वहाँ की उपज, जैसे– अहीं (अरहर या तुअर) उड़द (दाल) काकुन, कोदो, ज्वार (हाईग्रेन) ध ाान (चावल का पूर्वरूप) करुबुआँ (शाक विशेष) आदि का भी संकेत किया है। इन उल्लेखों द्वारा लेखक ने गंगा, लीना और सई नदियों को तटवर्ती उर्वरा शस्यश्यामला धरती की सुस्कुति की है और उक्त अंचल के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की है।

'बैठे गोलबांधकर लोग विछे खेतों पर...'

'(गीत गा रहे) धनुष भंग के और राम के बनवास के...। (अपरा 209)'

'शुभ राम लीला सुकराशीला, ग्राम–ग्राम जगी हुई

दो पितर देवी पाख बीते...।' (आराधना–96)

शरदऋतु विशेषतः विजय दशमी के निकट 'रामलीला' विषयक नाटक, नौटंकी, संगीत और सामूहिक गायन के जो कार्यक्रम बैसवाड़ा प्रदेश में समायोजित होते हैं, उनका सम्यक् संकेत इन उद्धरणों में प्राप्त है। 'पितर पाख' (पितृपक्ष) का भी नामोल्लेख किया गया है। बैसवाड़ा में सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अतिरिक्त मनोविनोद के जो अनेक साधन प्रचलित हैं, उनकी ओर भी लेखक ने निर्देश किया है। इनमें मल्ल विद्या, मेला–दर्शन और तीर्थ यात्रा उल्लेखनीय हैं। बैसवाड़ा जनपद में, पावस काल में (विशेषतः नागपंचमी को) स्थान–स्थान पर अखाड़ा, दंगल या कुश्ती प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। शक्ति की उपासना का यह सर्वपूज्य दिवस है। निराला जी ने इनके वर्णन के साथ–साथ वहाँ प्रचलित कुश्ती कला तथा विभिन्न दांव–पेंचों का भी यथावत् विवेचन किया है। उनके साहित्य में प्राप्त मल्लविद्या संबंधी ये पारिभाषिक एवं आँचलिक शब्द उद्धरणीय हैं– 'दाव दस्ती', उतार, लोकान, पैज, पट, ढाँक कलाजंग, घिस्सा, सवारी, इता' आदि आदि। अन्य क्रीड़ाओं में निराला जी ने 'पैराव' (तैराकी) रंदा, घूसा (बाक्सिंग) पंजा लड़ाना, पत्थर 'लोकाना' बल्लेबाजी, गड़ीगुडंता, सुरबग्घी, ताश, गोली आदि के यथासन्दर्भ उल्लेख किए हैं। यह स्मरणीय है कि निराला जी इन अभ्यासों, क्रीड़ाओं और कलाओं में स्वयं सिद्धहस्त थे।

मेला और तीर्थयात्रा के अनेक प्रसंग निराला–साहित्य में प्राप्त हैं। कार्तिकी गंगा स्नान (कतकी पुत्रबासी) का बैसवाड़ा में बड़ा माहात्म्य है। स्नानार्थी विविध वाहनों, विशेषतः बैलगाड़ी द्वारा जिस प्रकार गंगा तट तक जाते हैं, उसका वर्णन एवं विवरण दृष्टव्य है।

'यात्री गंगा स्नान के लिए विकल... ' (नए पत्ते–75)

'कतकी में गंगा नहान की बड़ी उमंगें।'

'सजी गाड़ियाँ, चले लोग मन चढ़ती चंगे' (अपरा–200)

'पण्डों के सुधर सुधर घाट हैं'

'तिनके की टूटी के ठाट हैं।'

'यात्री जाते हैं श्राद्ध करते हैं,'

'कहते हैं कितने तारे...।'

'आरे गंगा के किनारे।' (बेला–52)

यात्रा के साधनों और वाहनों के अतिरिक्त लेखक ने अनेक यात्रा संस्मरण भी प्रस्तुत किए हैं। 'कुल्लीभाट' में निराला जी की स्टेशन की ओर पद यात्रा और 'स्फाटिक शिला' कविता में उनकी चित्रकूट यात्रा अत्यन्त रोचक तथा लोमहर्षक है। लेखक ने इन संस्मरणों द्वारा बेलगाड़ी, रब्बा, बहल, रहकला आदि वाहनों का परिचय दिया और बैलों की गतिविधि का भी, जैसे–

'बैल दो थे सांवलिया और धौला

धौला गरियार था, बाएँ जुता...।'

'पकड़ ली ऐंठी नाथ...।' (नए पत्ते–39)

सांवलिया, बैला क्रमशः सांवले और सफेद रंग के बैलों के नाम हैं। धौला प्रायः अशक्त माना जाता है, अतः जुएँ में बाएँ जोता जाता है ताकि उसे कम भार वहन करना पड़े। नाथ (नासिका छिद्री में पड़ी हुई रस्सी) द्वारा ही उसे नियन्त्रित किया जाता है। इन वर्णनों में बैसवाड़ा की यातायात व्यवस्था या आवागमन के साधनों का निर्यात चित्रांकन हुआ है।

'निरुपमा' में खेतों की बेदखली, षड़यन्त्रपूर्ण हत्या, सार्वजनिक कुएँ का पानी रोकने और सामाजिक तिरष्कार (बयकट) की जो घटनाएँ दिखाई देती है, उनमें बैसवाड़ी जीवन का सत्य तो है ही साथ ही इनमें निराला के अस्तित्व संघर्ष का भी सुविन्यास है। निराला का विद्रोही व्यक्तित्व इन्हीं परिस्थितियों की देन है। लघुमानवों (जैसे कुल्ली, चतुरी, बिल्लेसुर आदि) के प्रति अनुराग वस्तुतः बैसावड़े के सामन्तों की प्रतिक्रिया का परिणाम है। इस आँचलिक अव्यवस्था के प्रति उत्पन्न होने वाला उनका क्षोभ या आक्रोश अनन्तर हास्य, व्यंग, यथार्थ और विद्रोह रूप में परिणत हुआ है। वे अनेक स्थलों पर इस सामन्ती शासन से असहिष्णु होकर क्रांति का आह्वान करते हैं, जैसे–

"अमीरों की हवेली किसानों की होगी पाठशाला

धोवी, पासी, चमार, तेली...।" (बेला–60)

लेखक ने प्रजावर्ग (परक्षा) अर्थात्–डोम, बाजेदार, पासी, काछी, चमार, छोध, धोबी, तेली, गोड़इत आदि की स्थिति का यथार्थ चित्र खींचा है और हास्य रस का परिपाक भी किया है। लेखक को इनमें नायकत्व से अधि ाक षोदन दिखता है (द्रष्टव्य कुल्लीभाट की भूमिका) दूसरी ओर इनके जीवन में 'रस की गंगा जमुना' बहती दिखाई देती है (द्रष्टव्य बिल्लेसुर बकरिहा पृष्ठ....)। निराला में कोर–संवेदना और करुणा की जो अनुभूति (यथा भिक्षुक, वि ाावा आदि कविताओं में) दिखाई देती है, उसका उत्स इसी अँचल में है। वे इन दीन–दुःखियों के प्रति प्रायः सहानुभूति दिखाते हैं, जैसे–

'आग तापकर पार कर रहे हैं गृह जीवन...।

• जमींदार की बनी महाजन घनी हुए हैं...।' (देवी सरस्वती)

'बीनती है, कांडती हैं, कूटती है, पीसती है।

उंगलियों के सोले अपने रूखे हाथों मीसती हैं।' (नए पत्ते–15)

'कुटौनी–पिसौनी' करना और 'सीला' (बिखरा अन्न) बीनकर मीसना बैसवाड़े में दुःखा दारिद्रय की अति का परिचायक माना जाता है। लेखक ने इन सबका चित्र खींचकर वहाँ का आर्थिक स्तर प्रकट किया है।

इस प्रकार की लोकभाषा निराला के काव्यों में सहजोपलब्ध है। इसका एक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य है और यह निराला की भाषिक संरचना में एक नए आयाम की उभायक है। आगे चलकर यही भाषा नई कविता का मानक बनी है।

निष्कर्ष यह है कि काव्य भाषा के छह रूप निराला के काव्य में उपलब्ध हैं–

1. तत्सम– परिनिष्ठित एवं सामासिक पद रचना।
2. कोमलकांत पदावली एवं ललित लवंगी भाषा।
3. महाप्राणत्व से ओत–प्रोत, ओजोद्दीप्त सघोष गिरा।
4. जनपदीय, आँचलिक (देखज) भेदस बानी।
5. उर्दवीपन से युक्त शब्दावली।
6. काकु व्यंजना और मुक्तासंग से परिपूर्ण शब्दावली।

इन्हीं भाषिक प्रयोगों के कारण ही निराला का साहित्य वैविध्यपूर्ण बन सका है।

3.11 विभिन्न भाषा शिल्प

निराला जी ने कई प्रकार के भाषिक शिल्प काव्य क्षेत्र में आजमाए हैं। 'तुलसीदास' जीवनीपरक काव्य है। उसे खण्डकाव्य भी कहा गया और लम्बी कविता भी। उसमें कथावस्तु, पात्र, देशकाल, संवाद सब तत्व हैं, किन्तु प्रबंधकाव्य की सर्गबद्धता नहीं है। वह एक प्रवाह में लिखे गए 100 छन्दों की रचना है। निराला ने यहाँ शास्त्रीय औपचारिकता का निर्वाह नहीं किया। बीच में तुलसी के मनः उड्डयन के कारण इसमें फैन्टेसी के तत्व भर गए हैं। निराला ने 'कैलाश में शरत' कविता में पुनः फैन्टेसी की सृष्टि की। 'राम की शक्ति पूजा' के हनुमान के ऊर्ध्वारोहण में फैन्टेसी का प्रयोग किया। यह फैन्टेसी उनका एक विशिष्ट काव्य शिल्प है। लम्बी कविताएँ निराला ने बहुत लिखीं–'राम की शक्ति पूजा', 'सरोज स्मृति', 'कुकुरमुत्ता' तीनों प्रबन्धात्मक हैं। 'बनवेला', 'यमुना के प्रति', 'बादलराग', सहस्राब्दि, शिवाजी का पत्र आदि भाव–विचार प्रधान है। 'जागो फिर एक बार' शृंगारपरक है और ओजपरक भी। उनकी कविताओं में कहीं–कहीं व्यतिरेकी रूप दिखाई देते हैं। एक ओर 'तुलसीदास' की चित्रकूट प्रकृति है और दूसरी ओर ठीक उसके विपरीत 'स्फटिक शिला' की प्रकृति और चित्रकूट यात्रा है। एक ओर सद्यःस्नाता के दिव्य दृश्य, दूसरी ओर 'खजोहरा' की बुआ। उनके प्रगीतों में शास्त्रीय संगीत, लोकधुन, सुगम संगीत आदि का समाहार हुआ है। स्पष्ट है कि भावाभिव्यक्ति की अनेक प्रणालियाँ उनके काव्य में विद्यमान हैं। यह सर्वस्वीकार्य तथ्य हैं कि जितने भाव भाषागत प्रयोग निराला ने आधुनिक हिन्दी–काव्य में दिए हैं, उतनी किसी दूसरी कवि ने नहीं। उनके

काव्य में विषयगत, भावगत और विचारगत विविधता तथा व्यापकता है और भाषा–शैलीगत नवीन प्रयोग भी। ये समस्त प्रयोग निराला की मौलिकत्ता के अर्थवाहक हैं।

निराला की कलागत मौलिकता के कारण ही उनकी काव्य–शैली कवि–व्यक्तित्व के आधार पर अनेक रूपों में विभक्त हुई है। पहले उनकी वह स्वछन्द और विद्रोहिणी शैली व्यक्त हुई है, जो उनके विद्रोही व्यक्तित्व और तद्रूप काव्य–वस्तु का प्रतिनिधित्व करती है। मानव–जीवन की सारी विषमताओं और रूढ़ियों का आपात विनाश करने वाली भाव–चेतना इसी शैली का आश्रय लेकर प्रस्फुटित हुई है। निराला की सौंदर्य–चेतना और दार्शनिक आभा से सम्पन्न उनकी दूसरी शैली को आलोक शैली माना गया है, जिसमें उनके शृंगारिक गीत, प्राकृतिक सौंदर्य छबियाँ, उनकी 'रेखा' और 'स्मृतिचुंबन' जिनमे उनके आत्म विकास की स्मृतियाँ संयोजित हैं– आती है।

निराला की तीसरी शैली वह है, जो उदात्त और विराट् चित्रों का सृजन कर उन्हें महाकाव्योचित उत्कर्ष प्रदान करती है। इसे निराला की पांडित्य शैली भी कह सकते हैं। इस शिल्प–प्रयोग में उन्होंने विशाल चित्र–फलकों पर संलिष्ट और सामाजिक भाषा–प्रयोगों के माध्यम से विराट चित्रों की अवतारणा की है। निराला ने दो अन्य प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है– एक भक्त–कवियों की सी सरल तथा निरलंकृत शैली है। इसे 'ऋजु शैली' भी कहा जा सकता है। दूसरी हास्य, व्यंग्य तथा विनोद–प्रधान शैली है, जिसमें उन्होंने 'कुकुरमुत्ता' और 'नए पत्ते' की रचना की है। निराला के इन शिल्प प्रयोगों की महत्ता एवं सूक्ष्मता को समक्ष रखकर यह कहा जा सकता है कि इतना बड़ा प्रयोक्ता कवि आधुनिक हिन्दी काव्य में अन्यत्र नहीं है।

वस्तुतः निराला जी श्रेष्ठ कलाकार थे। वे काव्य कला के महान साधक तथा जीवन कला के मौलिक विचारक थे। उनकी काव्य–कला का विकास भारतीय अद्वैतवादी परम्परा के आध्यात्मिक धरातल पर हुआ है। उनका कला–दर्शन स्वामी रामकृष्ण तथा विवेकानंद की अद्वैतवादी जीवन–दृष्टि की व्यावहारिकता में पल्लवित एवं विकसित हुआ है। उनकी कलाभिव्यक्ति में वेदांत दर्शन, समाज दर्शन, वैयक्तिक जीवनदर्शन तथा कलादर्शन की समन्वित अभिव्यक्ति हुई है। इसीलिए निराला को छायावादी, प्रगतिशील, प्रयोगधर्मी अर्थात् किसी बोध विधा–विशेष की सीमा में नहीं रखा जा सकता। निराला ने किसी वाद विशेष का आग्रह कभी नहीं किया। उनका एक ही मौलिक आग्रह रहा है– दर्शन, संस्कृति और साहित्य से गहन संबंध। यदि दर्शन को उनके वाद या बोध का आधार मान लिया जाए, तो निराला को भारतीय वेदांत दर्शन का महाकवि कवि कहा जा सकता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि निराला में सीमाओं को अतिक्रांत करने का अपूर्व गुण विद्यमान रहा है। इसके साथ ही उनका एक विशिष्ट जीवन–दर्शन तथा एक निजी कलादर्शन भी रहा है, जो उनके व्यक्तित्व के वैविध्य के बाद भी आद्युत समरस बना रहा।

निराला की भाषा मीमांसा के दो रूप हैं– एक, घोषित काव्यादर्श और दूसरे, उनका अनुप्रयोगात्मक भाषा दर्शन। निराला जी ने अपने निबंधों में साहित्य के प्रयोजन, स्वरूप, हेतु और काव्य रूपों पर काफी लिखा है। 'परिमल' की भूमिका में उन्होंने नई काव्य भाषा, नए छन्दोविधान और अभिनव रस–सिद्धांत की गंभीर विवेचना की है। स्फुट रूप से उनके साहित्य–सिद्धांत उनकी रचनाओं के बीच से खोजे–निकाले जा सकते हैं। निराला जी ने संस्कृत, अंग्रेजी, बंगला, उर्दू आदि भाषाओं के श्रेष्ठ साहित्य का गंभीर अनुशीलन किया था। हिन्दी के प्राचीन और अर्वाचीन साहित्य को उन्होंने भलीभाँति पहचाना था। तुलसीदास उनके आदर्श थे। समकालीन कवियों में उन्होंने प्रसाद जी को पूरे मन से सराहा था। वे बहु अधीत थे और प्राति–चिंतक भी। तथ्य यह है कि निराला जैसे भाषा मीमांसक (कविर्मनीषी) हिन्दी में कम ही हैं।

निराला जी जब छायावृत्ति से परे हो जाते हैं तो प्वरेंलूपन पर उतर आते हैं और भणीति के भदेस होने की चिन्ता नहीं करते फलतः परवर्ती कविताओं में वे 'झाड़पोछ', जांघिय, लांगोटा, पंजालड़ाने आदि की चर्चा करने लगते हैं। अपनी विपर्यस्त चेतना के कारण वे धड़ल्ले से उस प्रकार के प्रयोग कर बैठते हैं–

'अम्मा हैं, बप्पा हैं, झलड़ हैं, गोलगप्पा है,

क्योंकि यहाँ दाना है।' (बेला–46)

"कर दी सीधी खोपड़ी औंधी"(बेला)

"मेरे लल्लू मेरे लल्ला" (कुकुरमुत्ता)

"ताक पर है नमक मिर्चा जब पिसाई सिल में है

हाथ मत डालो निकालो शीघ्र बिच्छू बिल में है" (बेला)

प्रौढ़ कृतियों– अनामिका, परिमल, तुलसीदास आदि में भी यदा कदा भाषा का यह स्खलन दिखायी दे जाता है, यथा–"उधार लाए हैं चले बड़े, जब देखो तब ये अंडे पड़े " (तुलसीदास)

वस्तुतः निराला का सचेतन मस्तिष्क छायावादी भाषा का निर्वाह करता रहा है, पर उनका अवचेतन चूँकि ग्राम्य संस्कारों से प्रेरित रहता था, इसलिए सौंदर्य समाधि के शिफिल हो जाते पर वे भाषा का विरुपण कर बैठते थे। सरोज स्मृति जैसे शोकगीम में इसीलिए चमरौधे जूते का उल्लेख करके और 'दान' कविता में सुन्दर प्रकृतिचित्रण के बीच चन्दरों का वर्णन करके संस्कारवदी गिरा हो च्युत हो जाता है। इसी प्रकार 'देवी सरस्वती' कविता में विराट रूपक रचना करते–करते निराला ग्राम्य जीवन की शब्दावली पर उतर आते हैं। वनबेल कविता में भी उदात्त प्रकृति पर्यवेक्षण के बीच वे हास्य व्यंग्य पूर्ण तथा आत्मरोदन युक्त शब्दावली का जो प्रयोग करते हैं, वह उनके छायाभ्रंश का सूचक है।

तात्पर्य यह है कि उस प्रकार की भाषा से एक ओर भावगत विसंगती को अवसर मिला है ओर दूसरी ओर नई भाषिक क्रांति को भी। निराला जी का 'कुकुरमुत्ता' इसी दृष्टि से एक नया प्रस्थान बन गया है। उन्होंने सगर्व कहा भी है– "उलट दिया अर्थागय बनकर तुफान"

वस्तुतः यह भाषिक विरूपण उनके निरालेपन की उपज है।

बोध प्रश्न–

1. निराला के काव्य में नाद व्यंजना को समझाइए।

____

2. निराला की लोकभा ा को समझाइए।

____

3.12 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

निराला जी समर्थ काव्यभाषा के सृष्टा रहे हैं। भाषा पर उनका गहन अधिकार था, अतः प्रत्येक अनुभूति को तदनुकूल अभिव्यक्ति प्रदान करने में उन्हें यथेष्ट सफलता मिली है। निराला की भाषा में एकरसता न होकर विविधा रूपता प्राप्त होती है, इसीलिए वह आअंत प्रभावोत्पदक प्रतीत होती है। उन्होंने सहज, सुगम भाषा को परीयता दी है, यों कभी–कभी उन्हें यह अनुभव होता था कि भाषा का बहुत सरलीकरण नहीं होना चाहिए। इसी ध्येय से प्रेरित होकर 'सरोज स्मृति' में वे 'उन्नीस' की जगह "ऊनविंश" का प्रयोग करते हैं। इन विभिन्न प्रयोगों के माध्यम से निराला की रचना प्रक्रिया का और उनकी मनः स्थिति का समाज मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया जा सकता है।

3.13 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला के भाषा सौष्ठव को समझाइए।
2. निराला की भाषिक प्रकृति पर प्रकाश डालिए।
3. निराला की भाषा विविधता पर प्रकाश डालिए।
4. निराला के भाषा शिल्प को समझाइए।

3.14 नियत कार्य/गतिविधियाँ

निराला की काव्यभाषा को समझने के लिए निराला के काव्य पर विविध लेखकों एवं समीक्षकों द्वारा लिखी गई पुस्तकों की सहायता ली जा सकती है।

3.15 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

3.15.1 चर्चा के लिए बिन्दु

____

____

____

____

____

____

____

3.15.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

3.16 सन्दर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1. छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन सुकुमार विमल
2. छायावादी काव्य का व्यावहारि सौन्दर्यशास्त्र– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
3. प्रबंध प्रतिभा– निराला
4. प्रबंध प्रद्म– निराला
5. रीतिविज्ञान– डॉ. विद्यानिवास मिश्र

6. छायावाद पुनर्मूल्यांकन–सुमित्रानंदन पंत

7. रवीन्द्र कविता कानन– निराला

8. निराला की काष भाष– डॉ. शिवशंकर सिंह

9. निराला के काव्य बिम्ब और प्रतीक–डॉ. वेदबुल शर्मा

10. निराला और मुक्त छन्द–डॉ.शिवमंगल सिंह

3.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

1: देखिए 3.7

2. देखिए 3.10

म.प्र. भोज मुक्त विश्वविद्यालय, भोपाल

एम. ए. पूर्वार्द्ध : हिन्दी

चतुर्थ प्रश्न–पत्र : विशेष कवि (निराला) का अध्ययन

तृतीय खण्ड :

इकाई–1 **निराला के काव्य में लोक संस्कृति**

इकाई–2 **निराला के काव्य में दार्शनिक चिंतन**

इकाई–3 **निराला के काव्य की प्रासंगिकता**

लेखक

प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित

....

लखनऊ

सम्पादक

प्रो. हरिमोहन बुधौलिया

एम. ए. पूर्वार्द्ध : **हिन्दी**

चतुर्थ प्रश्न–पत्र: **विशेष कवि (निराला) का अध्ययन**

तृतीय खण्ड :

खण्ड परिचय–

इस खण्ड की प्रथम इकाई में निराला के काव्य में लोक संस्कृति का विस्तार से अध्ययन करने को मिलेगा।

इस खण्ड की दूसरी इकाई में निराला के काव्य में दार्शनिक चिन्तन का अध्ययन करने को मिलेगा।

इस खण्ड की तीसरी इकाई में निराला काव्य की प्रासंगिकता का समग्र अध्ययन करने को मिलेगा।

इकाइयों के अन्त में संदर्भ–ग्रन्थों की सूची प्रस्तुत की गई है, जिनका अध्ययन विषयों की विस्तृत विश्लेषण के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

इकाइयों के अंत में संदर्भ ग्रन्थों की सूची भी प्रस्तुत की गई है, जिनका अध्ययन विषयों की विस्तृत, विश्लेषण के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

सभी इकाइयों में बोध प्रश्न दिए गए हैं। अध्ययन के पश्चात बोध प्रश्नों के उत्तरों का इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलान कर सही उत्तर देने का प्रयास कीजिए।

इकाई–एक

निराला के काव्य में लोक संस्कृति

इकाई संरचना –

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 निराला की लोक चेतना

1.4 लोक संस्कृति

1.5 लोकभाषा

1.6 निराला का लोकांचल

1.7 निराला का लोकादर्श

1.8 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

1.9 अपनी प्रगति जाँचिए

1.10 नियत कार्य/गतिविधियाँ

1.11 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

1.11.1 चर्चा के लिए बिन्दु

1.11.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

1.12 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में महाप्राण निराला के साहित्य में वर्णित लोक तत्व का विवेचन अपेक्षित है।

लोक के सामान्यतः छह अर्थ प्रचलित हैं–

(1) भू–लोक अथवा मृर्त्यलोक, जो स्वर्ग लोक और पाताल लोक में विलोम के रूप मे जाना जाता है;

(2) लोक को प्रायः वेद और शास्त्र का विरोधी तत्व माना जाता है शास्त्र है व्यवस्थित विद्या और लोक है अनुभव सिद्ध अर्जित ज्ञान। शास्त्र को कागद की लेखी कहा गया है और लोक को आँखिन देखी अनभै साँच इसीलिए हमारी संस्कृति में लोक और शास्त्र दोनों में पारगंत होने की गई है प्रसिद्ध कथन है–

"लोक वेदे च।" इसी बात को ध्यान में रखते हुए गोस्वामी जी ने लिखा था–

"कहब लो मत वेद मत नृप मत निगम निपौरि तात्पर्य यह है कि शास्त्र एक अनुशासन है और लोक पूंजीभूत सम्पदा। दोनों अन्योन्यश्रित है, साथ ही एक दूसरे से भिन्न भी।

(3) लोक का तीसरा अर्थ है– जन समुदाय। यह अंग्रेजी के "डें" शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। इसे "जन" तथा "जन–जीवन" भी कहा जाता है। जन का बहुअधीत और आभिजात्य पूर्ण होना आवश्यक नहीं है। वह सर्वसाधारण अर्थात् आत आदमी का प्रतिनिधि होता है।

(4) लोक का एक अर्थ सम्प्रति– गणतन्त्र प्रजातन्त्र या लोकतन्त्र अर्थात् 'डेमोक्रेटिक', 'रिपब्लिक' के अर्थ में सीमित हो गया है। यह राजनीति शास्त्र का पारिभाषिक शब्द है।

(5) लोक से एक आशय आदिम व्यवस्था से निकाला जा सकता है, जिसे अंग्रेजी में "थ्वसा" कहा जा सकता है। इसके अन्तर्गत लोक मानस द्वारा विरचित वाङ्मय का लोक अभिप्रायों का आद्य बिम्बों, प्रतीकों और लोक भाषा के विशिष्ट आंचलिक प्रयोगों का अध्ययन किया जाता है।

(6) लोक का एक अर्थ समूह का वाचक है, जिसे हिन्दी में 'लोग' कहा जाता है। यह अखण्ड भी होता है और संयुक्त भी। हमारे यहाँ, यह अपेक्षा की गई है कि व्यक्ति लोक और शास्त्र दोनों में निपुणता प्राप्त कर संस्कृत की प्रसिद्ध उक्ति है–

"अपि शास्त्रेषु कुशलः लोकाचार विवर्जितः।।"

अर्थात् अच्छा शास्त्रज्ञ भी यदि लोकाचार से वंचित रह गया तो जीवन सुखद नहीं रहेगा। यही कारण है कि हमारे संस्कार, रीति–रिवाज, शास्त्र और लोक दोनों से सम्बद्ध है।

1.2 उद्देश्य

निराला साहित्य में लोक तत्वों का मुक्तरूप से उपयोग किया गया है। इसका कारण है कि निराला शास्त्रज्ञ भी थे और लोक जीवन से जुड़े हुए भी थे। उनके पितृ–पितामह का सम्बद्ध बैसवारा लोकाचंल से था। डलमऊ, जिला–रायबरेली और गढ़ाकोला, जिला– उन्नाव में उन्होंने दीर्घकाल तक जीवन–यापन किया और जन–जन के खान–पान, पहनावा, रहन–सहन, संस्कृतिबोध का निकट से अवलोकन किया। उनका जन्म महिषादल, मेदिनीपुर, पश्चिम बंगाल में हुआ था। बीच–बीच में उन्होंने लखनऊ, प्रयाग, वाराणसी, छतरपुर आदि में प्रवास किया। तात्पर्य यह है कि बड़ा गतिशील व्यक्तित्व था निराला का। जीविका की खोज में उन्होंने अनेक क्षेत्रों से सम्पर्क सीमित किया था। इसीलिए लोक की बड़ी व्यापक जानकारी निराला को थी। इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य यह है कि निराला के साहित्य में लोक की जितनी छवियाँ चित्रित हुई हैं, उनसे छात्रों को अवगत कराया जाए।

1.3 निराला की लोक चेतना

निराला साहित्य का लोक तत्व न लोक तांत्रिक व्यवस्था से संबंधित है और न लोक वांङमय से। उन्होंने लोक चेतना का उपयोग जन मानस की सही गतिविधि को चित्रित करने में किया है। निराला के अधिकतर पात्र ग्रामीण व्यवस्था से जुड़े हुए हैं। वे अपने मूल रूप में लघु मानव हैं। इनमें किसान हैं, मजदूर हैं, खेतिहर मजदूर हैं, कुशल श्रमिक हैं और जमीदार, महाजन, अफसर आदि भी हैं। निरला जी ने लघु मानवों को बड़ी निष्ठा के साथ चित्रित किया है। उन्हें बहुत निकट से देखा है। उनके खान–पान, पहनावे, रीति–रिवाज और उनके भाषिक प्रयोगों को रुचिपूर्वक आत्मसात किया है।

निराला जी ने पहली बार अछूत वर्ग की ऐसी अनाथ, तिरष्कृत स्त्रियों को चरित न्यायिका बनाया है जो अपने युक्ति बल से इस जड़ समाज से संघर्ष करती हैं और एक दिन सफलता भी प्राप्त कर लेती हैं। उनकी कथाकृतियों में हिरनी, कमला, ज्योतिर्मयी ख्मेली जैसी कई नारियाँ दिखाई देती हैं, जो विषय से विषय व्यवस्था के समक्ष पराजय न स्वीकार करके अपने पयोचित अस्तित्व के लिए संघर्ष करती रहती हैं। यही स्थिति पुरुष पात्रों की भी है। बिल्लेसुर बकरिहा नायक रेखाचित्र में उन्होंने एक ऐसे व्यक्ति को अपना चरित्र नायक बनाया है, जो निरक्षर है, साधनहीन है, लेकिन हौंसला मंद है। अपनी जीविका की खोज में वह पहले दूर–दूर तक भटकता है। भारी परिश्रम करके कुछ पैसा बचा लाता है और अपने गॉव में बकरी पालन उद्योग शुरू कर देता है। उसका तर्क है कि इस धंधे में न कोई बड़ी लागत होती है और न बड़ा जोखिम बकरियों के दूध और उनके बच्चों से उसकी आमदनी दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जाती है और एक दिन वह सम्पन्न व्यक्ति बन जाता है। निराला जी का निष्कर्ष है कि गॉव के गलियारों में घूमने वाले ये लोग किताबी ज्ञान में तो शून्य हैं, किन्तु जिन्दगी की खुली किताब उन्होंने पढ़ रखी है। निरला कहते हैं, कि हमारे शुकरात के पास जबान न थी, बर्ना उसकी फिलास्फी लचार न थी। निराला जी ने गॉव में रहते हुए गॉव के व्यंजनों, पारंपरिक परिधान, विभिन्न फसलें, भाँति–भाँति के अन्न, पशु–पक्षी, जीव–जन्तु, विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक दृश्य, ग्राम समाज के रीति–रिवाज, लोक विश्वास यानी उनके जीवन, सर्वस्व को बड़ी बारीकी के साथ पहचाना था और पहली–पहली बार सत्साहस जुटाकर उन्हें अपने साहित्य में स्थान दिया था। इन पात्रों में उल्लेखनीय हैं–चतुरी–चमार, कुल्लीभाट, मन्नी, बल्ली, भगत, मँहगू, फीगुर, रामदास आदि।

निराला के पूर्व जन–जीवन के इतने पात्रों को किसी दूसरे साहित्यकार ने इतना महत्व नहीं दिया इन पात्रों का उल्लेख उन्होंने केवल नाम गणना के लिए नहीं किया। तथा यह है कि उनका साहित्य इन सबसे घिरा हुआ है। वे इनके पक्षधर हैं। उदाहरण के लिए चतुरी चमार रुहानी दृष्टव्य है। इसमें गॉव का जमीदार गलत मनमानी करके चतुरी से प्रतिवर्ष दो जोड़ी जूते मुत बनवाता है। चतुरी को संदेह होता है। वह कई दिन तहसील के चक्कर काटता है और एक दिन यह रहस्य खोज निकालता है कि दो जोड़ी जूते देने की व्यवस्था को सरकारी काम–काज में कहीं कोई उल्लेख नहीं है।

निराला ने सरकारी अमला के विरुद्ध आम आदमी को खुला समर्थन दिया है। इसका उदाहरण "डिप्टी साहब आए" नामक कविता से प्राप्त किया जा सकता है।

निराला के समकालीन समाज में वर्ग भेद, छुआ–छूत, खान–पान का भेद–भाव, विशेष प्रकार के वैवाहिक निषेध अर्थात्– भाँति– भाँति की जो वर्तनाएँ प्रचलित थीं, उन सबका निराला ने जमकर विरोध किया है। उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह करते हुए कानकुब्ज समाज की कई रूढ़ियों को तोड़ था। या सुकुल की बीबी "श्रीमती गजानन्द शात्रिणी" आदि कहानियों में भी यह प्रवृत्ति दिखाई देती है। निराला जी को जातीय दमन सहन नहीं होता

था। एक निबंध में वे कहते हैं कि अब वर्ग व्यवस्था रह गई है, न जाति–पाति इस बीच ब्राह्मण की श्रद्ध गर्द, क्षत्रिय का वीर्य गया, वैश्य का व्यापार गया। अब शूद्र शक्ति से भावीयता की किरणें फूटेंगी। ब्रह्मर्षि और राजर्षि की जग अब शूद्रर्षि बनाने की आवश्यकता है। स्पष्ट है कि जड़ सामाजिकता के प्रबल विरोधी रहे हैं।

निराला ने धनाड्य व्यक्ति की तुलना में गरीब का पक्ष ज्यादा लिया है। वे मुनाफाखोरी और पूँजीपतियों को बराबर कोसते हैं। एक जगह वे कहते हैं– जमींदार की बनी महजन धनी हुए हैं। वे इस वर्ग को सलाह देते हैं–"देश में बँट जाय जो पूँजी तुम्हारे दिल में है।" सत्ताधारियों को उन्होंने सुझाव दिया–

"बैंक किसानों का खुलवाओ।

जल्द–से–जल्द चलो कदम बढ़ओ।"

निराला जी का मत रहा है कि धनी व्यक्ति बहुत कमजोर होता है। धन गर्जना के साथ ही वह कॉप उठता है–

"अंतिम भवन में कॉप रहे है धनी बज्र गर्जना से।"

दूसरी ओर खेतिहर मजदूर बादलों को उमड़ते–घुमड़ते देखकर उब्लासित होते हैं–

निराला लिखते हैं– इन स्थितियों में "छोटे ही हैं शोभा पाते।"

अपने सर्वहारा समाज के प्रति निरालाजी के मन में गहरा आत्मीयता बोध था। उनका अवचेतन इस प्रकृति–परिवेश से जुड़ा हुआ था। 'खजोहरा', 'स्फाटिकशिला', 'रखी' और कानी गर्म पकौड़ी आदि कविताओं में उनका यही भाव व्यक्त हुआ है। गर्म पकौड़ी में वे कहते हैं– तेरे लिए छोड़ी मैंने बम्हन की पकाई थी की कचौड़ी।"

इसी प्रकार 'अधिवास' कविता में वे जिस समय दर्शन की ऊँची भूमिका पर पहुँचे हुए थे, उसी समय अकस्मात उन्हें रास्ते में दिख जाता है एक हीन, दुखी, दुर्बल,पीड़ित, प्रताड़ित व्यक्ति। निराला जी दर्शन की भूमिका से नीचे उतरते हैं। दौड़कर उस व्यक्ति को गले लगा लेते हैं। एक मन कहता है कि ऐसा करने से साधना खण्डित हो जाएगी। दूसरा मन उत्तर देता है कि इसकी मुझे कोई चिता नहीं है। "मैंने मैं शैली अपनाई।" दलितों के प्रति यहीं 'कुकुरमुत्ता' नामक कविता और 'निरूपमा' नामक उपन्यास में भी व्यक्त हुआ है कुकुरमुत्ता निम्न वर्ग का प्रतीक है। वह गुलाब तो सम्पन्न वर्ग का प्रतीक धमकी देता है और कहता है कि "तू नहीं मैं ही बड़ी।"

सर्वहारा का यह आत्मविश्वास निराला के साहित्य का सर्वोपरि प्रदेय है। निरूपमा उपन्यास में उनका नायक कुमार विश्वविद्यालय के शिक्षक पद के लिए सबसे सुयोग्य अभ्यार्थी है। क्योंकि वह अंग्रेजी में लन्दन से डी. लिट. की उपाधि प्राप्त एक मात्र व्यक्ति है। किन्तु अधिकारियों के षड़यंत्र वश जब उसकी नियुक्ति नहीं होती है व्यवस्था से संघर्ष करता हुआ वह चारबाग, लखनऊ रेल्वे स्टेशन पर मोची का काम करना शुरू कर देता है, जहाँ उसकी भेंट एक दिन विश्वविश्वद्यालय के उसी निर्णायक से होती है, जिसने उसे "रिजेक्ट" किया था। वह अपने अंग्रेजी वार्तालाप से उसे निरुतर कर देता है, लेकिन स्वाभिमान से समझौता नहीं करता। आखिर युक्तिपूर्वक एक दिन वह जीविका और प्रेमिका के क्षेत्र में अपने प्रतिद्वन्दी को परास्त कर देता है। निराला ने इन पात्रों के प्रति केवल निष्क्रिय सहानुभूति नहीं प्रकट की है, बल्कि उनके जातीय गौरव की संवृद्धि की है।

वस्तु स्थिति यह है कि निराला स्वयं इस वर्ग के साथ भावात्मक रूप से जुड़े रहे हैं। कुछ दिनों अवश्य वे छायावादी कल्पनालोक में विचरते रहे किन्तु अंततः लोक को ही उन्होंने अपना परमप्रतिपाद्य बना लिया। स्पष्ट है कि लोक तत्वों की दृष्टि से निराला का साहित्य सर्वांग सम्पन्न है।

1.4 लोक संस्कृति

'निराला' का 'बैसवारी' व्यक्तित्व निरन्तर अपने अंचल के प्रति लालायित रहा है। वैसवारा अवध प्रदेश का एक अत्यधिक सुसंस्कृत और सम्पन्न भू–भाग है। इसकी अपनी विशिष्ट संस्कृति है और अपना एक पृथक इतिहास भी। भाषा की दृष्टि से भी 'बैसवारी अवधी' कुछ–कुछ मान्यता प्राप्त है। बैसवारे के जीवन, आचार–विचार–व्यवहार, संस्कार, रीति–रिवाज, पर्व त्यौहार आदि भी अपेक्षाकृत विशिष्ट हैं। इसलिए यह एक विशिष्ट सांस्कृतिक लोकांचल के रूप में प्रतिष्ठित है। हिन्दी की आंचलिक कथा कृतियों में यद्यपि अब तक अज्ञात भूमियों और आदिम जन–जातियों को ही अभिव्यक्ति मिलती थी, किन्तु दिनों–दिन अब आंचलिकता का क्षेत्र विस्तृत होता जा रहा है। हिन्दी उपन्यासों में आदिम जीवन के अतिरिक्त देहाती, कस्बाती, शहराती यहाँ तक कि महानगरों के वर्णन में 'आंचलिकता' की अंतर्व्याप्ति हुई है। निराला जी ने लगभग तीन दशक पूर्व बैसवारी आंचलिकता का ऐसा ही प्रयोग किया था। निराला जी बैसवारा प्रदेश के निवासी रहे हैं। बैसवारा उनके पितृ–पितामहों की और स्वयं उनकी जन्म–कर्मभूमि रही है। अतः उसके प्रति आस्था एवं आसक्ति का होना सहज स्वाभाविक था। बैसवारे के जीवन में उन्होंने इस लोकांचल के समस्त गुण–दोषों को भली–भा।ति देखा–परखा था। अतः उसकी स्वानुभूति वर्णना भी उनके लिए सहजोत्पाद्य थी। उन्होंने बैसवारा प्रदेश के अतीत एवं वर्तमान को उसके समस्त श्वेत–श्याम पक्षों के साथ उपस्थित करने का प्रयत्न किया है और उसे आकार बद्ध कर दिया है। इस सम्मूर्तन में या उसकी रंग–रेखाओं में इतना चटकीलापन है कि इससे उक्त लोकांचल सप्राण्ण हो उठा है। आंचलिक कृतियों में अंचल को एकपात्र अथवा प्रमुख पात्र (नायक) के रूप में चित्रित किया जाता है, ताकि उसे एक 'लोकदेव' के रूप में प्रतिष्ठित किया जा सके। निराला जी ने अपने अंचल का मानवीकरण तो नहीं किया और उसे नामकरण के स्तर पर भी सीापित नहीं कियया, पर उसका प्रत्यक्षीकरण अवश्य कराया है। उन्होंने बैसवारी विभाषा द्वारा बैसवारी लोक संस्कृति तथा लोक जीवन को सीानीय रंगों (लोकल कलर्स) द्वारा अनुरंजित करके इस प्रकार रेखांकित किया है कि उसका अवगमन करके कोई भी बहिर्वासी व्यक्ति इस अंचल से तादात्म्य बोध कर सकता है। निराला साहित्य में प्राप्त ये आंचलिक तत्व न तो ग्रामोत्थान योजना के परिणाम है और न परस्थिति सर्जना के कारण हैं। लेखक का अंचल बोध उसे स्वयं में अभिप्रेत रहा है। उन्होंने इस अंचल के इतिहास, भूगोल, रीति–नीति, समाज–व्यवस्था, प्रथा–परम्परा, आचार–विचार, व्यवहार, संस्कार, रहन–सहन, खान–पान, वस्त्राभूषण, लोकोत्सव, पर्व–त्यौहार, लोक–गीत, लोकोक्ति, कृषि उत्पादन, वाणिज्य–व्यवसाय अर्थात् लोकजीवन का सर्वस्व अंकित किया है।

1.5 लोकभाषा

इस उद्देश्य से निराला जी ने लगभग 250 ठेठ देशज शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे रास, लॉक (फसल) ओसाना (हवा देकर भूसा अलग करना), औगी, छोर, (चाबुक), मुस्का (पशु का मुँह बन्द करने की जाली), सीला (बिखरी वालें), छुलहट (पुंश्चली), पॉस (खाद), ओठ (नमी), बॉह (आवृत्ति) दोहर अधारी (झोला), दोहरा (सुपारी कत्था मिक्स्चर), माख (बुरा), गाभिन (गर्भिणी), मिरगी (मृगी–रोग), आगभमूका (कुद्ध), दूभर (कठिन), पटैत (शत्रु) खमसार (खजाना), बिछलहर, (स्खलनपूर्ण), डेहरी (द्वारा–देहली), कड़खा (कटुवाक्य), हमल (गर्भ), गभुआर (नवजात), कौल (स्वीकृति), एवजी (स्थानापन्न), थूथन (निकला हुआ मुँह), लढ़ा (बैलगाड़ी का एक रूप), लकुरियया–कुरियया

(झोपड़ी), कौड़े (उपलों का ढ़ेर), मुस्की (स्मिति), अरधान (सुंगन्ध), लेवारा (भैंसों को तरावट देने वाला शीतल और गंदे जल का गड्ढ़ा), पिलौधा (कुचल जाना, क्षत–विक्षत), मैगहा (सबल रस्सी), कच्चे गुल्लू (महुए के फल), माची (बैलों को जोतने का उपकरण), बद्धी (चमड़े की रज्जु), मुँगरी (पीटने वाली लकड़ी), मूँज (घास विशेष), घिनौची (पेयजल रखने का स्थान विशेष), हरहा (पशु), खरे क्वार (आश्विन), गरियार (कामचोर), नाथ (बैल–भैंस की नाक को छेद कर डाली गई नियन्त्रण्ण की बागडोर), डले (पात्र विशेष), मचिया (आसन विशेष), भगत (चमारों का लोकगीत–अनुष्ठान), गिरह (ग्रन्थि), चोपी (आम के ऊपर का तेजाबी रस), सेंवई (सूजी), जंगर–जंगरा (खलिहान का उच्छिष्ट अन्न–गठुला), रुँधवाए (अवरुद्ध) ठूँठी (पौधे की कड़ी जड़ें), टहल (मजदूरी–धन्धा), गुइयाँ (सखी), सोम (तृतीया), छेदनी पिरकिया (मोची के औजार विशेष), गूला (नोक), झोंझ (घोंसला) आदि। (द्रष्टव्य–कुल्ली भाट, चतुरी चमार, बिल्लेसुर बकरिहा, अणिमा, नए पत्ते बेला आदि कृतियाँ)।

उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में यह मत सीपित किया जा सकता है कि निराला जी मूलतः लोक जीवन के सृष्टा रहे है; उनके साहित्य में प्राप्त प्रयोग व्यंग्य, विद्रोह और वेदान्त को सभी ने सराहा है, पर इन आंचलिक तत्वों की ओर किसी की दृष्टि नहीं गई है; वस्तुतः वेसवारा अंचल ने ही निराला को निराला बनाया है। बैसवारे के सामन्तों में संघर्ष करते हुए वे युग–विद्रोही बने है; वहीं कनौजियों के खान–पान तथा छुआछूत की अतिशय वर्जनाओं की प्रतिक्रिया स्वरूप ही वे व्यवस्था–विरोधी (मूर्ति–भंजक) बने हैं। इनका उपहास करते हुए ही वे यथार्थवादी बने है। उनके साहित्य में लघु मानवों (जैसे–कुल्ली, बिल्लेसुर, चतुरी आदि) का जो नूतन प्रयोग दिखाई देता है, वह इसी अंचल की देन है; प्रयोगों के अतिरिक्त निरालाजी ने अनेक जन परम्पराएँ भी इसी अंचल से ग्रहण की हैं। यही से उन्होंने जन–जीवन की अनुभूतियों का चयन किया है; एकस्थल पर वे स्वीकार करते है कि आत्मा का प्रकाश उन्हें बैसवारे की इन्हीं गलियों में उपलब्ध हुआ है– 'वह प्रकाश दिशा कि मोह दूर हो गया, लेकिन व्यक्ति भेद है। रवि बाबू को आराम कुर्सी पर दिखा, हजरत मूसा को पहाड़ पर मुझे गलियारे में'। (कुल्लीभाट–18)

स्पष्ट है कि निराला जी मूलतः ग्रामवासी या उनकी स्वीकारोक्ति के अनुसार 'ठेठ–देहाती' हैं। (देवी 31) उन्होंने बैसवारा अंचल में प्रयुक्त ठेठ देहाती शब्दों , लोकोक्तियों, लहजों आदि का खुला प्रयोग किया है। किन्तु आश्चर्य ? निराला–साहित्य में मर्मज्ञों में इन शब्दार्थों के प्रति जिज्ञासा तक नहीं व्यक्त की है; निराला के बैसवारी व्यक्तित्व का सम्यक बोध प्राप्त किए बिना निराला साहित्य का अवबोध अधूरा ही रहेगा। निराला का वेदान्त– दर्शन प्रयास साध्य है, पर यह लोकतत्व तो उनकी विरासत है। इसी जन्तजात संस्कारवश उनका प्रारम्भिक तथा अन्तिम साहित्य लोकपरक हो गया है। अपने जीवन के मध्यकाल के भले ही वे उदात्ततत्व अध्यात्म तथा दर्शन पर ऊध्र्वारोहण कर गए हों, पर उसका उत्स लोक जीवन से ही है। आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी की यह उक्ति नितान्त तर्क संगत है कि कोई कवि लोकमानस को छोड़ कर सांस्कृतिक भूमिका पर ही नहीं रह सकता है। (कवि निराला पृष्ठ 184)। इस विचार क्रम में मैं इतना और जोड़ना चाहूँगा कि बिना लोकमानस पर गए, सांस्कृतिक भूमिका प्राप्त ही नहीं हो सकती।

1.6 निराला का लोकांचल

निराला जी ने खण्ड प्रणाली द्वारा बैसवारा लोकांचल का समग्र चित्र अंकित किया है। लोक संस्कृति तथा लोकभाषा के सफल विनियोग के साथ–साथ उन्होंने बैसवारी लहजा और वहाँ के समाज मनोविज्ञान का सर्वत्र प्रत्यक्षीकरण कराया है। ये लोक तत्व खण्डित रूप से (अंशतः) अन्य अंचलों में भी प्राप्त हो सकते हैं, किन्तु समवेत रूप से इनसे जिस अंचल का बोध होता है, वह बैसवारा ही है। बैसवारावासी होने के कारण्ण निराला ने आदि से

अन्त तक उस अंचल के प्रत्येक पक्ष का साक्षत्कार अथवा तादाम्य बोध किया है। निराला साहित्य में उल्लिखित व्यक्तिवाचक, स्थानों व नामों (अभिधानों) की भरमार है। बैसवारे की दृश्य प्रकृति, वहाँ के सीमीय पशु–पक्षी, भोज्य पदार्थ और लोकाचार बड़े वैविध्यपूर्ण हैं। इनका निराला ने यथा प्रसंग व्यापक संकलन किया है। मुल्ला दाऊद, तुलसी और जायसी की तरह उनके भी स्वतंत्र सांस्कृतिक अध्ययन की पूरी संभावना है। इस अध्ययन के फलस्वरूप निराला साहित्य के एक नितान्त अछूते पक्ष को प्रोद्भासित किया जा सकता है और यह भी सीपित किया जा सकता है कि निराला के व्यक्तित्व के अणु–परमाणु बैसवारे की धरती से ही संगठित हुए हैं। इस अंचल में जो स्वत्व, स्वाभिमान, जुझारूपन, फाकेमस्ती सत्साहस, सामन्ती आभिजात्य और प्रखरता बोध दिखाई देता हे, उसे निरालाजी ने आत्मसात किया था। वस्तुतः यह 'रीजनल करेक्टर' अर्थात् बैसवारी बानक ही प्रकारान्तर से उनके निरालापन में परिणत हुआ है।

1.7 निराला का लोकादर्श

निराला जी की सामाजिक संचेतना में समय–समय पर परिवर्तन होते रहे हैं। गतिशील चिंतन के साथ ऐसा होता ही है। निराला की दलित चेतना में भी इसी कारण यत्किंचित् अंतर्विरोध देखा जा सकता है। उनके वर्ग बोध ा को सही परिप्रक्ष्य में पहचानने के लिए कविता के साथ–साथ उनकी गद्य कृतियों को भी ध्यानपूर्वक देखना होगा। उन्होंने 'समन्वय', 'गतवाला' और 'सुधा' का सम्पादन करते हुए तत्कालीन युगबोध में व्याप्त, वर्णाश्रत व्यवस्था, छुआछूत, दलित क्रांति आदि समस्याओं पर विभिन्न कोणों से विचार किया है; जो सूत्रबद्ध रूप में निम्नवत् प्रस्तुत है।

निराला जी लम्बे अर्से तक रामकृष्ण मिशन से जुड़े रहे। एक साधक और एक दार्शनिक के रूप में स्वामी विवेकानन्द उनके आदर्श रहे हैं। वे भगवान रामकृष्ण परमहंस की 'मानव प्रजा' रूप में उनका बहुशः स्मरण करते हैं। स्वयं को एक जगह वे 'अभिनव विवेकानन्द' भी घोषित करते हैं। निराला का यह वेदान्त दर्शन– अभेद–अद्वैत दर्शन है, जहाँ–धर्म, जाति, वर्ग आदि का कोई भेदभाव नहीं चल सकता। वेदान्त की भूमि पर न कोई अभिजात है और न कोई दलित। वे अपनी एक कविता में रंगभेद और जाति का मुखर विरोध किया है। "सम्राट एडवर्ड अष्टम के प्रति" में वे कहते हैं–

"मानव–मानव से नहीं भिन्न

निश्चय हो श्वेत कृष्ण अथवा वह नहीं क्लिन्न

भेद कर पंक तक निकलता वह मानव को निष्कलंक सरन्न"

इसलिए उन्होंने इस वर्ग को गांधी जी से सहमत होकर न 'हरिजन' कहा, न डॉ. अम्बेडकर से प्रेरित होकर नवबौद्ध का समर्थन किया। उन्होंने कहीं पेरियार, ज्योतिबा आदि का भी उल्लेख नहीं किया। निस्संदेह यह उनकी अपनी मौलिक अवधारणा थी।

वैदान्तिक भावधारा से प्रेरित होकर निराला जी ने जागो फिर एक बार शीर्षक कविता में सबको (जो स्वयं को दीन–हीन मानते हैं) यह प्रबोध दिया है कि आपने को 'दलित' न समझो–

"तुम हो महान, तुम सदा हो महान।

है नश्वर यह दीन भाव, ब्रह्म हो तुम।"

निराला जी सामाजिक प्रगति हेतु यहाँ माल प्रतिस्पर्धा को अनिवार्य मानते हैं। वे मानते हैं कि "योग्य जन जीता है।" जीता के दो अर्थ हैं– जीवित रहना और विजय श्री प्राप्त करना। सफल जीवन–यापन ही उसकी सार्थकता है। उन्होंने इसे पश्चिमी दर्शन से नहीं, गीता–दर्शन से जोड़ा है– "पश्चिम की उक्ति नहीं, गीता है, गीता है।" स्पष्ट है कि वे अद्वैतदर्शन को ही भारतीय जन–जागरण का हेतु और दरिद्र / लक्ष्मी नारायण का सेतु मानते रहें। उनके अनुसार–"जो व्यक्ति इस वेदांत को नहीं मानता, वह भारतीय कहलाने का अधिकारी नहीं है।" ('हमारा समाज', संग्रह–पृष्ठ–77)

इसी भाव से प्रेरित होकर निराला जी ने कबीर, मीर, गालिब, नजीर आदि तक को वेदांती सिद्ध किया है और अपनी कई कविताओं द्वारा इसको ही मानवतावाद का मूलाधार घोषित किया है।

निराला जी के मतानुसार– दीन, दुर्बल, दलित (विवेकानन्द जी के शब्दों में 'दरिद्र नारायण') की सेवा सहायता से बड़ा और कोई, 'मानुष धर्म' नहीं हो सकता। यह सेवा राजनीति प्रेरित नारेबाजी द्वारा कदापि सम्भव नहीं है। यह समस्या मात्र विद्रोही जानाधारण कर लेने से भी हल नहीं होगी। निराला जी का स्पष्ट मत है कि किसी प्रगति के लिए समूची परम्परा पर अकारण प्रहार करते रहना हितकर नहीं होता। हर परम्परा में कुछ–न–कुछ आग्रगामी और प्रतिगामी तत्व अवश्य होते हैं। इसके बीच विवके संगत आनुपातिक आन्विति बिठानी पडत्रती है। निराला के शब्दों में–

"प्राचीन नालियाँ गंदगी से भर गई हैं।"

यह एक कालचक्र है। इस बीच सामाजिक स्वतंत्र्ता के अनेक सुधारक हुए हैं। इससें परम्पराओं का विरोध ा ज्यादा हुआ है। आज सामाजिक परिस्थितियों के बीच जो तूफान उठ रहा है, उससे दिशाओं का निर्णय भले ही हो पर इन विछुब्ध तरंगों से सुधार का पोत आगे नहीं बढ़ पाएगा। (संग्रह–1985)

निराला जी का मत है कि जन जागरण के लिए जरूरी है कि हम जातिगत वैषम्य, आडम्बर प्रियता, वर्णसंकरता और अपने–अपने चारित्रिक पतन पर रोक लगाएं।"

ज्ञातव्य है कि वे वर्ण संकरता के तथा जातिप्रथा के विरोधी है और कर्मगत वर्ग व्यवस्था के अनुयायी हैं। उनके अनुसार वर्णश्रम व्यवस्था सदैव धर्मोपयोगी रहीं है। हाँ विद्येयता दी दृष्टि से देशकालगत विकृतियों का शोध ान हमें जरूर करते रहना चाहिए। उसका सम्पूर्ण अस्वीकार हानिकारक होगा। अतः निराला जी सुझाव देते है कि 'जाति–पॉति तोड़क मण्डल' बनाने की जगह 'जाति–पॉति योजक मण्डल' सीापित किए जाए। ये योजक तथाकथित की संकरता तथा वर्ग विहीनता की जगह वर्ण सामंजस्य कराए। तथा कथित द्विजों को समझाते हुए वे लिखते है कि मात्र जनेऊ का दण्ड धारण करके शामियाने के मण्डप में लँगोटी का स्वॉग रचाना अब श्रेयस्कर नहीं होगा। अनेक अनुसार ब्राह्म्ण क्षत्रिय आदि जातियाँ अब प्रायः शूद्र हो गई है और शूद्रों में इधर नई शक्ति का संचार हुआ है।

इन्हीं शूद्र शक्तियों से यथार्थ भारतीयता की किरणें फूटेंगी। " निराला के शब्दों में पहले सोयी जाति ही सबसे पहले जागेगी।"

वस्तुतः निराला जी बेलूड़मठ, दक्षिणेश्वर के मन्दिर, रामकृष्ण मिशन कलकत्ता में रहते हुए वेदांती जीवन दर्शन से अर्से तक संलग्न रहे थे। प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना के बाद प्रयाग प्रवास के बीच वहाँ के साहित्यकारों ने उन्हें पंत जी की तरह साम्राज्यवाद से जोड़ने की काफी कोशिश की, किन्तु निराला नहीं जुड़े, यह

कहते हुए कि औरों की अपेक्षा वेदान्त के सहारे सर्वहारा को कहीं ज्यादा सेवा की जा सकती है। बस, आवश्यकता है मन,वचन, कर्म की अभेदता की।

निराला जी चूँकि ग्रामवासी थे, जाति से नहीं पर स्वयं दीन दलित तो थे ही, यथार्थ द्रष्टा भी थे, इसलिए वेदांतिक अद्वैतवाद उनका आजमाया हुआ जीवनदर्शन का गया था। इस मतवाद की पृष्ठीूमि में एक भोगा हुआ यथार्थ भी निहित है। 'प्रेमानंद जी महाराज' नामक कविता में निराला जी ने एक घटना का उल्लेख किया है, जिसमें किसी 'पंगत' में बैठे उत्तरी युवक (स्वयं निराला) को अज्ञात कुलशील समझकर बाहर कर दिया जाता है। सूचना मिलने प्रेमानंद जी प्रायश्चित करवाते हैं। शायद यहीं से निराला की प्रतिक्रिया व्यक्त हुई– "ब्राह्मण समाज में ज्यों अछूत मैं रहा आर्जुयदि पार्श्वच्छवि।"

निराला ने अनेक दलित पात्रों को अपनी कृतियों में स्थान दिया है, पर उनकी बेचारगी पर तरसखाते हुए नहीं, बल्कि उनकी किसी विशिष्टता पर रीझ करके। उदाहरणार्थ द्रष्टव्य है– उनकी एक कहानी 'देवी'। इसकी नायिका है एक अनाथ पगली, जो अपनी अवैध संतान पर अगाध वात्सल्य की वृष्टि करती हुई,जाड़े की ठिठुरती रातों में स्वयं भुखमरी तथा शीत पीड़ित होकर अपने नवजात का पालन–पोषण करती रहती है। मातृत्व की इस तपस्या के कारण निराला ने उसे देवत्व की संज्ञा प्रदान की। उनका एक पात्र है 'चतुरी चमार' जो न्यूनतम दो वर्षो तक चलने वाला जूता में माहिर है। पर गाँव कर जमींदार हर छह माह बाद उससे एक जोड़ी जूता मुत में बनवाकर ले जाता है और यह धौंस देता रहता है कि यह व्यवस्था तहसीली रिकार्ड में दर्ज है। चतुरी को इस अभिलेख पर संदेह होता है। वह नरिक्षर कै किन्तु सत्याग्रही भी है। उसे तत्कालीन तहसील के कई चक्कर लगाने पड़ते हैं। आखिर एक दिन रहस्ययोद्‌घाटन वह कर ही लेता है कि ऐसी कोई शर्त करारनामे में दर्ज नहीं है। निराला ने इस पात्र के माध्यम से दलित वर्ग को " उतिष्ठत् जाग्रत" का संदेश दिया है। उनकी कई कहानियों में सामंती उत्पीड़न की ऐसी ही कई मार्मिक घटनाएं चित्रित हुई हैं, किन्तु उनकी पूर्णाहुति करुण में नहीं, प्रायः क्रान्ति में करायी गई है। उनकी एक कहानी है 'श्यामा'। इसमें बुधुवा नामक एक अत्याज मजदूर की इतनी प्रताड़ना गाँव का जमींदार करता है कि वह कई दिनों तक उस प्रहार को झेलता हुआ अन्ततः मर जाता है। उसकी एक मात्र पुत्री श्यामा अनाथ हो जाती है। बुधुवा की इस दशा– दुर्दशा गॉव का एक युवा बंकिम तमाम लांछनों को सहता हुआ उसकी सेवा करता है। उसके निधनोपरांत आर्यसमाजी पद्धति से श्यामा से विवाह करके उसके साथ गॉव का परित्याग कर चला जाता है। निराला जी की एक कहानी है 'परिवर्तन' जिसमें दो राजपरिवारों का सामंती संघर्ष चित्रित किया गया है। बदले की भावना से प्रेरित होकर हदृम रूप से इसमें राजकुमार का विवाह दासी पुत्री से करा दिया जाता है। उद्‌देश्य रहा है– राजकुमारी के छदमाचरण की रक्षा। किन्तु यह राजकुमार असलियत के खुल जाने के बाद भी उस दासी पुत्री का परित्याग नहीं करता। समाज भले ही उसे 'बाईकाट' कर देता है। एक अन्य महत्वपूर्ण कहानी है– 'ज्योर्तिमयी'। इसमें निराला जी ने मुक्ति चातुरी के साथ एक बाल विधवा एवं अन्त्यज कन्या का विवाह मर्का युवक से कराया है। उनकी प्रसिद्ध कहानी 'सुकुल की बीबी' में मुसलमान पुखराज को पुष्कर कुमारी बनाकर सामाजिक मान्यता प्रदान करायी गई है। तात्पर्य यह है कि सवर्ण, अवर्ण का भेद–भाव मिटाने का सुगम मार्ग है अंतर्जातीय विवाह! ठसे निराला ने विधवा विवाह, वेश्या विवाह, हिन्दू–मुस्लिम–विवाह आदि कई रूपों में प्रस्तुत किया है। यह दलित के प्रति उनकी अगाध आत्मीयता अथवा ममता का प्रमाण है।

वस्तुतः निराला जी ने कई बुलन्द अवर्ण पालों की सृष्टि की है। उनके कुछ नारी पात्र तो बहुत ही 'बोल्ड' है। 'अलका' उपन्यास की नायिका उस क्षेत्र के अत्याचारी जमींदार मुरलीधर को गोली मार देती है। शायद हिन्दी कथा साहित्य की पहली बोल्ड नायिका है यह उनके उपन्यास 'काले कारनामे' का एक पात्र मनोहर भी जमींदार

से भिड़ा रहता है। 'चोटी की पकड़' की गुन्ना बा।दी और एजाज अपने साहस तथा युक्ति कौशल से सारी परिस्थिति को पलट देती है। 'चमेली' नामक अपूर्ण उपन्यास की नायिका चमेली अपनी बुलंदगी के बल पर सवर्णों के सारे रहस्यों का भण्डाफोड़ कर डालती है।. 'निरुपमा' का नायक कुमार (जो लंदन का डी.लिट्. है, किन्तु विश्वविद्यालय की सेवा (चयन–प्रक्रिया) में अपेक्षाकृत कम योग्य प्रतिद्वन्द्वी से पराजित हो जाता है। इसकी प्रतिक्रिया में चारबाग स्टेशन पर वह जूता पॉलिश का काम शुरू कर देता है। उसके गाँव का सवर्ण समाज इस तथेक्त मोची परिवार को 'बायकाट ' कर देता है और जमींदार उसकी विधवा मां को बेदखल कर देता है, किन्तु कुमार परास्त नहीं होता। नायिका निरूपमा से उसे शक्ति मिलती है। एक दिन वह यामिनी बाबू को जीविका एवं प्रेमिका दोनों क्षेत्रों में परास्त कर देता है।

लगभग ऐसी ही स्थिति कुल्लीभाट की है। कुल्ली पहले एक लिास भ्रष्ट (बिगड़ा रईस) था, पर गांधी जी से प्रभावित होकर वह स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़ गया। गॉव में उसने हरिजन पाठशाला खोली और सबमें यही विश्वास भरा कि ये भी कश्यप, कणाद, कपिल शंकराचार्य आदि की संतान हैं। इन्हें समानरूप से जीने का अधि ाकार प्राप्त है। कुल्ली ने एक विधवा मुसलमानिन को अपनी सहधर्मिणी बना लिया था। इतनी सारी परम्पराओं के भंजन के बावजूद वह उस क्षेत्र में लोकप्रिय सुधारक बना रहा। निराला ने उसे धर्म निरपेक्षता और अस्तित्व संघर्ष का आदर्श घोषित किया। स्वयं भी इस दिशा में उन्होंने सहभागिता निभायी। कुल्ली के मरणोपरांत गॉव का पुरोहित अंत्योष्टि संस्कार (सपिंडी) के लिए जब तैयार नहीं होता तो स्वयं निराला उसके घर जाकर यह कृत्य सम्पन्न कराते हैं।

निष्कर्ष यह है कि निराला जी ने दलित चेतना के प्रसार हेतु एक युक्ति युक्त विद्रोही पद्धति की ओर संकेत किया है। उन्होंने दलितों का नवाभिषेक किया है।'चतुरी चमार' में उन्होंने निर्गुनिया भगत और कट्टर कबीर पंथी ज्ञानी, गुनी चतुरी को 'उपानह–शास्त्र' का विशेषज्ञ बताते हुए 'चतुर्वेदियों की अपेक्षा संत साहित्य का बेहतर विद्वान घोषित किया है। निराला का यही आग्रह रहा है कि हमें जातीय दम्भ से मुक्त होकर ज्ञान, गुण, आचरण के स्तर पर मनुष्य का आंकलन करना चाहिए।

स्पष्ट है कि निराला जी ने समसामयिक समाज के आर्थिक और जातीय वैषम्य की प्रायः सर्वत्र भर्त्सना की है। एक गीत में वे कहते हैं– 'मानव जहां बैल घोड़ा है...। बैल जुताई–ढुलाई करते हैं। कोतल घोड़ा मात्र दिखावटी होता है। खुब खाता है, खूब सेवा कराता है। बैसवारे में एक कहावत प्रचलित है–" मरि मरि बहैं बैलवा बादो खांय तुरंग।" यह भेद भाव निराला को स्वीकार्य नहीं। उनका दूसरा चर्चित गीत है– " ऊँट बैल का साथ हुआ है" ने इस वैषम्य की निंदा करते हैं। उन्होंने राजे ने रखवाली की' नामक कविता में तर्कपूर्वक यह सिद्ध किया है कि अभिजात वर्ग ने अपनी रक्षा हेतु एक ओर किले बनवाए हैं दूसरी ओर शास्त्र गढ़े हैं। वे केवल आतंक और वैभव के बल पर अपना आधिपत्य बनाए हुए हैं, जो इस सदी में अब सहज सम्भव नहीं है। निराला के पात्र इन समंतों को चुनौती देते हैं। उनका एक पात्र जमींदार के गोड़इत को मार बैठता है। एक पात्र 'झीगुर' जमींदार के कारिन्दों का मुखर विरोध करता है। निराला उसकी अदा पर मुग्ध हो जाते हैं और कविता लिखते हैं–

"झींगुर डट कर बोला। 'कुत्ता भूँकने लगा' कविता में एक कर्जी किसम सूदखोर महाजन के छापे से डरकर अपने झोपड़े में कहीं छिप जात है तो उसका कुत्ता मोर्चा संभालता है। मूँक–मूँक कर वह हमलावरों को भगा देता है। निराला खुश हैं कि उसने बदला ले लिया। इन्हीं के साथ शोषण की दारूण कथा कहने वाली कविता है 'महगू मँहगा रहा' ये चारों कविताएं समकालीन दलित चेतना के चार महत्वपूर्ण आयाम हैं।

निराला ने दलित का विभाजन केवल जन्मना जाति के आधार पर नही किया। जो भी व्यवस्था द्वारा प्राताड़ित, किन्तु संघर्षरत हैं, वे दलित हैं। बिल्लेसुर (सकरिहा) जन्मना ब्राहम्ण है, किन्तु बेरोजगार, भूमिहीन निरक्षर और भुखमरी से त्रस्त यह पात्र अपने युक्ति बल के सहारे गॉव के कर्णधारों को परास्त करता हुआ बकरी पालन जैसे जोखिम भरे, साथ ही लांछनपूर्ण व्यवसाय के सहारे एक दिन समाज का सम्भ्रान्त व्यक्ति बन जाता है। स्वयं निराला अपनी गरीबी से त्रस्त होकर 'चरखे' से जुड़ते हैं और फिर आजीवन कलम की मजदूरी करते है। यही है दलित को ललित बनाने की युक्ति। यों निराला जी प्रत्येक दलित को 'दालित दुखी जन' कहते हैं और महाशक्ति से याचना करते हैं–" दलित जन पर करो करूणा' उनकी यही इच्छा " शिवाजी के पत्र" में व्यक्त हुई है। वे चाहते हैं कि अवर्ण–सवर्ण के बीच " एकीभूत शक्तियों से एक हो परिवार। कैले संवेदना।" वस्तुतः यह एक विशिष्ट कोटि का दलित दर्शन है।

भारतीय दलितों के सर्वांगीण विकास के लिए निराला जी ने कई व्यावहारिक कार्यम्रि प्रस्तावित किए हैं। उन्होंने 'आना रे गंगा के किनारे' 'जल्द–जल्द चलों कदम बढ़ाओं।' 'पथ–पथ पर बेमौत न मर, श्रम कर" सारी सम्पत्ति देश की हो जोर दिया है। इसे ही स्थायी समाधान माना गया है।

टाज से लगभग 6 दशक पूर्व उन्होंने मॉग की थी " बैंक किसानों का खुलवाओं। वे यह देखकर आहत हैं कि " जमींदार को बनी महाजन धनी हुए है। जग के भूतपिशाच धूर्तगण गुनी हुए हैं।" (नए पत्ते–63)

टतएव उन्होंने कामना की थी कि काश! पूँजीपति की मिल में संचित यह सम्पदा देश के विकास कार्यों में लग जाती–

'देश में घट जाए तो पूँजी तुम्हारी मिल में है" (बेला–70)

इस विकास यज्ञ में वे सभी वर्गों का आहवान करते हैं। उनकी प्रसिद्ध पंक्तियॉ हैं–"धोबी, पासी, चमार, सबकी लगेगी पाठशाला। रात के अंधेरे में खोलेगे जमींदार की हपेली का ताला। एक पात्र पढ़ेगें, टाट बिछाओं।"

वे एक जगह सुझाव देते हैं कि जितनी भीख गाँव में त्रतिदिन निकलती है, उससे एक पाठशाला चलाई जा सकती है। वे स्वयं चतुरी के बेटे को पढ़ाते रहे हैं। ज्ञातव्य है कि यहाँ हवेली का उपयोग पाठशाला रूप में करने का सुझाव दिया गया है। यह हृदय–परिवर्तन (गांधीवादी दर्शन) है, न कि मार्क्सवादियों नक्सलियों बामरोक आदि का बलातं कब्जा।

दलितोत्थान के लिए निराला जी ने श्रम को सर्वाधिक महत्व दिया है वे बराबर यही प्रबोध देते रहे कि तुम इस समय काल चक्र में दबे हुए हो, भाग्यवादी हो गए हो और अतय के समर्थक भी। 'तुलसीदास' नामक अपने खण्डकाव्य में निराला 16वीं शताब्दी की भारतीय समाजिक दशा–दुर्दशा का चित्रण करते लिखते है कि मुस्लिम शासकों ने जो जातीय जहर पैदा किया, उससे चातुर्वर्ण व्यवस्था को चतुर्थ स्तम्भ सबसे सुदृढ़ (चरण) शूद्र वर्ग को बेजुबान (पशु मूक भाषा) मान लिया गया। द्विजों ने उन्हें आजन्य अपना 'ग्रास' बनाए रखना का षड्यंत्र था। फलतः यह वर्ग 'हताश्वास' बनकर रह गया अर्थात् प्रहार झेलने का आदी हो गया। जब किसी जाति का स्वत्व छिन जाता है तो उसका सर्वस्व क्षीण हो जाता है। निराला के अनुसार तुलसीदास ने इस वर्ष को बचाने–बढ़ाने का भरसक प्रयत्न किया था। निराला जी ने यथाप्रसंग यह स्थापना की है कि विजेता जाति पराजित पक्ष को शूद्र बना डालती है। इसीलिए "मार मार कर भंगी बनाना" मुहावरा चला है। उनके अनुसार ये शूद्र भूतपूर्व शास्त्र रहे हैं या धर्मतंत्र द्वारा दण्डित अभीयुक्त जो अब क्षम्य है। निराला का गीत है– छोड़ दो जीवन यों न मलो" इस गीत में 'जियो और

जीने दो' का संदेश है निराला कहते है कि " यह भी तुम जैसा ही सुन्दर अर्थात् परिपूर्ण मनुष्य है। इसे अपनी ही डालों पर फलने–फूलने का अवसर दो। वे उत्पीड़न का राज चलाने वाले क्रूर शूर वर्ग को चुनौती देते हैं। उन्हीं के कारण– जीर्णबाहु शीर्ण शरीर (कृषक) चूस लिया है जिसका सार, हाड़मास ही है आधार (बादलसम) आज दलितावस्था में है। निराला ने इनके लिए सामाजिक न्याय की गुहार लगाई है।

महाप्राण निराला की बहुचर्चित कविता है– " वह तोड़ती पत्थर इसमें दलित स्वाभिमान को स्वर दिया गया है। यहाँ एक ऐसी मजदूरिन का चित्रण है, जो जेठ की दुपहरी में खुले आसमां के नीचे, अपने बलिष्ठ हाथों में भारी–भरकम हथौड़ा लिए हुए प्रस्तर शिलाओं (प्रतीकात्मक रूप से जड़ीभूत व्यवस्था) को तोड़ रही है।

'श्याम तन, भर बँधा यौवन,

नत नयन प्रिय कार्यरत मन

गुरू हथौड़ा हाथ करती बार–बार प्रहार।

इस प्रहार के लक्ष्य अट्टालिका प्रकार भी हैं। कवि विस्मित होकर उसे (उसके प्रखेद कणों को) देखता और देखता रह जाता है। वह खुद भी कवि पर एक द्वन्त दृष्टि डालती है। निराला के शब्दों में " देखा मुझे उस दृष्टि से जो मार खा रोयी नहीं।' यही श्रम शक्ति है, यहाँ हताशा नहीं हौसला है। ऐते श्रम देवता को निराला नमन करते हैं।

उनका कवि 'भिच्छुक' को देवता है, तो उसकी दारूण दशा से द्रवित, बल्कि विद्रोहातुर हो उठता है। वह राहन नहीं कर पाता कि फेंकी गई जूठी पत्तल पर एक ओर यह भिच्छुक लपकता है और दूसरी ओर कुत्ते।' निराला फूट पड़ते हैं–

'ठहरो, हमारे हृदय में है अमृत मैं सींच दूँगा।

अभिमन्यु जैसे हो सकोगे तुम।

तुम्हारा दुःख मैं अपने हृदय में खींच लूँगा।''

यह मात्र गावोच्छुवास का अल्पकालिक विस्फोट नहीं है, बल्कि संवेदना का संतत वाहीस्त्राव है। इस अनुभूति की आवृत्ति निराला के काव्यों में अनेक बार– (बारम्बार) हुई है। उनकी एक कविता है 'दान', जिसमें कोई विप्रवर दलित दर्शन की परिणति व्यंग्य में भी हुई है।

प्रातः काल गोमती तट पर मज्जनोपरांत पुण्य संचय हेतु अपने झोले में लाए हुए पुए बंदरों को खिला रहे होते हैं। तभी कोई मरभुखा भिक्षुक उनकी ओर हाथ फेलाता हुआ बढ़ता है। विप्रवर उसे निर्ममता पूर्वक दुत्कार देते है। निराला इस धार्मिकता की भर्त्सना करते हैं। वे एक प्रसंग में मंगलाशा भी व्यक्त करते है। उनके अनुसार समाप्त को शोभाकारक तत्व होंगे ये लघुमानव। 'बादलराग' कविता में वे लिखते हैं– " विप्लव रव में छोटे ही है शोभा पाते।'' संकेत यह है कि जो नव्य सामाजिक क्रांति इन दिनों आई हुई है, उसमें अंततः प्रतिष्ठा इसी सर्वहारा की होगी।

इस संदर्भ में निराला जी ने यंत्र तंत्र अपने निरालेपन का भी परिचय दिया है। उनकी नायिकाएं जहाँ एक ओर छायावादोसित स्वप्न सुन्दरियाँ हैं, दूसरी ओर बाहीण्ठ कद काठी वाली श्रम सुन्दरियाँ भी हैं। निराला जी

का एक गीत है– 'वह किसान की बड़ी बहू की आँखे। इसमें ग्राम्य सौन्दर्य का जीवनचित्र है। उनकी एक चर्चित कविता की कुछ वंक्तियां हैं–

मैं बाहमन का लड़का, उसे प्यार करता हूँ।

वह जाति की कहारिन, मेरे घर की पनहारिन

आती है होते तड़का, मैं उस पर मरता हूँ।

कोयल सी वह काली–काली

चाल नहीं उसकी मतवाली...।

इस कविता में विरुपण का सौन्दर्य है। यथेष्ठ विनोदी वृत्ति है। मनः विक्षेप के भी कुछ संकेत है। यही हल्का–फुल्का विनोदी स्वर " तेरे लिए छोड़ी मैने बम्मन की पकाई घी की कचौड़ी, "ओ गरम पकौड़ी!" में भी सुनाई देता है। इसी विनोद भाव से निराला ने भकुआ–लकुआ, लच्छूनाई, बली कहार, गुन्नी कुम्हार, लोना चमारिन जैसे पात्रों के नामोल्लेब्ध किए हैं। ये पात्र प्रायः दलित वर्ग हैं। निराला ने सबसे पकले और सबसे अधिक इनके सन्दर्भ दिए हैं।

वस्तुतः इन दृश्यों और नामों के पीछे बैसवारी अंचल के स्मृति चित्र हैं। दूसरी ओर कुछ दृश्य उनके बंगाल प्रवास (बंगसमाज) के हैं। उदाहरणार्थ 'कुकरमुत्ता में' अंकित नवाब की उस गंदी बस्ती को लिया जा सकता है, जहाँ कुएँ के आस–पास नालियों में सड़ता हुआ पानी है। मुर्गियों के नुचे हुए पंख हैं, छिले हुए अण्डे हैं, दीवारा पर चिपकाए हुए कण्डे हैं, जहाँ अफ्रीका के आदिम नीग्रो टाइप नवाब के कुछ खदिम हैं। वहां 'एक खासा हिन्दू मुस्लिम खानदान एक जैसे भाग्य से बँधा हुआ पापी पेट के खातिर बसा हुआ है।'

निष्कर्ष यह है कि निराला जी ने लोक को विभिन्न कोणों से देखा–परवा है। वे वर्ण व्यवस्था की विकृतियों से क्षुब्ध रहे हैं। अतिशय संवेदनशील होने के कारण निराला जी कहीं–कहीं औसत से ज्यादा मुखर हो उठे हैं। उन्होंने एक ओर इस विडम्बना को स्वर दिया है और दूसरी ओर इसकी विधेयात्मक अवधारंणा भी प्रस्तुत की है। दलित दशा से द्रवित अन्य रचनाकारों की तुलना में निराला का सर्वोपरि वैशिष्ट्म यही है कि वे केवल कथनी तक ही सीमित नहीं रहे, बल्कि इस चिंतन को उन्होंने अपनी करनी में भी उतारा था। उन्होंने हुआछूत का विरोध करते हुए अपने गढ़ाकोला– बावास को " हाउस ऑफ कामन्स" बना लिया था और इस दिशा में एक नव्य क्रांति की पहल की थी। अस्तु, दलितोपयोगी नव चेतना की दृष्टि से निराला के साहित्य को दिशा दर्शक कहा जा सकता है।

बोध प्रश्न–

1. निराला की लोक चेतना पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।
2. निराला की लोकभा ा पर संक्षिप्त विवेचना कीजिए।
3. निराला का लोकांचल पर प्रकाश डालिए।

1.8 इकाई सार – स्मरण योग्य बातें

इस इकाई में सर्वप्रथम लोक के विभिन्न अर्थ स्पवट किए गए हैं। उसके बाद इकाई के उद्देश्य पर प्रकाश डाला गया है। इस इकाई का एक अध्ययन निराला की लोक चेतना से संबन्धित है। वस्तुतः निराला जी मूलरूप से लोकजीवन के साहित्यकार थे। लघु मानव के प्रति उन्होंने विशेष संवेदना व्यक्त की है। अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करते हुए जिन पात्रों को उन्होंने अपना चरित नायक बनाया है, उनमें प्रमुख हैं– बिल्ले सुर बकरिहा, चतुरीचमार, सुकुल की बीबी, श्रीमती गजानन शस्त्रिणी, डॉ. कुमार आदि। इन पात्रों के माध्यम से उन्होंने लोकजीवन में व्याप्त तत्कालीन जमीनदारों महाजनों, अफसरों और जातीय दम्भ से ग्रस्त रूढ़िवादी व्यक्तियों पर प्रहार किए है। निराला जी चूँकि दरिद्र नारायण के उपासक थे, वेदान्ती अद्वैतवाद के समर्थक थे, इसलिए छुआछूत, पर्क्ष, दहेज और शोषण को वे सहन नहीं कर पाए। वे एक ऐसे लोक का सपना देख रहें थे, जिसमें कोई भेदभाव न हो।

दूसरे अध्याय में निराला की लोक संस्कृति पर विचार किया गया है। उन्होंने बैसवारी लोक जीवन को अपनी रचनाओं में विस्तार पूर्वक अंकित किया है। उसके लिए अपने साहित्य में उन्होंने लगभग 250 देश शब्दों का प्रयोग किया है, जिसे लोक भाषा कहते हैं। इस अध्याय में इन शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं, ताकि निराला जी के लोकमानस को भलीभाँति पहचाना जा सकें।

अंतिम अध्याय में निराला का लोकादर्श स्पष्ट किया गया है। उन्होंने दलित के प्रति विशेष प्रकार की संवेदना व्यक्त की है। ग्रामीण व्यवस्था के प्रति उनके मन में विशेष अनुराग रहा है। वे गाँव की गरीब जनता को प्रेरित करते हैं और व्यवस्था से माँग करते हैं कि सब सुखमय जीवन यापन करें। इस लोक के सौन्दर्य को भी उनके कवि ने उल्लास पूर्वक अंकित किया है। उनके साहित्य में जहाँ लोक जीवन की विडम्बनाएँ चित्रित हुई हैं, वहीं अनेक प्रकार की विधेयात्मक अवधारणाएँ भी।

1.9 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला की लोक चेतना एवं संस्कृति पर विस्तार से विवेचना कीजिए।
2. निराला की लोकभाषा पर समग्रता से विचार कीजिए।
3. निराला के लोकांचल एवं लोकदर्श को विस्तार से समझाइए।

1.10 नियत कार्य/गतिविधियाँ

थ्नराला को समग्रता से समझने और जानने के लिए विविध लेखकों एवं समीक्षकों की पुस्तकों की सहायता भी ली जा सकती है।

1.11 चर्चा तथा स्प टीकरण के बिन्दुः–

निराला को समग्रता से समझने और जानने के लिए विविध लेखकों एवं समीक्षकों की पुस्तकों की सहायता भी ली जा सकती है।

1.11.1 चर्चा के बिंदु

1.11.2 स्पष्टीकरण के बिन्दु

1.12 संदर्भ/ अतिरिक्त पठन सामग्री

1. निराला की साहित्य साधना (तीन खण्ड) डॉ. राम विलासशर्मा
2. निराला – डॉ. राम विलास शर्मा
3. कवि निराला– आचार्य नन्द दुलारे बाजपेई।
4. क्रांतिकारी कवि निराला– डॉ.बच्चन सिंह
5. निराला समग्र – डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित
6. निराला काव्य का अध्ययन– डॉ.भगीरथ मिश्र
7. निराला– व्यक्तित्व–कृतित्व– डॉ. धनंजय वर्मा
8. महाप्राण निराला– गंगा प्रसाद पाण्डेय
9. निराला की आत्मकथ– डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित
10. निराला रचनावली–संपादक डॉ. नन्द किशोर 'नवल'

1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 1.3
2. देखिए 1.5
3. देखिए 1.6

निराला के काव्य में दार्शनिक चिंतन

संरचना–

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 निराला काव्य की प्रवृत्तिपरक समीक्षा

2.4 निराला का दार्शनिक चिंतन

2.5 निष्कर्ष

2.6 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

2.7 अपनी प्रगति जाँचिए

2.8 नियत कार्य/गतिविधियाँ

2.9 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

2.9.1 चर्चा के लिए बिन्दु

2.9.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

2.10 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.1 प्रस्तावना

महाकवि निराला मूल रूप से अद्वैत वेदान्त से जुड़े हुए एक दार्शनिक कवि थे। एक स्थान पर वे स्वयं आत्म गर्वोक्ति करते हुए कहते हैं– "मैं एक कवि, एक पहुँचा दार्शनिक, जिसके आगे कोई और नहीं, जिससे ज्यादा और बन नहीं पड़ता।" ज्ञातव्य है, कि निराला ने श्रीराम कृष्ण आश्रम में रहते हुए, 'समन्वय' नामक पत्र का संपादन करते हुए, बैलूड़मठ, के संन्यासियों के साथ राजयोगदर्शन का गंभीर चिन्तन् मनन और अभ्यास किया था। वे स्वयं को रामकृष्ण का प्रजा पुत्र और अभिनव विवेकानंद मानते थे। बंगाल में रहते हुए शाक्त साधना और बैसबारे में रहते हुए सगुणोपासना, दोनों में उन्होंने अपनी गति–मति और रति प्रदर्शित की।

निराला की दार्शनिक विचारधारा के कई पक्ष हैं, जैसे–

1. साम्प्रदायिक दर्शन 2. प्रेमाभक्ति, 3. सौन्दर्य दर्शन, 4. समाज दर्शन, 5. कलादर्शन।

इस दर्शन–दिग्दर्शन के माध्यम से निराला के काव्य में व्यक्त युग बोध, संस्कृति बोध, प्रेम सौन्दर्य, भक्तिभा और काव्यकला दर्शन को प्रामाणिक रूप रूप से समझा जा सकता है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है, निराला की वैचारिक पृष्ठभूमि का पाठकेन्द्रित विवेचन करना। इसमें सर्वप्रथ निराला काव्य की प्रवृत्ति–परक समीक्षा की गयी है। यह ज्ञातव्य है कि निराला जी छायावाद, प्रगतिवाद औ प्रयोगवाद तीनों से जुड़े हुए रहे हैं। तीनों काव्यांदोलनों की दार्शनिक विचारधाराओं से उनका घनिष्ठ संबंध रह है। इसका समाहार करते हुए उन्होंने जो आत्म दर्शन स्थापित किया है, उसे उजागर करना ही इस इकाई का प्रमुख प्रयोजन है।

2.3 निराला काव्य की प्रव त्तिपरक समीक्षा

1. छायावादी कवि निराला

छायावाद का जन्म हुआ ही था कि चारों ओर से उस पर तरह–तरह के लांछन लगाये जाने लगे। इत विरोध और इतनी कटु आलोचना का सामना शायद ही किसी साहित्य के किसी युग को करना पड़ा हो। अस्पष्टत अनैतिकता, स्त्रैणता आदि के अनगिनत आरोपों से यह काव्य आक्रान्त रहा। पाठकों, समीक्षकों, शोधार्थियों ए विद्वत्जनों ने अपने–अपने अनुसार 'छायावाद और निराला' की समीक्षा की। छायावाद विषयक विरोध का सर्वा ाक प्रहार निराला ने झेला।

आरंभिक आलोचनाओं में छायावाद को रहस्यवाद तथा अध्यात्मवाद माना गया। साथ ही यह भी कह गया कि यह नवयुग की परिवर्तित परिस्थितियों से उद्बुद्ध एक क्रान्ति है। छायावाद के संबंध में प्राचीनत आलोचना–सामग्री जो आज उपलब्ध है, वह है पं. मुकुटधर पाण्डेय के लेख, जो सन् 1920ई. की 'श्री शारदा' तथा सन् 1921 ई. के 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुए थे। इस काव्यधारा के संबंध में पाण्डेय जी ने लिखा था–

"यह तो किसी से छिपा नहीं कि यह बीसवी शताब्दी स्वतंत्रता और नवीनता का युग है। नये–नये विचा ने आज पृथ्वी पर एक बड़ा भारी परिवर्तन खड़ाकर कर दिया है। ....क्रान्तियों का जोर पूर्व की अपेक्षा पश्चि में ही अधिक है। पूर्व में जो कुछ हो रहा है, उसे पश्चिमी–क्रान्तियों का असर समझना चाहिए। ....इस प्रका की नवीनता– पूर्ण क्रान्तियॉ पश्चिमीय सभ्यता के ही परिणाम है, यह नहीं कहा जा सकता। नवीनता स्वाधीनचेत मनीषी मात्र का ध्येय है। हमारे प्राचीन आचार्यो ने प्रतिभा का यह लक्षण ही निर्धारित किया है कि वह प्राचीन पद्धति को छोड़कर नवीन मार्ग ग्रहण करती है। 'प्रज्ञावनवोन्मेषशालिनी–प्रतिभामता।'............ साहित्य में इस समय जो–ज क्रान्तियॉ हो रही हैं, उनमें छायावाद भी एक है।"

पाण्डेय जी के अनुसार छायावाद का नूतन–भाव, अभिव्यंजन एवं नूतन छंद–विधान सब कुछ नवीन था इस छायावादी भावबोध को नवीन परिस्थितियों से उद्भूत न मानकर सन् मई 1927 की 'सरस्वती पत्रिका' में आचा महावीर प्रसाद द्विवेदी ने छायावाद को रवीन्द्रनाथ की कविताओं का अनुकरण मानते हुए, भविष्यवाणी की–

"यदि ये लोग रवीन्द्रनाथ की ही तरह सिद्ध हो जायें, तो कहना पड़ेगा कि किसी दिन "विन्द्वयस्तरेत्सागर

छायावाद पर तरह–तरह के वैचारिक आरोपों के अतिरिक्त व्यक्तिगत आक्षेप भी किये गये। छायावाद वि

ी आलोचनाओं का प्रारंभ उसके शैशव काल में ही हो चुका था। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने लिखा था–

"व्यास, कालिदास के होते हुए तथा सूर, तुलसी के अमर काव्यों के होते हुए भी ये कवियशोलिप्सु, कवित्वहन्ता, छायावाद के छोकड़े कमल–यमल, अरविन्द–मिलिन्द आदि अनोखे–अनोखे उपनामों की लांगूल लगा, कॉमा–फुलस्टॉपों से जर्जरित, चिन्हों के तीरों से मर्माहत, कभी–गज–गज की लम्बी, कभी दो दो उगलियों की टेढ़ी–मेढ़ी, ऊँची–नीची, गति हीन, छन्दहीन वाली सतरों की चीटियों की टोलियॉ तथा अस्पृश्य काव्य के कच्चे घरौंदे बना, ताम्र–पत्र, भोज–पत्र को छोड़ बहुमूल्य कागज पर मनोहर टाइप के अनोखे–अनोखे चित्रों की सजधज तथा उत्सव के साथ छपवाकर जो विध्यस्तरेत्सागरम् की चेष्टा कर रहें है, वह सरासर उनकी हिमाकत, घृष्टता, अहम्यन्यता, 'हम चुनी दीवारे नेस्त' के सिवा और क्या हो सकता है।"

इस कविता को छायावाद नाम जिस किसी ने दिया, उसका उद्देश्य था छायावाद का उपहास करना। इसीलिए निरंतर व्यंग्य विरोधों से छायावाद के विरुद्ध कुरुचिपूर्ण आलोचनाओं की काफ़ी सामग्री एकत्रित हो गई थी।

सन् 1930 में 'सुधा' पत्रिका में श्री जगन्नाथ चतुर्वेदी ने छायावाद की पैरोडी अपनी इन पंक्तियों के साथ प्रकाशित की –

"मत पीछे पड़ो बंगाली कवियों के तुम

कवि सम्राट हो या बाप हो सम्राटों कें"

उपर्युक्त आलोचकों की भॉति आचार्य रामचन्द्र 'शुक्ल' ने भी छायावाद की आलोचना की। शुक्ल जी काव्य को लोकमंगल के लिए मानते थे, जबकि छायावाद उनके अनुसार वैयक्तित्क था। उसका क्षेत्र रहा गीति काव्य जबकि प्रबंध–काव्य शुक्ल जी की दृष्टि में, गीति काव्य से बढ़कर था।

छायावाद पर पड़े विदेशी प्रभाव को देखकर 1998 ई. में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा–

"छायावाद की कविता की पहली दौड़ तो बंग भाषा की रहस्यात्मक कविताओं के सजीले और कोमल मार्ग पर हुई। पर इन कविताओं की बहुत कुछ गतिविधि अंग्रेजी काव्य–खण्डों के अनुवाद द्वारा संगठित देख, अंग्रेजी काव्यों से परिचित हिन्दी कवि सीधे अंग्रेजी से ही तरह–तरह के लाक्षणिक प्रयोग लेकर उनके ज्यों के त्यों अनुवाद जगह–जगह अपनी रचनाओं में जड़ने लगे। 'कनक प्रभात', 'स्वर्ण–समय', 'प्रथम मधुबाल', 'तारिकाओं की तान', 'स्वप्निल क्रॉन्ति' ऐसे प्रयोग अजायबघर के जानवरों की तरह उनकी रचनाओं में इधर–उधर मिलने लगें।"

आचार्य शुक्ल जी खोजी किस्म के समीक्षक थे। उन्होंने अर्से तक छायावाद का चिन्तन मंथन किया और अन्ततः स्वीकार भी कर लिया कि :–

"अब कई छायावादी कवि संकीर्णता से बाहर निकलकर जगत और जीवन के मार्मिक पक्षों की ओर भी बढ़ते दिखाई दे रहे हैं।.......... स्वर्गीय प्रसाद जी तो अधिकतर चिर–वेदना के नाम सजीले शब्द पथ निकालने तथा लौकिक और आलौकिक प्रणय का मधुगान ही करते रहे, पर इधर.......। निराला जी का क्षेत्र तो पहले से ही विस्तृत था। उन्होंने जिस प्रकार 'तुम और मैं' में रहस्यवाद का गान किया, 'जुही की कली' और शेफालिका' में उन्मद प्रणय चेष्ठाओं के चित्र खडे किये, उसी प्रकार 'जागरण' 'वीणा बजाई'। इस जगत के बीच 'विधवा' की विधुर और करुण भूमि खडी की और इधर आकर 'इलाहाबाद के पथ पर' एक पत्थर तोड़ती दीन स्त्री के माथे पर श्रम–सीकर

दिखाये। सारांशतः अब शैली के वैलक्षण्य द्वारा प्रतिक्रिया प्रदर्शन का बेग कम हो जाने से अर्थभूमि के रमणीय प्र के चिन्ह भी छायावादी कहे जाने वाले कवियों की रचनाओं में दिखाई पड़ रहे हैं।"

इसकी पुष्टि की डॉ. रामविलास शर्मा ने, छायावादी काव्य के यथार्थ और प्रगतिशील पक्ष को स्वीकार क हुए सन् 1947 में। उनके शब्दों में–

"छायावाद ने रीतिकालीन परम्परा से हिन्दी काव्य को मुक्त किया। प्रकृति–प्रेम, विश्व–बंधुत्व, नारी सम्मान की प्रतिष्ठा, अतीत के गर्व और सामन्ती रूढ़ियों के विरूद्ध व्यक्ति के गौरव की घोषणा–यह छायावाद सबल पक्ष है।"

इसके विपरीत डॉ. बच्चन सिंह ने छायावाद के बारे में लिखा है कि यह काव्य मूलतः व्यक्तिवादी है

"छायावाद उद्दाम व्यक्तिवाद को लेकर अवतरित हुआ था, लेकिन वह विचार और स्वप्न की कुह प्रक्रिया में उलझ गया। छायावाद की सीमाएँ भी व्यक्तिवाद की देन है।

दूसरी ओर कई अन्य समीक्षकों ने यह स्वीकार किया कि छायावाद की बहुविध देन है–

"छायावाद के भावबेग ने छन्दों के साथ ही कविता के रूप में भी काफी परिवर्तन किये। उसने प्राचीन का रूपों में भिन्न 'गीत', 'प्रगीत', और 'वनबेला', 'राम की शक्ति–पूजा', 'सरोज–स्मृति', 'तुलसीदास', 'परिवर्तन' जै लम्बी कविताएँ भी दी है।"

छायावाद के सर्वश्रेष्ठ समीक्षक सिद्ध हुए आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी। उन्होंने प्रसाद और निराला विशद विवेचन किया। बाजपेयी जी निराला के संबंध में लिखते हैं कि उनका काव्य लोक सांस्कृतिक चेतना उपज है, अत्यंत गूढ़ है और अति सहज है।

"दार्शनिक सीमा में आबद्ध न होने के कारण निराला का काव्य अपेक्षाकृत अधिक स्वच्छन्द है। आध्यात्मि दर्शन को सिद्धान्त रूप में स्वीकार न करने के कारण वे स्वच्छन्दतावादी हैं।"

निराला के लिए यह जीव–जगत मिथ्या है। इनकी इकाई वही "शाश्वत ज्योति" है, जो उनकी कवि और उनके दार्शनिक, सामाजिक, कलात्मक विचारों के मेल में है। यह मेटाफिजिकल दृष्टिकोण निराला जी छायावाद का आधार हैं"

जिन समीक्षकों ने छायावाद को अपना आदर्श नहीं माना, उन्होंने भी निराला को सराहा। उदाहरण निराला जी की काव्य कृतियों के संबंध में सन् 1965 ई. में 'रामधारी सिंह 'दिनकर' जी ने अपने निबंध' 'शक्ति, क्रां और सीमा' शीर्षक के अंतर्गत लिखा–

"जब हम छायावादी युग की कृतियों पर विचार करते है, तब प्रत्येक बार 'राम की शक्ति–पूजा' हमारे सा आती है और इसमें कोई संदेह नहीं कि संपूर्ण छायावाद युग की श्रेष्ठतम कृति के रूप में इस रचना का उल्ले अत्यन्त समीचीन है। किन्तु छायावाद युग में छायावाद के अग्रणी कवि द्वारा विरचित होने पर भी यह कवि छायावाद की कृति नहीं है। इसी प्रकार छायावाद युगीन जो भी कविताएँ उस काल की सफल कृतियों के में समादृत चली आ रही है, उसमें निराला जी की 'सरोज–स्मृति', 'मैं अकेला', 'शिवाजी का पत्र' आदि हैं, नहीं उस समय भावुकता के अन्धे–तूफान में जो असंख्य कविताएँ लिखी गई, उनमें बहुत ही थोड़ी रचनाएँ आज जी

कहीं जा सकती हैं।"

इस प्रकार कालक्रम में यह स्थापित हो गया कि निराला छायावाद के प्रमुख स्तम्भों में से एक हैं और छायावाद के चार स्तम्भों–प्रसाद, निराला, पंत व महादेवी के मध्य निराला का गौरवपूर्ण स्थान है।

सन् 1969 में श्री गंगाप्रसाद पाण्डेय ने तो यहॉ तक कहा कि छायावाद का नामकरण निराला ने ही किया था। उनके शब्दो में–

" 'जुही की कली' के प्रकाशन के साथ–साथ इस युग का नामकरण–'छायावाद'–भी निराला ने ही किया है। उनमें किसी सयाने साहित्यिक मित्र ने पूछा कि उनकी यह कविता किस बाद के अंतर्गत आयेगी? निराला ने यों ही मजाक में कह दिया कि यह छायावाद है, क्योंकि नाटक–नायिका की छाया यहॉ पर पवन और कली की रूपरेखा में स्पष्ट हुई हैं। तब से इस भावधारा का नाम छायावाद पड़ गया। कवि के शब्दों का ऐसा महत्व होना स्वाभाविक और सहज होता है।"

निराला की एक विशिष्टता हैं– प्रगाढ़ रांगचेतना। 'जुही की कली' में प्रथमबार निराला जी ने श्रृंगार भावना का भी उन्नयन किया। उन्होंने काव्य की एक ओर द्विवेदी कालीन बोझिल नैतिकता की घुटन से निकाल कर उन्मुक्त स्वच्छ वायु मण्डल में स्थापित किया। दूसरी ओर रूढ़िगत रीतिकालीन सस्ती, और संकुचित श्रृंगारिकता से उसे उबार लिया।

सन् 1875ई.मे. डॉ. इन्द्रनाथ मदान ने 'जुही की कली' में व्यंजित प्रणय व्यापार और कवि की उन्मुक्त कल्पना की सराहना करते हुए कहा–

"इसमें श्रृंगार की अभिव्यक्ति रीतिकालीन न होकर छायावादी है, कृत्रिम न होकर स्वाभाविक है, नागरिक न होकर वन्य है, आबद्ध न होकर मुक्त है, जड़ न होकर सजीव है, वासनामय न होकर आनन्दमय है।"

छायावाद का पहला तत्व वैयक्तिकता अर्थात् समाज चित्रण की अपेक्षा अपनी ही व्यक्तिगत भावनाओं का प्रमुख रूप से चित्रण माना गया है। किन्तु निराला की कृति 'परिमल' इसका अपवाद है। उसमें लोकोन्मुखी चिन्तन अपेक्षाकृत अधिक है। कई समीक्षकों ने माना है कि सूंपर्ण छायावादी काव्य का प्रतिनिधित्व करने वाली काव्यकृति 'परिमल' निराला काव्य की बहुविध प्रवृत्तियों के साथ अपने युग की सारी प्रवृत्तियों को समेटे हुए है। 'परिमल' की सबसे बड़ी विशेषता है, उसके कवि की उदार दृष्टि और व्यापक जीवन बोध। विविध विषयों से संबंधित कविताएँ कवि की बहुमुखी प्रतिभा की परिचायक हैं। निराला काव्य में पायी जाने वाली दार्शनिकता और आध्यात्मिकता, राष्ट्रीयता, अतीत–स्मृति, दलित एवं पीड़ितों के प्रति सहानुभूति, प्रकृति के प्रति सहज अनुराग, प्रेम और सौन्दर्य चित्रण आदि प्रवृत्तियों के संकेत परिमल की कविताओं में ही मिल जाते हैं। बाद की रचनाओं में भी उनका निरंतर विकास होता दिखाई देता है।"

इस तरह स्पष्ट है कि छायावादी प्रवृत्तियों के अन्तर्गत निराला–काव्य का अपना विशिष्ट स्थान है।

इसे स्वीकारते हुए सन् 1998 ई. में डॉ. बच्चन सिंह 'निराला की कविता' नामक शीर्षक के अंतर्गत लिखते कि :–

"छायावादी कवियों में निराला की भावानुभूति अपेक्षाकृत अधिक व्यापक ओर वस्तुमुखी है। निराला की आत्मवेदना युग की वेदना के साथ लयमान हो गई है। 'मैं शैली' अपनाने के बावजूद दुःखी भाई के दुःख में

संवेदनशील हो उठना उनकी बहुत बड़ी विशेषता है।"

इस तरह छायावाद के प्रवर्तकों में निराला का महत्वपूर्ण स्थान हैं। 'परिमल', अनामिका, 'गीतिका', 'तुलसीदास' निराली जी की छायावादी उत्कृष्ट रचनाओं में से है। निराला जी की सर्वप्रथम रचना 'जुही की कली' (1916 ई.) छायावाद की सबसे पहली कविता मानी गयी है।

निस्संदेह छायावादी काव्य दृष्टि एवं सृष्टि में निराला की मान्यताओं का ऐतिहासिक महत्व है।"

2. प्रगतिशील कवि निराला

छायावाद के गर्भ से सनृ 1930 के आस–पास नवीन सामाजिक चेतना से युक्त जिस साहित्य धारा का जन्म हुआ, उसे सन् 1936 में प्रगतिशील साहित्य अथवा प्रगतिवाद की संज्ञा दी गई। प्रगतिवाद आन्दोलन कोई सर्वथा आयातित चीज नहीं थी। हमारी राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक परिस्थितियों को देखते हुए प्रगतिशील आन्दोलन का उदय होना स्वाभाविक ही था। सन् 1935–36 के लगभग, पिछले युगों की संपूर्ण प्रगतिशील साहित्यिक विरासत को संभालने वाले, प्रगतिवादी युग का आविर्भाव न तो किसी अनहोनी का सूचक है और न किसी ऐसी आकस्मिकता का, जो ऐतिहासिक संदर्भों से कटी, युग की संवेदनाओं से शून्य बलात हिन्दी साहित्य के गले बंध गयी हो अथवा बांध दी गयी हो। युगीन गतिविधियों को देखते हुए, जितनी स्वाभाविक कोई बात हो सकती थी, प्रगतिवाद का आविर्भाव उतना ही स्वाभाविक था।

निराला को रूढ़ अर्थो में प्रगतिवादी कवि मानने की अपेक्षा उन्हें प्रगतिशील कवि मानना ही युक्तिसंगत जान पड़ता हैं। हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद का आविर्भाव 1936 के लगभग माना जाता है, पर निराला ने प्रगतिवादी ढंग की रचनाओं का आरंभ सन् 1918 से किया। सत्य तो यह है कि निराला का प्रगतिशील दृष्टिकोण किसी भी प्रकार की संकीर्ण सीमाओं में बँधकर नहीं रहा। उन पर न तो मार्क्स का प्रभाव है और न क्रान्ति के सिद्धान्तों का वास्तव में निराला जन्मजात विद्रोही थे। सामाजिक वैषम्य से मुक्ति को उन्होंने तत्कालीन समाज की आवश्यकता मानकर ही चित्रित किया है।

दूसरे, गंभीर मानवीय करुणा के कारण निराला की भावधारा क्रमशः क्रान्तिकारी होती चली गई। जीवन की सच्ची स्थिति का वर्णन जिस काव्य में होगा, वह निश्चय ही स्थायित्व और विकास की सब शक्तियाँ रखेगा, वह जीवन चाहे जिसका हो।

निराला की यह प्रगतिशीलता बड़ी विचित्र है। इसका विलक्षण प्रयोग 'कुकुरमुत्ता' में हुआ। इस रचना में बड़ी शक्ति है। जिन भावों का धरती से संबंध है, उनका प्रभाव गहरा पड़ता है। कुछ लोगों की दृष्टि में 'कुकुरमुत्ता' उपेक्षित है, परन्तु कवि की दृष्टि में वह अपेक्षित और महत्वपूर्ण है। इसके बाद की 'अणिमा', 'बेला', 'नये–पत्ते' जैसी सभी कृतियों में कोई न कोई नया परिवर्तन अवश्य मिलेगा; जो निराला की प्रगतिशीलता का परिचायक है।"

निराला की क्रान्तिधर्मी रचनाएं एक ओर जातीय जीवन की मुक्ति की भावना से अनुप्रेरित हैं तो दूसरी ओर विश्व भर के पीड़ित और शोषित मानवों की मुक्ति का भी स्वप्न देखती हैं।

इसे देखते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने घोषित किया–

"निराला–साहित्य में भारतीय क्रान्ति का सामंत विरोधी पक्ष जैसा उभर कर आया है, वैसा प्रेमचन्द के अलावा किसी हिन्दी लेखक की रचनाओं में उभरकर नहीं आया। औसत प्रगतिवादियों और निराला में अंतर यह

है कि अंग्रेजी राज में पूंजीवाद को कोसने वाले कविगण भारत के स्वाधीन होने के बाद पूंजीवाद के पोषक हो गए, जबकि निराला आद्यन्त विद्रोही बने रहे।

इस प्रकार निराला की क्रान्ति नये सृजन से अनुप्राणित होकर मानवीय व्यक्तित्व की स्वतंत्रता एवं संघर्ष की पक्षधरता के साथ नवीन मूल्यों मानों को स्थापित करने की दिशा में पहल करती दिखती है। इसका प्रमाण प्राप्त है, उनके परवर्ती काव्य में।

1943 के लगभग प्रकाशित 'बेला' में निराला का तेवर अधिक प्रगतिवादी और कठोर प्रतीत होता है। सम्पत्ति के राष्ट्रीयकरण की ललक को उभारती 'जल्द–जल्द पैर बढ़ाओं, आओ' जैसी रचनाएँ इसी क्रम की हैं। 'नये पत्ते' में वे दृढ़ मोर्चे बंदी की मुद्रा उभारते हैं और ललकार पर उतरते प्रतीत होते हैं। 'विधवा' की मानवीय करुणा तथा 'भिक्षुक' की दयनीय चिन्ता यहाँ कारगर कार्यवाही में रूपांतरित होने लगती है। यहाँ उनके पौरुष पूर्ण हुंकार का स्वर अधिक तीव्र प्रतीत होता है।

स्पष्ट है कि "निराला जी प्रगतिवादी आन्दोलन के काफी पहले से ही प्रगतिशील थे। उनका 'बादलराग' इस बात का प्रमाण है। समाज, राजनीति और धर्म के क्षेत्र में क्रान्तिकारी भावनाओं का परिचय देने के कारण वे विद्रोही कवि के नाम से प्रसिद्ध हुए हैं। 'विधवा', 'भिक्षुक' और मजदूरनी के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित कर उन्होंने अपने हृदय की अगाध जनसंवेदना का परिचय दिया है। रूढ़ियों पर उन्होंने डटकर प्रहार किया है। छोटे लोगों के दुःख–दर्द को जैसा उन्होंने समझा, वैसा आधुनिक युग में अन्य किसी कवि ने नहीं। 'कुकुरमुत्ता' उनके इस दृष्टिकोण की परिचायक एक सशक्त कृति है। आधुनिक–काव्य में 'कुकुरमुत्ता' भारतीय प्रगतिशीलता की प्रतिनिधि और श्रेष्ठ कृति कही जा सकती है।

यह भी उल्लेखनीय है कि कवि की मानवतावादी विचारधारा का ही एक आयाम इस जनवादी भूमि की सृष्टि करता है। निराला का अधिकांश परवर्ती काव्य जिस भावभूमि पर स्थित है, वहाँ कवि शोषित और दलित मानवता के ही एक अंग के रूप में उसके दुःख–दैन्य, आशा–निराशा, हर्ष–विषाद आदि का चित्रण करता है।

निष्कर्ष यह है कि जिस तरह स्वच्छन्दतावादी काव्यान्दोलन के पुरस्कर्ता निराला बने थे, उसी तरह हिन्दी के प्रगतिवादी आन्दोलन का अप्रत्यक्ष नेतृत्व भी निराला ने किया। ज्ञातव्य है कि 'अनामिका' के प्रकाशित होने (सन् 1937) के दो वर्ष पूर्व प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हो चुकी थी। छायावादी काव्य धारा में एक मोड़ की राह भी देखी जा रही थी। यों तो प्रगतिवादी कही जाने वाली धारा से समता रखने वाली कविताएँ 'परिमल' में मिल जाती हैं, लेकिन उस काल में वह काव्य की प्रतिनिधि धारा नहीं थी।"

निराला जी की अनेक कविताएँ जिनमें सामाजिक व्यंग्य और समाज का यथार्थ चित्रण हुआ है, प्रगतिशील विचारों के परिचायक हैं।

इस तरह कहा जा सकता है कि निराला हिन्दी के प्रगतिशील और प्रगतिवादी कवियों में शीर्ष स्थान के अधिकारी हैं।

3. निराला की प्रयोगवादिता

स्वातंत्र्योत्तर परि स्थितियों में कवियों ने विविध प्रकार के प्रयोगों की राह अपनाई। हिन्दी में इस राह के निर्माण का श्रेय भी युगकवि निराला को ही मिला, क्योंकि उनका विद्रोही व्यक्तित्व अपने कवि के जन्मकाल

से ही नया प्रयोग लेकर आया था। निराला अपनी 'जुही की कली' के साथ 1916 ई. में नये मुक्त छंद, नये शब्द, नयी गतिलय और नये विषय–रूप को लेकर अवतरित हुए थे। अगले 7–8 वर्षों में जब उनकी क्रान्तिकारी रचनाएँ 'मतवाला', सुधा, 'सरोज' और 'माधुरी' जैसी पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं तो हिन्दी जगत में हलचल मच गई। जितना अधिक निराला का विरोध हुआ, उतना अधिक वे तन गये। विरोधों ने उनमें मानसिक संघर्ष, विद्रोह और अहम् को और तीव्र किया। निराला स्वच्छन्द होते चले गये। स्वच्छंदता ही प्रयोगशीलता की जन्मदात्री होती है। इस प्रकार निराला के फक्कड़, मस्तमौला, स्वच्छन्द, बेपरवाह, विद्रोही व्यक्तित्व ने उन्हें प्रयोगशील बना दिया।

निराला ने काव्य–छन्दों की भाँति शास्त्रीय–संगीत के बन्धनों में भी कुछ क्रान्ति लाने का उपक्रम कर उसे स्वच्छन्द एवं गेय बनाने की चेष्टा कीं। उसी को प्रयोगात्मक प्रतिफलन है उनकी 'गीतिका'।

इस पक्ष पर सन् 1938 ई. में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा था–

"जैसे और बातों की, वैसे ही संगीत के अंग्रेजी ढंग की ओर नकल भी पहले–पहल बंगाल में शुरू हुई। इस नये ढंग की ओर निराला जी सबसे अधिक आकर्षित हुए, और अपने गीतों में इन्होंने उसका पूरा जौहर दिखाया। संगीत को काव्य और काव्य को संगीत के अधिक निकट जाने का सबसे अधिक प्रयास निराला जी ने किया।"

गीत और गज़लों में भी निराला ने अनेक प्रयोग किये। "निराला जी की युद्धकालीन कविताएँ" शीर्षक लेख में डॉ. रामविलास शर्मा ने सन् 1947 ई. में लिखा–

"नये प्रयोगों में निराला जी की गजलें भी शामिल हैं। इनका संग्रह 'बेला' नाम से प्रकाशित हुआ है।"

इस प्रकार निराला के काव्य में, चाहे वह संगीत का क्षेत्र हो या फिर गजल की गेयता का, हर क्षेत्र में निराला के अपने प्रयोग होते रहे हैं।

संगीत पूर्ण प्रयोगों से प्रेरित होकर निराला ने नए छन्दों का प्रवर्तन किया।

"निराला के छंद विषयक नवीन प्रयोग 'अणिमा' में मिलते हैं। विजय लक्ष्मी पंडित, महादेवी वर्मा, संत रविदास आदि पर निराला ने अंग्रेजी के सानेट के ढंग की चतुर्दशपदियाँ लिखी हैं।"

छंद की दिशा में नवीन प्रयोगों की दृष्टि से 'बेला' का महत्वपूर्ण स्थान है। वस्तुतः आधुनिक युग के सभी काव्य–आन्दोलन निराला के जीवनकाल में उठे।

"प्रयोगवाद ने आज जिस मुक्त छंद को स्वीकार किया है, वह हिन्दी साहित्य को निराला की विशिष्ट देन है। लेकिन जैसे छायावाद और प्रगतिवाद के आन्दोलनों में निराला ने सीधे भाग लिया, वैसे प्रयोगवाद के आन्दोलन में नहीं। सरल भाषा में गजलों के प्रयोग को हम चाहें तो उनका नया प्रयोग कह सकते हैं।"

अधिकतर विचारक आधुनिक साहित्य में प्रगति और प्रयोग का इतिहास निराला जी के 'कुकुरमुत्ता' और 'नये पत्ते' से आरंभ हुआ मानते हैं।

इन तथ्यों के बावजूद निराला को रूढ़ अर्थों में प्रगतिवादी या प्रयोगवादी कवि समझना युक्तिसंगत न होगा। यहाँ यह स्मरणीय है कि निराला ने 'कुकुरमुत्ता' में तत्कालीन हिन्दी कविता में तथाकथित प्रगतिवादी और 'प्रयोगवादी धाराओं की अव्यवस्था एवं अराजकता के प्रति व्यंग्य किया है। निराला जी ने उन प्रयोगवादियों पर भी व्यंग्य किया है जो टी.एस. इलियट का अनुकरण करके ही अपने तथाकथित प्रयोगों को संसार की नव्यतम वस्तु

मानते हैं–

"कहीं का रोड़ा, कही का लिया पत्थर
टी.एस. इलियट ने जैसे दे मारा
पढ़ने वालों ने जिगर पर हाथ रखकर
कहा वैसा लिख दिया संसार सारा।"

"राम की शक्ति–पूजा जैसी काव्य कृति में जो पदावली आई है, अथवा उनके 'तुलसीदास' में जो आयास साध्य छंद आये हैं, वहीं से निराला की काव्य–कला एक मोड़ लेती प्रतीत होती है और उसके पश्चात् उनकी समस्त काव्य–रचनाओं में विभिन्न प्रकार के प्रयोगों की स्थिति दिखलायी देने लगती हैं। निराला काव्य की प्रयोगशीलता से हमारा आशय उनकी परवर्ती रचनाओं के उस चमत्कार प्रधान पक्ष से है, जिनमें वे भाषा, छंद, काव्य–शिल्प के अनेक सचेत प्रयोग करते दिखते हैं।"

यह भी उल्लेखनीय है कि हिन्दी–काव्य क्षेत्र में 'गजल' निराला जी का एक विशिष्ट प्रयोग है।

प्रयोग की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है, उनका संकलन नये पत्ते।

'नये–पत्ते' की सभी कविताएँ निराला की प्रयोगशील प्रवृत्ति की परिचायक हैं। प्रत्येक कविता अपने आप में एक नया प्रयोग है। विषय और शिल्प की नयी भूमि पर यहाँ निराला ने व्यंग्यात्मक प्रयोग किये है।

इस प्रकार निराला काव्य की प्रयोगशीलता को लेकर समीक्षकों ने अपने–अपने विचार व्यक्त किये। किसी ने छंद–बंध को लेकर लिखा तो किसी ने उनकी गजलों में यथार्थ का चित्रण देखा। किसी ने छोटी से छोटी वस्तु को विषय की सामग्री बनाने पर ध्यान दिलाया, तो किसी ने निराला की काव्य भाषा को खिचड़ी बताकर। पाठकों को उसे न पचा पाने की बात कही।

समग्रतः प्रयोगशीलता निराला–काव्य का प्रमुख लक्षण है। हाँ, निराला जी ने कभी सीमा का अतिक्रमण नहीं किया। उनके प्रयोग प्रतिक्रियावादी नहीं है और न ही निराला जी ने मात्र प्रयोग के लिए प्रयोग किये हैं। नए–पत्ते की अनेक कविताओं में प्रयोगवाद के अतिरिक्त नयी कविता के अभिलक्षण भी देखे जा सकते हैं। ये सब निराला की प्रयोगवादिता की सहज उपज हैं।

निराला की प्रयोगशीलता ने हिन्दी काव्य को एक नई दिशा प्रदान की और अपनी विजय सिद्धि हेतु नये–नये प्रयोगों को अपनाया। उनकी प्रयोगशीलता मुक्त छंद से प्रारंभ होकर प्रयोगों की विविध भाव–भूमियों को उद्घाटित करती रही है। 'बेला' तथा 'नये–पत्ते' की रचनाओं में हास्य और व्यंग्य की बढ़ती हुई प्रवृत्तियों को आकार देने के लिए वे भाषा और शैली ने नये–नये प्रयोगों को अपनाकर चलते हैं। 'कुकुरमुत्ता', 'बेला', 'नये–पत्ते' की कविताओं में कवि की यथार्थपरक दृष्टि का परिचय मिलता है। फारसी के छंद–शास्त्र का निर्वाह करते हुए उन्होंने गजल, खयाल, बहरें तथा रूबाइयाँ लिखी हैं। रचना को सरल व बोधगम्य बनाने के लिए लोकभाषा के प्रचलित शब्दों व मुहावरों को भी खुलकर प्रयुक्त किया है।

इसी प्रकार संप्रति 'गीतगुंज' की रचनाओं को केन्द्र में रखकर निराला को 'नवगीत' से जोड़ने का प्रस्ताव किया जा रहा है। 'गीतगुंज' में गीतों से कई नए प्रयोग दिखायी देते हैं। इन गीतों में लोक भाषा है और लोक की सघन संवेदना भी। निश्चय ही ये रचनाएँ नवगीत के काफी निकट हैं।

तात्पर्य यह कि छायावाद, रहस्यवाद, स्वच्छन्दतावाद, प्रगतिशील धारा, प्रयोगवाद नयी कविता और नवगीत सबसे निराला का संबंध रह है। हिन्दी का कोई जन्मकवि इतनी परस्पर अन्तर्विरोधिनी प्रवृत्तियों से संबंद्ध नहीं दिखा है। यही निराला का निरालापन अथवा सर्वोपरि वैशिष्ट्य है।

2.4 निराला का दार्शनिक चिंतन

निराला वेदांती हैं, प्रेम सौन्दर्य के उद्‌गाता है, युग–विद्रोही हैं, व्यंग्य वेदना के पुरस्कर्ता हैं और जनचेतना के संस्कर्ता हैं। विरूद्धो का इतना सामाजस्य बहुत विरल तथा विलक्षण होता है। यही कारण है कि निराला की सही परख–पहचान अभी तक नहीं हो पायी है। इसीलिए आवश्यकता है–समग्र व्यक्तित्व बोधन की। उनके विभिन्न विकास सोपानों पर समेकित दृष्टि क्षेप आवश्यक है।

निराला जी ने अध्यात्म साधना द्वारा अपने अहं को सोडहं बना लिया था। यही कारण है कि निरंतर जीवन–संघर्ष तथा विरोध के बाद भी वे कभी थके नहीं, वरन् उससे सदैव नई स्फूर्ति तथा शक्ति अर्जित करते रहे। यद्यपि वे संघर्ष करते हुए तथा दुःख के पथ पर अनवतरत चलते–चलते यह भी स्वीकार करते है कि "हो गया व्यर्थ जीवन, मैं रण में गया हार। (वनबेला) तथा" दुःख ही जीवन की कथा रही। (सरोजस्मृति) लेकिन यह कुछ क्षणों की अनुभूति मात्र है, जिसका प्रयोजन हैं पथ की अनन्तता को सामने रखकर निरंतर गतिशील रहने की नियति को स्वीकार करना। इसीलिए 'पराजित' होने पर भी वे अन्याय तथा असत्य का विरोध करने में सक्रिय रहे हैं। यह सक्रियता, विवशता की नहीं, वरन् पौरुषपूर्ण जीवन के रूप में उभरी है। उनके व्यक्तित्व में, उनके व्यक्ति के समान ही अखंड शक्ति का वास था। यही कारण है कि वे अपने व्यक्तित्व के अनुरूप 'पुरुष–काव्य' का सृजन कर सकें। "राम को शक्ति–पूजा", जागो–फिर एक बार" जैसी कविताएँ उनके पौरूष, शौर्य, ओज तथा आत्मशक्ति की परिचायक हैं। वस्तुतः "राम की शक्ति पूजा" में राम के चरित्र के रूप में निराला ने स्वयं अपने व्यक्त्तिव का प्रक्षेप किया है।

"जागों फिर एक बार" कविता में निराला, पुरुषार्थ चतुष्टय पर आस्था का प्रत्यारोपण प्रस्तुत करते हुए कहते है–

योग्य जन जीता है,

पश्चिम की उक्ति नहीं,

गीता है, गीता हैं,

स्मरण करों बार–बार

ब्रह्म हो तुम,

पद–रज–भर भी नहीं, पूरा यह विश्व–भार

जागों फिर एक बार। (परिमड–176)

मानव में इतनी आत्म–शक्ति कौन भर सकता है? कौन मनुष्य को 'ब्रह्म' बना सकता है? निराला के व्यक्तित्व और काव्य, दोनों में यही अपराजेय चेतना दिखायी देती है।

निराला का पुरुषार्थ सामाजिक, साहित्यिक, आध्यात्मिक–सभी दिशाओं की खोज करता है। साहित्यिक पुरुषार्थ के संबंध में उनको अभीष्ट है कि "साहित्य में बहिर्जगज्" संबंधी इतनी बड़ी भावना चाहिए, जिसके प्रसार में केवल मक्का और जेरूसलम ही नहीं, किन्तु संपूर्ण पृथ्वी आ जाये। यदि हद गंगासागर तक रही तो कुछ जनसमूह में मक्के का शिकवा जरूर होगा या बुद्धदेव की तरह वेद–भगवान् के विरोधी घर ही में पैदा होगें। (प्रबन्ध पक्ष–118)

निराला के साहित्य में गीता के कर्मवाद का पुनराख्यान विस्तार से हुआ है, क्योंकि भारतीय संस्कृति में पुरुषार्थ चतुष्टय का आदर्श चरित्र–ग्रन्थ 'गीता' ही है। 'नये पत्ते' की कविता 'चरख चला' कविता में निराला ने श्री कृष्ण के द्वारा इन्द्र का पूजा की जगह गोबर्धन की पूजा करायी तथा मानवों और जीव मात्र को मान दिलाना। इस संदर्भ में निराला ने हल–रूपी अस्त्र धारण करने वाले बलराम की प्रशंसा की–

कृष्ण ने भी जमीन पकडी,

इन्द्र की पूजा की जगह

गोवर्धन को पुजाया ......(नये–पत्ते–38)

निराला की उपर्युक्त कविता का भावार्थ है– "यहाँ तक पहुँचते अभी दुनिया को देर है।" किन्तु पुरुषार्थ के द्वारा वहाँ तक पहुँचना हमारा अभिप्रेत है। तभी मानव–जाति के कल्याण तथा उद्धार का क्षेत्र सुलभ होगा। निराला ने एक अन्य गीत में लिखा–

फिर गीता गीत और गाजे

रथ पर अर्जुन–जैसा राजे (सान्ध्यकाकली)

महाभारत में "अर्जुन" अन्याय तथा अनैतिकता का संहारक है। निराला के अनुसार हमारा समाज अन्याय–अनैतिकता से परिपूर्ण है। निराला ने गुरु गोविंद सिंह के शब्दों में शक्ति का आह्वान किया–

पशु नहीं, वीर तुम,

समर–सुर, कूर नहीं

कालचक्र में हो दबे

आज तुम राजकुँवर – समर–सरताज! 'जागोफिर एक बार' (परिमल–204)

उपर्युक्त कविता के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि निराला "गीता" के पौरुषपूर्ण संदेश का स्मरण दिलाकर, भारतीय जन–जीवन में नव–चेतना, नव–शक्ति का संचार करना चाहते हैं, जिससे अन्याय, असत्य तथा अंधकार से युद्ध करते, हमें विजय प्राप्त हो सकें। यह 'गीता' ही है, जिसके प्रभाव से निराला के विचारों को धरातल प्राप्त होता है।

निराला ने 'गीतिका' के अनेक गीतों की रचना पुरुषार्थ चतुष्टय की आस्था के आधार पर की है, जिनमें भौतिकता तथा आध्यात्मिकता दोनों का समन्वय हुआ है, जैसे–

चक्र के सूक्ष्म छिद्र के पार

बेधना तुझे मीन शर मार

चित्त के जल में चित्र निहार

कर्म का कार्मुक कर में धार

मिलेगी कृष्णा सिद्धि महान्

खोजता कहाँ उसे नादान। (गीतिका–2)

निराला का स्पष्ट अभिप्राय है कि महान् पुरुषार्थ द्वारा ही कृष्णा–सिद्धि प्राप्त हो सकती है, इसीलिए निराला, मानव–जीवन को अग्रसर होने तथा साहस से कार्य लेने के लिए प्रेरित करते हैं। निराला अकर्मण्य जीवन को संघर्ष–सागर में अपनी जीवन–नौका खोल देने की प्रेरणा देते है–

क्यों अकर्मण्य सोचता बैठ

गिनता समर्थ हो व्यर्थ लहर,

आये कितने, ले गये व्यर्थ

बढ़ विषय बड़वानल–जलतर। (गीतिका–57)

और :

'ले शक्ति, शांति तर वह सागर,

तू तूर्ण और हो पूर्ण सफल,

नवी नवोर्मियों के पार उतर। (गीतिका–57)

उपर्युक्त कविता द्वारा निराला जी मानव को अकर्मण्यता की व्यर्थता तथा पुरुषार्थ की सार्थकता (सफलता) का महत्व समझाते हुए संसार–सागर के पार जाने की प्रेरणा प्रदान करते हैं। पार जाना, सार्थकता तथा सफलता प्राप्त करना, कोई स्वप्न–साधना नहीं, वरन् लोक यह जीवन की साधना है।

"गर्जित–जीवन झरना" (गीतिका–105) कविता में निराला जी स्पष्ट रूप से पुरुषार्थ के महत्व को प्रतिपादित करते हैं। "अर्चना" की एक अन्य कविता में निराला मानव को कर्म करने के लिए सचेत करते है–

पथ पर बैमोत न मर

श्रम कर, तू विश्राम न कर। (अर्चना–108)

उपर्युक्त पंक्तियों में पुरुषार्थ चतुष्टय की प्रति निराला की आस्था की उदात्त अभिव्यक्ति हुई है, जिसके श्रवण के साथ ही हमारा पौरुष, संघर्ष–क्षेत्र की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा प्राप्त करता है। "अनामिका" की "मुक्ति" शीर्षक कविता भी इसी प्रयोजन की एक शक्तिशाली एवं प्रेरक व्यंजना है।

निराला में पुरुषार्थ चतुष्टय के प्रति आस्था है। यह पुरुषार्थ अनन्त तथा विराट् है। वही संपूर्ण सृष्टि का कलात्मक सौंदर्य है। "शून्य", जो सृष्टि तथा ब्रह्माण्ड, अणु–परमाणु, अंड–पिंड सभी का सृजनात्मक आधार है,

समस्त सौंदर्य की कला का केन्द्र है। इस शून्य के आधार पर सृष्टि अपने "सृजन" में बांकपन या कला पैदा कर देती है। इसीलिए सृष्टि सभी रूपों में टेढ़ी है। युग, वर्ष, अयन, ऋतु, मास, दिन क्षण आदि अपना–अपना विशिष्ट सौंदर्य रखते हैं। "प्रत्येक व्यक्ति की तिर्थक् दशा ही कला और सौंदर्य है। (प्रबन्ध पक्ष–13)

निराला ने लौकिक तथा अलौकिक, भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों प्रकार के पुरुषार्थी के प्रति अटूट आस्था व्यक्त की है। यथा–

प्राण–संघात के सिंधु के तीर में

गिनता रहूँगा मैं कितने तरंग हैं,

धीर मैं, सभी रण करूंगा तरण। (गीतिका–92)

निष्कर्ष यह कि निराला अपराजेय चेतना और अकुंठ आस्था के कवि हैं।

निराला की वैचारिक अंर्तधारा के संबंध में मतभेद है। कुछ विद्वान उन्हें बामपंथी सिद्ध करना चाहते हैं, कुछ दक्षिणपंथी। वस्तुस्थिति यह है कि वे दलीय मतवाद से ग्रस्त नहीं रहे। उन्होंने विकासशील चिन्तन को स्वर दिया हैं। उनका मूलाधार वेदांत दर्शन रहा है। उसी के परिप्रेक्ष्य में उन्होंने समाज, परिवार, नारी वर्ग, वर्ण–व्यवस्था, अर्थ समस्या, मानवप्रेम, सौन्दर्य, भक्ति, अध्यात्म, दर्शन, राष्ट्रीय संस्कृति, विश्वबोध आदि पर अपने विचार समय–समय पर व्यक्त किए है। इन पक्षों पर मुक्त चिन्तन अपेक्षित हैं –

1. वैदान्तिक विचारधारा

निराला ने अपनी अन्तर्धारा के संबंध में दो विशिष्ट राजनीतिज्ञों– गांधी तथा नेहरू– से भेंट की थी। गांधी से हिन्दी–साहित्य की चर्चा करते हुए उन्होंने वैचारिक अन्तर्धारा की बात की थी। उनके शब्दों में–

"जो कथाएँ पुराणों में आयी हैं, उनके स्थूल रूप में सूक्ष्मतम तत्व भी हैं। वास्तव में वेदों का सत्य, पुराणों में कथाओं–द्वारा विभक्त हुआ है। यहाँ के लोग कथा को ही ऐतिहासिक सत्य की तरह मानते हैं। हिन्दी में इन तत्वों के परिष्करण की भी चेष्टा की गयी है। साथ–साथ नये–नये रूप, नये–नये छंद और नये–नये भाव भी दिये गये हैं। साधारण–जन तो इनसे दूर हैं ही, संपादक और साहित्यिक भी अधिक संख्या में, इनसे अज्ञ हैं। वे समझते की कोशिश भी नहीं करते, उल्टे मुखालफत करते हैं। हम लोगों के भाव इसीलिए–प्रचलित नहीं हो पाये। देश की स्वतंत्रता के लिए पहले विचार की स्वंतत्रता जरूरी हैं। (प्रबंधप्रतिमा)

'नेहरू जी से दो बातें करते हुए भी निराला ने अपनी वैचारिक अन्तर्धारा का उल्लेख निम्नलिखित शब्दों में किया–

"यहाँ के ऐतिहासिक विवर्तन देखने पर मालूम होता है कि यहाँ के मन की दूसरी परिस्थिति है। यहाँ सुधार ज्ञान से हुआ है................। ब्रह्म का मतलब सिर्फ बड़ा है, जिससे बड़ा और नहीं। किसी को ब्रह्म देखने के अर्थ है उसके भौतिक रूप में ही नहीं– सूक्ष्मतम आध्यात्मिक, दार्शनिक, वृहत्तर रूप में भी देखने वाले की दृष्टि प्रसारित है। आज यही दृष्टि जरूरी है। यही दृष्टि पतित का सार्वभौम सुधार कर सकती है। गुलामी की बेड़िया काट सकती है। हिन्दु मुस्लिम को मिला सकती है। यह निगाह आज तक की तमाम रूढ़ियों से जुदा है। इस निगाह में भिन्न मतों का जंग नहीं...। जो जंग इधर लगा है, जो मत इधर चले हैं, यह निगाह पूरब और पश्चिम को अच्छी तरह पहचानती है। यह निगाह बाह्मण और शूद्र नहीं मानती। (प्रबंधप्रतिमा–31)

निराला की इसी वैदांतिक अन्तर्धारा के सूत्र में समस्त मणि–मुक्ताओं को पिरोया जा सकता है अथवा निराला की वैचारिक्ता के सभी मणि–मुक्ता इसी सूत्र के अंग हैं। निराला की वैचारिक अन्तर्धारा मानव–केन्द्रित है। मनुष्य ही ब्रहम है। इस धारणा से राष्ट्रीय एकता ही नहीं, वरन् विश्व–मैत्री भी साकार होती है। इसमें मनुष्य को पूर्ण स्वतंत्रता है, जो दूसरे मनुष्य की स्वतंत्रता को भी संरक्षित कर शक्ति प्रदान करती है। निराला का विराट् मानव संपूर्ण सृष्टि का नागरिक है। निराला–साहित्य में जो क्रांति की ज्वाला है या जो विद्रोह भावना है, वह किसी देश, जाति या धर्म के पक्ष में नहीं, वरन् मानव–समाज के समस्त अभिशप्तों तथा पीड़ितों के पक्ष में हैं। निराला का जीवनपर्यत संघर्ष चला है– स्वच्छंदतावाद के सहारे वह मूलतः एक जनतांत्रिक तथा मानवतावादी आंदोलन का सहचर है। इस आंदोलन की शक्ति का स्त्रोत है वेदांत, जिसमें सभी प्रकार की समस्याओं का समाधान प्राप्त होता है।

तत्कालीन चिन्तन की दृष्टि से देखें तो गांधी–नेहरू और निराला के मध्य जो व्यावहारिक अंतर है, वह है मानव–प्रेम। निराला का यह मानव–प्रेम वैदांतिक है, जिसके आधार पर वे हर तरह के सामंती और पूँजीवादी शोषण का विरोध कर सामाजिक क्रांति के लिए युवकों का आह्वान करते हैं। इस बिन्दु पर निराला, स्वामी विवेकानंद के साथ खड़े दिखायी देते हैं। निराला के चरित्र चित्रण तथा चिंतन में जो व्यावहारिक वेदांत है, उसमें साम्य का स्वर उनके स्वाधीनता प्रेम, विश्व–शांति तथा सभी मनुष्यों में समानता की घोषणा करता है। इस प्रयोजन से निराला ने "सुधा (1932) में" 'रूस' शीर्षक से जो टिप्पणी लिखी थी, उसमें निराला ने रवीन्द्रनाथ के पत्रों का विवरण देते हुए प्रमाणित किया था कि वे अपने व्यावहारिक वेदांत की भूमि पर जिस समानता का स्वप्न देखते थे, वह उन्हें सोवियत समाज में साकार दिखायी दी। निराला के व्यावहारिक वेदांत का लक्ष्य था शोषण–मुक्त–समाज की स्थापना।

निराला की सामाजिक अन्तर्धारा का मार्ग था ज्ञान और उसका लक्ष्य या वेदांत। ज्ञान के बिना उन्हें कहीं भी मुक्ति नहीं दिखायी देती थी, क्योंकि भारतीयता की शक्ति ही वेदांत है। वेद की सृष्टि ज्ञान से हुई है और उस ज्ञान को ही ब्रह्म कहा गया है। उस ब्रह्म या ज्ञानात्मक सत्ता में अनादि भाव, अनादि सृष्टि–वैचित्र्य् बतलाये गये हैं। ऐसे ब्रह्म के जानने वाले को वेदांत में पूर्ण ज्ञाता कहा गया है। निराला ने स्पष्ट लिखा है– "ऐसे ब्रह्म के जानने वाले उस आदिम काल के मनुष्य के संबंध में कहा गया कि संसार के रहस्यों के आप पूर्ण ज्ञाता है। आपकी मुठ्ठी में संसार एक बेर की तरह दबा हुआ है– "आप विश्व–बदर–कर हैं। "यह विश्व आमलक–समान आपके करतलगत है। (प्रबंध प्रतिमा–132) वेदांत में ज्ञान को यह महत्व सकारण प्राप्त है। क्योंकि भारत में सृष्टि–तत्व ज्ञान से कहा गया है। डारविन के विकासवाद की तरह बंदर का क्रम–परिणाम मनुष्य नहीं। मनुष्य ही मनुष्य का परिणाम है (प्रबंध ा प्रतिमा)।

निराला की अंतर्धारा में सर्वाधिक महत्व ज्ञान–प्राप्ति का है। ज्ञान का शीर्षस्थ रूप वेद है। इसीलिए निराला की स्पष्ट मान्यता है कि जो व्यक्ति वेदांत को नहीं मानता, वह भारतीय कहलाने का दावा नहीं कर सकता। (चाबुक–61) यहाँ निराला के वेदांत की व्यावहारिकता को सहज ही महत्व प्राप्त हो जाता है, क्योंकि अव्यावहारिक होने पर उसकी स्वीकृति का पक्ष स्वयं शिथिल हो जायेगा।

निराला के उपर्युक्त चिन्तन से स्पष्ट है कि भारतीय वैदिक ज्ञान किस प्रकार मनुष्य को सृष्टि से एकाकार कर उसके भौतिक चिंतन को वैदांतिक धरातल प्रदान करता है। यद्यपि भौतिक तथा वैदांतिक–दो पृथक्–पृथक् धरातलों का अस्तित्व नहीं है। निराला भारत की धर्मप्राणता को बहुत महत्व प्रदान करते हैं, तथापि उनकी मान्यता

100utBackBlackMA Hindi Paper IV Nirala 1-192 #1

है कि धर्म को मानते हुए हमें अधर्म को भी मान लेना चाहिए, क्योंकि सृष्टि में ऐसी कोई वस्तु नहीं, ऐसा कोई शब्द नहीं, जिसका विरोधी गुण न हों इसीलिए निराला वैदिक ज्ञान के संदर्भ में जब भारत का उल्लेख करते हैं तब वे भौतिक विचारों से बहुत ऊँचे उठकर लिखते हैं–"भारत के ब्राह्मण या विद्वान, इसीलिए इतने सादे हैं। कोई अलंकार नहीं। भारत के संन्यासी इसीलिए महासमाधि के नभ में हैं।..... भारत को पराजित के अर्थ से ही हमें जित करना है। भारत सदा पराजित, (परा या श्रेष्ठ विद्या को जीतने वाला) है, क्योंकि वह भारत है। (संग्रहन)

अपनी वेदांतप्रियता के कारण ही निराला के मन में शंकराचार्य के प्रति विशेष आस्था थी। उनका देश–प्रेम उनके–वेदांत–ज्ञान का परिणाम था। इसी चिंतन और संघर्ष के कारण वे जीवन तथा साहित्य में व्यावहारिक धरातल प्राप्त कर सके और वे विश्व मानवता का सशक्त स्वर मुखरित कर सके। निराला के वैदांतिक चिंतन में आधुनिक विज्ञान समाहित है। निराला ने 'वर्तमानधर्म' की टीका करते समय दार्शनिक स्तर पर जिस द्वंद्व सिद्धांत की व्याख्या विस्तार से की है, (जो जड़–चेतन में समान रूप से व्याप्त है) वहाँ विज्ञान के साथ वेदांत भी है। द्वंद्व–सिद्धांत के आधार पर ही निराला पौराणिक प्रतीकों–गणेश, शिव आदि के विरोधी गुणों की चर्चा करते हैं।

निराला का उपर्युक्त दर्शन अज्ञान से ज्ञान की ओर अग्रसर होने का सिद्धानत है। इस सिद्धान्त में लचीलापन है, समन्वय है, दूसरे से मिलने और अपने से मिलाने की क्षमता है। इसीलिए निराला इस सिद्धांत को विश्व–मैत्री के लिए उपयुक्त तथा अनुकूल मानते हैं।

निराला की दार्शनिक मीमांसा मूलतः अद्वैत "ब्रह्म" में केन्द्रित है, न कि जीवजगत माया में। भारतवर्ष की तमाम शिक्षा की बुनियाद देवी विकास के अनुकूल, अन्त तक ब्रह्म–प्राप्ति में केन्द्रित रही है। देवत्व–साधना भारतीय जीवन का लक्ष्य है। हिन्दू जाति अपने समाज की रक्षा के लिए आदिम काल से ही इस विषय पर सूक्ष्मातिसूक्ष्म विचार करती चली आयी है। उसका साहित्य इसका प्रमाण है। वह निर्मल आत्मा की प्राप्ति के लिए सचेष्ट है। प्रहलाद इसी महान दिव्याधर का प्रतीक हे, जो नरसिंह भगवान का क्रोंध शांत करता है। देवत्व साधना की भारतीय परंपरा में ही समुद्र–मंथन हुआ। ब्रह्मसमुद्र को मथने वाले देवता और देव्य भली बुरी प्रकृति के रूपक है। यहाँ ब्रह्म समुद्र मानव–जीवन ही है। तभी भारत ने संसार की ओर ध्यान दिया था। ईश्वर से संयुक्त होकर इसकी संसारिक चारूता में नैसर्गिक छाप है। ईश्वर से संयुक्त होना ही वेदांतिक ज्ञानामृत है। इसीलिए भारत अक्षुण्ण तथा अक्षय रहा। "यहाँ यह कहना पड़ता है कि वैदांतिक सत्य दर्शन की ओर जो जितना अग्रसर रहा, वह उतना ही बढ़ा हुआ है। उसका व्यक्तित्व उतना ही महत्वपूर्ण तथा अक्षय है। दूसरे, वैदांतिक विचार भारतीय होने के अलावा एक दूसरे से सहयोग करने वाले होते हैं, तोड़क नहीं। केवल भारत के लिए ही नहीं, तमाम संसार के मनुष्यों के लिए एक–दूसरे के सहयोग की आवश्यकता है, वियोग की नहीं। निराला की "चित्त–शुद्धि" संबंधी याचना इसीलिए इन पंक्तियों में अभिव्यक्त हुई है–

ईश्वर मज्जित –

शुचि चन्दन–वन्दन सुन्दर

मन्दर सज्जित,

मेरे गगन–मगन–मन में अयि

किरणमयी विचारो। (परिमल–34)

"चित्त–शुद्धि" की यह प्रार्थना ब्रह्म–शक्ति की प्राप्ति के लिए की गयी है। इसमें ईश्वर से संयुक्त होने का बोध ही प्रधान कारण है। 'परिमल' के एक अन्य रचना में यही भाव है– "क्या दूर," की दो पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

"स्वयं बढ़ा दो न तुम

करुणा–प्रेरित अपने हाथ,

अंधकार उर को कर दो

रवि–किरणों का प्लुत प्रात (परिमल–98)

इस रचना में भी ब्रह्म–शक्ति के प्रति आराधना का भाव है। यहाँ उर का अंधकार भौतिक अज्ञान का प्रतीक है। आगे कवि जिस विहान को पाना चाहता है, वह उसका अपना भूला हुआ भोर है–

"स्वप्न प्रबल विज्ञान, धर्म, दर्शन

तम–सुप्ति शांति, हाँ भोर

कहाँ–जहाँ आशाओं ही की

अन्तहीन अविराम हिलोर।

मेरी चाहें बदल रहीं नित आहों में

मुझे फेर दो प्रभो, हेर दो

इन नयनों में भूला भोर। (परिमल–166)

उपर्युक्त पंक्तियों में "माया" तथा "ब्रह्म" दोनों की अभिव्यक्ति हुई हैं। यहाँ जीवन में "तम–सुप्ति" है। यह भौतिकता है और यही कारण है कि विज्ञान, धर्म, दर्शन की जो ज्ञान विधाएं वेदांतिक सिद्धान्तों के पथ पर अग्रसर होकर सृष्टि में अद्वैत की व्यावहारिक भूमिका का निर्माण करती है, वे–सब शांत हैं।– जीवन का ब्रह्म अपनी स्थिति को विस्मृत कर चुका है। परिमल की "धारा" शीर्षक कविता में आत्मा तथा ब्रह्म की स्थिति पूर्णतः स्पष्ट है–

"अगर पूछता कोई, तो वह कहती

उसी तरह हँसती पागल–सी बहती

यह जीवन की प्रबल उमंग

जा रही है मैं मिलने के लिए पार कर सीमा

प्रियतम असीम के संग (परिमल–149)

उपर्युक्त पंक्तियों में प्रेम–बिह्वल आत्मा अपने प्रिय (ब्रह्म) से मिलने के लिए वियोगिनी की भांति आतुर है। जब वह सीमा पार कर बंधन, मुक्त हो प्रिय–पथ पर अग्रसर होती है, तब उसकी गति–शक्ति, वेगवती धारा की भाँति इतनी बलवती हो जाती है कि यदि हाथी भी उसे रोकने का प्रयास करता है, तो वह भी धारा में प्रवाहित होकर दुर्दशा को प्राप्त होता है।– वह तिनके के समान लहरों पर मारा–मारा फिरता हुआ अपने गर्व से च्युत हो

10outFrontBlackMA Hindi Paper IV Nirala 1-192 #1

जाता है और विशालकाय "भूधर" भी जो उसे एक बालिका मात्र समझने की भूल करते हैं, तो बड़े–बड़े शिला–खण्डों को बहते हुए देखकर थर–थर कॉपते हुए मार्ग से हट जाते हैं और तभी आत्मा के बंधन शनैः–शनैः ढीले होने लगते हैं और प्राण मुक्त हो परमात्मा में एकाकार हो जाते हैं।

यह निराला की एक वैदान्तिक कविता है, जिसे रहस्यपूर्ण रचना भी कह सकते हैं। निराला की यह रचना दृष्टि–परक है। हॉ, अवश्य आध्यात्मिक धरातल पर जब उनका चिंतन रचना–प्रक्रिया में होता है, तब कवि बिंब तथा प्रतीकों के माध्यम से अपनी सृजनात्मकता को ऐसी उच्चता प्रदान करता है कि उसमें लौकिक एवं अलौकिक, भौतिक तथा आध्यात्मिक और पुरातन तथा आधुनिक एक साथ कई धरातल अपनी सार्थकता को व्यंजित करने लगते हैं। निराला ने बहुत पहले ही अपना साहित्यिक लक्ष्य निश्चित कर लिखा था–

"सत्य वही है, जो मनुष्य मात्र में है। ज्ञान में हिन्दू, मुस्लमान नहीं। विस्तार ही जीवन है। उसे फैलाकर अपनी प्रतिभा, कर्म, अध्ययन, उदारता से समस्त ब्रह्माण्ड को अपनाना चाहिए।"

2. प्रेमा भक्ति

निराला ने "तुम और मैं" शीर्षक रचना में लिखा–

"तुम वर्षो के बीते वियोग

मैं हूॅ पिछली पहचान (परिमल–84)

निराला पौरुष के कवि है। अतः आध्यात्मिक स्तर पर सब प्रकार के प्रेम गीत वे नहीं लिख सके, किन्तु दार्शनिक आधार पर वे नारी और पुरुष का भेद मिटा देते है और अज्ञात के प्रति प्रणय निवेदन करते हैं। वे सूफी कवियों की भांति लोकिक प्रेम को नवीन शिल्प के भीतर अलौकिकता प्रदान करते हैं। "पारस" रचना में ब्रह्म को सर्वाश्रय मानकर निराला उससे संबंध स्थापित करते हुए कहते हैं:

"कर–स्पर्श–रहित और क्या है– अपलक, असार।

मेरे जीवन पर, प्रिय, यौवन वन के बहार। (परिमल–74)

बसन्तागमन के कारण कवि की आभा प्रिय से मिलने के लिए आतुर हो उठी। अनेक विघ्न–बाधाओं को पार करती हुई वह उस लोक में पहुॅची, जहॉ ब्रह्म से तदाकारता के कारण केवल.......... मैं ....सोडहं ....अथवा "तत्वमसि" ही बच रहता है–

"इसी प्रखर नव कर–धारा में अपनी नौका की पतवार

पकड़ूॅ दृढ़ अनुकूल रहो तुम पहुॅच प्रिय, जीवन के पार,

चीर विषम प्रतिकूल तरंगें, भीम भयंकर भॅवर गहन,

दृढ़ सहता निस्संग मौन रह, ज्योति–सिन्धु–ज्वाला असहन।

वहॉ कहॉ कोई अपना? सब सत्य नीलिमा में लयमान

केवल मैं, केवल मैं, केवल मैं, केवल मैं, केवल ज्ञान। (परिमल–6)

निराला का प्रेम दर्शन 'सम्राट एडबर्ड अष्टम के प्रति' कविता में मुखर हो उठा है। मनोहरा के प्रति–उनका प्रगल्भ प्रणय तो अनेकत्र व्यक्त हुआ है। निराला आधुनिक बोध के कवि हैं, इसीलिए भक्त कवियों की भाँति उनकी रचनाओं को रहस्यवादी भक्ति की कोटि में रखा जा सकता है। निराला–काव्य की पृष्ठभूमि में औपनिवेशिक दासता, व्यक्तिगत और समष्टिगत संघर्ष, तथा अमानवीय शोषण की प्रतिक्रिया व्यक्त हुई है, जिसके कारण उनका कवि अपनी वैयक्तिक प्रपत्तिपूर्ण रचनाओं में भी लोक–मन के साथ यातनाएँ भोगता हुआ दिखायी देता हैं

"तिमिरदारण मिहिर दरसो।

ज्योति के कर अंध कारागार

जग का सजग परसो। (अर्चना–16)

अपनी इस धारणा के अनुसार निराला ने "पंचवटी–प्रसंग–4 में भक्ति–योग–कर्म–ज्ञान का समन्वय किया है:–

"भक्ति–योग–कर्म–ज्ञान एक ही है
यद्यपि अधिकारियों के निकट भिन्न दीखते है। (परिमल–253)
सेवा से चित्त शुद्धि होती है।
शुद्ध चित्तात्मा में उगता है प्रेभांकुर (परिमल–254)

निराला के काव्य–संग्रहों में लोकपरक भक्ति–भाव की अनेक रचनाएँ है। "अर्चना" की "दूरित दूर करो नाथ, अशरण हूँ, गहो हाथ, भव–सागर से उद्धार करो हे माँ, अपने आलोक निहारो, वरद हुई, शारदा जी हमारी दलित, जन पर करो करुणा, तुम ओर मैं, जिधर देखिये श्याम विराजे, 'बरसो मेरे आंगन बादल' आदि रचनाओं में भक्तिपरक द्वैतदर्शन अभिव्यक्त हुआ है।

उपर्युक्त विवेचनानुसार स्पष्ट है कि निराला के साहित्य में अद्वैतदर्शन की भांति भलिपरक द्वैतदर्शन की अभिव्यक्ति भी प्रचुर मात्रा में हुई है।

3. मानवतावाद

निराला की राष्ट्रीय चिंतन धारा मूलतः मानवतावादी है। उसमें व्यष्टि से समीष्ट तक सबके लिए अपनत्व–भाव है, क्योंकि राष्ट्रीयता की यह भावना वेदांतवादी है, जो सभी प्रकार के अन्याय, शोषण एवं असमानता के विरुद्ध संघर्ष की शक्ति की भावना है। यह वेदांत स्वाधीनता आन्दोलन के लिए प्रेरक रहा है। वह सभी तरह की सामाजिक रूढ़ियों के नाश के लिए समर्थ है। वेदांत की व्याख्या लोग तरह–तरह से करते हैं। निराला की व्याख्या सबसे क्रांतिकारी क्यों है? इसलिए कि सामंत विरोधी किसान–आंदोलन से उनका संबंध ओरों से गहरा है। निराला पौराणिक रूपकों को नया अर्थ देते हैं। देवी–देवताओं को वे प्रतीक रूप में इस्तेमाल करते हैं। पुरानी आस्थाओं पर जब–तब कड़ी चोट भी करते हैं। इसका कारण यह है कि जनसाधारण को रूढ़ियों से मुक्त करना चाहते हैं। उनकी राष्ट्रीय चेतना का यही मूल उत्स है।

निराला का जीवन–दर्शन मानव केन्द्रित है। मानव उनकी जीवन–सृष्टि में ब्रह्म है जिससे बड़ा, अन्य कुछ नहीं है। इसीलिए निराला के जीवन–दर्शन में जाति, धर्म, सम्प्रदाय, देश आदि की मान्यताएँ–धारणाएँ मानव को

न खंडित करती है, न उसे विभाजित करतीं हैं। निराला का सर्वव्याप्त यह विराट् मानव ही उनके जीवन तथा साहित्य का लक्ष्य है, जो देश–काल की सीमाओं को पार कर मानव–मानव में प्रेम, समता सहयोग तथा सामंजस्य की स्थापना करता है। इसीलिए निराला–काव्य में सम्राट एडवर्ड अष्टम के प्रति समादर व्यक्त हुआ है, क्योंकि उन्होंने राजसिंहासन तथा उसकी संकीर्ण किन्तु वैभवशाली प्रतिष्ठा को त्यागकर एक साधारण नारी से विवाह किया था। सम्राट अष्टम के प्रति कविता में निराला इसी भावना को व्यक्त करते हैः–

"मानव मानव से नहीं भिन्न

निश्चय हो श्वेत, कृष्ण अथवा

वह नहीं क्लिन्न

भेद कर पंक

निकलता कमल जो मानव का

वह निष्कलंक

हो कोई सर (अनामिका–19)

"अर्चना" की इन पंक्तियों में भी निराला के विश्वमानवतावादी दर्शन को अभिव्यक्ति मिली है :

"जल–थल–नभ आनंद भास है,

किसी विश्वमय का विकास है

सलित–अनिल ऊर्मिल विलास है

निस्तल–गीति–प्रीति की तलियाँ (अर्चना–86)

निराला–साहित्य एवं दर्शन में वर्ग–भेद नहीं है। सभी मानव "अमृतपुत्र" हैं। मनुष्य ही पूर्णता का अधिकारी है। मुक्ति या पूर्णता का यह अधिकार देवताओं को भी प्राप्त नहीं है। (संग्रह–63) इस जीवन–दर्शन के कारण भारत की विशिष्टता प्राप्त हुई है। भारत के प्राकृतिक नियमों की जॉच करने से उसके धर्म–जीवन का पूर्ण परिचय प्राप्त होता है। हिमालय जैसे गंभीर एवं सात्विक प्रकृति के लीला क्षेत्र के आते ही दर्शकों का मन स्वभावतः अन्तर्मुख होकर कवित्वमय भाव–राज्य में विचरण करने लगता है। गंगा–जैसी स्वच्छतोया नदियों का जल उसके मनोबल को ध ो डालने के लिए सर्वथा समर्थ है। प्रकृति की कुल चेष्टा मानों भारत के धर्मधाम की रक्षा के लिए ही कर्मतत्पर हो रही है। दूसरी ओर भारत अपने शब्दार्थ से भी अपनी धर्मप्राणता सूचित करता है और भारत ही विश्व में धर्म–देश तथा आध्यात्मिक चेतना का संदेशदाता है। यही कारण है कि निराला–साहित्य में मनुष्य की प्रतिभा तथा महत्ता का विशेष उल्लेख है। अपने आलेख "भारत में श्रीरामकृष्णावतार" में निराला लिखते हैं–

"इस बार अत्याचार पीड़ित और भोगांध मनुष्यों को शांति का पता बताने के लिए भगवान श्रीरामकृष्णदेव अवतीर्ण हुए। इस बार भी भारत शांति स्थापना का केन्द्र बना। संसार में आज जो आध्यात्मिक प्रवाह बह रहा है, उसकी उत्पत्ति भगवान श्रीरामकृष्ण–महान अध्यात्मतत्व–स्वरूप से हुई। आज विश्व समाज में भ्रातृत्व–बंधन की जो ध्वनि गूंज रही है, वह सबसे पहले भगवान श्रीरामकृष्ण जी के मुख से निकली थी। विश्व–विजयी वेदान्तकेशरी

स्वामी विवेकानन्द की वीर–वाणी को मंत्रमुग्धवत् संसार सुन रहा है, पर उनकी दिव्य शिक्षा भगवान श्रीरामकृष्णदेव के पाद–प्रांत पर समाप्त हुई थी। आज भारत में, एकता–लता पर जो फूल खिल रहा है, उसके निपुण माली है– भगवान श्रीरामकृष्ण। (संग्रह–69)

निराला की अद्वैतवादी दृष्टि अपने व्यावहारिक धरातल पर सृष्टि को, विराट मानव के रहने योग्य, स्वर्ग बनाना चाहती है:

दूर हो दुरित, सुख सुरित फूटे बहे,

विश्व होकर रहे स्वर्ग का सुस्थान। (आराधना–34)

इस बिन्दु पर निराला नर को "नरक त्रास" में मुक्त करने की प्रार्थना करते है–

मां अपने आलोक निखारो

नर को नरक–त्रास से वारो

विपुल दिशावधि शून्य वर्ग जन,

व्याधि–शयन जर्जर मानव–मन,

ज्ञान गगन से निर्जर जीवन

करुणा करो उतारो, तारो।

स्वर्ग धरा के कर तुम धारो। (अर्चना–124)

उपर्युक्त व्यापक जीवन–दर्शन के कारण निराला की दृष्टि संपूर्ण विश्व–मानवता को अपने में समेटने का प्रयास करती है। वे स्वयं लिखते हैं– "हमारे काव्य–साहित्य की दृष्टि बहुत व्यापक होनी चाहिए। तभी उसका कल्याण हो सकता है। पश्चिमी कवियों के हृदय में पूर्व के लिए अपार सहानुभूति थी। उनका यही पौरुष और प्रेम आज संसार भर में फैला हुआ है। वर्ड्सवर्थ और उसके मित्र कालरिज ने इसीलिए पूर्व का वर्णन किया है। (चयन–160)

निराला आत्मवादी होने के कारण ही परमात्मवादी हैं और व्यक्तिवादी होने के कारण ही विश्ववादी हैं। निराला की स्पष्ट धारणा है कि व्यक्ति का उन्नयन आत्मा से प्रारंभ होने पर ही सफल–सार्थक होगा। इस प्रकार प्रत्येक आत्मा का विकास, संपूर्ण मानव जाति तथा विश्व के उत्कर्ष में परिवर्तित हो जायेगा। इसीलिए निराला आत्म–शक्ति के विकास को सर्वाधिक महत्व देते हैं। आत्म–शक्ति के विकास में ही मानव की जय–यात्रा की सफलता का रहस्य छिपा हुआ है। इसीलिए निराला मानव की आत्मा के शतदल को पूर्णरूप से प्रस्फुटित करने में विश्वास करते हैं। उनके मानव को ब्रह्म तथा मानवी को शक्ति तथा सरस्वती मानने का अभिप्राय यही है। "अर्चना" तथा "आराधना" के अनेक गीतों में इस तथ्य को व्यापक रूप से अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। "गीतिका" की ये पंक्तियॉं द्रष्टव्य है–

"पास ही रे हीरे की खान,

खोजता कहॉं और नादान।

स्पर्श–मणि तू ही, अमल, अपार

रूप का फैला पारावार,

व्यष्टि में सकल सृष्टि का सार।

"गीतिका" के प्रथम गीत में ही कवि माँ सरस्वती से प्रार्थना करता है कि मानव के हृदय में वर्ण, जाति, धर्म, सम्प्रदाय के बन्धनों की पर्तो को काटकर, पाप कालुष्य से पूरित भेद–बुद्धि के अंधकार को दूर करके ज्योर्तिमय निर्झर बहा दो और विश्व में प्रकाश भर दो। भारत में अक्षय–जीवन–चेतना और स्वातंत्र्य का मधुर संगीत भर दो। नव–चेतना और उल्लास से युक्त अनन्त और व्यापक जीवन प्रदान करों।

स्पष्ट है कि निराला राष्ट्रीय कवि होने के साथ ही विश्व–कवि हैं। अपनी जन्मभूमि के प्रति उनमें अगाध ा श्रद्धा तथा प्रेम–भाव है। उनकी राष्ट्रीयता अथवा राजनीतिक विचारधारा विशुद्ध सांस्कृतिक आधार पर अवस्थित है। यद्यपि निराला ने "भारति जय विजय करे"– तथा "भारत ही जीवन धन" जैसे गीतों की रचना भी है, किन्तु उनकी राष्ट्रीय भावना देश, काल, धर्म तथा जाति से मुक्त अद्वैतवादी आध्यात्मिक पृष्ठ–भूमि पर ही विकसित हुई है। "शिवाजी का पत्र" विशुद्ध राष्ट्रीय भावना की प्रतीक रचना है।

निराला की राष्ट्रीय एकता की परिकल्पना विशुद्ध मानवतावादी है। उनमें अतीत के प्रति गहरी आस्था है। "यमुना के प्रति", "खण्डहर", "सहस्राब्दि", "जागरण आदि रचनाओं में अतीत के प्रति गहरी आस्था व्यक्त हुई है। वे संपूर्ण प्राचीन जीर्ण–शीर्ण को भस्म कर देना चाहते हैं, लेकिन उनकी राष्ट्रीय विचारधारा में वैयक्तिक स्वतंत्रता को अधिक महत्व प्राप्त है। यह वैयक्तिक स्वतंत्रता एक प्रकार की वैयक्तिक आत्मनिर्भरता है, जो मनुष्य को उसकी संपूर्ण एवं स्वतंत्र क्षमताओं द्वारा प्राप्त होती है। "बेला" और "नये पत्ते" में निराला मानवीय समस्याओं को राष्ट्रीय आधार पर ही देखते हैं। कारण यह है कि निराला कवि के साथ स्वतंत्रता–संग्राम के जुझारु सैनिक तथा ग्रामीण किसानों तथा शोषितों के प्रतिनिधि रहे हैं। उनके शक्ति–दर्शन का केन्द्र ब्रह्म है, जो मानव–केन्द्रित होने के कारण सृष्टि में साम्य–भाव स्थापित करता है। वे राजनीतिक पाखण्ड के कट्टर विरोधी हैं तथा राष्ट्रीय अशिक्षा, अज्ञान तथा निर्धनता को दूर करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रमों के पक्षपाती है, ताकि व्यक्ति की आत्म–निर्भरता राष्ट्र को स्वतंत्र कर सके। निराला का मानववाद ही उनके विश्व–बन्धुत्व का आधार है, जो मानव–केन्द्रित ब्रह्म के कारण विश्वातीत अद्वैतवाद की प्रतिष्ठा करता है। मानवतावादी काव्य ही विश्व–काव्य की भूमिका बनाता रहा है। निराला का संपूर्ण सृजन मानवतावाद की प्रतिष्ठा का हेतु है, इसीलिए उसमें राष्ट्रीय, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक विचारों की समस्त जीवन–धाराएँ अपने–अपने अस्तित्व के साथ विद्यमान हैं।

3. सौन्दर्य दर्शन

निराला–काव्य में सौंदर्यपरक द्वैतदर्शन के चित्र बड़े वैविध्यपूर्ण है। "गीतिका" के अनेक गीत सौन्दर्यपरक द्वैतदर्शन की कोटि में आते है, जैसे–

"तुम्हारे सुन्दरि, कर सुन्दर। मिलाये हुए स्वर अमर–मर।

अनावृत सुकृत–स्नेह के प्राण। अमृत ही अमृत, ज्ञान ही ज्ञान,

छिन्नकर जुड़े, हुए सब पाश। प्रणय का खोल दिया आकाश,

मृत्यु में पैठ भंग–भू–लास। रंग दिखलाती हो सस्वर। (गीतिका–61)

निराला ने नर–नारी सौंदर्य का बहुशः वर्णन किया है। आंगिक सौन्दर्य 'पंचवटी प्रसंग' में देखने योग्य है– देख यह कपोत कंठ बाहुवल्ली कर सरोज। 'राम की शक्ति पूजा' में सीता की कुमारी छवि, तुलसीदास में रत्नावली का रूप, सरोज स्मृति में वयः सन्धि का सौन्दर्य, प्रिय यामिनी जागी में कुलबधू का सौन्दर्य, साथ ही बहू, रेखा, प्रेयसी, 'मौन रही हार' आदि कविताओं में नारी सौन्दर्य के मयनामिराम दृश्य है। निराला ने अप्सरा सौन्दर्य से लेकर मजबूरिन तक की रूपच्छवियां चित्रित की हैं। कुरूपता का सौन्दर्य भी उनसे अछूता नहीं रहा हैं। उन्होंने शृंगार का उदात्तीकरण भी खूब किया है।

अनामिका की "दान" रचना में प्राकृतिक सौन्दर्यपरक दर्शन की ऐसी ही अभिव्यक्ति हुई है–

"व्यंजित सुख का जो मधु–गुंजन, वह पंजीकृत वन–वन उपवन।
हेमहार पहने अमलतास, हंसता पलास।
कुन्द के शेष पूजार्ध्यदान, मल्लिका प्रथम–यौवन–स्यान।
खुलते–स्तवकों की लज्जाकुल नतवदना मधुमाधवी अतुल।
निकला पहला अरविन्द आज, देखता अनिंध रहस्य–साज।
सौरभ–वसना समीर बहती, कानों में प्राणों की कहती।
गोमती क्षीण–कीट नदी नवल, नृत्य पर मधुर–आवेश–चपल। (अनामिका–22)

इसी प्रकार "तुलसीदास" में दिव्य सौन्दर्य दर्शन के अनेक चित्र है। यथा–

"देखा शारदा नील–वसना
हैं सम्मुख स्वयं सृष्टि–रशना
जीवन–समीर–शुचि–निःश्वसना, वरदात्री,
वीणा वह स्वयं सुवादित स्वर
फूटी तर अमृताक्षर–निर्झर,
यह विश्व–हंस, है चरण सुधर जिस पर श्री। (तुलसीदास–38)

निष्कर्ष यह है कि निराला जी के साहित्य में सौन्दर्य विषयक पर्याप्त चिन्तन तथा चित्रण प्राप्त होता है।

4. समाजदर्शन

निराला जी सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक–दोनों ही रूपों में सामाजिकता से संबद्ध रहे हैं। उनका 'विश्व–मानवतावाद' इसी सामाजिक चिन्तन का वृहत्तर रूप है, जिसे निराला की व्यापक अद्वैतवादी पृष्ठ–भूमि प्राप्त हुई है। निराला–साहित्य में सामाजिक भावना जनकल्याणमूलक है। सर्वजन–कल्याण तथा विश्व–कल्याण निराला–साहित्य का लक्ष्य है। निराला का साहित्य, पौरुष का साहित्य है। निराला का 'सोऽहं', उनकी वेदांती साधना का परिणाम है। अन्याय, असत्य, अत्यांचार, शोषण, भेदभाव, असमानता जैसी कुप्रवृत्तियों, सामाजिक तथा धार्मिक आडंबरों तथा मिथ्या विश्वासों के प्रति अविराम संघर्ष का संदेश उनके साहित्य का प्रमुख प्रदेय है। उनके व्यक्तित्व का विकास गहरी सांसारिक विडंबनाओं की गोद में हुआ था, लेकिन अकूत जीवनी–शक्ति से सम्पन्न होने के कारण वे कभी संघर्षों से विमुख नहीं हुए।

निराला ने अपने साहित्य में वर्णाश्रम–धर्म की मौलिक चेतना का उपयोग ही नहीं किया वरन् अपने एक निबंध में आचोच्य विषय की कई गूढ़ गहन सूक्तियों का व्यावहारिक विवेचन भी किया है। निराला के अनुसार वेदान्त ही हमारी सामाजिक संरचना और उसमें वर्णाश्रम धर्म की प्रतिष्ठा का स्त्रोत है, क्योंकि वैंदांतिक दर्शन सहज ही सहयोग, समृद्धि तथा समानता की ओर ले जाता है। उनके अनुसार वेदांत दर्शन का सामाजिक व्यवहार भारत में ही संभव है, क्योंकि विश्व में यही एक देश है जो भोगवादी नहीं, वरन् त्यागवादी है। इस देश में पिता–पुत्र, पति–पत्नी, गुरू–शिष्य–संबंध के सभी स्तरों पर त्याग का आदर्श फैला हुआ है। भारत में जीवन का अमृत–तत्व त्याग से ही प्राप्त होता है और इसीलिए भारत, भारत का धर्म तथा भारत का जीवन विश्व से आत्मीय सहयोग करता है।

निराला के पारिवारिक सुख–स्वप्न युवावस्था से पूर्व ही छिन्न–भिन्न हो गये थे, किन्तु फिर भी निराला में उन मूल्यों के प्रति भारतीय संस्कृति के अनुरूप गहरी आस्था थी। उन्होंने अपने संपूर्ण साहित्य में, सदगृहस्थों के चरित्र–चित्रण द्वारा उन मूल्यों को मरसक प्रतिष्ठित किया है। उनका व्यक्तित्व, वेषभूषा, खान–पान, रहन–सहन, आचार–विचार– सभी भारतीय संस्कृति पर आधारित थे। वे कई देवी–देवताओं की पूजा करते थे। वे स्वाभिमानी तथा दानी थे। स्वच्छंदतावादी होने के बावजूद वे सावधानीपूर्वक सामाजिक अनुशासनों का पूरा अनुपालन करते थे। वे एक सद्गृहस्थ थे और सामाजिक दायित्वों के प्रति सजग रहते थे। निराला ने "तुलसीदास" काव्य में पारिवारिक जीवन का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह भारतीय समाज के एक सामान्य परिवार का चित्र है। 'तुलसीदास' में भारतीय समाज की जातियों के कर्तव्यच्युत होने का जो व्यापक वर्णन है, उसका स्त्रोत वैदान्त ही है।

निराला ने अपने साहित्य में नारी की सामाजिक स्थिति को अतिरिक्त प्रतिष्ठा प्रदान की है। यहाँ नारी के प्रति निराला की अनन्य आस्था के दर्शन होते हैं। "राष्ट्र और नारी", "रूप और नारी", "बाहरी स्वाधीनता और स्त्रियॉं", "सामाजिक पराधीनता", "वर्तमान हिन्दू समाज", "हमारा समाज" आदि निबंधों तथा "पंचवटी–प्रसंग", "राम को शक्तिपूंजा" जैसी रचनाओं में निराला ने भारतीय नारी की साधना, त्याग तथा सौन्दर्य शुचिंता का वर्णन विशिष्ट रूप में किया है। अपने 'कला और देवियां' निबंध में निराला समुद्र–मंथन द्वारा निकले चौदह रत्नों में लक्ष्मी को ही सर्वश्रेष्ठ मानते हैं, क्योंकि लक्ष्मी में सभी स्तर के दिव्यभाव तथा ऐश्वर्य के सभी गुण विद्यमान हैं। यही लक्ष्मी निराला की गृहलक्ष्मी है। निराला नारी को गृह–लक्ष्मी के बाहर भी महिमामंडित मानते है। उनकी दृष्टि में समुद्र–मंथन से निकली हुई उर्वशी कला, गीत और प्रीति की प्रतिमा है। उनकी मान्यता है की नारी को मातृत्व–शक्ति ही विश्व का पालन करने वाली शक्ति है और विष्णु–शक्ति (लक्ष्मी) इसी मातृत्व में पूर्णत्व प्राप्त करती है।

निराला की सामाजिक विचारणा अद्वैतवादी धरातल पर अधिकतम समानता की विचारणा है। अपने "अर्थ" शीर्षक निबंध में उन्होंने भारतीय दर्शन तथा संस्कृति के आधार पर अर्थ की उपयोगिता का विवेचन किया हैं। यह विवेचन स्पष्ट करता है कि भारतीय धर्म–दर्शन में धन संचय का उपदेश इसीलिए है कि वह दरिद्रों की सेवा का निमित्त बने। हिन्दू–शास्त्रों में 'अर्थ' की संकुचित परिभाषा कहीं भी नहीं मिलती। अर्थ–शक्ति का बराबर विकास न होने के कारण ही अर्जित अर्थ के दान की महत्ता है। निराला आर्थिक विकास के लिए सामाजिक समता को बहुत महत्वपूर्ण मानते है। उनके मतानुसार इस अर्थ वैषम्य का कारण अधिकारवाद की पतितावस्था है। यह अज्ञान शिक्षा से ही दूर होगा। इस कार्य में स्त्रियॉं अधिक महत्वपूर्ण कार्य करेंगी। उनका विचार है कि पर्दा प्रथा के कारण विभिन्न प्रकार की पाशविक प्रवृत्तियों को समाज में प्रतिष्ठा मिली है। यदि स्वावलंबन की वृत्ति का विकास हो तो सामाजिक कल्याण तथा विकास के मार्ग प्रशस्त होगें। सामाजिक पराधीनता के संदर्भ में निराला ने स्पष्ट किया है कि आर्थिक स्थिति में सुधार की दिशा में शूद्र अब द्विजत्व के प्रथमाधिकार के लिए सचेष्ट होगें।

निराला—साहित्य में वर्ग—भेद तथा वर्ग—संघर्ष की भावना को अद्वैत की मानवतावादी पृष्ठभूमि पर समूल नष्ट किया गया है। अपने निबंध "साहित्य की समतलभूमि" में जहाँ निराला, उर्दू—साहित्य में विश्व—साहित्य की खोज करते हुए प्रमाणित करते है कि विश्व—स्तर का तमाम उर्दू साहित्य वेदों से ही प्रेरित—प्रभावित है। यहाँ वे गालिब, नज़ीर तथा मीर की शायरी के उदाहरण प्रस्तुत करते हुए प्रमाणित करते हैं कि साहित्य—सृजन के इस स्तर पर ये उर्दू के मुसलमान कवि मुसलमान नहीं, वरन् अद्वैतवादी वैदांती विचारक हैं।

निराला ने अपने अन्य निबंधों जैसे "तुलसीकृत रामायण में अद्वैत तत्त्व" "युगावतार भगवान श्री रामकृष्ण" वेदांतकेशरी स्वामी विवेकानन्द, "मुसलमान और हिन्दू कवियों में विचार साम्य" आदि में वर्ग—भेद तथा वर्ग—संघर्ष की सामाजिक चेतना को समाप्त करने का निर्देश किया है। "कुल्लीभाट" में निराला स्वयं ही कुल्ली की मुसलमान पत्नी को पुरोहित बनकर सहयोग प्रदान करते हैं। निराला की प्रसिद्ध व्यंग्य रचना "कुकुरमुत्ता" में गोली तथा बहार की मित्रता, वर्ग—भेद तथा वर्ग—संघर्ष पर एक करारी चोट है। "अणिमा" की "स्वामी प्रेमानंदजी महाराज", "अनामिका" की "सम्राट अष्टम एडवर्ड के प्रति" "खंडहर के प्रति", दिल्ली, "तोड़ती पत्थर", "सरोज—स्मृति", "सेवा—प्रारंभ" जैसी कितनी ही रचनाओं का उल्लेख किया जा सकता है, जो इस विषय पर अद्वैतवादी विचार प्रस्तुत करती हैं।

निराला ने समाजवादी संरचना तथा अद्वैतवादी विचार—विकास की पृष्ठभूमि में समाज के अनेकानेक पक्षों की स्थिति का विवेचन किया है। इस संदर्भ में भारतीय पराधीनता के अंतर्गत निराला ने अंग्रेजी राज्य के आचरण एवं उनकी शोषण वृत्तियों का भी विस्तार से विवेचन किया है। डॉ. रामविलास शर्मा ने अपनी कृति 'निराला की साहित्य—साधना—2' में निराला के जिन सामाजिक पक्षों का विवेचन किया है, उनमें राजा, ज़मीदार, किसान, द्विजऔर ब्राह्मण, नारी की स्वाधीनता "शास्त्र और रूढ़िवाद" "राष्ट्रीय एकता और मुसलमान", "भाषा और राष्ट्र" जातीयता और हिन्दी "गांधीवाद, छायावाद" "जवाहरलाल नेहरू और समाजवाद", "वेदान्त और भारतीयता", "वेदान्त और विकासवाद", "ब्रह्म और प्रकृति", "सामाजिक परिवर्तन और साहित्य" आदि महत्वपूर्ण है। इस विवेचन में डॉ. शर्मा ने निराला द्वारा लिखित "सुधा" की उन टिप्पणियों का भी उपयोग किया है, जिनमें सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक तथ्यों की विशेष विवेचना की गयी है।

निराला के गद्य साहित्य में भी सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों का चित्रण हुआ है। "अप्सरा" उपन्यास को नायिका वेश्या—पुत्री कनक का विवाह समाज के संभ्रांत नवयुवक राजकुमार से होता है। "अलका" उपन्यास मध्यवर्गीय सामाजिक जीवन के अधिक निकट है। इसमें राजा और प्रजा, ज़मीदार और किसान, विदेशी शासक ओर सुधारवादी वर्ग आदि के संघर्ष—चित्रण को प्रमुखता मिली है। "प्रभावती" एक ऐतिहासिक उपन्यास है, किन्तु उसमें भी तद्युगीन समाज का सूक्ष्म चित्रण विद्यमान है। इसी प्रकार "निरुपमा" में बंगीय सामाजिक वातावरण का चित्रण हुआ है। चमेली, चोटी की पकड़, काले कारनामें तथा इन्दुलेखा में भी सामाजिक जीवन ही चरित्र—चित्रण का मुख्य आधार है।

निराला के 'कुल्लीभाट' तथा 'बिल्लेसुर बकरिहा', दोनों समाज के उपेक्षित वर्ग से संबंधित हैं। उनमें अनेक सामाजिक अच्छाइयाँ और बुराईयाँ है। इसी प्रकार निराला की सामाजिक कहानियों—पद्मा और लिली, ज्योतिर्मयी, कमला, श्यामा, राजा साहब को ठेंगा दिखाया, परिवर्तन, हिरनी, न्याय, श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी, सखी, क्या देखा, सफलता, प्रेमिका—परिचय तथा 'जानकी' आदि में सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रित किया गया है। स्पष्ट है कि निराला जी वैदान्तिक समाज के समर्थक रहे हैं।

किसान आंदोलन के समय चतुरी चमार को स्वयं निराला के अतिरिक्त भी उच्च जाति के कुछ शिक्षित नवयुवकों से सहयोग प्राप्त होता है। "महँगू मँहगा रहा" कविता में कुम्हार, डोम, कोरी, पासी, चमार सब "जमीदार के वाहन हैं, किन्तु इतर जाति के लोग गंगा पुत्र, पुरोहित, महाब्राह्मण इत्यादि भी निर्धनता के कारण शूद्रत्व को प्राप्त हो गए हैं। वास्तव में निराला पर महिषादल राज्य की सामंती व्यवस्था का गहरा प्रभाव पड़ा था। इसीलिए "चोटी की पकड़" में वे, राजमहलों के संबंध में कहते हैं कि यह स्वर्ग दिखता हुआ दृश्य नरक है और ये राजे–महाराजे साक्षात् राक्षस हैं (चोटीकी पकड़–128) "अलका" उपन्यास में एक जमीदार बाबू मूरलीधर का चित्रण है, जिनके पूर्वजों ने, राष्ट्रभक्तों के प्रति गद्‌दारी तथा अंग्रेजों की सहायता कर हजार गावों की जमीदारी प्राप्त कर ली थी। "अलका" में क्रांतिकारी युवक जिस गांव में संगठन का कार्य करते है उसमें शुद्रों की संख्या अधिक हैं। संगठन की सार्थकता निर्धनता के आधार पर ही एकता की शक्ति प्राप्त करती है और किसानों का कसूर यह होता है वे न तो पूर्व की भांति डरते हैं और न भूसा पुआल आदि वाजिब उल–अर्ज के नाम पर जमीदार को दते हैं। (अलका–128)

"नये पत्ते" में "डिप्टी साहब आये" कविता में जमीदार के गोड़इत को उपर्युक्त आधार पर ही बदलू अहीर एक धूंसा मारता है। जमीदार के गोड़इत को मारना एक गंभीर अभियोग था, जबकि पुलिस दरोगा भी डिप्टी साहब के साथ मौजूद थे, लेकिन क्षण–मात्र में बदलू के तरफदार मन्नी कुम्हार, कुल्ली तेली, भकुआ चमार, लुच्छू नाई, बली कहार सब टूट पड़े और "कुछ नहीं हुआ–कुछ नहीं हुआ", होने लगा। सारा गांव एक हो गया (नये पत्ते–95)

सामंती व्यवस्था के कारण ही तत्कालीन समाज में जाति–पांति तथा ऊँच–नीच के भेद–भाव बड़े कठोर थे। इस क्षेत्र में निराला के मानववादी विचारों का बड़ा योगदान है। कुल्लीभाट में निराला अछूत पाठशाला के बच्चों के फूल के दोने अपने हाथ में लेते हैं। "सुधा" पत्रिका में वे प्रायः इस पर टिप्पणी लिखते थे। ऐसी टिप्पणी में उनका उदात्त स्वर सामाजिक क्रान्ति का आह्वान करता था, जैसे– जनेऊ की कोई उपयोगिता नहीं, इसे तोड़कर फेंक दीजिए, यह मर्यादा तथा बड़प्पन का भ्रम है। ब्राह्मणों को स्वीकार करना चाहिए कि उनकी उतनी ही मर्यादा है, जितनी नीच–से–नीच पड़ोसी चमार–भंगी की है। तभी वे मनुष्य बन सकते हैं। "अलका" उपन्यास के गांव में पासियों का प्राधान्य है। गॉव में रहने वाले ब्राह्मण पूज्य होने पर भी उन्हीं की प्रभुता मानते हैं।

निराला की मान्यता यह है कि सामंती व्यवस्था जहाँ सुदृढ़ होगी वहाँ जाति–पाति के भेदभाव की भाँति स्त्री और पुरूष में छोटे–बड़े का भेद भी अधिक होगा। इसीलिए अद्वैतवाद एवं मानवतावाद की संरचना करते हुए उन्होंने स्त्री–शक्ति तथा उसकी स्वतंत्रता को बहुत अधिक महत्व दिया है। निराला ने गहराई से अनुभव किया था कि स्त्रियॉं अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों को भूल चुकी है। उन्होंने पुरुषों को इसीलिए चेतावनी दी थी, कि जब तक स्त्रियॉं को मुक्त तथा स्वतंत्र नहीं करोंगे, तब तक तुम भी गुलाम बने रहोगें। निराला अनुभव करते थे कि देश की लड़कियों पर बड़े–बड़े उत्तरदायित्व आ पड़े है और उन्हें वायु की तरह मुक्त रखने में ही जाति, धर्म तथा समाज का कल्याण है।

भारत सदैव ही परंपरावादी रहा है। इन परंपराओं को भारतीय शास्त्रों से संरक्षण प्राप्त है। किन्तु निराला ने अनुभव किया था कि हमारे शास्त्रों में कुछ ऐसी नीतियॉं है, जो मनुष्य–मनुष्य में भेद करती हैं। प्रकारांतर से उन नीतियों की बौद्धिक समीक्षा करने पर स्पष्ट ज्ञात होता है कि इन नीतियों की रचना का उद्‌देश्य स्त्रियों तथाशूद्रों को गुलाम बनाये रखना है, इसीलिए निराला ने इन पुरूष परक नीतियों का विरोध किया, यह कहते हुए कि धर्म कोई कानून, कोई नीति नहीं हो सकता और फौज के सिपाहियों की तरह, इच्छा तथा आवश्यकतानुसार समाज के हित के लिए धर्म–मार्ग को परिवर्तित कर आडंबरों तथा विसंगतियों को ध्वस्त करना जरूरी हैं।

निराला ने अपने मानवतावाद में मुसलमानों को समान प्रतिष्ठा दी है और अद्वैतवाद तथा राष्ट्रीयता एकता के संदर्भों की विवेचना करते हुए कबीर, नजीर, गालिब, मीर आदि कवियों की रचनाओं को उद्धृत कर यह प्रमाणित किया है कि इन्होंने वेदांत की भूमि पर ही अपनी रचनाएँ की हैं और यह भी कि मुस्लमानों का जीवन–दर्शन हिन्दुओं के जीवन–दर्शन से भिन्न नहीं है। इस संदर्भ में निराला ने कुरान की अद्वैतवादी सूक्तियों का उल्लेख कर लिखा है कि खान–पान और रहन–सहन का भेद रहने पर भी जिस विकास की ओर मुसलमान सभ्यता गयी है, वह यहाँ से कोई पृथक् सत्ता नहीं है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि निराला की सामाजिक संचेतना पर्याप्त सुविचारित है।

5. कला–दर्शन

निराला की कला विषयक अवधारणा जीवनपरक है, सृष्टिपरक है और जीवन की सुख शांति तथा समृद्धि से अनुबंधित है। निराला की कला जीवन को देव–गुण–संयुक्त बनाने की कला है। अपनी कला के विवेचन में निराला ने वैदिक परम्पराओं का उल्लेख करते हुए लिखा है कि भारतवर्ष के आर्यों में मनो–विनोद के लिए जिस कला का प्रचार था, वह दैव कला थी, इसीलिए देवताओं के सद्गुण संयुक्त पात्रों के चित्र यहाँ अंकित किये जाते थे। निराला की मान्यता है कि रूप, रस, गंध आदि परमाणु यदि दैव गुण संयुक्त होते है, तो आत्मा में एक प्रकार के दिव्य आनंद का स्फुरण होता है।

निराला–साहित्य में कला का विकास दार्शनिक धरातल पर हुआ है। निराला अद्वैतवादी दार्शनिक (वैदान्तिक) थे। निराला ने "जागो फिर एक बार" जैसी कविता में राष्ट्रीय जागृति और बलिदान का संदेश अद्वैतवादी दार्शनिक भूमिका पर दिया है। निराला की कला का दर्शन यद्यपि ज्ञानमार्गी है, तथापि व्यवहार में उन्हें आत्म निवेदन और प्रणति भी उतनी प्रिय है। जगत के मिथ्यात्व की धारणा उन्हें ज्ञानमार्गियों से प्राप्त हुई थी। यह विश्व ब्रह्म ज्योति से विभासित होने के कारण सुन्दर और चिर–स्पृहणीय है। यह धारणा उनके साहित्य में बार–बार अभिव्यक्त हुई है। उनकी श्रृंगारिक कविताओं में जो प्रेम तत्व है, वह वासनारहित, समर्पणशील और आत्मबोध मूलक है। वस्तुतः उनके काव्य में अनेक दार्शनिक तत्वों का समन्वय हुआ है।

निराला विश्व–मानवतावादी दार्शनिक कवि हैं। मानवतावादी दर्शन के कारण निराला की मानवीय प्रवृत्तियाँ भौतिक जीवन से पूर्णतः संपृक्त हैं और अलौकिक चिन्तन से भी संबंधित हैं। कर्म–निषेध पर आध ारित–संन्यास मूलक दर्शन निराला को संतुष्ट नहीं कर पाता। निराला की कला तथा दार्शनिकता का क्षेत्र जीवन–कर्म है। कर्म की यही अवधारणा उनकी "अधिवास" शीर्षक कविता में अनावृत्त हुई है। निराला की मानवतावादी दृष्टि जब आधुनिक समाज के वैषम्यों को देखती है, तब उनका विद्रोही रूप सहजतः प्रकट हो जाता है और तब वे एक प्रखर तथा क्रान्तिकारी समाजद्रष्टा के रूप में दिखायी देने लगते हैं। "बादल–राग" शीर्षक सभी कविताओं में निराला ने ऐसी ही विद्रोह भावना अभिव्यक्त की है।

निराला की दार्शनिक कला, वैयक्तिक स्वतंत्रता को भी प्रतिष्ठित करती है। यहाँ निराला व्यक्ति के भीतर ही परमतत्व को देखने की योगमार्गी पद्धति अपनाते हैं। जब निराला लिखते हैं– "तुम हो महान, तुम सदा हो महान" तब यह स्पष्ट हो जाता है कि निराला ज्ञानमार्गी वैयक्तिक साधना को भी मानव में अदम्य शक्ति भरने के उपाय के रूप में प्रयोग करते हैं। "हमारे साहित्य को ध्येय" निबंध में निराला ने स्पष्ट किया है कि साहित्यिक, मनुष्य की प्रकृति को ही श्रेय देता है। उसके विचार से हर मनुष्य जब अपने ही प्रिय मार्ग से चलकर अपनी स्वाभाविक

वृत्ति को कला–शिक्षा के भीतर से अधिक मार्जित कर लेगा और इस तरह देश में अधिकाधिक कृतिकार पैदा होंगे, तब सामूहिक उन्नति के साथ ही साथ काम्य स्वतंत्रता आप ही आप प्राप्त होगी, जैसे युवकों को प्रेम की भावना आप ही आप प्राप्त होती है, यौवन की एक परिणति की तरह।

निराला हिन्दी–साहित्य के प्रबल प्रयोगधर्मी साहित्यकार रहे हैं। रचना–प्रक्रिया से लेकर भावाभिव्यक्ति तक निराला ने इतने अधिक प्रयोग किये हैं कि उन्हें शताब्दी का सर्वश्रेष्ठ प्रयोगकर्ता पुरस्कर्ता कहा जा सकता है। भाषा के स्तर पर भी उन्होंने अनेक प्रयोग किये हैं। उदाहरण के लिए उनके गेय पदों की भाषा में एक प्रकार की समरसता पायी जाती है। उनकी भाषा का रूप एक प्रकार से परिनिष्ठित है। निराला के मुक्तछंदों की भाषा सामान्यतः गतिशील एवं प्रवाहमयी है, किन्तु गीतों की भाषा संस्कृतनिष्ठ है। मुक्तछंद का हिन्दी काव्य में प्रथम प्रयोग, परिष्कार और विकास निराला ने ही किया है। उनके मुक्तछंद में लय की अन्विति एवं शब्द–संगीत दोनों का ही समावेश है। मुक्तछंद निराला की मुक्त जीवनदृष्टि का प्रतीक है। उनके प्रयोग काव्य में अभिव्यंजना या शिल्प के प्रयोग मात्र नहीं हैं, उनमें भाव–विचार और संगीत की नई–नई भूमिकाएँ प्रस्तुत हुई हैं। वास्तव में निराला–काव्य में व्यापक स्तर पर जीवन–दर्शन और शिल्प के नये–नये प्रयोग हुए हैं। यही कारण है कि निराला की प्रयोगशीलता शिल्पगत प्रयोगशीलता का भी अतिक्रमण कर आती है। निराला के मुक्त छंद की प्रयोगशीलता का संबंध काव्य के शिल्प मात्र तक ही सीमित नहीं है, वरन् वह काव्य की अंतरंगता, उसकी अर्थ–भूमि से भी गहन रूप से आबद्ध है। उसका एक सांकृतिक पक्ष भी है, क्योंकि निराला ने उसका संबंध जाति की मुक्ति से माना है। वह प्राणों का अर्थवाही है। मुक्तछंद काव्य की भाव–भूमि को प्रवाह और बेग देकर प्रखर बनाता है।

निरालाके काव्य की मौलिकता का उत्स है– निराला की विद्रोही–वृत्ति, जो पुरातनता को परिवर्तित कर नवीनता की संरचना करती है। उनकी नवीनता की प्रवृत्ति बहूमुखी है। इससे उनके कथ्य, जीवन–दर्शन, शिल्प आदि में नवीनता तथा मौलिकता का समाहार हुआ है। निराला स्वभाव से ही नवीनता के प्रति आसक्त थे। "गीतिका" के प्रथम गीत की छह पंक्तियों में "नव" अथवा "नवल" शब्द का प्रयोग 12 बार किया गया है। इसी प्रकार "सहस्राब्दि" कविता में "नूतन" "नवल" तथा "नव" शब्दों का प्रयोग दो दर्जन से अधिक बार किया है।

प्रयोगशीलता की भाँति यद्यपि मौलिकता भी निराला–काव्य में आद्यन्त अन्तर्व्याप्त है, किन्तु जहाँ निराला के पौरुषमय व्यक्तित्व का विद्रोही स्वर प्रस्फुटित हुआ है, वहाँ उनकी मौलिकता की कला का स्वरूप अपने पूर्ण रूप में प्रकट हुआ है। इस दृष्टि से "परिमल" में "बादल राग", शिवाजी का पत्र, "अनामिका" में "उद्बोधन" और "राम की शक्तिपूजा" में पुरुष–भावों की अभिव्यंजना करके निराला ने अपनी मौलिकता एवं शक्तिमत्ता का परिचय दिया हैं। "राम की शक्तिपूजा" में तो वैचारिक अनुभूति एवं कलायोजना दोनों ही शीर्ष–बिन्दु का स्पर्श करती है। यह नवीन विचारधारा तथा भाव–भूमि हिन्दी, काव्य–जगत् को निराला का एक ऐतिहासिक प्रदेय हैं। नये–नये विचार और भाव जितने निराला ने आधुनिक हिन्दी–काव्य को दिये हैं, उतने किसी दूसरे कवि ने नहीं दिये। उनके काव्य में विषयगत, भावगत और विचारगत विविधता तथा व्यापकता है और भाषा–शैलीगत नवीन प्रयोग भी। ये समस्त प्रयोग निराला की मौलिकता के अर्थवाहक है।

निराला की कलागत मौलिकता के कारण ही उनकी काव्य–शैली कवि–व्यक्तित्व के आधार पर अनेक रूपों में अभिव्यक्त हुई है। पहले वहाँ स्वच्छंद और विद्रोहिणी शैली आई है, जो उनके विद्रोही व्यक्तित्व और तद्रूप काव्य–वस्तु का प्रतिनिधित्व करती है। मानव–जीवन की सारी विषमताओं और रूढ़ियों का आपात विनाश करने वाली भाव–चेतना इसी शैली का आश्रय लेकर परिस्फुट हुई है। निराला की सौन्दर्य–चेतना और दार्शनिक आभा

से सम्पन्न उनकी दूसरी शैली को आलोक शैली माना गया है। इसमें उनकी श्रृंगारिक गीतिरचना, प्राकृतिक सौन्दर्य छवियाँ, उनकी "रेखा" और 'स्मृति–चुम्बन' जैसी कविताएँ जिनमें उनके आत्म विकास की स्मृतियाँ संयोजित हैं।

निराला की तीसरी शैली वह है, जो उदात्त और विराट् चित्रों का सृजन कर उन्हें महाकाव्योचित उत्कर्ष देती है। इसे निराला की पांडित्य शैली भी वह कहते है। इस शिल्प प्रयोग में उन्होंने विशाल फलक पर संश्लिष्ट और सामाजिक भाषा–प्रयोगों के माध्यम से विराट् चित्रों की अवतारणा की है। निराला ने दो अन्य प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है। एक भक्त–कवियों की–सी सरल तथा निरलंकृत है। इसे "ऋजु शैली" भी कहा जा सकता है। दूसरी हास्य –व्यंग्य तथा विनोद–प्रधान है, जिसमें उन्होंने "कुकुरमुत्ता" ओर "नये पत्ते" की रचना की है। निराला के इन शिल्प प्रयोगों की महत्ता एवं सूक्ष्मता को समक्ष रखकर कहा जा सकता है कि इतना बड़ा प्रयोक्ता कवि आधुनिक हिन्दी–काव्य में कोई अन्य नहीं है।

वस्तुतः निराला जी श्रेष्ठ कलाकार थे। वे काव्य कला के महान् साधन तथा जीवन कला के मौलिक विचारक थे। उनकी काव्य–कला का विकास भारतीय अद्वैतवादी परम्परा के आध्यात्मिक धरातल पर हुआ। उनका कलादर्शन स्वामी रामकृष्ण तथा विवेकानंद की अद्वेतवादी जीवन–दृष्टि की व्यावहारिकता में पल्लवित एवं विकसित हुआ। उनकी कलाभिव्यक्ति में वेदांत, दर्शन, समाज दर्शन, वैयक्तिक जीवन दर्शन तथा कलादर्शन की प्रचुर अभिव्यक्ति हुई है। इसीलिए निराला को छायावादी, प्रगतिशील, प्रयोगधर्मी अर्थात् किसी बोध विद्या–विशेष की सीमा में नहीं रखा जा सकता। निराला ने किसी 'वाद' विशेष का आग्रह कभी नहीं किया। उनका एक ही मौलिक आग्रह रहा है– दर्शन तथा संस्कृति का जीवन और साहित्य से सह संबंध। यदि दर्शन को उनके वाद या बोध का आधार मान लिया जाये तो निराला को भारतीय वेदांत दर्शन का महाकवि कहा जा सकता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि निराला में सीमाओं को अतिक्रांत करने का अपूर्व गुण विद्यमान रहा है। इसके साथ ही उनका एक विशिष्ट जीवन–दर्शन तथा एक निजी कलादर्शन भी रहा है, जो उनके व्यक्तित्व वैविध्य के बाद भी आद्यंत समरस बना रहा है।

2.5 निष्कर्ष

निराला एकांत–चिंतन तथा वेदांत–अध्ययन के परिणामस्वरूप विशुद्धरूप में एक दार्शनिक कवि बन गए थे। अपनी साहित्य–साधना के प्रथम विकास–चरण में ही निराला को कलकत्ता की विवेकानंद सोसायटी के मासिक "समन्वय" के संपादन तथा रामकृष्ण–आश्रम के संन्यासियों से अद्वैतदर्शन पर विचार–विमर्श करने का दीर्घ अवसर प्राप्त हुआ था। उस समय निराला ने रामकृष्ण परमहंस तथा स्वामी विवेकानन्द आदि के अद्वैतवादी दर्शन का न केवल गहन अध्ययन–मनन किया, वरन् अपनी वैचारिक मौलिकता को प्रमाणित करते हुए अत्यंत प्रौढ़, एवं विद्वतापूर्ण दार्शनिक लेख भी लिखे थे। निराला–साहित्य पर आद्यंत छायी हुई आध्यात्मिक भावना का अंकुर इसी "समन्वय" काल में पल्लवित हुआ था। आश्रम के संन्यासियों पर निराला की दार्शनिकता का अच्छा प्रभाव जम चुका था। आश्रम के एक स्वामी वीरेस्वरानदंजी तो निराला को "हिन्दी का कवीन्द्र" कहा करते थे।

निराला का जीवन–दर्शन समन्वयवादी है। इसीलिए निराला–साहित्य में ज्ञान तथा भक्ति की दोनों धारायें अपने विशुद्ध रूप में विद्यमान है। ज्ञानमार्गी दर्शन जहाँ उनकी दृष्टि में सांसारिक कुरूपता को नष्ट कर देता है और अहंतत्व का विशेषत्व प्रकट करता है, वहीं अपने परवर्ती काव्य में निराला अपनी ज्ञानप्रवणता को त्यागकर भक्ति–प्रवण बन जाते हैं। इसीलिए यह निश्चित करना कठिन है कि निराला ज्ञानमार्गी थे अथवा भक्तिमार्गी? यह कहना अधिक सरल तथा सार्थक है कि निराला ने अपने साहित्य द्वारा ज्ञान, भक्ति और कर्मयोग को समन्वित कर

उनकी एकात्मकता को प्रतिपादित किया और इसी उपलब्धि के कारण निराला को अद्वैतवाद को भूमिका पर महान् समन्वयक या पुरस्कर्ता कहा जाता है।

निराला की बुनियादी राष्ट्रीय अंतगर्धारा का प्रतिनिधित्व करने का श्रेय उनकी "भारति जय–विजय करें" रचना को प्राप्त है, जिसमें उन्होंने महासरस्ती स्वरूपा भारतमाता का स्तवन किया है–

"भारति जय, विजय करे।

कनक शस्य कमल धरे।

लंका पटतल शतदल

गर्जितोर्मि सागर जल

धोता शुचि चरण युगल

स्तव कर बहु–अर्थ–भरे (गीतिका)

निराला की इस राष्ट्रीयता तथा अद्वैतवादिता की व्यंजना "अर्णिमा" के कुछ गीतों में हुई है, जैसे–

भारत ही जीवन धन।

ज्योर्तिमय परम–रमण

सर–सरिता बन–उपवन

तपः पुंज गिरि–कंदर

निर्झार के स्वर–पुष्कर

दिक्प्रांतर मर्म–मुखर

(अणिमा–55)

'अणिमा' में निराला की एक प्रसिद्ध रचना है– "सहसाब्दि" जिसमें भारत के अतीत वैभव स्तरों को कई रूपों में अभिव्यक्त किया गया है। यह निराला की अतीत आस्था के साथ एक श्रेष्ठ राष्ट्रीय रचना भी है–

आ रहा याद वह वेदों का उद्धार ख्यात

वह श्रुतिधरता, ज्ञान की शिखा वह अनिर्वात

निष्कंप, भाष्य प्रस्थानत्रयीधर, संस्थापन

भारत के चारों और मठों का संज्ञापन। (अणिमा–28)

इस प्रकार प्रकट है कि निराला के दार्शनिक चिन्तन के चार कोण हैं (1) तत्वदर्शन (2) जीवनदर्शन (3) समाजदर्शन और अन्तदर्शन। इन्हीं में उनकी समस्त सामाजिक, सांस्कृतिक ऐतिहासिक, आर्थिक, और कलावादी अवधारणाएँ समाहित हैं।

बोध प्रश्न

1. निराला की प्रयोगवादिता को समझाइए। (पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिए)
2. निराला की देशान्तिक विचारधारा को समझाइए (पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिए)
3. निराला की मानवतावादी भावना को समझाइए। (सात पंक्तियों में उत्तर दीजिए)
4. निराला के काव्य में दृष्टिगत सौंदर्य–दर्शन पर प्रकाश डालिए। (सात पंक्तियों में उत्तर दीजिए)

2.6 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

महाकवि निराला मूल रूप से अद्वैत वेदान्त से जुड़े हुए एक दार्शनिक कवि हैं। उनका जीवन–दर्शन समन्वयवादी है। इसीलिए निराला–साहित्य में ज्ञान तथा भक्ति की दोनों धाराएँ अपने विशुद्ध रूप में विद्यमान है। ज्ञानमार्गी दर्शन जहां उनकी दृष्टि में सांसारिक कुरूपता को नष्ट कर देता है और अहंतत्त्व का विशेषत्व प्रकट करता है, वहीं अपने परवर्ती काव्य में निराला अपनी ज्ञान प्रवणता को त्यागकर भक्ति–प्रवण बन जाते हैं। इसीलिए यह निश्चित करना कठिन है कि निराला ज्ञानमार्गी थे अथवा प्रेममार्गीय? लेकिन निराला ने अपने साहित्य द्वारा ज्ञान, भक्ति और कर्मयोग को समन्वित कर उनकी एकात्मकता को प्रतिपादित किया है।

2.7 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला काव्य की प्रवृत्ति परक समीक्षा कीजिए।
2. महाकवि निराला के दार्शनिक चिंतन पर प्रकाश डालिए।
3. निराला के समाज दर्शन को समझाइए।
4. निराला के कला–दर्शन पर प्रकाश डालिए।

2.8 नियत कार्य / गतिविधियाँ

निराला से जुड़ी प्रमुख कृतियों का अध्ययन कर उनके दार्शनिक विचारों को समझे तथा अन्य दार्शनिक विचारधारा के कवि से तुलना करें। अन्य कवि के दार्शनिक विचारों से सम्बन्धित काव्य का अध्ययन करें। निराला तथा अन्य कवियों की विचारधारा में समानता तथा असमानता को अलग–अलग कर उनका अध्ययन करें।

2.9 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

इकाई को पढ़ने के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं। उन बिन्दुओं को नीचे अंकित करें।

2.9.1 चर्चा के लिए बिन्दु

2.9.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

2.10 संदर्भ अतिरिक्त पठन सामग्री

1. निराला की आत्मकथा – डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित।

2. निराला की साहित्य साधना (3 खंड) – डॉ. रामविलास शर्मा

3. राम की शक्तिपूजा—डॉ. नगेन्द्र।

4. निराला का व्यक्तित्व—कृतित्व—डॉ. धनंजय वर्मा

5. निराला अभिनंदन ग्रंथ—हेम बरुआ।

6. कला, सृजन प्रक्रिया और निराला— डॉ. शिवकरन सिंह।

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 4.3

2. देखिए 4.4

3. देखिए 4.4

4. देखिए 4.4

इकाई–3

निराला के काव्य की प्रासंगिकता

इकाई संरचना–

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 निराला की प्रासंगिकता के विभिन्न आयाम

3.4 निराला के रहस्य, अध्यात्मक एवं दर्शन की प्रासंगिकता

3.5 निराला का मुक्तक छंद एवं संगीत

3.6 नई भाषा–संरचना

3.7 विभिन्न काव्य रूपों के पुरोधा

3.8 नयी–नयी विचारधाराओं का उन्मेष

3.9 नई पात्र परिकल्पना

3.10 विषयगत वैविध्य

3.11 यथास्थिति के प्रति क्रान्ति और विद्रोह का स्वर

3.12 प्रेम और सौंदर्य के कवि

3.13 करुणा का स्वर

3.14 प्रगाढ भक्ति भावना

3.15 राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना

3.16 व्यंग्य विक्षोभ

3.17 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

3.18 अपनी प्रगति जाँचिए

3.19 नियत कार्य/गतिविधियाँ

3.20 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

3.20.1 चर्चा के लिए बिन्दु

3.20.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

3.21 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

3.22 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.1 प्रस्तावना

इस इकाई में महाप्राण निराला के जीवन और साहित्य की प्रासंगिकता पर विचार करना अभीष्ट है। प्रासंगिकता का तात्पर्य है उनके द्वारा दिये गये संदेश की समकालीन सार्थकता। निराला द्वारा रचा हुआ यह साहित्य पचास से नब्बे वर्ष पुराना है। इस बीच हमारी जीवन पद्धति में काफी कुछ बदलाव आ गया है। निराला जी ने जो जीवन यापन किया था वह अधिकांशतः पराधीन भारत का जीवन था। स्वतंत्र देश में भी वे लगभग 15 वर्षों तक रहे। उन्होंने बहुत निकट से भारतीय राजनीति, सामाजिक व्यवस्था, धार्मिक स्थिति, आर्थिक उतार–चढ़ाव और देश–विदेश की सांस्कृतिक गतिविधियों को देखा था। एक चिंतक के रूप में उन्होंने अतीत तथा वर्तमान का मंथन करते हुए भारतीय समाज के भविष्य की भी कल्पना की थी। इस इकाई में यह विचारणीय है कि उनके द्वारा किया गया यह काल, चिंतन कितना तर्क संगत है।

इस इकाई के अध्यायों में दी गयी सामग्री से स्पष्ट है कि निराला जी ने अपने समय को बखूबी पहचाना था। उन्होंने घोषणा की थी कि आने वाले वर्षों में जातीय, दंभ, भेदभाव, सामन्ती संस्कार आदि टिक नहीं पायेंगे। उन्होंने महसूस किया था कि अब युग को नेतृत्व सम्भालेगा बहुसंख्यक दलित समाज। धीरे–धीरे भारतीय समाज विश्वबोध (भू–मण्डलीकरण) और आर्थिक चकाचौंध से भर जायेगा। ये कथन इधर अक्षरशः घटित हुए हैं।

निरालाजी ने अपने साहित्य को जनसाधारण से जोड़ा है। आरम्भ में वे कल्पनाजीवी छायावादी कवि थे, पर 'कुकुरमुत्ता' के स्तर पर उतरकर वे जन–जन के कवि हो गये। उनकी अनेक गद्य–पद्य कृतियां आम आदमी से जुड़ी हुई हैं। इसलिए उनके साहित्य की प्रासंगिकता निर्विवाद है। यह प्रासंगिकता, विचारधारा, काव्यरूप, भाषा, शैली कई दृष्टियों से विचारणीय है।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में निराला की प्रासंगिकता के विभिन्न आयाम, निराला के रहस्य, अध्यात्मक, दर्शन, निराला के काव्य में मुक्तक छंद एवं संगीत, भाषा संरचना आदि पर विस्तार से विवेचन किया गया है। निराला के काव्यरूप, विचारधाराएँ, पात्र परिकल्पना के स्वर, भक्ति–भावना एवं राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना आदि विवेचन इस इकाई में किया गया है। ये विविध आयाम निराला की प्रासंगिकता सम्बन्धी विचारों का विवेचन कर रहे हैं।

3.2 निराला की प्रासंगिकता के विभिन्न आयाम–

आधुनिक हिन्दी–कविता के विभिन्न संचरणों में अपवाद है निराला, जिनको बराबर पाँच पीढ़ियों ने निरंतर एक के बाद एक अपना आदर्श माना है, क्योंकि वे निरंतर नयी–नयी प्रवृत्तियों का प्रवर्तन करते या उनका नेतृत्व करते रहे हैं। निराला छायावादी का समानांतर विकास करने वाले और उसको दिशा देने वाले रचनाकार के रूप में। जब छायावाद के विरोध में प्रगतिवाद का जन्म हुआ और इन कवियों को बर्खास्त करके नयी कवि पीढ़ी आयी तो उसने भी मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया कि प्रगतिवाद के प्रर्वतन का श्रेय तो निराला को 'कुकुरमुत्ता' जैसी कविता तथा 'नये पत्ते' में संकलित जनवादी कविताओं के कारण दिया जाना चाहिए। उसके बाद जब प्रयोगवाद जन्मा, तो इतिहास लिखते हुए फिर यही बात दुहरायी गयी और उसके प्रवर्तन का श्रेय भी निराला जी को मिला। कालान्तर में नयी कविता का श्रेय निराला जी को दिया गया और आज की जो नितान्त अद्यतन कविता है, समकालीन कविता और नवगीत, कवियों ने स्वीकार किया है कि उन्हें रचनाधर्मिता की प्रेरणा निराला से प्राप्त हो रही है।

यह इतिहास का विस्मय है और मैं समझता हूं एक बड़ा दुर्लभ, बड़ा विरल प्रसंग है। हर कवि न किसी न किसी विषय वस्तु, शिल्प और विचारधारा के साथ कालातीत हो जाता है, किंतु निराला पांच पीढ़ियों से प्रासंगिक बने हुए हैं। दूसरे ऐसा बहुत कम देखा गया है कि जो एक मूर्ति गढ़ता हो, फिर वही उसको निर्ममतापूर्वक तोड़ता हो। और तोड़ करके फिर दूसरी प्रतिभा गढ़ता हो, यानि लगातार गढ़ना और तोड़ते रहना। यह विशेषता निराला में ही रही है। इसी प्रसंग में विचारणीय है कि एक कवि व्यक्तित्व में वे मूल उपादान कौन–कौन होते हैं, जो उसकी रचना को कालजयी बनाते हैं? शायद उसे वस्तुनिष्ठ दृष्टि से बिन्दुवार विश्लेषित नहीं किया जा सकता है। यह विचार करने की आवश्यकता है कि आखिर ऐसा क्या है जो किसी रचना को पीढ़ी दर पीढ़ी (विरोधी पीढ़ियों से भी) जोड़ता चलता है? और उस कवि को प्रासंगिक बनाये रखता है, निरंतर संदर्भ–सापेक्ष। इस सन्दर्भ में गम्भीरतापूर्वक विस्तृत विमर्श आवश्यक है।

एक कवि का रचना–संसार कई प्रकार के तानों–बानों से बुना जाता है। केवल एकाग्राही स्वर, केवल एकपक्षीय विचारधारा, केवल एक प्रकार का विशिष्ट प्रयोग, केवल एक प्रकार का शब्द विन्यास। ये सब बारम्बार दुहराए जाने के कारण बहुत जल्दी निःशेष हो जाते हैं। लेकिन जो कवि विविधता का, बराबर परिवर्तनों का, स्वयं अपने ही अंदर के अन्तर्विरोधों के माध्यम से परिवर्तन करते रहने का अभ्यासी हो जाता है, उसकी छवि कभी धूमिल नहीं होती और उसका जायका कभी फीका नहीं पड़ता है। निराला अपने इसी निरालेपन के कारण 'निराला' कहलाये। उनके काव्य और व्यक्तित्व में जो वैविध्य है, उसमें जो विराट विस्तार दिखायी देता है, वह सुविदित है। निराला प्रगल्भ रागचेतना के कवि हैं। प्रेम पर उन्होंने बहुत कविताएं लिखी हैं। सौन्दर्य का चित्रण अकूत भाव से किया है। प्रकृति–प्रेम और प्रकृति–सौन्दर्य को मुग्ध रूप से रूपायित किया है। 'गीतिका' के गीतों में देखें या 'परिमल' की रचनाओं में, जगह–जगह उनका कवि, प्रकृति पर, मानव–जीवन पर, नारी–सौन्दर्यपर, उसकी उदात्त छवि पर, उसके लोकोत्तर रूप पर और लोक–सौन्दर्य पर रीझा हुआ है। ऐसे चित्रों की भरमार उनके काव्य में है। लेकिन यदि वे केवल राग–भावना या प्रणय–भावना तक ही सीमित रहते, तो एक बिन्दु पर, एक स्तर पर आकर समाप्त हो जाते। वे उतनी ही विशेषता और नवीनता के साथ कुरुपता का भी वर्णन करते हैं। विराटता का भी वर्णन करते हैं। भयावहता का भी वर्णन करते हैं। जीवन के जितने रस और जितने राग हैं, उन सब में लिप्त होते हैं और साथ ही जीवन के उदात्त चिंतन को स्वर देते हैं। निराला चिंतनधर्मा कवि रहे हैं–दर्शन की ऊंचाईयों पर पहुंचे हुए–चाहे शाक्त दर्शन हो, चाहे वेदान्त हो, चाहे वैष्णव विचारधारा हो, चाहे योग दर्शन हो। यह दर्शन हम 'राग की शक्ति–पूजा' में पाते हैं। इसके अलावा उनकी दर्जनों कविताओं में भी गूढ़ दर्शन के संकेत हैं। कहीं साम्प्रदायिक दर्शन, तो उसके साथ–साथ समाज–दर्शन, फिर अपना जीवन–दर्शन। दर्शन का परिविस्तार उनकी रचनाओं की विशेषता है। यही चिंतन उनके काव्य को, उनके समूचे साहित्य को दीर्घजीवी बना देता है।

इसी के साथ–साथ निराला में लोकजीवन के प्रति गहरी संसक्ति है, जहां वे समूचे भारतीय जीवन को देखते हैं। वे अपने लोकजीवन के प्रति, अपने गांवों के प्रति, गांवों की प्रकृति के प्रति, वहां के निवासियों के प्रति, वहां की समूची जीवन–संस्कृति के प्रति, गहरे लगाव की अभिव्यक्ति करते हैं। छायावादी दौर में जब इस प्रकार के विषयों पर रचनाएं नहीं की जा रही थीं, उस समय भी निराला की दृष्टि इन विषयों और इन आलम्बनों की ओर बढ़ती दिखायी देती हैं। छायावाद में प्रायः वर्षा का चित्रण प्राकृतिक दृश्यों के साथ किया जाता रहा है, किंतु निराला गांवों की वर्षा को नए ढंग से चित्रण करते हुए लिखते हैं–'बहुत दिनों बाद, खुला आसमान।' यह जो आसमान खुला है, लोग हाट–बाजार की ओर जा रहे हैं, नौजवान अपने–अपने अखाड़ों की ओर निकल पड़े हैं–लंगोटा लगाये हुए और रियाज करते हुए पूरे ग्रामीण परिवेश में, उस पूरे अंचल में जब कभी दुर्दिन खुलता है और खुला आसमान

दिखायी देता है तो चहल–पहल शुरू हो जाती है। लोकजीवन की ऐसी गहरी संसक्ति उनकी कई कविताओं में है। जैसे–'राजे ने रखवाली की', 'महंगू मंहगा रहा', 'कुत्ता भूकने लगा' या 'झींगुर डट कर बोला'। इन सारी रचनाओं में लोकजीवन को पूरे दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने का स्तुत्य प्रयास निराला न किया है। उनकी एक बड़ी प्रसिद्ध कविता है–'देवी सरस्वती'। सरस्वती के लगभग आठ बिम्ब निराला जी ने अपनी कविताओं में प्रस्तुत किये हैं। एक साम्प्रदायिक रूप हैं–सारस्वत सम्प्रदाय से जुड़ा हुआ, शाक्त साधना से जुड़ा हुआ, दार्शनिक विचारधारा से जुड़ा हुआ। इस कविता में वे पूरे अंचल को 'माँ भारतीया' के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। 'हरे भरे खेतों की सरस्वती लहरायी'। समूचा अंचल ही वह हरा–भरा खेत, वह वन्यक्षेत्र, माँ सरस्वती का स्थूल स्वरूप है। लोकजीवन के प्रति यह जो गहरी संसक्ति है, वह उनके काव्य का एक बहुत आकर्षक तत्त्व है। इसी के साथ–साथ उनकी कविता में प्रखर युगबोध और इतिहास–बोध है–'महाराज शिवाजी का पत्र' में केवल साम्प्रदायिक हिन्दुत्ववादी विचारधारा नहीं है। यहां भारत राष्ट्र की जागरणशीलता और सामाजिक नवोत्थान के बीच से अपनी अस्मिता को बनाये रखने की स्पर्धा (जो आजादी के उस दौर में चल रही थी) को मुखरित करने का प्रयास किया गया है। इसी के साथ–साथ देशकाल के पूरे परिप्रेक्ष्य में समूचे युगबोध को रूपायित और विश्लेषित करने का प्रयास निराला जी की रचनाओं में दिखायी देता है। 'तुलसीदास' काव्य में तुलसी जब उड्डयन करते हुए ऊपर पहुंचते हैं (फैण्टेसी के रूप में) तो उनको वहां से अपना भारत, अपना समूचा प्रकृति–परिवेश दिखायी देता है। वर्णाश्रम की चर्चा करते हुए उस समय जो शोषण, उत्पीड़न हो रहा था, समाज में जो विविध प्रकार के भेदभाव छाये हुए थे, अनाचार छाये हुए थे, उन सबका विश्लेषण करते हुए जो प्रखर युगबोध निराला जी ने प्रस्तुत किया है, वह केवल ऐतिहासिक तथ्य नहीं है, केवल मध्ययुगीन भारत का दृश्य नहीं है, वह समूचे भारतीय समाज का और आज के जनजीवन का भी सत्य है।

इसी के साथ–साथ उनके काव्य में विभिन्न प्रकार के प्रयोग हुए हैं–भाषा के स्तर पर, शिल्प के स्तर पर, बिम्ब और प्रतीकों के स्तर पर। काव्य के जो विशिष्ट उपादान हैं, उन समस्त स्तरों पर प्रयोग किए गए हैं। निराला पहले कवि हैं, जिन्होंने पुराख्यानों का निषेध किया था। अकेले 'राम की शक्ति पूजा' और 'पंचवटी प्रसंग' अपवाद है। इसके अतिरिक्त कोई पुराख्यान नहीं आने पाया। कहीं कोई 'मिथ' नहीं है। जो पुराख्यान लिये भी हैं, उसमें राम केवल पौराणिक चरित्र नहीं है बल्कि आज के मनुष्य के प्रतीक हैं। वह मनुष्य, जो संघर्षों से जूझ रहा है, वह जो हारता है, जो रोता है, जो दैवी शक्तियों की पक्षपात–भावना से दुःखी है, उससे आहत है और जो शक्ति की नयी कल्पना करता है और उसके बाद अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है। वहां राम केवल पौराणिक चरित्र या मर्यादापुरुषोत्तम नहीं हैं। वे आज के जूझते हुए मनुष्य हैं–'धिक् जीवन जो पाता ही आया है विरोध, धिक् साधन जिनके लिए सदा ही किये शोध।' ऐसा लगता है जैसे स्वयं निराला कह रहे हैं–जैसे आज का आदमी बोल रहा है। ऐसे कई पात्रों की परिकल्पना उन्होंने की। और इसी के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के मुहावरे, भाषा के नये–नये तेवर, बिम्बों, प्रतीकों के नये–नये प्रयोग–जो निराला के काव्य में दिखायी देते हैं, उसके परिणामस्वरूप वहां कहीं बासीपन नहीं आने पाया है। कहीं किसी प्रकार की आवृत्ति नहीं होने पायी है। निरंतर एक ताजगी, निरंतर नवोन्मेष। इसको उनसे और छायावाद से असहमत होते हुए भी आचार्य शुक्ल तक ने स्वीकार किया था, यह कहते हुए कि उनमें जो नव नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा है, वही उनकी सबसे बड़ी विलक्षणता है। आवश्यकता है– आज की कविता को आयुष्मती बनाने के लिए उसको निराला की तरह जनजीवन से जोड़ा जाए, उसकी पठनीयता बढ़ायी जाए, उसके साथ संगीत, तत्व–दर्शन और चिंतन का तत्व जोड़ा जाए। उसे युगबोध से, सामाजिक जनजीवन से और अपने आत्म से जोड़ा जाए। जब तक पूर्ण तादात्म्यबोध नहीं होता है, तब तक कविता भीतर से नहीं निकलती। वह शब्द क्रीड़ा बनकर रह जाती है। कला कौतुक मात्र बनकर रह जाती है। कविता लफाजी, कलात्मक करतब या जुम्लेबाजी नहीं है। निराला जी की विशेषता यह है कि वे जैसा जो सोचते रहे हैं, उसको कविता में ढालते हुए

चले हैं। 'सरोज–स्मृति' केवल उनकी अपनी पुत्री के निधन की व्यथा–कथा नहीं है, केवल शोक–गीत नहीं है, वह कविकर्म की सार्थकता का सवाल है। जीवन भर जो व्यक्ति सारस्वत साधना करता रहा, उसकी पुत्री दवा के अभाव में मर जाती है। यह समूची कवि पीढ़ी के वजूद का प्रश्न है, खासतौर से आज की मध्यवर्ग की पीढ़ी का। अपने निजी विषयों का किस तरह सार्वजनिकीकरण किया जाता है, और दैनन्दिन जीवन का किस तरह उदात्तीकरण किया जाता है, निराला की कविताएं इसका दृष्टान्त रखती हैं। यही स्थिति उनके विभिन्न प्रयोगों में दिखायी देती है। उनकी काव्य–भाषा में विभिन्न प्रकार के तेवर हैं। एक ओर 'राम की शक्तिपूजा' की भाषा है–समस्त पदावली, जिसके प्रति स्वयं निराला घोषणा करते रहे हैं कि 'एक–एक शब्द बंधा ध्वनिमय साकार'। उनका एक–एक शब्द बंधा है–भाव संकुल है, सुगठित है, जड़ा हुआ है। वह ध्वनिमय भी है और साकार भी है। वस्तुतः काव्यभाषा के ये ही तीन महत्वपूर्ण लक्षण होते हैं उसमें बंधाव होना चाहिए, अन्विति होनी चाहिए। इसके साथ–साथ ध्वन्यात्मकता होनी चाहिए और सम्मूर्तन–बिम्बन होना चाहिए। वही शब्द राशि काव्यभाषा है, जिसके माध्यम से अर्थ–बिम्ब और अर्थछवियां प्रकट होती चली जायें। एक ओर 'कुकुरमुत्ता' की भाषा है, 'मेरे लल्लू मेरे लल्ला' जैसे पद प्रयोगों की भाषा। तीसरी और उनके गीतों की भाषा है, जिसमें कामलकान्त पदावली है–माधुर्य से भरी हुई और चौथी ओर बतकही वाली भाषा है, जो 'नये पत्ते' की रचनाओं में या 'बेला' की गजलों में आयी है। भाषा के विभिन्न तेवर निराला की रचनाओं में दिखायी देते हैं, जिनका आज से भी गहरा सरोकार है। आज के कवि इसी प्रकार की भाषा लिख रहे हैं। इसका गहरा सरोकार हमारे दैनिक जीवन से है। इस सबका नेतृत्व निराला की कविता करती है। यही कारण है कि हिन्दी–कविता के इन विभिन्न संचरणों में विभिन्न प्रकार के अन्तर्विरोधों के बावजूद आज के कवि निराला से जुड़े हैं। अन्य छायावादी कवि अपनी काव्य–सम्पदा के बावजूद लगभग बर्खास्त कर दिये गये हैं। कहा जाता है कि वे केवल विश्वविद्यालयों के कवि हैं। इसमें मात्र निराला, जनकवि से लेकर पाठ्य कवि तक–यानी प्रबुद्ध वर्ग के लिए और आम आदमी के लिए भी, संप्रति सन्दर्भ सापेक्ष बने हुए हैं। नयी कविता तक का नेतृत्व तो निराला ने किया ही है, किंतु समकालीन कविता, आज की नितान्त नयी कविता के नेतृत्व का श्रेय भी किसी न किसी रूप में निराला को ही दिया जाना चाहिए, क्योंकि वे इन सबके लिए अभी प्रासंगिक बने हुए हैं।

3.4 निराला के रहस्य, अध्यात्मक एवं दर्शन की प्रासंगिकता

आधुनिक हिन्दी कविता में चिंतन दर्शन के क्षेत्र में यदि कोई सर्वाधिक चर्चा के केन्द्र में रहा है तो निश्चित रूप से वे निराला हैं। मुक्तभावभूमियों का, मुक्त मानव–मूल्यों का यह चितेरा कटु आलोचनाओं–प्रत्यालोचनाओं की तुला पर बारम्बार चढ़ाया भी जाता रहा है। छायावादी कवियों ने अपने काव्य में दार्शनिक मन्तव्यों को बहुत स्थान दिया है। वस्तुतः काल्पनिक उड़ान के बाद जब छायावादी कवि यथार्थ की ठोस धरती पर उतरने लगे, तब उनका ध्यान गूढ़–गम्भीर दर्शन से हटकर अपनी प्रतिबद्धता के अनुरूप एक दिशा की ओर उन्मुख हो गया। जयशंकर प्रसाद ने प्रत्यभिज्ञा दर्शन, पंतजी ने अरविन्द दर्शन, महादेवी वर्मा ने बौद्ध दर्शन तथा निराला ने स्वामी विवेकानंद तथा रामकृष्ण परमहंस के वेदांत दर्शन को अपनी कविता में प्रस्तुत किया है। निराला ने अपने एक लेख में लिखा–"मैं एक पहुंचा दार्शनिक, दुस्साध्य रहा है, किंतु साथ ही उनके पिंगल ज्ञान का साक्ष्य भी। यह मुक्त छंद पिछले छह दशकों से हिन्दी कविता में हावी है। रचनाकारों ने यति–गति तक को त्याग कर उसे मात्र अखबारी गद्य बना डाला है। द्विवेदी युगीन तुकबन्दी एक अति पर थी और आज की बेतुकी पद रचना (गद्य रचना) दूसरी अति पर है। निराला ने इसका मध्यमार्ग सुझाया था, जो अब पुनः अनुपालनीय है।

3.5 निराला का मुक्त छंद एवं संगीत

छायावादी युग के काव्य वैभव का एक बहुत बड़ा भाग उसके गीतों में सुरक्षित है। प्रायः सभी छायावादी कवि प्रबंध-रचना में निष्णात होते हुए भी प्रमुख रूप से गीतकार रहे हैं। इस युग के सर्वाधिक क्रान्तिदर्शी कवि निराला ने गीति के शिल्पविधान में कई नवीन आयाम स्थापित किये हैं।

सामान्यतया गीति काव्य में शब्द–माधुरी व लय का होना अनिवार्य माना जाता रहा है, पर शनैः शनैः उसमें अंतर्जगत का अत्यधिक चित्रण होने लगा और आत्माभिव्यक्ति ही उसका प्रधान प्रवृत्ति बन गयी। अतएव गीति–काव्य का प्रधान गुण भावावेश हो गया, पर भारतीय साहित्य में तो उसमें भावावेश के साथ–साथ स्वर–साधना अर्थात् संगीत को भी प्रमुख माना गया और गीतिकाव्य का निर्माण ही संगीत के उच्च आदर्शों पर होने लगा।

निराला की संगीत कला 'गीतिका' में सर्वाधिक सफल हुई है। जितना उदात्त काव्य, उतना ही संगीत भी। निराला जी के कथानानुसार–'मैंने अपनी शब्दावली को काव्य के स्वर में मुखर करने की कोशिश की है।' यद्यपि प्रत्येक गीत व्यक्तित्व का प्रकाश और अभिव्यक्ति होता है, तो भी गीतों को शास्त्रीय संगीत की नियमावली के अनुरूप ढालना और संगीत को काव्य से मुखर करना ही यहाँ प्रधान उद्देश्य रहा है। वस्तुतः जितना महत्व बंगाल में रवीन्द्र संगीत का है, उतना ही महत्वपूर्ण है हिन्दी में निराल–संगीत। संगीत की स्वर–साधना के बावजूद भाव–सौन्दर्य का स्खलन निराला के किसी भी गीत में नहीं हुआ है। रवीन्द्र–संगीत की कोमल भावोच्छलता के स्थान पर निराला–संगीत में पौरुष और ओज का स्फुरण ज्यादा मिलेगा।

इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए सन् 1947 ई. में डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा–

'निराला बंगाल की सुरम्य संगीतमयी धारा में जन्मे थे। उन्होंने महिषादल के राजसी वैभव में अपने बाल्यकाल में ही शास्त्रीय संगीत की शिक्षा प्राप्त की थी। संगीत मर्मज्ञ होने के साथ–साथ वे स्वयं बहुत अच्छे गायक भी थे। वे मस्ती में गाते थे। स्वयं अपने आप सधे हुए लगते और शब्दों की ध्वनि के साथ स्वर का ऐसा योग देते कि भाव में और भी गहराई आ जाती। उनके स्वर में पिछले सोने का सा मार्दव था, आवाज तार–सप्तक के लायक न तो महीन थी, न मंद्र के लायक अति गंभीर। गले में कहीं खरास न थी। धीमे शांत स्वर सहज ही रेशम के लच्छो जैसे निकलते।'

वस्तुतः बचपन से ही बंगाल में पलने–बढ़ने के कारण निराला जी में वहां के संस्कारों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक भी था। यह संगीत निराला के बंगाली–संस्कारों की देन थी। इस सन्दर्भ में सन् 1950 ई. में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी लिखते हैं–

'जैसे और सब बातें कीं, वैसे ही संगीत के अंग्रेजी ढंग की शुरूआत सबसे पहले बंगाल में हुई थी। इस नये ढंग की ओर निराला जी सबसे अधिक आकर्षित हुए और अपने गीतों में इन्होंने इसका पूरा जौहर दिखलाया। संगीत को काव्य और काव्य को संगीत के सबसे अधिक निकट लाने का श्रेय निराला जी को है।'

आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने निराला–संगीत की स्वच्छंद–शैली को इस प्रकार अभिव्यक्त किया–

'उनके कुछ गीत शास्त्रीय राग–रागिनियों में बंधे हैं। निराला के अनेक गीत शास्त्रीय संगीत का अनुवर्तन करते हैं। एक दूसरा है–स्वच्छंद संगीत। इसमें कतिपय भारतीय लयों, ग्राम्य–गीतों का समन्वय मिलता है। निराला जी के अनेक गीत इस स्वच्छद शैली में लिखे गये हैं।'

इस प्रकार निराला ने काव्य में संगीत का प्रयोग किया। निराला जी की संगीत–साधना के विषय में उनके पुत्र संगीतज्ञ पं. रामकृष्ण त्रिपाठी ने कहा–

'आरम्भ से ही निराला जी की अभिरूचि संगीत की ओर थी। संगीतज्ञों की संगति में रहकर उन्होंने इस कला का अभ्यास किया। हारमोनियम आदि वद्यों पर ये ठुमरी, ध्रुपद, भजन, बंगला के गीत आदि बहुत ही सस्वर तथा सफलतापूर्वक गा लेते थे। इसी कारण वे राजा से प्रज्ञा तक और विद्यार्थियों से प्राध्यापकों तक सभी को प्रिय थे।'

छायावादी कवियों में सर्वप्रथम निराला ने ही काव्य और संगीत का अभिन्न सम्बन्ध स्थापित किया है। उनके प्रथम गीत–संकलन 'गीतिका' में यह विशेषतापूर्ण रूप से विद्यमान है।

निश्चय ही 'काव्य और संगीत की उनकी साधना गीतिकाव्य में बहुत सफलत हुई है। इनमें किसी को भी प्राथमिक या गौण नहीं कहा जा सकता। जितना उदात्त उनका काव्य है, उतना ही संगीत भी'।

निराला काव्य में संगीत का प्राचुर्य होने के कारण उसकी भाषा में भी संगीतात्मकता है। निराला की भाषा में लय–संगीत की प्रधानता है।

इस संगीत को कुछ ने कष्ट साध्य भी माना है। दरअसल निराला जी की कविता में संगीत इतना प्रधान है कि शब्दों से सामान्य रूप से परिचय रखने वाले पाठक गड़बड़ा जाते हैं और उन्हें विलष्ट भी कह देते हैं। संगीत तत्व को बनाये रखने में ध्वन्यात्मक शब्द ही सहायता करते हैं और निराला जी ऐसे शब्द चुन–चुन कर रख देते हैं कि उनकी ध्वन्यात्मकता से संगीत की रक्षा के साथ काव्य सौन्दर्य भी बढ़ जाता है। उदाहरणार्थः–

मौन रही हार

प्रिय पथ पर चलती, सब कहते शृंगार

कण–कण कर कंकण, मृदु किण–किण रव किंकिणी

रणन–रणन नूपुर उर लाज लौट रंकिणी

और मुखर पायर स्वर करे बार–बार

प्रिय पथ पर चलती सब कहते शृंगार।

यहां लययुक्त प्रवाह पश्चिमी संगीत की सी गत्यात्मकता और साथ ही मंथर–मंथर गति से आगे बढ़ती हुई स्वदेशी रागात्मकता, इन सभी का समन्वय करते हुए कुछ मिश्रित ढंग से राग रचे गए हैं।

निराला के कुछ गीतों की गति बिल्कुल आर्केस्ट्रा की सी स्वरलहरियां जगाती है तो कुछ गीत धीरे–धीरे दूर से सुनाई देती वीणा के स्वरों की याद दिलाते हैं। ऐसे गीतों में वार्णिक और मात्रिक दोनों तरह के छंदों के नियम टूट जाते हैं, किंतु लय, प्रवाह, राग और अर्थ का एक सिलसिला बना रहता है।

'गीतिका' के गीत शास्त्रीय संगीत की नियमावली के अनुरूप अनेक राग–रागनियों में बंधे हुए पूर्णतः गेय हैं। कवि का शास्त्रीय संगीत–ज्ञान इन गीतों में दिखाई देता है।

विशेष रूप से 'गीतिका' में निराला ने गीत और संगीत दोनों का सामंजस्य करके काव्य और संगीत की साध

ना के एक नये आयाम को प्रस्तुत किया है।

निराला जी ने संगीत और गीत काव्य की पूरी रक्षा एक साथ की है। उनके संगीत–काव्य को समीक्षकों ने अपने–अपने ढंग से समीक्षित किया है। किसी ने निराला–संगीत को हिन्दी में बंगला की नकल बताया तो किसी ने पाश्चात्य एवं भारतीयता का सम्मिश्रण कहा। किसी को उनकी भाषा ने प्रभावित किया, तो किसी ने उनके खड़ी बोली गीतों को स्वरबद्ध करने में कठिनाई बतायी। अधिकतर लोगों ने छन्दोबद्धता और संगीतात्मकता को एक साथ जोड़कर उनकी समीक्षा की है।

निष्कर्ष यह कि निराला–काव्य में संगीत का विशिष्ट प्रयोग हुआ है। निराला के खड़ी बोली गीतों पर यह आक्षेप बराबर लगाया जाता रहा है कि व गाये नहीं जा सकते। परंतु 'गीतिका', 'अर्चना', 'आराधना' आदि के गीतों द्वारा निराला जी ने यह सिद्ध कर दिया कि खड़ी बोली में भी लचीलापन, मधुरता एवं शास्त्रीय संगीत में ढलने की क्षमता है। निराला जी को सुर और लय बहुत गहराई से आकर्षित करते रहे हैं। उनका संगीत उनके हृदय में बजता हुआ, बाहर आता मालूम पड़ता है। उनके गीतों को पढ़ते हुए बराबर यह लगता है कि उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व सुर से सधा हुआ था। सुरों और रंगों के इसी संयोग ने कभी–कभी उन्हें बैसवारी लोकगीतों की 'ट्यून' की ओर आकर्षित किया है। रंगमयता की दृष्टि से पावस और बसंत ऋतुएं उन्हें बहुत प्रिय लगती हैं। होली गीतों का मधुर स्वर उनके गीत 'मार दी पिचकारी' में अनुगुंजित हुआ है।

वस्तुतः साहित्य और संगीत का समन्वय यदि किसी आधुनिक कवि ने सच्चे अर्थों में किया है तो वह एक मात्र निराला जी हैं। उन्हें गीतों में संगीत का पुट देने का शोक था। संगीत के बिना वे काव्य को निष्प्राण मानते थे।

निराला की संगीत साधना का सुफल हिन्दी को नए छन्दोविधान के रूप में मिला है।

छन्द–प्रयोग में निराला जी ने विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है। वे एक अनुपम काव्य–शिल्पी थे। उन्होंने अनुभूति और अभिव्यक्ति, दोनों ही क्षेत्रों में परम्परा के पिष्ट–पेषण के स्थान पर नूतन पंथ का अवलम्ब ग्रहण किया। छन्दों की दिशा में भी उन्होंने परम्परागत रूढ़ियों को विच्छिन्न करके मौलिक प्रयोग किये। इनकी छन्द–योजना में उनका क्रान्तिकारी स्वरूप व्यक्त हुआ है। निराला जी कविता की मुक्ति के लिए छन्दों की मुक्ति की आवश्यकता पर बल देते हुए 'परिमल' की भूमिका में कहते हैं–

'मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है। मनुष्यों की मुक्ति कर्मों के बंधन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छंदों के शासन से अलग हो जाना है।'

इस प्रकार निराला ने कविता में मुक्त छन्दों के प्रयोग की आवश्यकता प्रतिपादित की है और जब उन्होंने पहले पहल इस छंद का प्रयोग किया, तब कुछ आलोचकों ने मजाक उड़ाने के लिए उसे कंगारू छंद, 'रबड़ छंद', 'केंचुआ छंद' कहा। पर अब अधिकांश विचारक यह स्वीकार करते हैं कि–

'निराला जी ने हिन्दी काव्य को मुक्त छंद की अमर विभूति प्रदान कर निश्चय ही अत्यन्त स्तुल्य कार्य किया है।'

निराला की प्रथम कविता 'जुही की कली' (जिसका रचना काल 1916 बतलाया जाता है) इसी प्रयोग को लेकर चली।

सन् 1938 ई. में पं. रामचन्द्र शुक्ल निराला जी के मुक्त छंद के बारे में कहते हैं--

'सबसे अधिक विशेषता आपके पद्यों में चरणों की स्वच्छंद विषमता है। कोई चरण बहुत लंबा, कोई बहुत छोटा, कोई मझोला.....।'

इस नये प्रयोग के कारण उस समय निराला का कसकर विरोध हुआ। अतः मुक्त छन्द की महत्ता स्पष्ट करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने सन् 1937 ई. में लिखा--

'मुक्त--छंद की महत्ता इस बात में नहीं है कि वह बंधनहीन है, या मुक्त भावों का वाहन हैं, वरन् इसमें है कि उसने मात्रिक छंदों की एक लय को भंग किया। वह हिन्दी--कविता में बोलचाल की लय की विविधता लाया। उसने भाषा की छिपी हुई शक्ति उद्‌घाटित की। हिन्दी के कवित छन्द में यह विविधता है।'

निराला के मुक्त छंद पर सन् 1956ई. में प्रकाशित डॉ. समविलास शर्मा की यह टिप्पणी अत्यन्त महत्वपूर्ण है--

'मुक्त--छंद वास्तव में अर्द्ध--नारीश्वर है। कभी--कभी एक ही कविता में परुषता और सुकुमारता दोनों गुण दिखते हैं। निर्गुण आत्मा की तरह यह पुरुष भी बनता है और स्त्री भी। निराला ने अपने मुक्त छंद को कवित्त की गति ही नहीं दी, उसकी सानुप्रसा शब्दावली भी अपनाई। मुक्त छंद के चरणों में उन्होंने अनुप्रासों के घुंघरू बांध े। इन घुंघरूओं से जब जैसी इच्छा हुई, वैसी ध्वनि निकाली। मुक्त छंद में सहज भावोद्‌गार वाली कविताएं उन्होंने कम लिखीं। वर्णनात्मक, नाटकीय, वक्तृत्व कला--प्रधान कविताएं ही अधिक लिखीं। मन का सहज प्रकाशन, भावों का अकृतिम चित्र उनके मुक्त छंद में प्रायः नहीं है। स्वतः स्फूर्ति गेयता की जगह नाटकीय रचना--कौशल मुक्त--छंद में लिखी हुई इन कविताओं की विशेषता है।'

स्पष्ट है कि निराला के मुक्त छंद की प्रयोजनीयता को शर्मा जी ने पहले पहल पहचाना। इसे परवर्ती समीक्षकों ने आगे बढ़ाया। ठसका आचार्य नंददुलारे बाजपेयी ने भी समर्थन किया। इसी बीच सन् 1947 ई. में डॉ. बच्चन सिंह ने 'क्रांतिकारी कवि निराला' पुस्तक में निराला के छंदों का वर्गीकरण किया। उनके अनुसार निराला ने मुक्त छंद की विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। प्रमुख शैलियां हैं--

1.दार्शनिक प्रगीत (जागरण और रेखा)

2.लघु प्रगीत (जुही की कली, शेफालिका)

3.दीर्घ प्रगीत (जागो फिर एक बार, कवि, स्मृति--चुम्बन)

4.पत्र प्रगीत (शिवाजी महाराज का जयसिंह के नाम पत्र)

5.गीत नाट्य (पंचवटी--प्रसंग)

उपर्युक्त सूची से यह स्पष्ट हो जाता है कि निराला के इस छंद में भाव वैविध्य को वहन करने की पूर्ण क्षमता है। शृंगार--चित्रण से लेकर अध्यात्म दर्शन के निरुपण तथा राष्ट्रीय संस्कृति--प्रेम, सौन्दर्य आदि के धरातल पर उद्‌बोधन का पूरा सामर्थ्य निराला ने मुक्त छंद में सिद्ध किया है।

'कवि निराला' (सन् 1955ई.) में आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी जी ने 'मुक्त छन्द' की चर्चा करते हुए कहा कि

निराला मूलतः प्रगीत–कवि हैं। इस संदर्भ में 'आधुनिक साहित्य' की भूमिका द्रष्टव्य है। वे लिखते हैं–

'निराला का 'मुक्त–छन्द' काव्य की छन्दोगत परतंत्रता का निराकरण है। उसने काव्य को मुक्ति तो दी ही, साथ ही नये 'युगोपयोगी परिधान' से भी सज्जित किया। उन्होंने स्वयं 'मुक्त–छन्द में लय की सुधरता' ला दी। मुक्त–छन्द की इस आयोजन के कारण ही उनकी कविता में 'सुकुमार प्रसाधन' कल्पना की बारीकी और अनावश्यक आमरण नहीं है। इसलिए 'स्वच्छन्दता का जो अबाध स्वरूप निराला की रचनाओं में देखा जाता है, उसकी तुलना दूसरे कवि से नहीं हो सकती।'

वस्तुतः यह सर्व स्वीकार्य रहा है कि निराला अपने जन्म काल से लेकर इस छन्द के रचनाकाल तक बंगाल में रहे। विवेकानंद की अनेक रचनाओं का अनुवाद उन्होंने बंगाल से हिन्दी में किया और रवि ठाकुर पर तो समीक्षा–ग्रंथ भी लिखा। यहीं से मुक्त छंद की शुरूआत हुई।

निराला जी ने इस मुक्त–छन्द का सम्बन्ध वेदों से स्थापित किया। गायत्री मंत्र को वे आर्यों की स्वच्छन्द प्रकृति का सबसे बड़ा परिचायक छंद मानते हैं। वस्तुतः जब लोगों ने यह कहकर विरोध किया कि यह तो विदेशी प्रभाव है, तब उन्होंने खोज करके मुक्त–छंद को वेदों से जोड़ दिया। वे इस छन्द के आविष्कर्ता हैं या प्रथम प्रयोक्ता, यह विचारणीय है। कुछ का मत है कि विहारबन्धु (1881) में प्रकाशित महेश नारायण की कविता 'स्वप्न' सर्वप्रथम मुक्त छंद में रची गयी है। खैर, इसके प्रवचन का श्रेय निराला को ही है।

निराला के मुक्त–छंदों को देखने से लगता है कि उन्होंने मुक्त छन्द रचना के कुछ नियम बना रखे थे। इसी प्रसंग में सन् 1965 ई. में आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने लिखा है कि निराला की 'राम की शक्ति पूजा' दीर्घ प्रगीत है। जब उसे लंबी कविता कहा जा रहा है, जो शास्त्रीय अभियान नहीं है।

निराला ने परिमल, गीतिका, अर्चना, आराधना, गीत गुंज आदि में तरह–तरह के गीत रचे और 'बेल' में गजलें लिखीं।

'अणिमा' में उन्होंने सानेट लिखे। अन्य कृतियों में भी दोहे, चौपाई, पद, धनाक्षरी कवित्त, सवैया, पैरोडी, लोकगीत यानि भांति–भांति के छन्द रचे। 'तुलसीदास' का जैसा बहु अंतर्तुकान्त छन्द तो वस्तुतः दुस्साध्य है और इस कथन का प्रमाण है कि निराला पिंगल के आचार्य थे। निराला के मुक्त–छंद में बाह्य नियमावलियां उपेक्षित हो गयीं, किंतु उसकी आत्मा लय एवं ताल सुरक्षित है। निराला ने छंद में बहुविध प्रयोग किये हैं, पर उनका कवि छंदों की लयात्मकता और उसके प्रवाह को सुरक्षित रखने हेतु सदा सजग रहा है।

अपने प्रगीतों में निराला जी ने रसानुकूल छन्दों को ग्रहण किया है और कई प्रकार के स्वच्छन्द छन्दों का आविष्कार किया है। अपने आख्यानक काव्यों में उन्होंने जिन छन्दों को अपनाया, वे छंदशास्त्र के अनुकूल होने पर भी कुछ परिवर्तन के साथ आये हैं।

छन्द की स्वच्छन्दता अधिक पूर्णरूप में वहीं देखी जा सकती है, जहाँ इन्होंने तुकबंदी तथा चमत्कार को बढ़ावा मिला था, इसलिए निराला जी ने भावाभिव्यक्ति में पूर्णता लाने के लिए कम से कम छांदसिक अनुशासन स्वीकार करने की बात की।

इस प्रकार स्पष्ट है कि छन्दोबंध के क्षेत्र में निराला का काव्य उच्चस्तरीय है।

3.6 नई भाषा–संरचना

निराला जी ने हिन्दी कविता को सर्वथा एक नई भाषा दी है। वे दावा करते रहे हैं कि कवि शब्दों को प्राणाधिक प्यार करता है। उनकी गर्वोक्तियाँ थीं– (1) 'गद्य में पद्य में समाभ्यस्त' (2) 'एक–एक शब्द बँधा ध्वनिमय साकार'।

अर्थात् उनकी कविता का हर शब्द सुगठित है, ध्वन्यात्मक और बिम्ब विधानपूर्ण है। काव्य भाषा के ये ही तीन प्रमुख गुण होते हैं। गद्य को निराला ने जीवन संग्राम की भाषा कहा है। उन्होंने भाषा के कई रूप प्रस्तुत किये हैं। एक ओर 'राम की शक्ति पूजा' वाली तत्सम परिनिष्ठित समस्त पदावली है, जिसमें उन्होंने अठारह–अठारह पंक्तियों के वाक्य लिखे हैं–दूसरी ओर छोटे से छोटे वाक्य हैं, यथा–

'रवि हुआ अस्त'

'निशि हुयी विगत' आदि।

'शक्तिपूजा' ही भाषा जितनी टकसाली है, उनकी परवर्ती कविता की भाषा उतनी ही मनमानी हैं। 'कुकुरमुत्ता' में वे बेधड़क बोलचाल की भाषा का प्रयोग करते हैं। 'नये पत्ते' की कविताओं में उनकी बैसवारी (जनपदीय अवधी) के ठेठ देशज प्रयोग दिखाई देते हैं। 'गीतिका' और 'परिमल' की रचनाओं में बाँग्ला शब्दावली की प्रभाव परिलक्षित होता है। निष्कर्ष यह है कि निराला की भाषा जितनी परिनिष्ठित है, उतनी ही प्रयोगपूर्ण है। उसमें लोकभाषा और काव्य भाषा का सुंदर सम्मिश्रण हुआ है। निराला जी ने स्वयं अनेक नये–नये शब्द बनाये हैं, कहीं अत्यन्त क्लिष्ट, कहीं अत्यन्त सरल। वस्तुतः उनका भाषिक प्रयोग निराला ही था। यों रोजमर्रा की भाषा को कवित्वपूर्ण बनाए रखना अपेक्षाकृत कठिन होता है। हिन्दी फिल्मों गीतों ने इसे अपनाया है और भवानी प्रसाद मिश्र, नागार्जुन जैसे कवियों ने इस जनभाषा के सहारे अपनी जनसंवेदना के संप्रेषण में यथेष्ट ख्याति प्राप्त की है। हिन्दी की अपनी इस भाषिक प्रकृति और संस्कृति की प्रतिष्ठा का श्रेय निराला को है।

3.7 विभिन्न काव्य रूपों के पुरोधा

निराला जी ने गद्य–पद्य की अनेक शैलियाँ अपनायी है। उन्होंने 'तुलसीदास' नामक खण्डकाव्य लिखा। 'राम की शक्ति पूजा', 'शिवा जी का पत्र', 'वनबेला', 'सरोज स्मृति' जैसी लम्बी कविताएँ लिखीं। उन्होंने 'गीतिका', 'गीतगुंज', 'अर्चना', 'आराधना', 'अणिमा', 'सांध्य काकली और परिमल' में सैकड़ों प्रकार के गीत लिखे। 'पंचवटी प्रसंग' जैसा काव्य नाटक लिखा और साथ ही रवीन्द्रनाथ, विवेकानन्द, गोविन्ददास, चंडीदास व तुलसीदास आदि की रचनाओं के काव्यानुवाद किये।

पद, दोहा, चौपाई, सवैया, गजल सभी छंदों में उनकी गति थी, इसीलिए वे कई काव्य रूपों के पुरोधा सिद्ध हुए।

3.8 नयी–नयी विचारधाराओं का उन्मेष

निराला जी का लेखन एक ओर जहां विवेकानन्द के वेदांत दर्शन से प्रभावित है, तो दूसरी ओर समकालीन जीवन दर्शन से भी। उन्होंने रामकृष्ण आश्रम में साधुओं का सा जीवन बिताते हुए वेदांत, योग, शाक्तमत तथा वैष्णव उपासना पद्धति को निष्ठापूर्वक आत्मसात किया था, किंतु अन्ततः इन सबको उन्होंने एक नये युगबोध के रूप में परिणत कर दिया था। उनका अद्वैतवाद दरिद्रनारायण की उपासना में बदल गया। निराला अनुभव करने लगे कि

अमीर–गरीब सब एक ही ब्रह्म हैं, इसीलिए शोषितों के प्रति उनके मन में संवेदना प्रबल हो उठी। उनकी अनेक कविताएं, जैसे–भिक्षुक, विधवा, वह तोड़ती पत्थर आदि इसी लोक संवेदना से परिपूर्ण हैं। एक गीत में वे समर्थ समाज से कहते हैं–

'छोड़ दो जीवन यों न मलो।

यह भी तुम जैसा ही सुन्दर।

..... तुम भी अपनी ही डालों पर फूलों और फलों।'

यहाँ 'जियो और जीने दो' का सिद्धांत मुखरित हुआ है। यह भारतीय साम्यवाद, समाजवाद निराला की कई कविताओं में दिखाई देता है। इसका स्रोत कदापि मार्क्सवाद न होकर शुद्ध भारतीय वेदांत है। निराला जी ने 'अधि वास' नामक कविता में लिखा कि जब मैं मोक्ष की दिशा में बढ़ रहा था, तभी मुझे एक दुखी भाई दिखाई पड़ा। मैं उसकी सेवा में लग गया, अर्थात् माया से बँध गया, फलतः मोक्ष का मार्ग अवरुद्ध हो गया, लेकिन उसकी कोई चिंता मुझे नहीं।

'मैंने मैं शैली अपनाई।

देखा एक दुःखी निज भाई

दुःख की छाया पड़ी हृदय में मेरी

झट उमड़ वेदना आयी।'

जनसाधारण के प्रति निराला के मन में बड़ी करुणा रही है। भिक्षुक की दशा पर द्रवित होते हुए वे कहते हैं–

'ठहरो हमारे हृदय में है अमृत, मैं सींच दूँगा

अभिमन्यु जैसें हो सकोगे तुम

तुम्हारा दुःख मैं अपने हृदय में खींच लूँगा।'

इस शोषित जनता के प्रति निराला ने मात्र सहानुभूति ही नहीं प्रकट की है, बल्कि सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष करते रहने की प्रेरणा भी प्रदान की है। पत्थर तोड़ने वाली मजदूरिन उनकी दृष्टि में आदर्श है जो परिस्थितियों से जूझ रही है, लेकिन परास्त नहीं हुई है। कवि के शब्दों में–

देखो मुझे उस दृष्टि से,

जो मार खा रोई नहीं।

निराला के अनेक पात्र जैसे चतुरी, बिल्लेसुर, चमेली, पुखराज आदि परिस्थितियों से टकराते हैं और अन्ततः सफलता प्राप्त करते हैं।

3.9 नई पात्र परिकल्पना

निराला जी ने एक ओर धीरोदात्त नायकों का चित्रण किया है, जैसे 'शक्तिपूजा' और 'पंचवटी प्रसंग' के राम, लक्ष्मण, हनुमान और जाम्बवान आदि। और 'शिवाजी' तथा 'तुलसीदास' नामक काव्य के तुलसी भी। साथ ही उन्होंने आर्थिक विवशतावश भीष्म, प्रह्लाद और महाराणा प्रताप पर जीवनी ग्रंथ लिखे, अर्थात् पारम्परिक पौराणिक पात्रों का भी चित्रण किया। दूसरी ओर उन्होंने लघु पात्रों को प्रतिष्ठा दी, जैसे कुल्ली, चतुरी, बिल्लेसुर, चमेली, महँगू, झींगुर आदि। इन लघु पात्रों पर तरस न खाकर उन्होंने इनका मुक्त गौरव–गान किया, इसीलिए वे नीचे से ऊपर उठते दिखते हैं। एक ओर उनके राम हैं, जो अंतिम कमल के लुप्त हो जाने पर अपनी आँख चढ़ा देने का संकल्प लेते हैं और दूसरी ओर चतुरी जैसा लघुपात्र है, जो परिस्थितियों से कभी हार नहीं मानता। निराला की यह पात्र–परिकल्पना वस्तुतः बड़ी प्रेरक है।

3.10 विषयगत वैविध्य

निराला जी ने अपनी रचनाओं में एक ओर दर्शन का दिग्दर्शन कराया है, जैसे 'तुम और मैं', 'अधिवास', 'पंचवटी प्रसंग', 'कौन तम के पार', 'पार ही रे हीरे की खान' आदि में, तो दूसरी ओर वे सामाजिक नवजागरण की दिशा में सक्रिय रहे हैं। उन्होंने छह दशक पहले 'बेला' की इन पंक्तियों में यह मांग की थी–

'बैंक किसानों का खुलवाओ।'

'देश में बंट जाये तो पूंजी तुम्हारी मिल में हैं।'

'कुकुरमुत्ता' में निराला ने गुलाब को कुलीन शौकीन और विलायतीपन से लालायित पूंजीवादी नव धनाढ्य वर्ग का प्रतीक मानते हुए और 'कुकुरमुत्ता' को उपेक्षित देशी सत्ता का प्रतिनिधि मानते हुए वर्ग संघर्ष को वाणी दी है। उनकी रचनाओं में समसामयिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चिंतन भरा पड़ा है। ग्रामीण व्यवस्था और लोकजीवन, विशेष रूप से बैसवारा अंचल के प्रति उनके मन में विशेष अनुरक्ति है। वे इनके विकास के लिए कटिबद्ध लिखते हैं, जैसे–

'जल्द–जल्द चलो, कदम बढ़ाओ।
धोबी, पासी, चमार सबकी लगेगी पाठशाला।
रात के अंधेरे में खोलेंगे, जमींदार की हवेली का ताला।
एक पाठ पढ़ो, फिर टाट बिछाओ।'

3.11 यथास्थिति के प्रति क्रान्ति और विद्रोह का स्वर

निराला जी मूलतः क्रान्तिकारी कवि रहे हैं। केवल कथनी में ही नहीं, बल्कि करनी में भी। 'सरोज स्मृति' कविता इसकी उदाहरण है। वे आजीवन रूढ़ियों का विरोध करते रहे हैं। काव्य के क्षेत्र में भी और जीवन में भी। सत्ता का उन्होंने बराबर निषेध किया और जीवन पर्यन्त कभी राज्याश्रय नहीं ग्रहण किया। उन्हें बराबर पेट के लाले रहे, लेकिन सामंतों या सत्ताधीशों के आगे झुकना उन्होंने स्वीकार नहीं किया। वे बराबर कहते रहे–

हम साहित्य के बादशाह हैं,

अंधे क्या जानें।

वस्तुतः तुलसीदास उनके आदर्श रहे है। आज इसीलिए तुलसी और निराला बुद्धिजीवी कलमकार वर्ग के आदर्श हैं।

3.12 प्रेम और सौन्दर्य के कवि

निराला का काव्य गहरे रागात्मक बोध से संयुक्त हैं। उन्होंने मानव प्रेम और प्रकृति प्रेम तथा मानव सौन्दर्य और प्रकृति सौन्दर्य को पूरे मनोयोग के साथ चित्रित किया है। ऋतु सौन्दर्य उनकी कविताओं में भरा पड़ा है। उदाहरणार्थ 'बादल राग', 'अलि घिर आये', 'सखि बसंत आया', 'दूत अलि ऋतुपति के आये', 'स्फटिक शिला', 'संध्या सुंदरी', 'शेफालिका', 'यमुना के प्रति', 'देवी सरस्वती' आदि कविताएं अवलोकनीय हैं। सौन्दर्य का एक दृश्य 'शक्तिपूजा' के जनक वाटिका प्रसंग में मिलता है–

'नयनों का नयनों से गोपन...... मलय वलय'

यहां राम को सौन्दर्य से ही शक्ति प्राप्त होती है, क्योंकि यह देवी गौरी कन्या का दिव्य ज्योतिमर्य रूप है। दूसरा सौन्दर्य 'खजोहरा', 'रानी और कानी', 'स्फटिक शिला' आदि कविताओं में मिलता है, जिसमें कुरूपता, भदेसपन तथा किमाकार–विरूपण है। तीसरा रूप 'पंचवटी प्रसंग' में शूर्पणखा का है, जिसमें फूहड़ वासना है। चौथा रूप किसान की नई बहू की आँखों में अर्थात् ग्राम्य श्रमिक संस्कृति में निराला को दिखाई देता है।

तात्पर्य यह है कि प्रेम–सौन्दर्य के अनेक रूप निराला साहित्य में दृष्टिगत होते हैं। कहीं सद्यः स्नाता का वायवीय सौन्दर्य, कहीं मजदूरिन का 'श्यामतन भरा बँधा यौवन', कहीं देहाती बुआ का पीड़क तोष (खजोहरा), कहीं रत्नावली का मादक रूप, तो कहीं काली कलूटी घर की महरी के प्रति रूप मोह (मैं बम्हन का लड़का)। निष्कर्ष यह कि सौन्दर्य प्रेम का बड़ा वैविध्य है निराला में। वे अपरूप के आराधक है–'देख दिव्य छवि लोचन हारे।' वे श्याम सलोने के प्रेमी हैं–'जिधर देखिए श्याम विराने।' वे महाशक्ति की दिव्यज्योति और माँ काली की विकराल आकृति के भक्त हैं। वे 'रेखा', 'बहू' जैसी कविताओं में छायावादी सूक्ष्म सौन्दर्य प्रेम के आश्रय हैं और परवर्ती रचनाओं में स्थूल लोक सौन्दर्य के चितेरे बन गए हैं।

3.13 करुणा का स्वर

निराला के गीतों में वेदना कूट–कूट कर भरी गई है। वे संसार की पीड़ा से दुःखी हैं–

'दलित जन पर करो करुणा'

'माँ अपने आलोक निखारी,

नर को नरक त्रास से वारो!'

'जीवन की गति कुटिल अन्धतम जाल।।'

कवि की आत्मवेदना मात्र वैयक्तिक ही नहीं है। जड़ समाज से जुझते हुए वे प्रायः अपने एकान्त में आर्त्तक्रन्दन करते हैं, जैसे–

'गहन है यह अन्धकारा।'

'मैं अकेला!'

'स्नेह निर्झर बह गया है।'

'हो गया व्यर्थ जीवन मैं, रण में गया हार' आदि।

इन कविताओं में मृत्युबोध है, निराशा है, पराशक्ति के समक्ष पूर्ण विसर्जन है, किंतु पराजय का भाव नहीं है। महाप्राण निराला का यही वैशिष्ट्य है।

3.14 प्रगाढ़ भक्ति भावना

निराला जी ने परम आस्तिक की भांति भगवती, सरस्वती, महाशक्ति, शिव, हनुमान और विष्णु के अवतार–राम, कृष्ण आदि की बारम्बार वन्दना की है। अर्चना, आराधना और अणिमा की अनेक रचनाएं उनकी विनय भावना और पंचदेवोपासना से ओत–प्रोत हैं। राम को वे शक्ति पूजा में परमब्रह्म भी मानते हैं और सहज मानव भी। एक कविता में सीता को वे 'धरती की बेटी' कहते हैं और कृष्ण तथा बलराम को 'कृषक क्रांति का उन्नायक' मानते हैं। शक्ति के पांच रूप उनकी कविताओं में दिखाई पड़ते हैं– दुर्गा, सरस्वती, लक्ष्मी, सुहागिनी और गौरी कन्या। निराला एक ओर इनसे सर्वसंहार की मांग करते हैं, तो दूसरी ओर जनकल्याण की मांग करते हैं। उनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं–

'शरण में आ गए जन जननि।'

'मानव का मन शांत करो है।' आदि

इन भक्तिपरक गीतों में दलितोद्धार की प्रार्थना है, साथ ही दुष्टों के सामूहिक वध का अनुरोध भी किया गया है। 'राजयोग' करते हुए निराला नास्तिक थे, साथ ही परम वैष्णव भी। 'शक्तिपूजा' में इसीलिए उन्होंने शैव, शक्ति, वैष्णवी, नवधा भक्ति इन सबका समाहार कर दिया है।

3.15 राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना

निराला जी देशकाल सचेत रचनाकार रहे हैं; बंगीय नवजागरण को उन्होंने अपनी आँखों देखा था। सामंती अत्याचारों को स्वयं झेला था। कनवजियों की रूढ़ियों से वे त्रस्त रहे हैं। इलाहाबादी साहित्यिक राजनीति से वे ग्रस्त रहे हैं। उनकी कविताओं में स्वतंत्रता आंदोलन का स्वर है और भारत के स्वर्णिम अतीत की गाथा है। उदाहरणार्थ 'सहस्राब्दि' और 'शिवाजी का पत्र' द्रष्टव्य है। उन्होंने 'बादल राग' रचना में नई सामाजिक चेतना को वाणी दी है–

'अट्टालिका नहीं रे आतंक भवन

सदा पंक से ही होता जन विप्लव गायन।'

'जागो फिर एक बार' कविता में गुरु गोविन्द सिंह के माध्यम से भारतीयों की गौरवगाथा प्रस्तुत की गयी है–

'सवा–सवा लाख पर एक को चढ़ाऊंगा.....।'

इसी तरह निराला की राष्ट्रीय भावना और सामाजिक संचेतना, साथ ही भावी नवनिर्माण का उनका सपना स्वतः सिद्ध है।

3.16 व्यंग्य विक्षोभ

निराला का साहित्य जहां मंगलाशाओं से भरा पड़ा है, वहीं गहरी व्यंग्य विडम्बना भी वहां दिखाई देती है। उनकी कई कविताएं हास्य की मुद्रा में लिखी गई हैं, जैसे–'गर्म पकौड़ी', 'मैं बम्हन का लड़का', 'रानी और कानी', 'आना रे गंगा के किनारे', 'खजोहरा', 'बनबेला', 'मास्को डायलाग्स', 'स्फटिक शिला', 'कुकुरमुत्ता' आदि। उन्होंने गांधी, नेहरू, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि पर पैरोड़ी बनाकर कई प्रहार किये हैं–

'बापू तुम मुर्गी खाते यदि', 'हमारे कालेज का बचुवा', 'काले–काले बादल छाए न आए वीर जवाहर लाल', 'आज कल पंडित जी देश में विराजते हैं', 'इतना ही नहीं, लक्षपति का भी यदि कुमार होता मैं....' आदि उनके व्यंग्य–वेदना, व्यंग्य विद्रोह और व्यंग्य–विनोद के श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

इस प्रकार निराला का काव्य वैविध्यपूर्ण अर्थात् सर्वथा निराला है। वह जहां ठोस जमीन से जुड़ा दिखता है, वहीं कल्पना लोक से भी। 'कैलाश में शदर' जैसी कविता फैटेंसी रूप में लिखी गई है और 'सरोज–स्मृति' जैसी खण्डित आत्मकथा भोगे हुए यथार्थ के रूप में। निराला जी ने एक और कवित, सवैया, दोहा, चौपाई, पद, भजन यानी पारम्परिक छन्दों की रचना की और दूसरी ओर गजल, गीत, तुक्तक और मुक्त छन्द की। भाषा के अनेक तेवर उनकी रचनाओं में हैं। विचार धाराओं की बहुविध छटा उनके काव्य में व्याप्त है। इतना बड़ा रचना संसार किसी अन्य आधुनिक साहित्यकार में नहीं दिखाई पड़ता। सबसे बड़ी विलक्षणता यह है कि निराला जी ने शब्द और कर्म में सामंजस्य स्थापित किया है। कविता के लिए आत्म विसर्जन करना होता है। वह मात्र शब्द शिल्प नहीं है, बल्कि जीवन संवेदना का अधिकरण है। यही निराला का मूल संदेश है और यही उसकी अनन्यता का मूल कारण है।'

बोध प्रश्न–

1. निराला की नई भाषा संरचना को समझाइए।
2. निराला जी की पात्र परिकल्पना को समझाइए।
3. राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना को संक्षेप में समझाइए।

3.17 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

उपर्युक्त अनुच्छेदों के अंतर्गत यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि निरालाजी ने अपने काव्य के माध्यम से जीवन जगत सम्बन्धी विविध प्रश्नों पर प्रकाश डाला है। जैसे–वेदांत, दर्शन, रहस्यः अध्यात्म, प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति–चित्रण, कल्पनालोक का निर्माण, लोक करुणा, व्यंग्य–विक्षोभ, परम्पराबोध, विश्वबोध, क्रांति, विद्रोह आदि। उनका रचना संसार अति विस्तृत था। उसमें ग्रामीण जनजीवन, मध्यवर्ग, राजन्य संस्कृति, सबका न्यूनाधिक चित्रण हुआ है। निरालाजी ने कुछ पौराणिक प्रसंग उठाये हैं, जैसे–राम की शक्ति पूजा, पंचवटी प्रसंग में। कुछ रचनाओं में उन्होंने इतिहास को अपना प्रतिपाद्य बनाया है, जैसे तुलसीदास, सहस्राब्दि, महाराजा शिवाजी का पत्र यमुना के प्रति आदि में किंतु यह इतिहास वर्तमान से संदर्भित है निराला जी की अधिकतर कविताएं किसान, मजदूर, स्त्री, दलितवर्ग अर्थात् सर्वहारा से जुड़ी हुई है, जैसे–भिक्षुक, विधवा, दीन, कुकुरमुत्ता, महँगू महँगा रहा, झींगुर डटकर बोला, कुत्ता भूकने लगा, डिप्टी साहब आये, वह तोड़ती पत्थर आदि। इन रचनाओं के माध्यम से उन्होंने जनसाधारण को अस्तित्व संघर्ष के लिए प्रेरित किया है। वे अपने समकालीन किसानों को समझते हुए कहते हैं कि 'तुम थक जरूर गये हो, लेकिन अभी अपने प्रमाण पथ पर रुको नहीं'। वे कहते हैं–'तू श्रमकर विश्राम न कर'। बेकार

होकर भूखों न मर।' निराला जी ने समय के अभिजात वर्ग के प्रतीक गुलाब को सर्वाहारा वर्ग के प्रतीक कुकुरमुत्ता के माध्यम से चुनौती देते हुए लिख है कि–जो वर्ग अपने आप से उठ खड़ा होता है, जो आत्मनिर्भर होता है, वही महाकाल की यात्रा में टिक पाता हैं। परजीवी वर्ग कभी चिरंजीवी नहीं हो पाता। 'राजे ने रखवाली की' कविता में वे सिद्ध करते हैं कि इस शक्तिशाली शासक वर्ग ने अपने हित में शस्त्र बनाये, शास्त्र बनाये, किले बनवाये, फौजे खड़ी कीं और साम्राज्य का विस्तार करते हुए जनसाधारण का दोहन किया। सवर्णों ने जातीय भेद–भाव पैदा किया, नेताओं ने जनता को गुमराह किया, व्यापारियों ने अधिकाधिक शोषण किया। इनमें सर्वाधिक पीड़ित रही है भारतीय नारी। निराला ने नारी पात्र को इसीलिए अपेक्षाकृत अधिक महत्व दिया है। 'वह तोड़ती पत्थर' की युवती छायावादी लोक की सुकुमारी, सुन्दरी नहीं है। वह एक बलिष्ठ तेजस्वी नारी है–'जो मार खा रोई नहीं।' उनकी नारी सीता जैसी शक्तिमयी है साथ ही ममतामयी भी।

निराला जी की दृष्टि में समाज का धनी वर्ग बड़ा कायर है। वह धन गर्जन सुनकर काँप उठता है। दूसरी ओर गरीब दुर्बल किसान, मुग्धभाव से मेघों का स्वागत करता है। वे लिखते हैं–'विप्लवरव से छोटे ही हैं, शोभा पाते। उन्होंने इस वर्ग को अन्ततः विजेता रूप में प्रस्तुत किया है। गुलाबों का शौकीन नवाब, कुकुरमुत्ते से लालायित होकर माली से कहता है कि सब जगह गुलाबों को उखाड़कर कुकुरमुत्ता लगा दो, और माली निवेदन करता है कि कुकुरमुत्ता उगाये नहीं उगता। वह स्वंभू होता है। यह सर्वहारा का विजय घोष है जो वर्तमान से जुड़ा हुआ है।

यही स्थिति प्रकृति चित्रण की भी है। निराला ने छायावादी दौर में बसन्त, शरद, पावस का रसरंग पूर्ण वर्णन करने के बाद अपने परवर्ती काव्य में प्रकृति के उन रूपों का चित्रण किया है, जिनका जनमानस से सीधा सम्बन्ध है। ऐसी कविताएं हैं–'गहरी विभावरी शीत की' ग्रीष्म आदि। शीत का वर्णन करते हुए वे कहते हैं कि माह पूरब की कड़ाकेदार सर्दी में केवल किसान ही नहीं काँप रहा है, बल्कि माचे पर उसके साथ सोया हुआ कूक भी कुहकुहा रहा है। बैसवारे की गर्मी, इलाहाबाद के पथ पर चलती हुई जेठ की लू 'दिवाका तमतमामा रूप' अर्थात् प्रकृति की विषम दृश्य निराला की कविता में उतर आए हैं। कुछ कविताओं में उन्होंने पूरे अंचल को उतार दिया है। जैसे–'बहुत दिनों बाद खुला आसमान गीत में गुलबदरा से त्रस्त पूरे गांव की तबाही का वे वर्णन करते हैं।

तात्पर्य यह है कि अपने समकालीन जीवन के विभिन्न सामाजिक धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक पक्षों को निराला जी ने सच्ची संवेदन के सहारे स्वरबद्ध किया है, इसलिए ये उनकी रचनाएं जनता से जुड़ी हुई हैं और प्रासंगिक बनी हुई हैं।

अपनी कविताओं में निराला जी ने अपने आत्म को, अपने देशकाल को और नयी सम्भावनाओं को एकाकार कर लिया है। उनके पहले लोग 'मैं' शब्द का प्रयोग करते हुए हिचकते थे। उस क्षेत्र में निराला जी ने पहले करते हुए लिखा 'मैंने मैं शैली अपनायी'। उनकी ज्यादातर रचनाएं आत्मबद्ध हैं। उनमें बेटी सरोज है, पत्नी मनोरमा है जिनमें मन्नी बदलू, रामदास, अर्थात् आसपास के अनेक जीवित पात्र हैं। वे अपने पड़ोसी गांवों की सीधी याद करते हैं। कुकुरमुत्ता में वे लिखते हैं जैसे बनारस वैसी 'नेवन्ना'। इसके कारण उनकी कविता अपनी जमीन से जुड़ गयी यही उसकी प्रासंगिकता का मूलाधार है।

परवर्ती कृतियों (अर्चना, आराधना) में निराला जी भक्ति अध्यात्मक की ओर मुड़े। 'गीत गुंज' और 'सांध्य काकली' के गीतों में उन्होंने मृत्युबोध को स्वर दिया। कुछ रचनाओं में व्यर्थता बोध व्याप्त है। ये सब उनकी विभिन्न मनोदशाओं की उपज हैं। इन्हें न पलायन कहा जा सकता है और न विपथन। दर्शन राग–विराग और संघर्ष के बीच से गुजरते हुए एक दुर्घर्ष कवि की सहज उदेक है, इसलिए ये समस्त रचनाएं प्रासंगिक हैं।

निराला की प्रासंगिकता के दो मुख्य कारण रहे हैं–

1. अनेक युग प्रवृत्तियों का प्रवर्तक :– छायावाद से लेकर स्वतंत्र भारत के इन पाँच दशकों में निराला का साहित्य आज कवि कर्म का प्रतीक बना हुआ है। उन्होंने छायावाद के प्रवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है तो दूसरी ओर प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता और नवगीत तक में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। यह वस्तुतः एक विरल संयोग है, इसलिए कि छायावाद, प्रयोगवाद, प्रगतिवाद आदि परस्पर विरोधी आंदोलन रहे हैं। छायावाद से जुड़े प्रसाद, पंत, महादेवी आदि रचनाकार उस युग के समाप्त होते ही अप्रासंगिक मान लिए गए, जबकि निराला जी इन सभी परवर्ती आंदोलनों के भी पुरोधा बने हुए हैं।

2. नये छंदो के प्रयोक्ता : निराला जी ने हिन्दी कविता को नया छंद दिया है। छायावाद युग तक तुकान्तता कविता पर हावी रही है। निराला ने 'परिमल' की भूमिका में लिखा है कि जैसे आत्मा की मुक्ति होती है, उसी प्रकार की कविता की मुक्ति भी आवश्यक है, इसीलिए निराला ने अपने इस छंद का नाम दिया अमित्र या मुक्त छंद। इस छंद में यति–गति, लय–ताल आदि का विधान तो है, किंतु उसमें तुकान्त या अंत्यानुप्राप्त नहीं लगता है, उदाहरणार्थ, उनकी प्रसिद्ध कविता 'जूही की कली' का एक अंश द्रष्टव्य है–

'सोती थी
जाने कहो कैसे प्रिय आगमन वह!'

इसमें विषम मात्राएं हैं, लेकिन प्रवाह है। यहाँ भाव प्रधान है और कविता अनुभूति के स्तर पर पूरी तरह से मुक्त है। इस छंद की उपयोगिता को न समझ पाने के कारण परम्परावादी आलोचकों ने इसे 'रबड़ छंद', 'केंचुआ छंद', 'कंगारू छंद' आदि नाम दिये और यह सिद्ध करना चाहा कि निराला को पिंगल का ज्ञान नहीं है। निराला जी ने इन आरोपों को ध्वस्त करते हुए अपने एक काव्य 'तुलसीदास' में एक ऐसे जटिल छंद की रचना की, जिसके भीतर तीन–तीन अन्तर्तुकान्त हैं, जैसे–

'जागो–जागो आया प्रभात
बीती, वह बीती अन्धरात
झरता नव ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वांचल
बाँधो–बाँधो, किरणें चेतन
तेजस्वी है तमज्जित जीवन
आती भारत की ज्योतिर्धन महिषाबल'।

इस छंद में प्रभात, रात, प्रपात तीन अन्तर्तुकान्त हैं और पूर्वांचल, महिमाबल बाह्य तुकान्त है। इस प्रकार एक छंद में आठ तुकान्त दिये गए हैं, जबकि पुराने छंदों में प्रायः चार तुकान्त पाये जाते हैं। निराला का यह छंदोविधान निस्संदेह बड़ा वैशिष्ट्यपूर्ण है। ये समस्त पक्ष उनकी प्रासंगिकता के साक्षी हैं।

3.18 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला की प्रासंगिकता के विविध आयाम पर प्रकाश डालिए।
2. निराला के काव्य में मुक्त छंद एवं संगीत का विवेचन कीजिए।

3. निराला के काव्य में क्रान्ति और विद्रोह के स्वर हैं समझाइए।
4. निराला प्रेम और सौंदर्य के कवि हैं समझाइए।

3.19 नियत कार्य/गतिविधियाँ

निरालाजी को विस्तार से समझने और जानने के लिए विविध लेखकों एवं समीक्षकों की पुस्तकों का अवलोकन भी कर सकते हैं।

3.20 चर्चा तथा स्प टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

3.20.1 चर्चा के लिए बिन्दु

3.20.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

3.21 संदर्भ–अतिरिक्त पठन सामग्री–

1.

3.22 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 3.5
2. देखिए 3.8
3. देखिए 3.14

म.प्र. भोज मुक्त विश्वविद्यालय, भोपाल

एम. ए. पूर्वार्द्ध : हिन्दी

चतुर्थ प्रश्न–पत्र : विशेष कवि (निराला) का अध्ययन

चतुर्थ खण्ड :

इकाई–1 निराला के काव्य में भावाभिव्यक्ति

इकाई–2 छायावादी भाषिक संरचना एवं निराला

इकाई–3 निराला के प्रकृति चित्रण का वैशिष्ट्य

लेखक

प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित

....

लखनऊ

सम्पादक

प्रो. हरिमोहन बुधौलिया

एम. ए. पूर्वार्द्ध : **हिन्दी**

चतुर्थ प्रश्न–पत्र: **विशेष कवि (निराला) का अध्ययन**

चतुर्थ खण्ड :

खण्ड परिचय–

इस खण्ड की प्रथम इकाई में निराला के काव्य में भावाभिव्यक्ति का समग्र अध्ययन करने को मिलेगा।

इस खण्ड की दूसरी इकाई में छायावादी भाषिक संरचना एवं निराला का अध्ययन करने को मिलेगा।

इस खण्ड की तीसरी इकाई में निराला के काव्य में प्रकृति चित्रण का वैशिष्ट्य का अध्ययन करने को मिलेगा।

इकाइयों के अन्त में संदर्भ–ग्रन्थों की सूची प्रस्तुत की गई है, जिनका अध्ययन विषयों की विस्तृत विश्लेषण के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

सभी इकाइयों में बोध प्रश्न दिए गए हैं। अध्ययन के पश्चात बोध प्रश्नों के उत्तरों का इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलान कर सही उत्तर देने का प्रयास कीजिए।

इकाई 1

निराला के काव्य में भावाभिव्यक्ति

सरंचना –

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 निराला की काव्य यात्रा (विशाल क्रम)
1.4 आरंभिक स्थिति
1.5 निराला काव्य का वस्तु–शिल्प–वैशिष्ट्य
1.6 नई भाषा संरचना
1.7 विभिन्न काव्यों रूपों के परोधा
1.8 नयी–नयी विचार धाराओं का उन्मेष
1.9 सौंदर्य दर्शन
1.10 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें
1.11 अपनी प्रगति जाँचिए
1.12 नियत कार्य/गतिविधियाँ
1.13 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु
1.14 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री
1.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.1. प्रस्तावना

निराला जी ने जो काव्य कृतियाँ समय–समय पर लिखी हैं, वे उनके बारह गंथों में संकलित है। उनकी कुछ कविताएँ असंकालित अपूर्ण और अप्राप्त भी हैं।

उन्होंने 1916 से 1962 तक अर्थात् लगभग 46 वर्षों तक जो काव्य यात्रा की उसमें मोड़ दिखायी देते है। उनकी आरम्भिक कविताएँ छायावाद से जुड़ी हुयी है। कुकुरमुत्ता और नये पत्ते में वे प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के काफी निकट दिखायी देते हैं इन कविताओं में नयी कविता तथा समकालीन कविता की अनेक प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती है। गीत गुंज में नवगीत के कई लक्षण विद्यमान है। तात्पर्य यह है कि निराला के प्रायः प्रत्येक युग प्रवृत्ति से संबद्ध रहें है।

वस्तुशिल्प की दृष्टि से उनका काव्य वैविध्यपूर्ण है। इन सभी बिन्दुओं का परिचय देना इस संदर्भ में अपेक्षित है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है निराला के काव्य का सर्वांगीण विवेचन ताकि उन्हें परिपूर्ण रूप से देखा परखा जाय। उनके सम्पूर्ण काव्य को देखे बिना उनका खण्डित व्यक्तित्व ही सामने आयेगा। इस समस्या का समाध ाान खोजते हुए यह सामग्री प्रस्तुत की जा रही है।

1.3 निराला की काव्य यात्रा (विकासक्रम)

निराला की काव्य यात्रा 1920 से 1962 तक व्याप्त है। इस बीच उनके 1 दर्जन काव्य ग्रन्थ प्रकाशित हुए–अनामिका(1923), परिमल(1929), तुलसीदास(1934), गीतिका(1935), कुकुरमुत्ता(1940), अणिमा (1943), बेला नए पत्ते (1946), अर्चना(1950), आराधना, गीतगुंज(1954), सांध्यकाकली(मरणोपरांत) तथा बाद में संकलित स्फुट कविताएँ।

1.4 आंरम्भिक स्थिति

निराला का काव्य–क्षेत्र अत्यन्त विशद है। उन्हें किसी वाद की सीमा में आबद्ध करना कठिन है, यद्यपि लोग उन्हें विविध वादों के अन्तर्गत घसीटने की चेष्टा करते हैं। छायावाद के आधार स्तम्भों में निराला जी गण्यमान हैं। आचार्य शुक्ल एवं कुछ अन्य समीक्षक उनके काव्य में स्वच्छन्दतावाद देखते रहे हैं। व्यंग्यपरक रचनाओं के बाद उन्हें प्रगतिवादी और प्रयोगवादी कहा जाने लगा। परवर्ती आत्मनिवेदनपरक कृतियों को अंतश्चेतनावाद की संज्ञा दी गई। इस प्रकार निराला जी के काव्य में विविध वाद ढूँढ़े गये, जबकि सत्य यह है कि वे भले ही आशा अथवा आक्रोश अथवा भक्ति के स्वर लेकर चले हों, उनके हृदय में मानव जीवन के प्रति गहरी आस्था का दीप सदैव जलता रहा है।

वस्तुतः निराला जी की साहित्य–साधना समीक्षकों की दृष्टि से ओझल नही रही। विद्वानों ने निराला के काव्य की विभिन्न रूपों में समीक्षाएँ की हैं। कुछ ने इतिहास के रूप में उनके साहित्य की समीक्षा की है तो अन्य समीक्षकों ने अन्यान्य कई दृष्टियों से निराला को देखा और परखा है।

निराला की कविता और हिन्दी आलोचना का सम्बन्ध कम दिलचस्प नहीं है। उन्होंने जब लिखना शुरू किया, तब हिन्दी कविता में द्विवेदी–युग चल रहा था। स्वभावतः निराला की कविता का व्यापक विरोध हुआ। इस विरोध में रीतिवादी आलोचक ही नहीं, बल्कि द्विवेदी–युग की दो महान् युगान्तरकारी प्रतिभाएँ भी शामिल थीं। पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल। 1916 ई. में रचित निराला की प्रथम रचना 'जुही की कली' 'सरस्वती' पत्रिका में छापने के लिए जब पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी के यहाँ भेजी गयी, तो उसे इस सुझाव के साथ वापस कर दिया गया कि 'आपके भाव अच्छे हैं, पर छन्द अच्छा नहीं। इस छन्द को बदल सकें, तो बदल दीजिए।'

1927 की सरस्वती पत्रिका में सुकवि किंकर के नाम से द्विवेदी जी ने छायावादी कवियों के विरोध में जो अपना प्रसिद्ध लेख लिखा, उसमें कहा– 'शुद्ध लिखना तक सीखने से पहले ही वे कवि बन जाते हैं। और अनोखे–अनोखे अनामों की लाँगूल लगा कर अनाप–शनाप लिखने लगते हैं।'

पंचवटी प्रसंग पर भी उनकी प्रतिक्रिया बहुत अनुकूल न थी। वे कहते हैं– अविशाष्टांश मुझे भेजने की जरूरत नही। ठीक है, पूरी कर डालिए।'

'सुधा' पत्रिका में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी प्रसिद्ध कविता में(जो उन्होंने छायावादी कवियों पर प्रहार करने के लिए लिखी थी) निराला को ही लक्ष्य बनाया–

भाषा है, न भाव है, न भूति भाँपने की आँख,
शिक्षा की सुभिक्षा भी न पायी कभी एक कन।
गाँधते है गर्वभरी गुरू ज्ञान गूदड़ी वे
चुने हुए चीथड़ों से, किए ब्रह्मलीन मन।
रहीं बंग–भंग–पद चकती चमक रही,
कहीं अंगरेजी अनुवाद का अनाड़पन।
ऐसे सिद्ध साइयों की माँग मतवालों में है,
काव्य में झूठे स्वाँग खींचते कभी हैं मन।'

बाद में आचार्य शुक्ल ने निराला को कुछ कुछ जाना–पहचाना और कहा–'बहुवस्तु स्पर्शिनी प्रतिभा निराला जी में हैं। 'अज्ञात–प्रिय' की ओर इशारा करने के अतिरिक्त इन्होंने जगत के अनेक प्रस्तुत रूपों और व्यापारों को भी अपनी सरल भावनाओ के रंग में देखा हैं।'

निराला की कविता का प्रारम्भ ही विवादास्पद रहा। उनकी प्रथम कविता है– 'जूही की कली' लेकिन इसका प्रकाशन 'अनामिका' के बाद हुआ। निराला जी की काव्य कृति 'अनामिका'(1923) अप्राप्य है, अतः अनामिका की समस्त कविताओं को सन् 1929–30 ई. में प्रकाशित परिमल में रखा गया। निराला जी की कुल प्रकाशित 12 काव्य कृतियां यहा विचारणीय है।

1.5 निराला काव्य का वस्तु–शिल्प–वैशिष्ट्य

निराला के काव्य के भाव पक्ष तथा शिल्प पक्ष को लेकर अनेक प्रकार की समीक्षाएँ प्रकाश में आयीं है। इन समीक्षाओं के मुख्य मुद्दे रहे हैं–

1.5.1 निराला का सामाजिक चिंतन–

निराला जी ने जिन पौराणिक प्रसंगों ऐतिहासिक प्रकरणों समसामयिक युगीन समस्याओं और सार्वकालिक सामाजिक बिन्दुओं को उभारा है, उन पर पक्ष–विपक्ष में बहुत लिखा गया है। आचार्य बाजपेयी जी जहाँ उनके सांस्कृतिक चिंतन से अभिभूत रहे हैं वही डॉ. रामविलास शर्मा उनके सर्वहाराबोध से प्रभावित दिखते है। इसी विचार क्रम में अन्यान्य समीक्षकों ने निराला के व्यक्ति विधायन में उनके समाज–मनोविज्ञान का सापेक्षिक विश्लेषण करते हुए उन्हें एक विकासनशील कवि सिद्ध किया है। निराला का प्रायः संपूर्ण काव्य युगबोध में केन्द्रित है। अनेक समीक्षकों ने उनकी सामाजिक संचेतना की पुष्टि की है साथ ही उनकी नारी भावना सर्वहारा के प्रति संवेदना सामंतवाद के विरुद्ध क्रान्ति दमनकारी अंग्रेजी साम्राज्यवाद की निन्दा पुरोहितवाद सं असहमति, प्राचिन रूढ़ियों का खण्डन आदर्शोन्मुख यथार्थ और लोक जीवन आदि की मीमांसा की है।

3.5.2 अपने युग प्रवृत्तियों का प्रवर्तक–

छायावाद से लेकर स्वतंत्र भारत के पांच दशकों में निराला का साहित्य आज कवि कर्म का प्रतीक बना हुआ है। तुलसी और कबीर के बाद वे हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि के रूप में प्रतिष्ठित है। उन्होंने छायावाद के प्रर्वतन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है तो दूसरी ओर प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता और नवगीत तक में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। यह वस्तुतः एक विरल संयोग है, इसलिए कि छायावाद, प्रयोगवाद प्रगतिवाद आदि परस्पर विरोधी आंदोलन रहे है। छायावाद से जुड़े प्रसाद, पंत, महादेवी आदि रचनाकार उस युग के समाप्त होते ही अप्रासंगिक मान लिए गए, जबकि निराला जी इन सभी परवर्ती आंदोलनों के भी पुरोधा बने हुए हैं।

1.5.3 नये छंदों के प्रयोक्ता–

निराला जी ने हिन्दी कविता को नया छंद दिया है। छायावाद युग तक तुकान्तता कविता पर हावी रही है। निराला ने 'परिमल' की भूमिका में लिखा है कि जैसे आत्मा की मुक्ति होती है उसी प्रकार की कविता की मुक्ति भी आवश्यक है, इसीलिए निराला ने अपने इस छंद का नाम दिया अमित्र या मुक्त छंद। इस छंद में याति–गति, लय–ताल आदि का विधान तो है, किन्तु उसमें तुकान्त या अंत्यानुप्राप्त नहीं लगता है, उदाहरणार्थ उनकी प्रसिद्ध कविता 'जूही की कली' का एक अंश द्रष्टव्य है–

'सोती थी,

जाने कहो कैसे प्रिय आगमन वह!'

इसमें विषम मात्राएँ हैं, लेकिन प्रवाह है। यहाँ भाव प्रधान है और कविता अनुभूति के स्तर पर पूरी तरह से मुक्त है। इस छंद की उपयोगिता को न समझ पाने के कारण परम्परावादी आलोचकों ने इसे रबड़ छंद, कगांरू छंद आदि नाम दिये और यह सिद्ध करना चाहा कि निराला को पिंगल का ज्ञान नहीं है। निराला जी ने इन आरोपों को ध्वस्त करते हुए अपने एक काव्य तुलसीदास में एक ऐसे जटिल छंद की रचना की जिसके भीतर तीन–तीन अन्तर्तुकान्त हैं, जैसे–

'जागो–जागो आया प्रभात

बीती, वह बीती अन्धरात

झरता नव ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वाचल

बाँधों–बाँधों किरणें चेतन

तेजस्वी हे तमज्जित जीवन

आती भारत की ज्योतिर्धन महिमाबल।'

इस छंद में प्रभात, रात, प्रपात तीन अन्तर्तुकान्त है और पूर्वाचल, महिमाबल बाह्य तुकान्त है। इस प्रकार एक छंद में आठ तुकान्त दिये गए हैं, जबकि पुराने छंदों में प्रायः चार तुकान्त पाये जाते हैं। निराला का यह छंदोविध ाान निस्संदेह बड़ा।

1.5.4 रहस्य, अध्यात्म एवं दर्शन–

आधुनिक हिन्दी कविता में चिन्तन दर्शन के क्षेत्र में यदि कोई सर्वाधिक चर्चा के केन्द्र में रहा है तो निश्चत रूप से वे निराला हैं। मुक्तभावभूमियों का मुक्त मानव मूल्यों का यह मसीहा कटु आलोचनाओं–प्रत्यालोचनाओं की सूली पर बारंबार चढ़ाया भी जाता रहा है। छायावादी कवियों ने अपने काव्य में दार्शनिक मन्तव्यों को बहुत स्थान दिया है। वस्तुतः काल्पनिक उड़ान के बाद जब छायावादी कवि यथार्थ की ठोस धरती पर उतरने लगे, तब उनका ध्यान गूढ़–गम्भीर दर्शन से हटकर अपनी प्रतिबद्धता के अनुरूप एक दिशा की ओर उन्मुख हो गया। जयशंकर प्रसाद ने प्रत्यभिज्ञा दर्शन, पंतजी ने अरविन्द दर्शन, महादेवी वर्मा ने बौद्ध दर्शन तथा निरालना ने स्वामी विवेकान्द तथा रामकृष्ण परमहंस के वेदांत दर्शन को अपनी कविता में प्रस्तुत किया। निराला ने अपने एक लेख में लिखा है–'मैं एक पहुँचा दार्शनिक, जिसके आगे कोई और नहीं, जिससे आगे और जाया नहीं जा सकता।' अपना स्रोत बताते हुए वे लिखते हैं– 'बंगाल में रहकर परमहंस श्री रामकृष्ण दवे तथा स्वामी विवेकान्द जी के सिद्धान्तों से मैं परिचय प्राप्त कर चुका था। दो–एक बार रामकृष्ण मिशन बेलूर, दरिद्रनारायणों की सेवा के लिए भी जा चुका था। परमहंस के शिष्य श्रेष्ठ पूज्यपाद स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज को महिषादल में अपना तुलसीकृत रामायण का सस्वर पाठ सुनाकर उनका अनुपम स्नेह तथा आशीर्वाद प्राप्त कर लिया था।' निराला आजीवन स्वयं को परमहंस की मानस प्रजा और अभिनव विवेकानंद मानते रहे हैं।

निराला जी ने अपनी कविताओं में जिस दर्शन का प्रतिपादन किया है वह दो प्रकार का है। एक आध्यात्मिक दर्शन, जिसका सम्बध ब्रह्म, जीव–जगत और माया से हैं। इस दर्शन का आधार तो है वेदान्त का अद्धैत दर्शन किन्तु इसको निराला जी ने नव्य–वेदान्त के प्रभाव में ग्रहण किया था।एक तत्व की प्रधानता तो यहाँ भी स्वीकार्य है, किन्तु जगत के मिथ्यात्व की परिभाषा नये रूप में की जाती है। हिन्दी समीक्षकों ने निराला के दर्शन में वेदान्त के प्रखर स्वर को प्रमुखता से रेखांकित किया है। निराला ने स्वंय स्वीकार किया है कि उन्हें 'कवि का हृदय और दार्शनिक का मस्तिष्क मिला है। निराला जी का जीवन–दर्शन मूलतः मानवतावादी है, जिससे भारतीय अद्वैत को कई प्राणतत्व मिले हैं। मानवता में उनकी दृढ़ आस्था रही है, जो निस्संदेह उनकी सामाजिक अनुभूति के साक्षात्कार का सहज प्रतिकलन है। इस तथ्य को सर्वप्रथम जिन समीक्षकों ने चिन्हित किया उनमें है वाजपेयी जी और शर्मा जी। सन् 1947 ई. में डॉ. रामविलास शर्मा निराला को अद्वैतवादी न मानते हुए यह सिद्ध करना चाहा कि वे उनका दर्शन सांप्रदायिक आध्यात्मिक दर्शन न होकर मात्र समाजदर्शन है। वे कहते हैं– 'वह अद्धैतवादी नहीं है जो अपने को 'अन्तर वज्र कठोर' कहकर समाज के आगे ताल ठोंकता है। वह समाज के और सैकड़ों लोगों जैसा संघर्ष से जूझने वाला सिपाही है, जो दुश्मन को ललकारता है।' तथ्य यह है कि शर्मा जी निराला को मात्र प्रगतिवादी सिद्ध करने हेतु आमादा थे फलतः इतने बड़े तथ्य को तोड़ने–मरोड़ने की असफल चेष्टा उन्होनें की। शर्मा जी का तर्क था कि 'निराला आचार्य शंकर के गतिहीन अद्धैतवाद के स्थान पर गतिशील अद्धैतवाद को स्वीकृति देते है। डॉ. रामविलास शर्मा ने निराला की अधिवास शीर्षक कविता की समीक्षा के सन्दर्भ में इस तथ्य को स्थापित किया है। वे कहते हैं–

'निराला संन्यास एवं अद्धैतवाद के पक्षधर होते हुए भी मानवीय पीड़ा, संत्रास तथा दुःखों से आँख मिलाने संघर्ष करने को बुलन्द हौसला देते हैं। भागने नहीं भोगने और टकराने का प्रेरणास्पद मंत्र देते है।'' अधिवास के अतिरिक्त यदि तुम और में, कौन तम के पार, पास हीरे हीरे की खान, पंचवटी प्रसंग, राम की शक्ति पूजा, तुलसीदास आदि पर विचार किया जाता है तो इसका निष्कर्ष कुछ भिन्न होता। निराला काव्य की इस दार्शनिकता की अनुभूति एवं अभिव्यक्ति पक्ष को बहुशः स्वीकार गया है। जिन्होंने उनके इस नवीन दर्शन को प्रतिपाद्य बनाया है ने निराला के वेदान्त योग दर्शन और शास्क्त वैष्णव सिद्धांतों से अभिभूत अवश्य हुए हैं। उनकी दार्शनिक विचार धाराओं पर विचार करके सन् 1947 ई. में डॉ. बच्चन सिंह लिखते हैं–

निराला के काव्य में दार्शनिक तथ्य कवि के भावों और अनुभूतियों में तदाकार परिणत होकर अद्धैत हो गये है। इसके साथ ही काव्य–शिल्प के अनुकूल होकर वे कवि की कला में आत्मसात् हो गए है। निराला का दर्शन जह्, जीन जगत माया में केन्द्रित है समाजदर्शन जीवन दर्शन से जुड़ा है और यह तर्क शास्त्र से भी संबद्ध है। यह भी उल्लेखनीय है कि निराला का यह दर्शन तुलसी से बहुत प्रेरित रहा है।

निराला जी ने जीवनभर तमाम आघात–प्रतिघातों के बीच संघर्ष किया, अतः बच्चन सिंह लिखते है कि विषम परिस्थितियों ने उन्हें दार्शनिक बना दिया था जबकि वे जन्मना इसी प्रवृत्ति के थे। हां इतना अवश्य है कि इन भौतिक विपत्तियों से त्राण पाने में इनके दार्शनिक ने उन्हें अच्छी सहायता पहुचायी।

निराला की मातृभक्ति शक्तिसाधना रामकृष्ण परमहंस के दार्शनिक सिद्धान्तों के अनुकूल रही है। निराला के ह्रदय में इस भाव की पुष्टि बंगाल में रहने के कारण और दृढ़ता के साथ हुई है। राष्ट्र के प्रति प्रेम की भावना निराला जी में कूट–फूट कर भरी हुई थी। दूसरे निराला ने स्वाभाविक रूप से मानवतावाद या मानव मात्र की स्वतन्त्रता का समर्थन किया है। वे वर्षो बेलूउ मठ में सन्यासियों की तरह गैरिक वस्त्र धारण कर साधना रत रहें हैं।

निराला का दर्शन भारतीय सउ्दर्शनों में केन्द्रित है।– इस तथ्य को पहचान कर सन् 1952 ई. में डॉ. रामरतन भटनागर ने लिखा है–

हिन्दू राष्ट्रीयता के उन्नायक रामकृष्ण परमहंस और विवेकानन्द की मंत्र–छाया में रहकर और बंग–विच्छेद काल के बंगाल का परिचय प्राप्त कर कोई भी कवि देशप्रेम की स्फूर्ति से अलग नहीं रह सकता था। परिमल से पहले ही निराला दिल्ली जैसी कविताएं लिखकर देश–भक्तिपूण्र काव्य की एक नई शैली दे चुके थे। परिमल की कुछ बहुत सुन्दर कविताओं में निराला उत्कृष्ट शिल्पी–चित्री के साथ–साथ उत्कृष्ट देशप्रेमी के रूप में हमारे सामने आते हैं। महाराज शिवाजी का पत्र सहस्राब्दि तुलसीदास आदि कृतियां उनके इस राष्ट्र दर्शन की साक्षी है।

महान दार्शनिक कवि अपने चिन्तन को काव्य का अंग बनाकर ही प्रस्तुत करता है। वह भावना के पंख लगाकर अज्ञान के अछोर अन्तराल को पार करते हुए मानवीय और आध्यात्मिक आत्मीयता के शाश्वत और सनातन संयोग को प्राप्त कर लेता है।

प्रत्येक दर्शन की अन्तिम परिणति होती है– मानवता में। इस तथ्य को स्वीकारते हुए सन् 1965 ई. में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने निराला काव्य में बापू मानवतावादी दृष्टिकोणको स्पष्ट करते हुए लिखा कि बादल राग वह तोड़ती पत्थर, चरखा दान आदि का मूल बिंन्दु है मानव मानव से नहीं भिन्न तथा दलित जन पर करो करूणा।

निराला के काव्य में मावोचित सहृदयता और तन्मयता के साथ उच्च कोटि का दार्शनिक अनुबंध है, अतएव उनके गीत भी मानव–जीवन के प्रवाह से निखरे हुए, फिर प्रकाश में चमकते हुए है। इस भाव की प्रमुख कविताएं हैं– दीन , मंहगू महँगा रहा, झीगुंर उटकर बोला मानव जहाँ बैल घोड़ा आदि। इस दृष्टि से विचार करते हुए बाजपेयी जी निराला के सम्बन्ध में कहतें हैं–

निराला हिन्दी काव्य के प्रथम दार्शनिक और सचेत कलाकार हैं।' उन्होने महामानव से लेकर लद्युमानवों तक की प्रतिष्ठा की है।

सैकड़ों वर्षों पहले बनाये गये इन उपनिषद् तत्वों के आधार पर स्वामी विवेकानन्द ने कहा था यदि तुम भलाई चाहते हो तो अपने आडम्बरों को दूर फेक दो। सजीव देवता की, मनुष्य देवता की मानय रूप धारी सबकी आराधना करो।

श्री रामकृष्ण विवेकानन्द साहित्य का हिन्दी अनुवाद करना, श्रीराम कृष्ण आश्रम की पत्रिका समन्वय का सम्पादन करना आदि कार्य निराला को इन दोनों महापुरूषों की विचारधाराओं से बाँधे रखने में सहायक रहे। इसे अनके समीक्षकों ने महसूस किया है।

सन् 1965 ई. में डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय ने लिखा था–

निराला पर स्वामी विवेकानन्द की व्याख्या का उपनिषदों के मंत्रों का विशेष प्रभाव पड़ा है। इसका परिणाम यही हुआ कि विवेकानन्द की तरह निराला जागरण पंचवटी प्रसंग जैसी कविताओं को छोड़कर दार्शनिक ऊहापोह में नहीं पड़ते। उनका ध्यान बराबर जीवन और जगत की स्थिति उन्नति और अभ्युदय की ओर रहता है। जीवन की महानता के लिए आत्मवाद का सिद्धान्त उन्हें मान्य है, किन्तु घोर पीड़ा और करूणापूर्ण क्षणों में वे विवेकानन्द के समान ही पहले रोटी पीछे धर्म की घोषणा करने लगते हैं।

तात्पर्य यह है कि निराला अभिनव वेंदातं के समर्थक और दरिद्र नारायण के पोषक थे। युगानुरूप भारतीय अध्यात्म और संस्कृति को वे कथा, रूप देना चाहते थे।

सन् 1965 ई. में डॉ. रामरतन भटनागर जी के मतानुसार निराला का ध्येय था कि–

समस्त विश्व को आर्य बनाने का हमारा संकल्प अपने घर से ही आरम्भ हो। विश्वव्यापी भय से आक्रान्त मानव मन अब अपनी क्षुद्रता से उबरना चाहता है। निराला का काव्य इसी वेदान्त चिन्तन को आधार शिला बनाकर उस पर कला के ताजमहल उठाता है। निराला तप को ही संस्कृति मानते है, क्योंकि उसमें कला धर्म के ही नहीं, जीवन के धर्म को भी निर्वाह है। इस योग का निर्वाह निराला ने मनसा, वाचा, कर्मणा किया है।'

निराला में बुद्धि पक्ष का प्राचुर्य है। फिर भी कवि की दिव्य अनुभूतियों के कारण सरसता भी पर्याप्त है। इस बुद्धि–तत्व के सम्बन्ध में सन् 1965 ई. डॉ. धनंजय वर्मा ने लिखा–

निराला काव्य में बौद्धिकता और दार्शनिकता आरोपित अथवा सायास नहीं है। यह बौद्धिक और दार्शनिक उन्हीं अर्थों में है जिन अर्थों में उनका व्यक्तित्व है। बौद्धिक काव्य और काव्य की बौद्धिकता में अन्तर होता है। बौद्धिक काव्य में बुद्धि ही काव्य को आच्छादित करती है। काव्य की बौद्धिकता में कवि का चिन्तन और दर्शन भी अभिव्यक्त होता हैं।'

निराला का यह दर्शन उनकी प्रथम कविता.जुही की कली के साथ प्रकट हुआ है। जुही की कली नामक कविता को पढ़कर बहुत से लोगों को उसमें उन्मुक्त एवं उच्छृंखल प्रेम–वासना की गन्ध अनुभूत हुई। इस भ्रान्ति का मुख्य कारण निराला के सौन्दर्य परक रहस्यवाद को न समझ पाना है।

डॉ. धनंजय वर्मा ने इस विषय में ठीक ही लिखा है कि इस कविता में माया में फँसी हुई सुषुप्त आत्मा का परमात्मा से साक्षात्कार का आनन्द भी वर्णित है। यह पूर्ण भुक्ति का चित्र है और निराला के छन्दों में तमसो मा ज्योतिर्गमय की काव्य में उतरी हुई तरस्वीर सुप्ति का ताप्तपर्य तप का है और प्रिय के साक्षात्कार से तात्पर्य ज्योति का है।

सांस्कृति चेतना की व्याप्ति का एक आयाम निराला के काव्य की दार्शनिक भाव–भूमि से संबद्ध है। अद्वैतवाद तथा वेदान्ती प्रभावों से युक्त यह दार्शनिकता सच पूंछा जाय तो निराला के काव्य की गरिमा बनकर ही उपस्थित हुई है। क्योंकि उनके कृतित्व में उसकी व्याप्ति चिन्तन की गूढ़ताओं से उतना संपृक्त नहीं है, जितना उसकी विवृत्ति से।

निराला की प्रसिद्ध दार्शनिक कविताओं की चर्चा करते हुए सन् 1966 ई. में प्रो. शिवकुमार मिश्र ने लिखा है।–

इन की भूमि बौद्धिक न होकर भावात्मक है। बौद्धिक चिन्तन तथा मनन के उपरान्त कवि जो कुछ पा सका है, उसकी अभिव्यक्ति हृदय के स्तर पर की है। उसने काव्य को दर्शन का विषय नहीं बनाया। दर्शन उनके काव्य का विषय बनकर उपस्थित हुआ है। तुम और मैं, तुलसीदास एक बार बस ओर नाच तू श्यामा तथा ऐसी ही अन्य रचनाओं में भावना से समन्वित उसके दर्शन के इस स्वरूप को स्पष्टतः देखा जा सकता है।'

1.5.5 भक्ति भावना–

निराला जी के काव्य में केवल दार्शनिक विचारधारा ही नहीं मिलती है, भक्ति भावना का सुन्दर प्रकाशन भी हुआ है। वे न पलायनवादी थे और न ही संसार को भोगने की बात करते थे। उनकी रचनाएँ अपने–आप में अनूठी हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय वर्ण व्यवस्था का क्या स्वरूप होगा, इस सम्बन्ध में निराला के विचार अनुशीलनीय है।

तथ्य यह है कि अपने कई निबंधों में निराला ने अपना मत व्यक्त किया हैं। सन् 1971 ई. में डॉ. भगीरत मिश्र इसे लक्ष्य करते हुए लिखा–

सूक्ष्म दृष्टि से देखे तो निराला जी का मानवतावादी दर्शन परस्पर विरोधी विचारधाराओं की आधारशिला पर खड़ा है। निराला जी पर वेदान्त का प्रभाव था और वे वैष्णव धर्म तथा ब्राह्मणवाद के एक हद तक प्रशंसक भी थे। किन्तु अपने युग के नवजागरण को भी वे अलक्षित न कर सके अतः एक ओर उनकी मानवतापरक रचनाओं में आदर्शात्मकता है तो दूसरी ओर यथार्थता।

निराला का रचनात्मक व्यक्तित्व मूलतः बुद्धिवादी एवं तर्क धार्मिता से भावात्मकता की ओर अग्रसर होता हुआ प्रतीत होता है। भाव–प्रधान दर्शन, रहस्य एवं विनय की ओर तथा चिन्तन उन्हें वेदान्त के कर्मयोग की ओर ले जाता है।

निष्कर्ष यह कि दर्शन निराला का व्यसन न होकर जीवन मिशन रहा है। उससे ऊर्जा मिलती रही है उन्हें। निराला के जीवन में ऐसे कई दुखान्त मोड़ आते है जो उन्हें बार–बार तोड़ते हैं, ध्वस्त करते हैं पर वे अपनी अदम्य जिजीबिषा व आस्था से उनसे उबर आते हैं, बिखर कर जुड़ जाते हैं। हार उन्हें शिथिल नहीं करती बरन संघर्ष के लिए उद्यत करती है। भीतर का संकल्प और उनकी वेदान्ती दृष्टि उन्हें लम्बी यात्रा का पाथेय देती है। निराला ने वेदान्त को स्वीकारा पर उसे कर्मयोगिता से जोड़कर ही अपनाया। वेदान्त समर्थित कर्मयोग उन्हें जीवन तथा मानवता के प्रति गहरी सदाशयता देता हैं।

निराला जी के अद्वैत वेदान्त की चर्चा करते हुए सन् 1997 ई. में विजयेन्द्र स्नातक ने कविवर निराला के भक्ति भाव पर विचार किया है–

1outBackBlackMA Hindi Paper IV Nirala 193-416 #1

सोऽहम् और तत्वमसि सूत्र ब्रह्म और जीव के पारस्परिक सम्बन्ध को जिस रूप में व्यक्त करते है, वह अभेद सम्बन्ध स्थापित करने वाले हैं। यही अद्वैत वेदान्त दर्शन का सार है। निराला की एक प्रसिद्ध कविता है– तुम और मैं। उस कविता में तुम के रूप में किसी विराट् शक्ति का वर्णन किया गया है और मैं के रूप में जीवात्मा का वर्णन है, किन्तु दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध कवित्व के धरातल पर बहुत सुन्दर बन पड़ा है। इस भाव की अन्तिम परिणति भक्ति में हुई है।

वस्तुतः दार्शनिक एवं गम्भीर वैचारिक भूमिका से पुष्ट होकर ही किसी रचनाकार की कोई काव्य–कृति देशकाल की सीमाओं का अतिक्रमण कर शाश्वत कीर्ति और स्थायी महत्ता की अधिकारिणी बन पाती है। निराला का काव्य इसका प्रभाव है।

निराला जी की दार्शनिक चेतना मूलतः भारतीय अद्वैतवाद में सन्निहित है। उनके काव्य की महत्वपूर्ण दार्शनिक पीटिका अद्वैतवादी वेदान्त–दर्शन पर आधारित है। भारतीय वेदानत–दर्शन की परिधि में ज्ञान–योग, भक्ति–योग, तथा कर्म योग तीनों समाहित है। निराला जी के काव्य में उक्त तीनों योगों की विवृति दिखाई देती है, तथापि वे मूलतः ज्ञान–मार्गी दर्शन के अनुपायी कहे जा सकते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि निराला जी के काव्य में वैदान्तिक–दर्शन की अभिव्यक्ति अनेक रूपों में हुई है, किसी ने उनके काव्य में तत्वचिन्तन का रूप पाया तो किसी ने योग–साधना का। किसी ने रहस्यात्मक रूप में देखा, तो किसी ने उनके काव्य में मानवतावादी रूप के दर्शन किये। कभी उनके दर्शन में प्रेम और सौन्दर्यवादी आदर्शों का समावेश हुआ तो कभी भक्तिपरक भावनाओं ने परम् शान्तिमय वातावरण एवं आत्मानन्द की अनुभूति कराई।

निष्कर्षतः निराला का वेदान्त–दर्शन शंकर के निवृत्तिमूलक अद्वैत दर्शन की बजाय स्वामी विवेकानन्द स्वामी रामतीर्थ आदि आधुनिक चिन्तकों की सामाजिक भावनाओं से युक्त वेदान्त–दर्शन है। नवयुग के इन विचारकों ने वेद उपनिषद् गीता, वेदान्त तथा वैष्णव धर्म को मिलाकर एक ऐसे नव–वेदान्त को जन्म दिया जो देश की प्राचीन दार्शनिक परम्परा से होता हुआ वर्तमान युग की सामाजिक आवश्यकताओं के अनुकूल था। निराला ने प्रारम्भ में जिस अद्वैत दर्शन से प्रेरणा ग्रहण की थी, वह शुद्ध वेदान्त का दर्शन न रहकर भक्तितत्व से संचालित होकर निर्गुण के साथ सगुण के समीप भी आ गया। इसमे युगीन भावबोध को यथेष्ट स्थान मिला है। वह अध्यात्म से ज्यादा यथार्थ–जीवन के निकट आ गया है। फलतः देश की पराधीनात, दरिद्रता, शासकों और पूँजीपतियों के अत्याचार, रूढ़िवादी पाखण्ड आदि के खण्डन को स्थान मिला। इस तरह अध्यात्म की गुफा से निकलकर वह लोकोपकारी बन गया।

निराला जी ने अपने काव्य में अद्वैत की एक नवीन पीठिका की स्थापना की है, जिस पर आधारित भविष्य का मंगल–भवन स्थापित किया जा सकता है। आज की मनोग्रन्थियों में उलझे जीवन को निराला ने ऐसे सूत्रा दियें है जिसका सम्बल युग–जीवन के लड़खड़ाते पैरों में शक्ति का संचार कर सकता है और सहृदयता देकर श्रेय के पथ पर अग्रसर कर सकता है क्योंकि सहृदय जीवन–दर्शन मानव के लिए वरदान स्वरूप है। भीषण संघर्ष के क्षणों में भी निराला–काव्य दर्शन हमें सघर्ष से लड़ने की शक्ति देता हुआ नवोत्कर्ष की ओर प्रेरित करता है।

अतः निराला जी को आधुनिक हिन्दी–कविता में भारतीय वेदान्त–दर्शन का हम प्रतिनिधि कवि मान सकते हैं।

1.5.6 संगीतात्मकता–

छायावादी युग के काव्य वैभव का एक बहुत बड़ा भाग उसके गीतों मे सुरक्षित हैं। प्रायः सभी छायावादी कवि प्रबंध–रचना मे निष्णात होते हुए भी प्रमुख रूप से गीतकार रहे हैं। इस युग के सर्वाधिक क्रान्तिदर्शी कवि निराला ने गीति के शिल्पविधान में कई नवीन आयाम स्थापित किये हैं।

सामान्यतया गीति काव्य में शब्द–माधुरी व लय का होना अनिवार्य माना जाता रहा है पर शनैःशनै उसमें अंतर्जगत का अत्यधिक चित्रण होने लगा और आत्मभिव्यक्ति ही उसका प्रधान गुण बन गया। अतएव गीति–काव्य का प्रधान गुण भावावेश हो गया पर भारतीय साहित्य में तो उसमें भावावेश के साथ–साथ स्वर–साधना अर्थात् संगीत को भी प्रमुख माना गया और गीतिकाव्य का निर्माण ही संगीत के उच्च आदर्शो पर होने लगा।

निराला की संगीत कला गीतिका में सफल हुई है। जितना उदात्त काव्य है उतना ही संगीत भी। निराला जी के कथानानुसार–मैंने अपनी शब्दावली को काव्य के स्वर में मुखर करने की कोशिश की है। यद्यपि प्रत्येक गीत व्यक्तित्व का प्रकाश और अभिव्यक्ति होता है तो भी गीतों को शास्त्रीय संगीत की नियमावली के अनुरूप ढालना और संगीत को काव्य से मुखर करना ही यहाँ प्रधान उद्देश्य रहा है। वस्तुतः जितना महत्व बंगाल में रवीन्द्र संगीत का है, उतना ही महत्व पूर्ण है हिन्दी में निराला संगीत। संगीत की स्वर–साधना के बावजूद भाव–सौन्दर्य का स्खलन निराला के किसी भी गीत में नहीं हुआ। रवीन्द्र संगीत की कोमल भावोच्छलता के स्थान पर निराला–संगीत मैं पौरूष और आज का स्फुरण ज्यादा मिलगा।

इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए सन् 1947 ई. रामविलास शर्मा ने लिखा–

निराला बंगाल की सुरम्य संगीतमयी धारा में जन्मे थे। उन्होंने महिषादल के राजसी वैभव में अपने बाल्यकाल में ही शास्त्रीय संगीत की शिक्षा प्राप्त की थी। संगीत मर्मज्ञ होने के साथ–साथ वे स्वयं बहुत अच्छे गायक भी थे। वे मस्ती में गाते थे। स्वयं अपने आप सधे हुए लगते और शब्दों की ध्वनि के साथ स्वर का ऐसा योग देते कि भाव में और भी गहराई आ जाती। उनके स्वर में पिघले सोने का सा मार्दव था, आवाज तार–सप्तक के लायक न तो महीन थी, न मंद्र के लायक अति गम्भीर। गले में कहीं खरास न थी। धीमें शान्त स्वर सहज ही रेशम के लच्छों जैसे निकलते।"

वस्तुतः बचपन से ही बंगाल में पलने–बढ़ने के कारण निराला जी में वहाँ के संस्कारों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक भी था। यह संगीत निराला के बंगाली–संस्कारों की देन थी। इस सन्दर्भ में सन् 1950 ई. में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी लिखते हैं–

जैसे और सब बाते की, वैसे ही संगीत के अंग्रेजी ढंग की शुरूआत सबसे पहले बंगाल में हुई थी। इस नये ढंग की ओर निराला जी सबसे अधिक आकर्षित हुए और अपने गीतों में इन्होने इसका पूरा जौहर दिखलाया। संगीत को काव्य और काव्य को संगीत के सबसे निकट लाने का श्रेय निराला जी को ही है।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी जी ने निराला–संगीत की स्वछंद–शैली को इस प्रकार अभिव्यक्त किया–

उनके कुछ गीत शास्त्रीय राग–रागिनियों में बंधे है। निराला के अनेक गीत शास्त्रीय संगीत का अनुवर्तन करते हैं। एक दूसरा है–स्वछन्द संगीत। इसमें कवि पय भारतीय लयों, ग्राम्य–गीतों का समन्वय मिलता है। निराला जी के अनेक गीत इस स्वच्छन्द शैली में लिखे गये हैं।"

1out-frontBlackMA Hindi Paper IV Nirala 193-416 #1

इस प्रकार निराला ने काव्य में संगीत का प्रयोग किया। निराला जी की संगीत–साधना के विषय मे उनके पुत्र संगीतज्ञ रामकृष्ण त्रिपाठी ने कहा–

'आरम्भ से ही निराला जी की अभिरूचि संगीत की ओर थी। संगीतज्ञों की संगति में रहकर उन्होंने इस कला का अभ्यास किया। हारमोनियम आदि वाद्यों पर ये ठुमरी, ध्रुपद भजन, बँगला के गीत आदि बहुत ही सस्वर तथा सफलतापूर्वक गा लेते थे। इसी कारण वे राजा से प्रजा तक और विद्यार्थियों से प्राध्यापकों तक सभी को प्रिय थे।'

छायावादी कवियों में सर्वप्रथम निराला ने ही काव्य संगीत का अभिन्न सम्बन्ध स्थपित किया है। उनके प्रथम गीत–संकलन गीतिका में यह विशेषता पूर्ण रूप से विद्यमान है।

निश्चय ही काव्य और संगीत की उनकी साधना गीतिकाव्य में बहुत सफल हुई है। इनमें किसी को भी प्राथमिक या गौण नहीं कहा जा सकता। जितना उदात्त उनका काव्य है, उतना ही संगीत भी।

निराला काव्य में संगीत का प्राचुर्य होने के कारण उसकी भाषा में भी संगीतात्मकता है। निराला की भाषा में लय–संगीत की प्रधानता है।

इस संगीत को कुछ ने कष्ट साध्य भी माना है। दरअसल निराला जी की कविता में संगीत इतना प्रधान है कि शब्दों के सामान्य रूप से परिचय रखने वाले पाठक गड़बड़ा जाते हैं और उन्हें विलष्ट भी कह देते हैं। संगीत तत्व को बनाये रखते में ध्वन्यात्मक शब्द ही सहायता करते है और निराला जी ऐसे शब्द चुन–चुन कर रख देते हैं कि उनकी ध्वन्यात्मकता से संगीत की रक्षा के साथ काव्य सौन्दर्य भी बढ़ जाता है। उदाहरणार्थ–

मौन रही हार

प्रिय पथ पर चलती सब कहते श्रृंगार

कण–कण पर कंकण, मृदु किण–किण रव किंकिणी

रणन–रणन नूपुर उर लाज लौट रंकिणी

और मुखर पायल स्वर करे बार–बार

प्रिय पथ पर चलती सब कहते श्रृंगार।

यहाँ लययुक्त प्रवाह पश्चिमी संगीत की सी गत्यात्मकता और साथ ही मंथर–मंथर गति से आगे बढ़ती हुई स्वदेशी रागात्मकता इन सभी का समन्वय करते हुए कुद मिश्रित ढंग से राग रचे गए है।

निराला के कुछ गीतों की गति बिल्कुल आर्केस्ट्रा की सी स्वरलहरियाँ जगाती है तो कुछ गीत धीरे–धीरे दूर से सुनाई देती वीणा के स्वरों की याद दिलाते हैं। ऐसे गीतों में वार्णित, और मात्रिक दोनों तरह के छंदों के नियम टूट जाते हैं किन्तु लय, प्रवाह राग और अर्थ का एक सिलसिला बना रहता है।

गीतिका के गीत शास्त्रीय संगीत की नियमावली के अनुरूप अनेक राग–रागनियों में बँधे हुए पूर्णतः गेय है। कवि का शास्त्रीय संगीत–ज्ञान इन गीतों में दिखाई देता है।

विशेष रूप से गीतिका में निराला ने गीत और संगीत दोनों का सामंजस्य करके काव्य और संगीत की साधना के एक नये आयाम को प्रस्तुत किया है।

निराला जी ने संगीत और गीत काव्य की पूरी रक्षा एक साथ की है। उनके संगीत--काव्यकों समीक्षकों ने अपने--अपने ढंग से समीक्षित किया है। किसी ने निराला--संगीत को हिन्दी में बँगला की नकल बताया तो किसी ने पाश्चात्य एवं भारतीयता का समिश्रण कहा। किसी को उनकी भाषा ने प्रभावित किया, तो किसी ने उनके खड़ी बोली गीतों को स्वरबद्ध करने में कठिनाई बतायी। अधिकतर लोगों ने छन्दोवद्धता और संगीतात्मकता को एक साथ जोड़कर उनकी समीक्षा की है।

निष्कर्ष यह है कि निराला काव्य में संगीत का विशिष्ट प्रयोग हुआ है। निराला के खड़ी बोली गीतों पर यह आक्षेप बराबर लगाया जाता रहा है कि वे गाये नहीं जा सकते। परन्तु गीतिका अर्चना, आराधना, आदि गीतों द्वारा निराला जी ने यह सिद्ध कर दिया कि खड़ी बोली में भी लचीलापन मधुरता एवं शास्त्रीय संगीत में ढलने की क्षमता है। निराला जी को सुर और लय बहुत गहराई से आकर्षित करते रहे है। उनका संगीत उनके हृदय में बजता हुआ, बाहर आता मालूम पड़ता है। उनके गीतों को पढ़ते हुए बराबर यह लगता है कि उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व सुर से सधा हुआ था। सुरों और रंगों के इसी संयोग ने कभी--कभी उन्हें बैसवारी लोकगीतों की ....'ट्यून' की ओर आकर्षित किया है। रंगमयता की दृष्टि पावस एवं बसन्त ऋतुएं उन्हें बहुत प्रिय लगी है। होली गीतों का मधुर स्वर उनके गीत 'मार दी पिचकारी' में अनुगुंजित हुआ है।

वस्तुतः साहित्य और संगीत का समन्वय यदि किसी आधुनिक कवि ने सच्चे अर्थो में किया है तो वह एक मात्र निराला जी है। उन्हें गीतों में संगीत का पुट देने का शौक था संगीत के बिना वे काव्य को निष्प्राण मानते थे।

1.5.7 छन्दों विधान--

छन्द--प्रयोग में निराला जी ने विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है वे एक अनुपम काव्य--शिल्पी थे। उन्होंने अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनो ही क्षेत्रों में परम्परा के पिष्ट--पेषण के स्थान पर नूतन पथ का अवलम्ब ग्रहण किया। छन्दों की दिशा में भी उन्होंने परम्परागत रूढ़ियों को विच्छिन्न करके मौलिक प्रयोग किये। इनकी छन्द योजना में उनका क्रान्तिकारी स्वरूप हुआ है। निराला जी कविता की मुक्ति के लिए छन्दों की मुक्ति की आवश्यकता पर बल देते हुए परिमल की भूमिका में कहते हैं--

'मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है। मनुष्यों की मुक्ति कर्मो के बंधन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छन्दों के शासन से अलग हो जाना है।'

इस प्रकार निराला ने कविता में मुक्त छन्दों के प्रयोग की आवश्यकता प्रतिपादित की है और जब उन्होंने पहले पहल इस छन्द का प्रयोग किया तब कुछ आलोचकों ने मजाक उड़ाने के लिए उसे 'रबड़ छंद' या 'केंचुआ छंद' कहा। पर अब अधिकांश विचारक यह स्वीकार करते हैं कि--

निराला जी ने हिन्दी काव्य को मुक्त छंद की अमर विभूति प्रदान की निश्चय ही अत्यन्त स्तुल्य कार्य किया है।'

निराला की प्रथम कविता 'जुही की कली' आरम्भ में जिसका रचना काल 1916 बतलाया जाता है। इसी प्रयोग को लेकर चली। इस मुक्त छंद का विरोध भी हुआ।

सन् 1938 ई. में पं. रामचन्द्र शुक्ल निराला जी के मुक्त छन्द के बारे में कहते हैं–

'सबसे अधिक विशेषता आपके पद्यों में चरणों की स्वच्छन्द विषमता है। कोई चरण बहुत लंबा, कोई बहुत छोटा कोई मझोला.........।'

इस नये प्रयोग के लिए उस समय निराला का कसकर विरोध हुआ। मुक्त छन्द की महत्ता स्पष्ट करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने सन् 197 ई. में लिखा–

'मुक्त छन्द की महत्ता इस बात में नहीं कि वह बन्धन हीन है या मुक्त भावो का वाहन है, वरन् इसमें है कि उसने मात्रिक छन्दों की एक लय को भंग किया। वह हिन्दी कविता में बोलचाल की लय की विविधता लाया। उसने भाषा में की छिपी हुई शक्ति उद्घाटित की। हिन्दी के कवित्त छन्द में यह विविधता है।'

निराला के मुक्त छन्द पर सन् 1956 ई. में प्रकाशित डॉ. रामविलास शर्मा की यह टिप्पणी अत्यंत महत्वपूर्ण है–

मुक्त छन्द वास्तव में अर्द्ध–नारीश्वर है कभी–कभी एक ही कविता में पुरूषता और सुकुमारता दोनो गुण दिखते है। निर्गुण आत्मा की तरह यह पुरुष भी बनता है और स्त्री भी। निराला ने अपने मुक्त छन्दों को कवित्त की गति ही नहीं दी, उसकी सानुप्रास शब्दावली भी अपनाई। मुक्त छन्द के चरणों में उन्होने अनुप्रासों के घुँघरू बाँधे। इन घुँघरूओं से जब जैसी इच्छा हुई वैसी ध्वनि निकाली। मुक्त छन्द में सहज भावोद्गार वाली कविताएँ उन्होंने कम लिखी। वर्णनात्मक, नाटकीय, वक्तृत्व कला–प्रधान कवितांएं ही अधिक लिखी। मन का सहज प्रकाशन, भावों का अकृतिम चित्र उनके मुक्त छन्द में प्रायः नहीं है। स्वतः स्फूर्ति गेयता की जगह नाटकीय रचना–कौशल मुक्त–छन्द में लिखी हुई कविताओं की विशेषता है।'

स्पष्ट है कि निराला के कुछ छंद की प्रयोजनीयता को शर्मा जी ने पहले पहल पहचाना। इसे परवर्ती समीक्षकों ने आगे बढ़ाया। इसका आचार्य नंद दुलारे बाजपेयी जी ने भी समर्थन दिया। इसी बीच सन् 1947 ई. में डॉ. बच्चन सिंह ने क्रांतिकारी कवि निराला पुरस्तक में निराला के छंदों का वर्गीकरण किया। उनके अनुसार निराला ने मुक्त छन्द की विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। प्रमुख शैलियां हैं

1. दार्शनिक प्रगीत –जागरण और रेखा
2. लघु प्रगीत –जुही की कली, शेफालिका
3. दीर्घ प्रगीत– जागो फिर एक बार, कवि, स्मृति–चुम्बन
4. पत्र प्रगीत – शिवाजी महाराज का जयसिंह के नाम पत्र
5. गीत नाट्य – पंचवटी प्रसंग

उपयुर्क्त सूची से यह स्पष्ट हो जाता है कि निराला के इस छन्द में भाव वैविध्य को बहन करने की पूर्ण क्षमता है। श्रृंगार–चित्रण से लेकर अध्यात्म दर्शन के निरूपण तथा राष्ट्रीय संस्कृति–प्रेम सौन्दर्य आदि के धरातल पर उद्बोधन का पूरी सामध्य निराला ने मुक्त छन्द मे सिद्ध किया है।

कवि निराला सन् 1955 ई. में आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी जी ने मुक्तछन्द की चर्चा करते हुए कहा कि निराला मूलतः प्रगीत–कवि है। इस सन्दर्भ में आधुनिक साहित्य की भूमिका द्रष्टव्य है। वे लिखते है–

निराला का मुक्त–छन्द काव्य की छन्दोगत परतन्त्रता का निराकरण था। उसने काव्य को मुक्ति तो दी ही, साथ ही नये युगोपयोगी परिधान से भी सज्जित किया। उन्होंने स्वयं मुक्त–छन्द में लय की सुधारता ला दी। मुक्त–छन्द की इस आयोजना के कारण ही उनकी कविता में सुकुमार प्रासधन कल्पना की बारीकी और अनावश्यक आमरण नहीं है। इसलिए स्वच्छंन्दता का जो अबोध स्वरूप निराला की रचनाओं में देखा जाता है उसकी तुलना दूसरे कवि से नहीं हो सकती।'

वस्तुतः यह सर्वस्वीकार्य रहा है कि मुक्तक छन्द का श्रीगणेश निराला जी ने किया। छन्दों की विविधता और प्रयोगवादी परम्परा उन्होंने प्रारम्भ की। तुक और लय–स्वर में नूतनता का प्रवेश करने में निराला जी का प्रयत्न जागरूकतापूर्ण है।

निराला अपने जन्म काल से लेकर इस छन्द के रचना काल तक बंगाल में रहे विवेकान्द की अनेक रचनाओं का अनुवाद उन्होंने बंगला से हिन्दी मे किया और रवि ठाकुर पर तो एक समीक्षा–ग्रन्थ ही लिखा यही से मुक्त छंद की शुरूआत हुई।

निराला जी ने इस मुक्त–छन्द का सम्बन्ध वेदों से स्थापित किया है। गायत्री मंत्र को वे आर्यो की स्वच्छन्द प्रकृति का सबसे बड़ा परिचायक छंद मानते हैं। वस्तुतः जब लोगो ने यह कहकर विरोध किया कि यह तो विदेशी प्रभाव है तब उन्होंने खोज करके मुक्त छन्द को वेदों से जोड़ दिया वे इस छन्द के आविष्कर्ता है या प्रथम प्रयोक्ता यह विचारणीय है। कुछ का मत है कि बिहार बन्धु (1881) में प्रकाशित महेश नारायण की कविता स्वप्न सर्वप्रथम मुक्त छंद में रची गयी है। खैर, इसके प्रचलन का श्रेय निराला जी ही देय है।

निराला के मुक्त–छन्दों को देखने से लगता है उन्होंने मुक्त छन्द–रचना में कुछ नियम मना रखे ये इसी प्रसंग में सन् 1965 ई. में आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने लिखा कि निराला जी की राम शक्ति पूजा दीर्घ प्रगति है। अब उसे लंबी कविता कहा जा रहा है, जो शास्त्रीय अभिधान नहीं है। निराला के गीतिका अर्चना आराधना गीतगुंज आदि में तरह–तरह के गीत रचे और बेला में गजले लिखी।

'अणिमा में उन्होने सानेट लिखे। दोहे, चौपाई पद घनाक्षरी कवित्त सवैया, पैराडी, लोकगीत, यानि भांति–भांति के छन्द रचे। तुलसीदास का जैसा बहुअन्तुर्तकान्त छंद तो वस्तुतः दुस्साहस है और इस कथन का प्रमाण है कि निराला पिंलग के आचार्य थें। निराला के मुक्त छन्द में बाहय नियमाविलयाँ उपेक्षित हो गयी किन्तु उसकी आत्मा, लय एवं ताल सुरक्षित है। निराला ने छन्द में बहुविध प्रयोग किये है पर कवि छन्दों को लयात्मकता और उसके प्रवाह को सुरक्षित रखने में सदा सजग रहा है।

अपने प्रगीतों में निराला जी ने रसानुकूल छन्दों को ग्रहण किया और स्वच्छन्द छन्दों का आविष्कार किया। अपने आख्यानक काव्यों में जिन छन्दों को अपनाया वे भी छंद शास्त्र के अनुकूल होन पर भी कुछ परिवर्तन के साथ आये।'

छन्द की स्वच्छन्दता अधिक पूर्णरूप में वहीं देखी जाती है, जहाँ इन्होंने किसी भी मात्रा या वर्ण–संख्या की आवृत्तियों की योजना न करके अनवरत प्रवाह की गति या लय को ही स्वीकार किया है।

प्राचीन छंद शास्त्रियों के कट्ट नियमों के कारण भावो की उपेक्षा हुई तुकबंदी तथा चमत्कार को बढ़ावा मिला इसलिए निराला जी ने भावभिव्यक्ति में पूर्णता लाने केलिए कम से कम छांदसिक अनुशासन स्वीकार करने की बात की।

निराला पिंगल के आचार्य थे। निराला के मुक्तछन्द में बाह्य नियमावलियाँ उपेक्षित हो गयी; किन्तु उसकी आत्मा लय एवं ताल सुरक्षित है। निराला ने छन्द में बहुविध प्रयोग किये है, पर उनका कवि छन्दों की लयात्मकता और उसके प्रवाह को सुरक्षित रखने हेतु सदा सजग रहा है।

अपने प्रगीतों में निराला जी ने रसानुकूल छन्दों को ग्रहण किया है और कई प्रकार के स्वच्छन्द छन्दों का आविष्कारा किया है। अपने आख्यानक काव्यों में उन्होंने जिन छन्दों को अपनाया वे छंद शास्त्र के अनुकूल होने पर भी कुछ परिवर्तन के साथ आये हैं।

छन्द की स्वच्छन्दता अधिक पूर्णरूप में वहीं देखी जा सकती है, जहाँ इन्होनें किसी भी मात्रा या वर्ण–संख्या की आवृत्तियों की योजना न करके अनवरत प्रवाह की गति या लय को ही स्वीकार किया है।

प्राचीन छंदशास्त्रियों के कट्टर नियमों के कारण भावों की उपेक्षा हुई थी। तुकबंदी तथा चमत्कार को बढ़ावा मिला था, इसलिए निराला जी ने भावाभिव्यक्ति में पूर्णता लाने के लिए कम से कम छांदसिक अनुशासन स्वीकार करने की बात की।

इस प्रकार स्पष्ट है कि छन्दोंबंध के क्षेत्र मे निराला का काव्य उच्चस्तरीय है।

1.6 नई भाषा–सरंचना

निराला जी ने हिन्दी कविता को सर्वथा एक नई भाषा दी है। वे दावा करते रहे है कि कवि शब्दों को प्राणाधिक प्यार करता है। उनकी गर्वोक्तियाँ थीं–

1. गद्य में पद्य में समाभ्यस्त
2. एक–एक शब्द बँधा ध्वनियम साकार।

अर्थात् उनकी कविता का हर शब्द सुगठित है, ध्वन्यात्मक और बिम्ब विधानपूर्ण है। काव्य भाषा के ये ही तीन प्रमुख गुण होते है। गद्य को निराला के जीवन संग्राम की भाषा कहा है। उन्होंने भाषा के कई रूप प्रस्तुत किये है। एक और रमा की शक्ति पूजा वाली तत्सम परिनिष्ठित समस्त पदावली है, जिसमे उन्होंने अठारह–अठारह पंक्तियों के वाक्य लिखे हैं– दूसरी ओर छोटे से छोटे वाक्य है यथा–

रवि हुआ अस्त
निशि हुयी विगत आदि।

शक्ति पूजा की भाषा जितनी टकसाली है, उनकी परवर्ती कविता की भाषा उतनी ही मनमानी है। कुकुरमुत्ता में वे बेधड़क बोलचाल की भाषा का प्रयोग करते है। नये पत्ते की कविताओं में उनकी बैसवारी जनपदीय अवधी के ठेठ देशज प्रयोग दिखाई देते हैं। गीतिका और परिमल की रचनाओं में बाँग्ला शब्दावली का प्रभाव परिलक्षित होता है। निष्कर्ष यह है कि निराला की भाषा जितनी परिनिष्ठित है, उतनी ही प्रयोगपूर्ण है। उसमें लोकभाषा और काव्य भाषा का सुंदर सम्मिश्रण हुआ है। निराला जी ने स्वयं अनेक नये–नये शब्द बनाये हैं, कहीं अत्यन्त क्लिष्ट कहीं अत्यन्त सरल। वस्तुतः उनका भाषिक प्रयोग निराला ही था। यों रोजमर्रा की भाषा को भाषा को कवित्वपूर्ण बनाए रखना अपेक्षाकृत कठिन होता है। हिन्दी फिल्मी गीतों ने इसे अपनाया है और भवानी प्रसाद मिश्र नागार्जुन जैसे कवियों ने इस जनभाषा के सहारे अपनी जनसवेदना के संप्रेषण में यथेष्ट ख्याति प्राप्त की है। हिन्दी की अपनी इस भाषिक प्रकृति और संस्कृति की प्रतिष्ठा का श्रेय निराला को हैं।

1.7 विभिन्न काव्य रूपों के पुरोधा

निराला जी ने गद्य–पद्य की अनेक शैलियाँ अपनायी है। उन्होंने तुलसीदास नामक खण्डकाव्य लिखा। राम की शक्ति पूजा, शिवा जी का पक्ष, वनबेला, सरोज स्मृति जैसी लम्बी कविताएँ लिखी। उन्होंने गीतिका, गीतगुज अर्चना, आराधना, अणिमा, सांध्य काकली अैर परिमल में सैकड़ों प्रकार के गीत लिखे। पंचवटी प्रसंग जैसा काव्य नाटक लिखा और साथ ही रवीन्द्रनाथ विवेकानन्द गोविन्ददास चंडीदास व तुलसीदास आदि की रचनाओं के काव्यानुवाद किये।

पद दोहा, चौपाई सवैया, गजल सभी छंदों में उनकी गति थी इसीलिए वे कई काव्य रूपों के पुरोधा सिद्ध हुए।

1.8 नयी–नयी विचारधाराओं का उन्मेष

निराला जी का लेखन एक ओर जहाँ विवेकानन्द के वेदान्त– दर्शन से प्रभावित है, तो दूसरी ओर समकालीन जीवन दर्शन से भी। उन्होंने रामकृष्ण आश्रम में साधुओं का सा जीवन बिताते हुए वेदान्त योग शाक्तमत तथा वैष्णव उपासना पद्धति को निष्ठापूर्वक आत्मसात किया था, किन्तु अन्ततः इन सबको उन्होंने एक नये युगबोध ा के रूप में परिणत कर दिया था, किन्तु अन्ततः इन सबको उन्होंने एक नये युगबोध के रूप में परिणत कर दिया था। उनका अद्धैतवाद दरिद्रनारायण की उपासना में बदल गया। निराला अनुभव करने लगे कि अमीर–गरीब सब एक ही ब्रह्म हैं, इसीलिए शोषितों के प्रति उनके मन में संवेदना प्रबल हो उठी। उनकी अनेक कविताएँ जैसे–भिक्षुक, विधवा, वह तोड़ती पत्थर आदि इसी लोक संवदेना से परिपूर्ण है। एक गीत में वे समर्थ समाज से कहते हैं–

छोड़ दो जीवन यों न मलो।

यह भी तुम जैसा ही सुन्दर।

.....तुम भी अपनी ही डालों पर फूलों और फलों।

यहाँ जियों और जीने दो का सिद्धान्त मुखरित हुआ हैं। यह भारतीय साम्यवाद समाजवाद निराला की कई कविताओं में दिखाई देता है। इसका स्रोत कदापि मार्क्सवाद न होकर शुद्ध भारतीय वेदान्त है। निराला जी ने अधि ावास नामक कविता में लिखा कि जब में मोक्ष की दिशा में बढ़ रहा था, तभी मुझे एक दुखी भाई दिखाई पड़ा। मैं उसकी सेवा में लग गया, अर्थात् माया से बँध गया, फलतः मोक्ष का मार्ग अवरुद्ध हो गया, लेकिन उसकी कोई चिंता मुझे नहीं।

मैंने मैं शैली अपनाई।

देखा एक दुःखी निज भाई

दुःख की छाया पड़ी हृदय में मेरी

झट उमड़ वेदना आयी।

जनसाधारण के प्रति निराला के मन में बड़ी करुणा रही हैं। भिकुक की दशा पर द्रवित होते हुए वे कहते हैं–

ठहरो हमारे हृदय में है अमृत, मैं सींच दूँगा

अभिमन्यु जैसे हो सकोगे तुम

तुम्हारा दुःख मैं अपने हृदय में खींच लूँगा।

इस शोषित जनता के प्रति निराला ने मात्र शाब्दिक सहानुभूति ही नहीं प्रकट की है, बल्कि सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष करते रहने की प्रेरण भी प्रदान की है। पत्थर, तोड़ने वाली मजदूरिन उनकी दृष्टि में आदर्श है जो परिस्थितियों से जूझ रही है, लेकिन परास्त नहीं हुई है। कवि के शब्दों में–

देखो मुझे उस दृष्टि से,

जो मार खा रोई नहीं।

निराला के अनेक पात्र जैसे चतुरी, चमेली, पुखराज आदि परिस्थितियों से टकराते है और अन्ततः सफलता प्राप्त करते है।

1.8.1 नई पात्र परिकल्पना–

निराला जी ने एक और धीरोदान्त नायकों का चित्रण किया है, जेसे शक्तिपूजा और पंचवटी प्रसंग के राम, लक्ष्मण, हुनमान और जाम्बवान आदिं और शिवाजी तथा तुलसीदास नामक काव्य के तुलसी भी। साथ ही उन्होंने आर्थिक विवशतावश भीष्म, प्रह्लाद और महाराणा प्रताप पर जीवनी ग्रन्थ लिखे, अर्थात् पारम्परिक पौराणिक पात्रों का भी चित्रण किया। दूसरी ओर उन्होंने लघु पात्रों को प्रतिष्ठा दी जैसे कुल्ली, चतुरी, बिल्लेसुर, चमेली, महँगू, झींगुर आदि। इन लघु पात्रों पर तरस न खाकर उन्होंने इनका मुक्त गौरव–गान किया, इसीलिए वे नीचे से ऊपर उठते दिखते हैं। एक ओर उनके राम हैं, जो अंतिम कमल के लुप्त हो जाने पर अपनी आँख चढ़ा देने का संकल्प लेते है और दूसरी ओर चतुरी जैसा लघुपात्र है, जो परिस्थितियों से भी हार नही मानता। निराला की यह पात्र–परिकल्पना वस्तुतः बड़ी प्रेरक है।

1.8.2 विषयगत वैविध्य

निराला जी ने अपनी रचनाओं में एक ओर दर्शन का दिग्दर्शन कराया है, जैसे तुम और मै, अधिवास, पंचवटी–प्रसंग, कौन तम के पार, पास ही रे हीरे की खान, आदि में तो दूसरी ओर वे सामाजिक नवजागरण की दिशा में सक्रिय रहे हैं। उन्होंने यह दशक पहले बेला की इन पंक्तियों में यह माँग की थी–

बैंक किसानों का खुलवाओं।'

देश में बँट जाये जो पूँजी तुम्हारी मिल में है।

कुकुरमुत्ता में निराला ने गुलाब को कुलीन, शौकिन और विलायतीपन से लालायित पूँजीवादी नव धनाढ्य वर्ग का प्रतीक मानते हुए और कुकुरमुत्ता को उपेक्षित देशी सत्ता का प्रतिनिधि मानते हुए वर्ग संघर्ष को वाणी दी है। उनकी रचनाओं में समसामयिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चिंतन भरा पड़ा है। ग्रामीण व्यवस्था और लोकजीवन, विशेष रूप से बैसवारा अंचल के प्रति उनके मन में विशेष अनुरक्ति है। वे इनके विकास के लिए कटिबद्ध दिखते हैं जैसे–

जल्द–जल्द चलो, कदम बढ़ाओ।

धोबी, पासी चमार सबकी लगेगी पाठशाला।

रात के अँधेरे में खोलेगे, जमींदार की हवेली का ताला।

एक पाठ पढ़ो, फिर टाट बिछाओ।

1.8.3 यथा स्थिति के प्रति क्रान्ति का स्वर

निराला जी मूलतः क्रान्तिकारी कवि रहे है। केवल कथनी में ही नहीं बल्कि करनी में भी। सरोज स्मृति कविता इसका उदाहरण है। वे आजीवन रूढ़ियों का विरोध करते रहे है। काव्य के क्षेत्र में भी और जीवन में भी। सत्ता का उन्होंने बराबर निषेध किया और जीवन पर्यन्त कभी राज्याश्रय नहीं ग्रहण किया। उन्हें बराबर पेट के लाले रहे, लेकिन सामंतों या सत्ताधीशों के आगे झुकना उन्होंने स्वीकार नहीं किया। वे बराबर कहते रहे–

हम साहित्य के बादशाह है,

अन्धे क्या जाने।

वस्तुतः तुलसीदास उनके आदर्श रहे हैं। आज इसीलिए तुलसी और निराला बुद्धिजीवी कलमकार वर्ग के आदर्श हैं।

निराला जी की विद्रोही चेतना को विषयानुसाद पाँच वर्गों में विभाजित करना समीचीन होगा–

1. राजतंत्र का विरोध
2. धर्मतंत्र का विरोध
3. सामाजिक व्यवस्था का विरोध
4. अर्थ व्यवस्था का विरोध
5. साहित्य क्षेत्र में आरोपित अनुशासनों का विरोध।

1. राजतंत्र का विरोध–

निराला जी प्रायः सामन्ती व्यवस्था के विरोध में रहे। उनकी एक कविता है राजे ने रखवाली की। उसमें राजन्य व्यवस्था का भण्डाफोड़ करते हुए वे कहते हैं कि राजाओं ने अपनी रक्षा के लिए किले बनवाए फौज रखी कवि और कलाकारों को पाला और खून की नदियाँ बहाई। उसकी हिंसक प्रवृत्ति एवं भोग–विलास वृत्ति से त्रस्त प्रजा ने अन्त में महसूस किया कि यह कल्याण राज्य नहीं है। निराला की कई कृतियों में ऐसे विद्रोही पात्र आए हैं जो राजतंत्र को चुनौती देते हैं। जैसे– काले कारनामें में , मनोहर, चोटी की पकड़ में, प्रभाकर, मुन्नाबादी लका में विजय और निरूपमा में कुमार। अलका में राजा का प्रतिनिधि है जमीजदर मुरलीधर। निराला की नायिका शोभा, अलका, का सर्वस्व हड़पने के लिए जब वह आमादा हो जाता है तो अलका उसे गोली मार देती है। चतुरी चमार जमीदार द्वारा जबरन मुत में प्रति वर्ष दो जोड़ी जूते बनवाने की व्यवस्था का विरोध करता है। चोटी की पकड़ में लेखक(1944) लार्ड कर्जन के बंग–विच्छेद का विरोध करता हुआ स्वदेशी का नारा देता है। वहीं राजा राजेन्द्र प्रताप

के उत्सव में सुराजियों का विद्रोह व्यक्त होता है। अलका का विजय संन्यासी बनकर राजा को चुनौति देता हुआ अपनी देश भक्ति का परिचय देता है। कुल्ली भाट में निराला जी टैक्स वसूली का विरोध करते हुए खादी और किसान–आंदोलन को समर्थन देते हुए दिखायी देते है। निरूपमा का कुमार ताल्लुकदारों की यूनिवर्सिटी द्वारा किए गए अन्याय के प्रतिरोध स्वरूप जूता पॉलिश का कार्य शुरू कर देता है, पर आत्म समर्पण नहीं करता। निराला ने ऐसी अनेक कविताएँ लिखी है जिनमें सरकारी अधिकारियों का विरोध किया गया है। जैसे कुत्ता भूकने लगा, झीगुंर, डर का बोला, मँहगू मँहगा रहा, तथा डिप्टी साहब आए। उनका एक पात्र महादेव मालकि बख्तावर सिंह को मारता है तो निराला खुश होते हैं अप्सरा का एक अंग्रेज अधिकारी हेमिल्टन युवती कनक को जब बरबस अपनाने की चेष्टा करता है तो राजकुमार डट कर उसका विरोध करता है। निराला जी की एक कहानी है राजा साहब को अँगूठा दिखायां इसमें उन्होनें राजतन्त्र की अन्धेर गर्दी को उजागर किया है। निराला ने सत्ता से जुड़े हुए राजनीतिज्ञों का भी कभी समर्थन नहीं किया। वे नेहरू को कभी स्वीकार नहीं कर पाए। उनकी ये रचनाएँ इस कथन की साक्षी हैं–

काले काले बादल छाए न आए वीर जवाहर लाल।

आजकल पंडित जी देश में बिराजते हैं

लक्ष पित का यदि कुमार होता शिक्षा पाता में अरब समुद्र पार

देश की नीति के मेरे पिता परम पंडित(वनबेला)

निराला ने अपने निबंध नेहरू से दो बातें में हिन्दी के प्रति नेहरू की अवमानना का विस्तृत विवरण दिया है। उनका एक निंबध है प्रान्तीय हिनदी साहित्य सम्मेलन फ़ैजाबाद। इसमे वे टंडन जी से टकराते दिखायी देते हैं। टण्डन जी ने चाहा था कि साहित्यकार आजादी के आन्दोलन में हमारा साथ दे। निराला उत्तर देते हैं कि इस प्रदेश के राजनीतिज्ञ जहाँ पहुँचे है, कवि उनसे आगे हैं और यह भी कि सरस्वती राजनीति की दासी नहीं है। सरकार के प्रति विरोध भाव रखने के कारण उन्होंने कभी कोई पद, पुरस्कार, अनुदान आदि स्वीकार नहीं किया। रेडियों से अपना कोई प्रसारण तक नहीं होने दिया और मरते–मरते भी सरकारी अस्पताल जाना स्वीकार नहीं किया। उनके अनुसार स्वंतत्रता आंदोलन में बुद्धि जीवियों का नेतृत्व होना चाहिए था। उनके अनुसार यह आजादी अधूरी है।

वे कभी राजा, नेता और हाकिम के सामने झुकने को तैयार नहीं हुए, इसीलिए ओरछा नेरश को अपना परिचय देते हुए उन्होंने कहा था कि मैं वह हूँ, जिसके अकड़दादा भूषण की पालकी में आपके लकड़दादा छत्रसाल कथा लगायां करते थे। भूषण त्रिपाठी को अपना पूर्वज मान बैठे थे और दूसरी ओर। बोर बल त्रिपाठी को भी। इसी दृप्त स्वाभिमान के कारण वे किसी राज्यश्रम में ठहर नहीं पाए। महिषादल स्टेट में अपने पिता के निधनोपरांत उन्होंने वहाँ कुछ दिनों नौकरी की लेकिन चाहकारिता और चुगल खोरी से त्रस्त होकर वे अलग हो गए। छतरपुर नरेश के यहाँ उन्होंने तीन सप्ताह बिताए पर वह अनुभव अच्छा न रहा। अपने पूरे साहित्य में उन्होंने मात्र चार राजाओं को महत्व दिया है। एक शिवाजी को (दृष्टव्य महाराजा शिवाजी का पत्र) दूसरे गुरू गोविन्द सिंह को(द्रष्टव्य–जागो फिर एक बार) तीसरे एडवर्ड आष्टम को(द्रष्टव्य–एडवर्ड अष्टम के प्रति) और चौथे कला कांकर नरेश सुरेश सिंह को जिन्हें कुकुरमुत्ता काव्य समर्पित किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि समाज सेवी सत्साहसी और साहित्य नुरागी शासकों को उन्होंने महत्त्व भी दिया है। यों, अभिजात्य के प्रति बराबर उनके मन में विद्रोह भाव रहा है। उनका कुकुरमुत्ता गुलाब को धिक्कारते हुए कहता है।–

राजाओं रईसों का रहा प्यारा

इसीलिए औरों से तू न्यारा।

वस्तुतः निराला ने अपना एक अलग मनोराज्य बना लिया था।

2. धर्मतन्त्र का विरोध–

निराला जी को पाखण्ड से बड़ी चिढ़ थी इसीलिए उन्होंने महिषादल के पाखड़ी साधु का विरोध किया। उनकी एक कविता है प्रेमांनदजी से सम्बन्धित इसमें आश्रम को एक बंगाली साधु उत्तरी युवक का जब निषेध करते है तो प्रेमानंद जी उसकी भर्त्सना करते है। यह सुविदित है कि निराला जी हनुमत भक्त थे, देवी के उपासक थे और यदा–कदा वैष्णव हो आते थे। अर्चना और आराधना के गीतों में शरणागति मिशन में बिताए थे स्वामी माधवानंद जी के साथ उन्होंने समन्वय का सम्पादन किया था और संन्यासियों की वेशभूषा तथा उन्ही की जैसी दिन चर्या अपनायी थी इस अवधि में वे स्वामी शारदानंद जी से इतने चमत्कृत हुए कि उसे अंधविश्वास की कोटी में भी रखा जा सकता है। दूसरी ओर इसी अवधि में वे पारम्पिरिक अध्यात्म का विरोध करते हुए भी देखे जाते है। उनकी एक प्रसिद्ध कविता है अंधिवास। कवि चिन्तन कर रहा है कि उसका अधिवास पानी गंतव्य कहाँ है? तभी उसे रास्ते में एक दुखी दिखायी देता है। चिन्तन प्रक्रिया छोड़ कर उस गरीब को गले लगा लेते हैं। उकन मन में एक द्वंद्व छिड़ जाता है। अन्ततः वे दरिद्र नारायण का सेवाव्रत अपनाते हुए लिखते हैं–

छूटता है यद्यपि अधिवास

नहीं है इसका मुझको त्रास।

मैंने में शैली अपनायी।

यह मैं शैली निराला के व्यवस्था विरोधी व्यक्तित्व की सूचक है। उनका स्वतंत्र व्यक्तित्व नियति तक के विधान को नहीं स्वीकार कर पाया। उकनी कुण्डली में दो विवाह लिखे हुए थे। निराला ढान लेते है कि कुण्डली में लिखे हुए को खंडित कर देना है, इसलिए वे कुण्डली फाड़ कर फेंक देते है और लिखते हैं–

खंडित करने को भाग्य अंक देखा भविष्य के प्रति अंशक इसी प्रकार दान कविता में वे वैष्णव भक्तों की अमानवीयता को कोसते है, आनार के गंगा के किनारे में पण्डगीरी पर व्यंग्य करते हैं यदा–कदा मुस्लिम कट्ठता पर विचार करते है और विभिन्न संप्रदायों की संकीर्णता पर प्रकाश डालते हैं।

3. जड़ सामजिक व्यवस्था का विरोध–

संगोगवश निराला उच्च वर्ण और मध्य निम्न वर्ग से जुड़े हुए थे, पर मध्यवर्गीय अध्ययुगीन मानसिकता से वे मुक्त थे। यही कारण है कि उनके साहित्य में छुआ छूत खान पान के भेद–भाव दहेज नारी परतंत्रता वैधव्य व्रत वैश्या वृन्ति पर्दाप्रथा रोमैन्टिक मनोवृत्ति और व्यभिचार भ्रष्टचारा की सर्वत्र भर्त्सना की गयी है। कुल्ली भाट की अछूत पाठशाला के छात्र निराला को जब दूर से फूलों का दोना पकड़ाते है तो निराला ममहित होकर कहने लगते हैं कि ये ऋषियों के वंशज है पर हमने उन्हें इस अधोदशा में पहुँचा दिया है कि अब हमें छूते हुए डर रहे हैं। चतुरी चमार में निराला किसी की चिन्ता न करके चतुरी के पुत्र को पढ़ाते हैं और अपने घर को हाउस ऑफ कामन्स बना देते है। यदा–कदा उन्हें चौके की छुआ–छुत का निर्वाह करते हुए स्वपाकी होते हुए भी देखा गया

है। यों खान पान में वे आजीवन उन्मुक्त रहे घृत पक्व मसालेदार मांस और अण्डा सेवन का उन्होंने अकारण अनेकशः उल्लेख किया है। मुख्यतः कट्टर पंथियों को चिढ़ाने के लिए। सुकुल की बीबी में पुखराज को पुष्कर बना कर जब भोजन दिया जाता है तो उसमें वे कनौजियों को सम्मिलित देख कर खुश होते है। दहेज प्रथा का निराला ने बहुशः विरोध किया है। उनकी कहानियों जैसे–ज्योतिर्मयी, कमला हिरनी श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी आदि में उन्होंने देहज, लोभियों पर जम कर प्रहार किए हैं। सरोज स्मृति में अपनी कन्या के विवाह में उन्होंने दहेज प्रथा का यह कहते हुए विरोध किया कि अभी न ऐसा सुसमय है और न मैं इतना मूर्ख हूँ, कि पैतृक संपथ्तत बेंचकर दहेज जुटाऊँ। वे सारे तीज तोड़कर सादगी अपनाते हैं तुम करो ब्याह तोड़ता नियम मैं सामाजिक योग के प्रथम।

यद्यिप पुत्र राष्कृष्ण का विवाह उन्होंने धूम धाम से किया था पर सरोज का विवाह उनके शब्दों में आमूल नवल थां निराला ने वैवाहिक रूढ़ियों का अधिकाधिक विरोध किया है। उनकी कथा–कृतियों में दर्जनों पात्र है जिन्होंने प्रेम–विवाह किए है। इनमे कुछ विजातीय भी है। प्रणय परिणय की पहल प्रायः युवतियों ने की है। निराला ने विधवाओं दासी पुत्रियों और वेश्याओं के विवाह की भी भरसक युक्ति निकाली हैं। अप्सरा और कला की रूपरेखा में वे नर्तकी–गपिकाओं को कला की अधिष्ठात्री सिद्ध करते है और एक प्रसंग मे अल्ला रखा को गांधीजी से बेहतर घोषित करते हैं।

जातीय दम्भ निराला जी को सह्मय नहीं था। वे छुटभैया, कान्यकुन्ज थे पर हीनताबोध से मुक्त थे निरालाजी साम्प्रदायिकता एवं कठमुल्लापन के विरोधी थे। उनका बिल्ले सुर कनौजिया होता हुआ भी जीविकोपार्जन के लिए एक निम्नवर्गीय की चाकरी करता है। और अन्ततः बकरी पालन–उद्योग स्थापित करके मुक्ति बल से अपनी अच्छी हैसियत बना लेता है। उनका चरित नायक कुल्ली मुसलमानिन से विवाह करता है, हरिजन पाठशाला चलाता है। और जनसेवा करके उस क्षेत्र का पूज्य पुरूष बन जाता है। उसकी अत्येंष्टि में पुरोहित वर्ग के सम्मिलित न होने पर स्वयं निराला उसका श्राद्ध कर्म कराते है। कुकुरमुत्ता मे वे नवाब जादी गोली और मोना बंगालिन की जो घनिष्टता चित्रित करते हैं, चित्रित करते हैं वह भी साम्प्रदायिक सौहार्द और वर्गीय अभेद का उदाहरण है। निराला जी ने वर्ण व्यवस्था का भी समर्थन नहीं किया। वे कहते है कि ब्राह्मण की श्रद्धा गयी, क्षत्रिय का वीर्य गया वैश्य का व्यापार गया। अब शूद्र शक्ति से भारतीयता की किरणे फूटेगी। उनके अनुसार वेदऋर्षि और राजर्षि की जगह अब शूद्र ऋषि बनाने की आवश्यकता है। एक स्थल पर वे जाति–पाँति तोड़कर मण्डल की जगह जाति–पाति योजक मण्डल स्थापित करने की सकारात्मक सलाह देते हैं। निराला जी बंगीय क्षेत्रीयता के भी विरोधी रहे हैं पर अपने बैसवारापन के प्रति सपक्ष भी। रौमेम्टिक व्यभिचार को उन्होंने खुल कर कोसा है। उनकी नायिका चमेली गाँव घर के भ्रष्ट्राचारियों का भण्डाफोड़ करती है। स्पष्ट है कि जड़ सामाजिकता के वे आद्यन्त विरोधी रहे है।।

वर्तमान धर्म का गदा भी इसी मानसिकता की देन है।

4. पूँजीतन्त्र का विरोध–

निराला जी ने मुनाफाखोरों और पूँजीपतियों को जम कर कोसा है। वे कहते हैं–

जमीदार की बनी महाजन धनी हुए हैं।

उनकी कामना है– देश में बँट जाए जो पूँजी तुम्हारी मिल मैं है।

इसीलिए वे माँग करते है कि बैंक किसानों का खुलवाओ। बादल राग में वे कहते हैं धनी वर्ग सबसे डरपोक होता है– अंगना अंग से लिपटे भी

आतंक भवन मे कॉँप रहे है, धनी वज्र गर्जन से.....।

अपने जीवन में उन्होंने दो बार सेठश्रय ग्रहण किया। मतवाला का संपादन करते हुए बाबू महादेव सेठ का और सुधा का संपादन करते हुए दुलारे लाल भार्गव का। इनके लिए उन्होनें छद्म लेखन किया। जब स्वाभिमान को आघात लगा तो निर्ममता पूर्वक उन्हें छोड़ दिया। महादेव बाबू के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए वे कहते है कि वे न होते तो निराला न आया होता।

5. साहित्य क्षेत्र में आरोपित अनुशासनों का विरोध–

स्वतन्त्र चेता साहित्यकार किसी का वर्चस्व स्वीकार नहीं करता। युगाचार्य द्विवेदी जी ने जब छायावाद और मुक्त छंद का विरोध किया तो निराला जी ने डट कर उनका प्रतिरोध किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने जब छायावाद की हँसी उड़ायी तो निराला जी ने हमारे कालेज का बचुआ जैसी कविता लिखकर उनका उपहास किया। दूसरी ओर उनके निधन पर श्रद्धांजलि भी अर्पित की। प्रगतिशील लेखकों ने जो मास्कों डाइलाक्स प्रसारित किया निराला ने उस पर व्यंग्य किया। कुकुरमुत्ता में उन्होंने इलियट पंथी आयातित प्रयोगों का स्वयं नए पन के आग्रह के बावजूद विरोध किया।

साहित्यकारों से बैठे–ठाले छेड़खानी भी वे करते रहे है। जो कला के विरह मे जोशी बंधु जैसे निबंध में द्रष्टव्य है। वे अपनी निजी काव्य रूढ़ियों को भी तोड़ते रहे हैं। उन्हें सद्यः स्नाता का बिम्ब बहुत प्रिय था। जबकि ,खजोहरा कविता में वे उसका प्रत्याख्यान करते है। इसी प्रकार छायावादी प्रकृति चित्रण की जगह स्फटिक शिला कविता में वे कुरूपता को वाणी देते है। उनकी कई कविताएँ जैसे रानी और कानी, गर्म पकौड़ी, मैं बंभन का लड़का, इसी कुरूपता बोध की उपज हैं। वर्तमान धम्र का गद्य भी इसी मानसिकता की देन है।

वस्तुतः आत्म का विरोध भी निराला जी ने बहुत किया है। इसका एक उदाहरण है उनका एक गीत–

बाँधों न नाव इस ठाँव बंधु

पूछेगा सारा गाँव बंधु।

यहाँ कवि लोकापवाद के भय से अपने मन को मारता दिख रहा है।

एक बात और हिन्दी जगत की अवमानना उनके इस विरोध की मूलाधार रही है।

तात्पर्य यह है निराला के व्यवस्था विरोध में बड़ा वैविध्य है। उनकी पूरी साहित्यिक यात्रा मे चार महत्वपूर्ण मोड़ दिखायी देते हैं–

1. अनामिका परिमल, गीतिका, तुलसीदास का रचनाकाल, जहाँ वे प्रेम, सौन्दर्य वेदांत और छायावृत्ति से प्रेरित है।

2. कुकुरमुत्ता, अणिमा, और बेला की रचनावधि, जहाँ वे व्यंग्य विद्रोह को अपना आयुध बनाते हैं।

3. अर्चना, आराधना का रचनाकाल जहाँ वे भक्ति अध्यात्म और शरणागति मे केन्द्रित दिखायी देते हैं।

4. गींतगुज और सांध्यका कली का दौर जिसमें वे मृत्यु बोध और विक्षेप से ग्रस्त प्रतीत होते हैं।

इन सब पर समग्र दृष्टि से विचार करने पर ही यह सिद्ध किया जा सकेगा कि निराला क्रांति कारी थे, विद्रोही थे अथवा व्यक्तित्व विद्रोही थे। मेरे मतानुसार उनका क्रांक्ति दर्शन कई अर्न्तविरोधों से ग्रस्त है। यही उनका निराला पन है। मूलतः वे नवीनता के आग्रही रहे है। उनकी टेक थी–

नव गति नव लय ताल छंद नव नवल कंठ नव जलद मंद्रख नव नभ के नव विहग वृन्द को नव गति नव स्वर दे।

वे एक गीत मे प्रार्थना करते है कि प्रभु मेरे पुरातन प्रेम का हरण करें। वे मानते रहे हैं कि पुराने लड़ने वाले नए लड़ने वालों से बराबर हारे हैं। उन्होंने प्रायः प्रत्येक रचना की भूमिका में नए पन का दावा किया है। जैसे–'हिन्दी का नवीन पंथ' (अलका 1934), 'युग की चीज'(चोटी की पकड़) नए गीतों का संग्रह(बेला) भाषा आध ुनिक –कुकुरमुत्ता नयी लच्छे दार भाषा (निरूपम) सभी तरह के आधुनिक पद्य (नये पत्ते) नयी कला (चतुरी चमार) आदि। इस नवीनता ने निराला को कुछ विचित्र कहने के लिए बाध्य किया हैं। वस्तुतः यही उनकी विद्रोही चेतना का मूल हेतु प्रतीत होता है।

6. राष्ट्रीयता–

निराला की बुनियादी राष्ट्रीयता अन्तर्वारा का प्रतिनिधित्व करने का श्रेय उनकी भारति जय–विजय करे, रचना को प्राप्त है, जिसमें उन्होंने महासरस्वती स्वरूपा भारतमाता का स्तवन किया है–

भारति जय, विजय करे।
कनक शस्य कमल धरे।
लंका पदतल शतदल
गर्जितोर्मि सागर जल,
धोता शुचि चरण युगल
स्तव कर बहु–अर्थ–भरे।'
(गीतिका)

निराला की इस राष्ट्रीयता तथा अद्वैतवादिता की व्यंजना अणिमा के कुछ गीतों में हुई है, जैसे–

भारत ही जीवन धन।
ज्योतिर्मय परम–रमण
सर–सरिता बन–उपवण
तपः पुंज गिरि–कंदर
निर्झर के स्वर–पुष्कर
दिक्प्रांतर मर्म–मुखर

मानव मानव–जीवन।'

(अणिमा–55)

'अणिमा' में निराला की एक प्रसिद्ध रचना है। 'सहस्राब्दि' जिसमें भारत के अतीत वैभव को विभिन्न स्तरों एवं रूपो में अभिव्यक्त किया गया है, जो निराला की अतीत के प्रति आस्था के साथ श्रेष्ठ राष्ट्रीय रचना भी है–

आ रहा याद वह वेदों का उद्धार ख्यात

वह श्रुतिधरता, ज्ञान की शिक्षा वह अनिर्वात

निष्कंप, भाष्य प्रस्थान, त्रयीधर, संस्थापन

भारत के चारों ओर मठों का संज्ञापन।'

(अणिमा–28)

है। उदाहरणार्थ 'सहस्त्राब्दि' और शिवाजी का पत्र' द्रष्टव्य है। उन्होंने 'बादल राग' रचना में नई सामाजिक चेतना को वाणी दी है।–

'अट्टालिका नहीं रे आतंक भवन

सदा पंक से ही होता जन विप्लव गायन।'

'जागो फिर एक बार 'कविता में 'गुरु गोविन्दसिह के माध्यम से भारतीयों' की गौरवगाथा प्रस्तुत की गयी है–

'सवा–सवा लाख पर एक को चढ़ाऊँगा.....।'

इसी तरह निराला की राष्ट्रीय भावना और सामाजिक संचेतना साथ ही भावी नवनिर्माण का उनका सपना स्वतः सिद्ध है।

7. व्यंग्य–विक्षोभ

'निराला' का साहित्य जहाँ मंगलाशाओं' से भरा पड़ा है, वहीं गहरी व्यंग्य विड़म्बना भी वहाँ दिखाई देती है। उनकी कई कविताएँ हास्य की मुद्रा में लिखी गई हैं, जैसे –'गर्म पकौड़ी', 'मैं बहन का लड़का', 'रानी और कानी', आना रे गंगा के किनारे', खजोहरा, बनवेला, मास्को डायलाम्स, स्फटिक शिक्षा, कुकुरमुत्ता, आदि। उन्होंने गांधी, नेहरू, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि पर पैरोड़ी बना कर कई प्रहार किये है–

बापू तुम मुर्गी खाते यदि', हमारे कालेज का बचुवा, काले–काले बादल छाए न आए वीर जवाहर लाल, आज कल पंडित जी देश में विराजते हैं, इतना ही नहीं लक्षपति का भी यदि कुमार होता मैं.., आदि उनके व्यंग्य–वेदना, व्यंग्य विद्रोह और व्यंग्य–विनोद के श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

इस प्रकार निराला का काव्य "वैविध्यपूर्ण अर्थात सर्वधा निराला है। वह यहां ठोस जमीन से जुड़ा दिखता है।, वहीं कल्पना लोक से भी। कैलाश में शरद जैसी कविता फैटेंसी रूप में लिखी गई है और 'सरोज स्मृति' जैसी

खण्डित आत्मकथा भोगे हुए यथार्थ के रूप में। निराला जी ने एक और कवित्त, सवैया, दोहा, चौपाई , पद भजन यानी पारम्पारिक छन्दों की रचना की और दूसरी और गजल, गीत, मुक्तक और मुक्त छन्द की। भाषा के अनेक तेवर उनकी रचनाओं में है। विचार धाराओं की बहुविध छटा उनके काव्य में व्याप्त है। इतना बड़ा रचना संसार किसी अन्य आधुनिक साहित्यकार में नहीं दिखाई पड़ता। सबसे बड़ी विलक्षणता यह है कि निराला जी ने शब्द और कर्म में सामंजस्य स्थापित किया है। कविता के लिए आत्म वित्र्सन करना होता है। वह मात्र शब्द नहीं है, बल्कि जीवन संवेदना का अधिकरण है। यही निराला का मूल संदेश है और वही उसकी अनन्यता का मूल कारण है।

8. विश्व मानवतावाद

निराला की यह चिंतन धारा मूलतः मानवतावादी है। उसमें व्यष्टि से समष्टि तक सबसे लिए अपनत्व–भाव है, क्योंकि राष्ट्रीयता की यह भावना वेदांतवादी है। यह सभी प्रकार के अन्याय, शोषण एवं असमानता के विरुद्ध संघर्ष शक्ति–जननी है। यही वेदांत स्वाधीनता आन्दोलन के लिए प्रेरक शक्ति बना है। वह सभी तरह की सामाजिक रूढ़ियों के नाश के लिये समर्थ है। वेदांत की व्याख्या लोग तरह–तरह से करते है। निराला की व्याख्या सबसे क्रांतिकारी है, इसलिए कि सामंत विरोधी किसान– आन्दोलन से उनका संबंध औरों से गहरा है। निराला पौराणिक रूपकों को नया अर्थ देते है। देवी–देवताओं को वे प्रतीक रूप में इस्तेमाल करते है। पुरानी आस्थाओं पर जब–तब कड़ी चोट भी करते हैं। इसका कारण यह है कि वे जन साधारण की रूढ़ियों से मुक्त करना चाहते हैं। उनकी युग चेतना का यही मूल उत्स हैं।

निराला का जीवन–दर्शन मानव केन्द्रित है। मानव उनकी जीवन–दृष्टि में ब्रह्म है, जिससे बड़ा अन्य कुछ नहीं है। इसीलिए निराला के जीवन–दर्शन में जाति, धर्म, सम्प्रदाय, देश आदि की मान्यताएँ–धारणाएँ मानव को खण्डित नहीं करती और उसे विभाजित भी नहीं करती। निराला का सर्वव्याप्त यह विराट मानव–मानव में प्रेम, समता तथा सहयोग–सामंजस्य की स्थापना करता है। इसीलिए निराला–काव्य में सम्राट अष्टम एडवर्ड के प्रति समादर व्यक्त हुआ है, क्योंकि उन्होंने 'राजसिंहासन तथा उसकी संकीर्ण किन्तु वैभवशाली प्रतिष्ठा को त्यागकर एक साधारण नारी से विवाह किया। 'सम्राट अष्टम के प्रति' कविता में 'निराला इसी भावना को व्यक्त करते हैः–

'मानव मानव से नहीं भिन्न
निश्चय ही श्वेत, कृष्ण अथवा
वह नहीं क्लिन्न,
भेद कर पंक
निकलता कमल जो मानव को
वह निष्कलंक
हो कोई सर।'

'अर्चना' की इन पंक्तियों में भी निराला के विश्व मानवतावादी दर्शन को अभिव्यक्ति मिली हैः–

'जल–थल–नभ आनन्द मास है,

किसी विश्वमय का विकास है

सलिल–अनिल ऊर्मिल विलास है

निस्तल–गीति–प्रीति की तलियाँ।'

निराला–साहित्य एवं दर्शन में वर्ग–वर्ण–भेद नहीं है। सभी मानव 'अमृतपुत्र' है। मनुष्य ही पूर्णता का अधिकारी है। मुक्ति या पूर्णता का यह अधिकार देवताओं को भी प्राप्त नही है। (संग्रह–63) इसी जीवन–दर्शन के कारण भारत को विशिष्टता प्राप्त हुई। भारत के प्राकृतिक नियमों की जाँच करने से उसके धर्म–जीवन का पूर्ण परिचय प्राप्त होता है। हिमालय जैसे गंभीर एवं सात्विक प्रकृति के लीला क्षेत्र के आते ही दर्शकों का मन स्वभावतः अन्तर्मुख होकर कवित्वमय भाव–राज्य में विचरण करने लगता है। गंगा–जैसी स्वच्छतोया नदियों का जल उसके मनोबल को धो डालने के लिए सर्वथा समर्थ है। प्रकृति की कुल चेष्टाएँ मानों भारत के धर्मधाम की रक्षा के लिए कर्मतत्पर हो रही हैं। दूसरी ओर, भारत अपने शब्दार्थ से भी अपनी धर्मप्राणता सूचित करता है। भारत ही विश्व में धर्म–देश तथ आध्यात्मिक चेतना का संदेशदाता है। यही कारण है कि निराला–साहित्य में मनुष्य की प्रतिभा तथा महत्ता का विशेष उल्लेख है। अपने आलेख 'भारत' में श्रीरामकृष्णावतार' में निराला लिखते हैं–

"अत्याचार पीड़ित और भोगाथ मनुष्यों को शांति का पता बताने के लिए भगवान श्रीरामकृष्णदेव अवतीर्ण हुए। इस बार फिर भारत शांति स्थापना का केन्द्र बना। संसार में आज जो आध्यात्मिक प्रवाह बन रहा है, उसकी उत्पत्ति भगवान श्रीरामकृष्ण–महा अध्यात्मतत्त्व स्वरूप से हुई है। आज विश्व समाज में भ्रातृत्व बंधन की जो ध्वनि गूँज रही है, वह सबसे पहले भगवान श्री रामकृष्णदेव के पाद्–प्रांत पर समाप्त हुई थी। आज भारत में, एकता–लता पर जो फूल खिल रहा है, उसके निपुर्ण माली है– भगवान श्रीरामकृष्ण। (संग्रह–68)

निराला की अद्वैतवादी दृष्टि अपने व्यावहारिक धरातल पर सृष्टि को, विराट मानव के रहने योग्य, स्वर्ग बनाना चाहती है। वे लिखते हैं–

'दूर हो दुरित, सुख सरित फूटे बड़े,

विश्व होकर रहे स्वर्ग का सुस्थान।'

(आराधना–34)

इसी बिन्दु पर निराला नर को 'नरक त्रास' से मुक्त करने की प्राथना करते है–

'माँ अपने आलोक निखारो

नर को नरक–त्रास से वारो,

विपुल दिशावधि शून्य वर्ग जन,

व्याधि शयन जर्जर मानव–मन,

ज्ञान गगन स निर्जर जीवन

करुणा करो उतारो, तारो।

स्वर्ग धरा के कर तुम धारो।'

(अर्चना–124)

अपने उपर्युक्त व्यापक जीवन–दर्शन के कारण निराला की दृष्टि संपूर्ण विश्व–मानवता को अपने में समेटने का प्रयास करती हैं। वे स्वयं लिखते है– 'हमारे काव्य–साहित्य की दृष्टि बहुत व्यापक होनी चाहिए। तभी उसका कल्याण हो सकता है। पश्चिमी कवि के हृदय में पूर्व के लिए अपार सहानुभूति उमड़ चली है। उनका यही पौरुष और प्रेम आज संसार भर में फैला हुआ है। वर्डसवर्थ और उसके मित्र कालरिज ने इसीलिए पूर्व का वर्णन किया है।' (चयन 160)

निराला आत्मवादी होने के कारण ही परमात्वादी और व्यक्तिवादी होने के कारण ही विश्ववादी है। निराला की स्पष्ट धारणा है कि व्यक्ति का उन्नयन आत्मा से प्रारंभ होने पर ही सफल–सार्थक होगा। इस प्रकार प्रत्येक आत्मा का विकास, सम्पूर्ण मानव जाति तथा विश्व के उत्कर्ष में परिवर्तित हो जायेगा। इसीलिए निराला आत्म–शक्ति के विकास को सर्वाधिक महत्व देते हैं। आत्म–शक्ति के विकास में ही मानव की जय–यात्रा की सफलता का रहस्य छिपा हुआ है। इसलिए निराला मानव की आत्मा के शवदल को पूर्णरूप से प्रस्फुटित करने में विश्वास करते है। उनके द्वारा मानव को ब्रह्म, मानवी को शक्ति तथा सरस्वती मानने का अभिप्राय यहीं है। 'अर्चना' तथा 'आराधना' के अनेक गीतों में इस तथ्य को व्यापक रूप से अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। 'गीतिका' की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

'पास ही रे, हीरे की खान,

खोजता कहाँ और नादान।'

स्पर्श–मणि तू ही अमल, अपार

रूप का फैला पारावार,

व्यष्टि में सकल सृष्टि का सार।'

'गीतिका' के प्रथम गीत में ही कवि माँ सरस्वती से प्रार्थना करता है कि मानव के हृदय में वर्ण, जाति, ध र्म, सम्प्रदाय के बन्धनों की पतों को काट कर, पाप कालुष्य से पूरित भेद–वृद्धि के अंधकार को दूर करके ज्योतिर्मय निर्झर बहा दो और विश्व में प्रकाश भर दो। भारत में अक्षय–जीवन–चेतना और स्वातंत्र्य का मधुर संगीत भर दो। नव–चेतना और उल्लास से युक्त अनन्त और व्यापक जीवन प्रदान करो।

स्पष्ट है कि निराला राष्ट्रीय कवि होने के साथ ही विश्व–कवि है। अपनी जन्मभूमि के प्रति उनमें अगाध श्रद्धा तथा प्रेम–भाव है, लेकिन उनकी राष्ट्रीयता तथा राजनीतिक विचारधारा विशुद्ध सांस्कृतिक आधार पर अवस्थित है। यद्यपि निराला ने 'भारति जय विजय करे' तथा 'भारत ही जीवन धन' जैसे गीतों की रचना की हैं किन्तु उनकी राष्ट्रीयता भावना काल, धर्म तथा जाति से मुक्त अद्वैतवादी अध्यात्मिक पृष्ठभूमि पर ही विकसित हुई है। 'शिवाजी का पत्र' विशुद्ध राष्ट्रीय भावना का प्रतीक रचना है।

निराला की राष्ट्रीय एकता की परिकल्पना मूलतः मानवतावादी है। उनमें अतीत के प्रति गहरी आस्था है। 'यमुना के प्रति', 'खण्डहर', सहस्त्राब्दि, 'जागरण' आदि रचनाओं में अतीत के प्रति गहरी आस्था व्यक्त हुई है। वे

सम्पूर्ण प्राचीन जीर्ण–शीर्ण व्यवस्था को भस्म कर देना चाहते हैं, लेकिन उनकी राष्ट्रीय विचारधारा में वैयक्तिक स्वतंत्रता को अधिक महत्व प्राप्त है। यह वैयक्तिक स्वतंत्रता एक प्रकार की वैयक्तिक स्वतंत्रता को अधिक महत्त्व प्राप्त है। यह वैयक्तिक स्वतंत्रता एक प्रकार की वैयक्तिक आत्मनिर्भरता है, जो मनुष्य को उसकी सम्पूर्ण एवं स्वतंत्र क्षमताओं द्वारा प्राप्त होती है। 'बेला' और 'नये पत्ते' में निराला मानवीय समस्याओं को राष्ट्रीय आधार पर ही देखते हैं। कारण यह है कि निराला कवि के साथ स्वर्तत्रता–संग्राम के भूतपूर्व सैनिक तथा ग्रामीण किसानों एवं शोषितों के प्रतिनिधि भी रहे हैं उनके शक्ति–दर्शन का केन्द्र ब्रह्म है, जो मानव–केन्द्रित होने के कारण सृष्टि मे साम्य–भाव स्थापित करता है। ने राजनीतिक पाखण्ड के कट्टर विरोधी रहे हैं तथा राष्ट्रीय अशिक्षा, अज्ञान तथा निर्धनता को दूर करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रमों के पक्षपाती भी, ताकि व्यक्ति की आत्मनिर्भरता राष्ट्र को स्वतंत्र कर सके। निराला का मानवतावाद ही उनके विश्व–बन्धुत्व का आधार है, जो मानव केन्द्रित ब्रह्म के कारण विश्वातीत अद्धैतवाद की प्रतिष्ठा करता है। मानवतावादी काव्य ही विश्व–काव्य की भूमिका बनता रहा है। निराला का संपूर्ण सृजन मानवतावाद की प्रतिष्ठा का हेतु है, इसीलिए उसमें राष्ट्रीय, राजनीति तथा सांस्कृतिक विचारों की समस्त जीवन–ध्‍ााराएँ अपने–अपने अस्तित्व के साथ विद्यमान है।

1.9 सौन्दर्य दर्शन

निराला–काव्य में सौन्दर्यपरक द्वैतदर्शन के चित्र बड़े वैविध्यपूण्र है। 'गीतिका' के अनेक गीत इसी सौन्दर्यपरक द्वैतदर्शन की कोटि में आते हैः जैसे–

'तुम्हारे सुन्दरि, कर सुन्दर मिलाये हुए स्वर अमर।

अनावृत सुकृत–स्नेह के प्राण अमृत ही अमृत, ज्ञान ही ज्ञान,

मृत्यु को अपने ही कर म्लान कर दिया तुमने प्रिये सुघर।

छिन्न कर जुड़े हुए सब पाश प्रण का खोल दिया आकाश,

मृत्यु में पैठ भंग–भू–लाल–रंग–दिखलाती हो सस्वर।'

(गीतिका–71)

निराला ने नर–नारी सौन्दर्य का बहुशः वर्णन किया है। आंगिक सौन्दर्य पंचवटी प्रसंग में देखने योग्य है। यथा–'देख यह कतोप कंठ बाहुवल्ली कर सरोज।' राम की शक्तिपूजा' में सीता की कुमारिका छवि, तुलसीदास में 'रत्नावली का रूप', 'सरोज स्मृति' में वयः सन्धि का सौन्दर्य, 'प्रिय यामिनी जागी' में कुलवधू का सौन्दर्य, साथ ही 'बहू' 'रेखा', प्रेयसी मौन रही हार, आदि कविताओं में नारी सौन्दर्य के नयनाभिराम दृश्य हैं। निराला ने अप्सरा सौन्दर्य से लेकर मजदूरिन तक की रूपच्छवियाँ चित्रित की हैं। कुरूपता का सौन्दर्य भी उनसे अछूता नहीं रहा है। उन्होंने श्रृंगार का उदात्तीकरण भी खूब किया है। इसी प्रकार 'अनामिका' की 'दान' रचना में प्राकृतिक सौंदर्यपरक दर्शन की ऐसी ही अभिव्यक्ति हुई है :–

'व्यंजित सुख का जो मधु–गुंजन, वह पंजीकृत वन–वन उपवन।

हेमहार पहले अमलतास, हँसता रक्ताम्बर वर पलास।

कुन्द के शेष पूजार्ध्यदान, मल्लिका प्रथम–यौवन–शयान।

खुलते–स्तवकों की लज्जाकुल नववदना मधुमाधवी अतुल।

निकला पहला अरविन्द आज, देखता अनिद्य रहस्य–साज

सौरभ–वसना समीर बहती, कानों में प्राणों की कहती।

गोमती क्षीण–कीट नटी नवल, नृत्य पर मधुर–आवेश–पटल।'

(अनामिका–22)

'तुलसीदास' में दिव्य सौंदर्य दर्शन के अनेक चित्र है:–

'देखा शारदा नील–वासना

है सम्मुख स्वयं सृष्टि–रचना

जीवन–समीर–शुचि निःश्वसना, वरदात्री

वीणा वह स्वयं सुवादित स्वर

फूटी तर अमृताक्षर–निर्झर,

यह विश्व–हंस है चरण सुधर जिस पर श्री।

(तुलसीदास–38)

निष्कर्ष यह है कि निराला जी के साहित्य में सौन्दर्यबोध विषयक पर्याप्त चिन्तन तथा चित्रण प्राप्त होता है। उन्होंने नर–नारी के विभिन्न अवयवों का रूपांकन करते हुए कुछ विशिष्ट सौन्दर्य–प्रतिमान प्रतिष्ठित किए है। निराला के सांगोपांग (आवयविक) रूप सौन्दर्य की आयोजना की है और विभिन्न अंगों का पृथक वैशिष्ट्य भी निरूपित किया है। उन्हें अंगों के गठन में वैषम्य (कन्ट्रास्ट) और एकरूपता (सिमेट्री) दोनों रुचिकर हैं। स्थूलता–सूक्ष्मता दोनों प्रिय है। वक्ष और नितंबों की पीनता निराला को मासलता की ओर ले गयी है। शूर्पणखा का वह सौन्दर्य वर्णन इसका प्रमाण है–

उन्नत उरोज, कटि क्षीण पट, नितंबभार

चरण सुकुमार गति मंद–मंद।

(पंचवटी प्रसंग)

शरीरी की सूक्ष्यमा (तनिया, तन्विंगता) उन्हें देहातीत–स्तर पर ले गयी है। निराला जी सौन्दर्य को ज्योति अर्थात अंगदीप्ति माननते है। लावण्य के आलोक के प्रति वे आकृष्ट हुए हैं। 'शक्तिपूजा' में कुमारिका सीता का 'ज्योतिः प्रपात कमनीय' राम को तुरोयावस्था में पहुँचा देता है, सीता के राममय नयन राम के दृगों में प्रतिबिबित हो उठते हैं तो वे 'विश्वविजय–भावना' से भर जाते हैं। 'सरोज–स्मृति' में निराला मण्डप के नीचे खड़ी अपनी विवाहिता पुत्रों के इसी सौन्दर्यलोक को उकेर रहे है–

नत नयनों का आलोक उतर

काँपा अधरों पर थर–थर–थर।'

निराला साहित्य में बड़ी–बड़ी पक्ष्मल आँखों के कई बिंब प्राप्त होते हैं। प्रिय का बाँकपन, आकुंचन, आगिक, मरोर, मुक्त कुंतल, लम्बी छरहरी काया आदि उन्हें प्रिय है। निराला की नारी कुलवधू है, यदीा कदा अप्सरा, किन्नरी, वनकन्या और ग्राम बधूटी भी। पुरुष सौन्दर्य में निराला ने प्रायः आत्मप्रक्षेपण किया है। उनके तुलसीदास' आयत दृग पुष्ट देह गतभय' है। निराला ने वर्ण–सौन्दर्य में गौर के साथ श्यामल वर्ण को भी महत्व दिया है। कालिमा का सर्वाधिक प्रयोग उनके साहित्य में हुआ है। इसे उन्होंने नृतत्व और वर्ण मनोविज्ञान से जोड़ दिया है। वयः क्रम की दृष्टि से इन्हें किशोर काल सर्वाधिक प्रिय है। सौन्दर्य विरूपण के अन्तर्गत निराला जी ने 'जरा जीर्ण काया' और कुरूपता का भी मनोयोगपूर्वक प्रस्तुत किया है। स्पष्ट है कि प्रकृति सौन्दर्य तथा मानव सौन्दर्य के विविध रूपों का चित्रण निराला के साहित्य में हुआ है।

रागात्मक बाते–

निराला जी प्रगाढ़ प्रणय के कवि है। उनका बचपन माँ के अभाव में बीता। भरी जवानी में वे विधूर हो गए, फलतः मनोहरा के प्रति उनका राग गहरे स्तर पर जाग्रत हुआ। वे आजीवन प्रिया का स्मरण करते रहे। उनकी कुछ पंक्तियाँ इस दृष्टि से बड़ी सार्थक है, जैसे–'प्राणधन को स्मरण करने नयन झरते.........।' या 'एक बार भी यदि अजान के स्वर मे उठ कर आ जाती तुम। जीवन के संघषों से त्रस्त उनका कवि यहाँ तक कह उठता है– मुझको न मिल रे कभी प्यार।

इस राग का उदातीकरण करते हुए निराला ने तुम और मैं शीर्षक रचना में लिखा –

तुम वर्षो के बीते वियोग

मैं हूँ पिछली पहचान।

(परिमल–84)

तात्पर्य यह है कि उन्होने व्यष्टि प्रेम को समष्टि–प्रेम में पय्रवसित कर लिया। यों निराला पौरुष के कवि रहे हैं अतः आध्यात्मिक स्तर पर पहुँच जाने के बाद प्रेम गीत वे नहीं लिख सके। कालान्तर में दार्शनिक आधार पर वे नारी और पुरुष का भेद ही मिटा देते हैं। और अज्ञात के प्रति प्रणय निवेदन करने लगते है। वे सूफी कवियों की भाँति लौकिक प्रेम को नीवन शिल्प में ढाल कर अलौकिकता प्रदान करते हैं। पारस रचना मे ब्रह्म को सर्वाश्रय मान कर निराला उससे सम्बन्ध स्थापित करते हुए कहते हैं–

'कर–स्पर्श–रहित और क्या है– अपलक, असार।

मेरे जीवन पर प्रिय यौवन वन के बहार।'

(परिमल–74)

बसन्तरगमन के कारण कवि की आत्मा प्रिय से मिलने के लिए आतुर हो उठी है, अनेक विघ्न–बाधाओं को पार करती हुई वह उस लोक में पहुँची जहाँ ब्रह्म से तदाकारता के कारण केवल.....मैं.............सोउहं.......अथवा 'तत्त्वमसि' हो बच रहता है–

'इस प्रखर नव कर–धारा में अपनी नौका की पतवार
एकड़ूँ दृढ़ अनुकूल रहो तुम, पहुँचू प्रिय, जीवन के पार
चीर विषम प्रतिकूल तरंगे, भीम भंयकर भँवर गहन,
दृढ़ सहता निःसग मौन रह, ज्योति सिन्धु–ज्वाला असहन्।

स्पष्ट है कि निराला का काव्य प्रगाढ़ रागचेतना से अनुस्यूत है। यह वस्तु शिल्पगत वैशिष्टय निराला जी की सर्वोच्च सिद्धि है। इस दृष्टि से उनकी काव्ययात्रा अभिनंदनीय है।

बोध प्रश्न–

1. निराला के काव्य की आरंभिक स्थिति को समझाइए।

____
____
____
____
____
____
____
____

2. निराला की नई भाषा संरचना को समझाइए।

____
____
____
____
____
____
____
____

1.10 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

महाकवि निराला का काव्य उनके जीवन की तरह निराला है। उन्होंने जहाँ एक ओर राम की शक्तिपूजा, सरोज स्मृति, तुलसीदास जैसी कालजयी लम्बी कविताएँ लिखी है। वही बोल–चाल की भाषा में हास्य–व्यंग्य से जुड़ी हल्की–फुल्की रचनाएँ भी उन्होने एक ओर सस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया दूसरी ओर उर्दू फारसी बहुला बोलचाल हिन्दुस्तानी का और तीसरी ओर आंचलिक बैसवारी शब्दावली का। निराला ने जहाँ शास्त्रीय संगीत प्रेरित गीतों की रचना की वही गथात्मक मुक्तकों तथा तुक्तकों की रचना भी की। जीवन–जगत का कोई भी विषय उनके रचना संसार से पृथक नहीं रहा। ये सब स्मरर्णीय बाते इस इकाई में समाविष्ट हैं

1.11 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला की काव्य यात्रा को विस्तार से समझाइए।
2. निराला काव्य के वस्तु–शिल्प एवं वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।
3. निराला की भक्ति भावना को समझाइए।
4. निराला के काव्य में सौंदर्य दर्शन को समझाइए।

1.12 नियत कार्य/गतिविधियाँ

निराला के काव्य में भावाभिव्याक्ति को समझने के लिए निराला तथा उनके काव्य पर लिखी गई विभिन्न लेखकों एवं समीक्षकों की पुस्तकों की सहायता ली जा सकती है।

1.13 चर्चा तथा स्प टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

1.13.1 चर्चा के लिए बिन्दु

1.13.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

1.14 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

निराला जी के काव्य पर दर्जनों ग्रंथ प्रकाशित है, जिनमें इस संदर्भ में प्रयोजनीय है।

1. कविनिराला– नन्द दुलारे बाजपेयी
2. निराला की साहित्य साधना – डॉ. रामविलास शर्मा
3. कला सृजन प्रक्रिया और निराला– डॉ. शिवकरण सिंह
4. निराला का गति काव्य– डॉ. राम देव यादव
5. कवि निराला – डॉ. राम रतन भटनागर
6. राम की शक्ति पूजा, सरोज स्मृति, कुकुरमुत्ता– समीक्षाः भाव्य– डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित।

1.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 1.4
2. देखिए 1.6

इकाई—दो

छायावादी भाषिक संरचना एवं निराला

संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 निराला भाषा सैष्ठव
2.4 छायावादी भाषिक संरचना
2.5 भाषा संवेदना
2.6 निराला की भक्ति प्रकृति
2.7 नाद व्यंजना
2.8 बिम्बधर्मिता
2.9 भाषा वैविध्य
2.10 लोक भाषा
2.11 विभिन्न भाषा शिल्प
2.12 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें
2.13 अपनी प्रगति जाँचिए
2.14 नियत कार्य/गतिविधियाँ
2.15 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु
2.16 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री
2.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.1 प्रस्तावना

निराला जी ने एक स्थल पर घोषित किया है कि कवि शब्दों को प्राणों की तरह प्यार करता है। वस्तुतः कविता अपने मूल रूप में शब्द है— सर्वोत्तम क्रम में विन्यस्त सर्वश्रेष्ठ शब्द। इस शब्द का संधान वह बड़े मनोयोग के साथ करता है। निराला प्रायः शब्द सचेत कवि रहे हैं। उनकी गर्वोक्ति "गद्य में, पद्य में समाक्यस्त" तथा—"एक—एक शब्द बँधा ध्वनि मय साकार।' उनकी भाषा में बंधाव (संघटन) पदबंध विम्बधर्मिता और ध्वन्यात्मकता अपनी पराकाष्ठा पर है। वस्तुतः काव्यभाषा के क्षेत्र में उन्होंने अनेक प्रकार के प्रयोग किए हैं, जो इस सन्दर्भ में विचारणीय हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है निराला जी के विभिन्न भाषा–प्रयोगों से परिचित कराना। उनकी काव्यभाषा के प्रमुख प्रकार हैं–

1. 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' वाली तत्सम संस्कृतनिष्ठ भाषा।
2. 'कुकुरमुत्ता' और 'बेला' में प्रयुक्त उर्दू बहुला हिन्दुस्तानी।
3. 'नए पत्ते' में प्रयुक्त लोक भाषा (वैसवारी अवधी) उनकी आरम्भिक कृतियों के बंगला का पर्याप्त प्रभाव परिलक्षित होता है। अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी उन्होंने खूब किया है। शब्द गढ़ने में वे विष्णात थे। उन्होंने शब्द संवेदना का भरसक अभ्यास करके उच्चकोटि की जीवंत काव्यभाषा निर्मित की है, जो आगामी युगों की मानक सिद्ध हुई है। इन समस्त भाषिक छटाओं से विद्यार्थियों को अवगत कराना इस इकाई का मूलोद्देश्य है।

2.3 निराला का भाषा–सौष्ठव

निराला की कविताओं में काव्य रस काव्यभाषा और कला का सम्यक् परिपाक हुआ है। उन्होंने जीवन तथा प्रकृति के विभिन्न रूपों से अनुभूतियों का चयन किया है। निराला का अधिकांश साहित्य आत्मकद्ध है। उसमें अनुभूति की ईमानदारी है। इसीलिए वे भाषिक संवेदना की तह में पहुँचकर मार्मिक प्रसंगों की सृष्टि करने में सफल हुए हैं। 'राम की शक्ति पूजा' में कवि ने मर्यादा पुरुषोत्तम से अंतः संघर्ष, उनकी मनोवेदना और उनके प्रचण्ड व्यक्तित्व को विभिन्न बिम्बों द्वारा इस कला–कुशलता के साथ प्रस्तुत किया है कि उसकी परिणति औदात्य में हो गई है। उदाहरणार्थ राम के व्यक्तित्व की विराटता की यह छवि द्रष्टव्य है–

'दृढ़ जटा मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल
फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर विपुल
उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशांधकार
चमकती दूर ताराएँ ज्यों हो कहीं पार।'

राम का यह वैरुप्य उनके भीषण मनोद्वेग का परिचायक है। कवि ने इस भयावह मनःस्थिति का अंतर्बोध बाह्य प्रकृति की विराटता द्वारा कराया है। राम के अंतर्मन में जो नैराश्यान्धकार है, जो दिग्भ्रम है, जो स्तब्धता है, (किंकर्तव्यविमूढ़ता है), जो अंतःक्रंदन और जो अंतर्दाह है, उसका आभास इस दृश्य द्वारा हो रहा है

'है अमा निशा, उगलता गगन घन अंधकार,
खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार।
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल
भूधर ज्यों ध्यान मग्न, केवल जलती मशाल।'

(राम की शक्तिपूजा)

यहाँ भावभाषा दोनों अन्योन्याश्रित तथा तद्रूप हैं।

यह प्रस्तुति राम के दुर्द्धर्ष व्यक्तित्व को सूचक है, साथ ही शक्ति तथा पौरुष के कवि निराला के औदात्य बोध की भी। कवि अपने विषय के साथ यहाँ एकाकार हो गया है। उसकी अनुभूतिगत भयानकता अविकल रूप में अभिव्यक्त हो गई है। इसी क्रम में कवि ने हनुमान का ऊर्ध्वसंचरण या उड्डयन चित्रित कर इस विषय वस्तु की विकरालता का साक्षात्कार करा दिया है। पवनपुत्र हनुमान पितृ पक्ष से प्राप्त 'उन्वास पवन' का प्रचण्ड वेग ध ारण कर जिस गति एवं ध्वनि के साथ सप्ताकाश की ओर अग्रसर होते हैं, वह इन पंक्तियों में प्रतिबिम्बित और प्रतिध्वनित हो उठी है–

शत घूर्णावर्त तरंग भंग उठते पहाड़।

जल–राशि राशि पर चढ़ता खाता पछाड़।

तोड़ता बंध–प्रतिसंघ धरा, हो स्फीत–वक्ष

'शत–वायु–वेग–बल, डुबा अतल में देश–भाव

जल राशि विपुल मथ मिला अनिल में महारव... ।'

इन शब्दों द्वारा उड़ान का चित्र तो प्रत्यक्ष हो ही जाता है, कवि ने उस क्रिया का ध्वनन भी कर दिया है। निराला का यह विराटता बोध मात्र मनः कल्पित नहीं है, इसके पीछे उनकी प्रबल अनुभूति और उनकी महाप्राण चेतना है। अपनी पौरुषमयी प्रवृत्ति के कारण ही वे इन प्रचण्ड प्रतीकों की परिकल्पना कर सके हैं। एक उदाहरण और–

'देखो बन्धुवर, सामने स्थित जो यह भूधर।

शोभित शत हरित गुल्म–तृण से श्यामल सुन्दर।

पार्वती कल्पना है इसकी मकरंद बिन्दु,

गरजता चरण–प्रांत पर सिंह वह, नहीं सिंधु,

दशदिक–समस्त है हस्त और देखो ऊपर।

अंबर में हुए दिगम्बर.अर्चित शशिशेखर।।'

(राम की शक्तिपूजा)

महाशक्ति (दशभुजा) का यह पूजन–प्रतीक जहाँ धीरोदात्त नायक राम के पुण्य प्रताप का द्योतक है, वहीं निराला की प्राणोन्मुखी अनुभूति और उनके व्यक्तित्व के विराट भाव की भी बोधक है। इतना बड़ा रूपक वही बांध ा सकता है, जिसके पास भाषा की यथेष्ट क्षमता होती है।

यह विराटता बोध निराला के स्फुट बिम्बविधान में भी द्रष्टव्य है। उन्होंने जो विशद चित्र फलक स्थापित किए हैं और उस पर जो विस्तृत रेखा कृतियाँ अंकित की हैं, वे कवि हृदय की व्यापकता तथा भावस्फीति की साक्षी है। उदाहरणस्वरूप कवि का 'भारति जय विजय करे' गीत विचारणीय है। यहाँ उसने जिस प्रकार लंकाको भारत

माता के पदतल पर पड़े शतदल रूप में अंकित किया है और हिन्द महासागर की उच्छल तरंगों को भारत–भू के चरणप्रांत को प्रच्छज्ञलित करते हुए दिखाया है, वह एक उत्कृष्ट कल्पना है। यही नहीं, महाकवि ने शस्य श्यामला भारत भूमि को आवृत्त करने वाले तरु–तृण बन लतओं को महाभारतीय के वस्र (परिधान) रूप में अंकित किया है, वन्य पष्पों को उसके अंचल में चित्रित बेलबूटे कहा है और गंगा की वर्तुलाकार धवल–धारा को भारती के कल कंठ में बँधे वक्षस्थलार्गलित हार की उत्प्रेक्षा दी है। निराला जी की यह बिंबधर्मी कल्पना उनकी उद्भावना शक्ति की परिचायक है और साथ ही उनकी भाव–भंगिमा की भी। कवि के ये चित्र एक विशिष्ट रसोद्रेक एवं भावोत्कर्ष के हेतु हैं। वस्तुतः निराला जी विराट चित्रों की परिकल्पना में बड़े पटु हैं। प्रकृति का मानवीकरण करते हुए उन्होंने सूक्ष्म और विराट् से विराट दृश्यों की योजना की है। कवि ने अपनी प्रकृति प्रिया का रूपांकन करते हुए पर्वतों को उसके उन्नत उरोज और सरिताओं को उकसे पयोधर रूप में प्रस्तुत किया है–

गिरिवर उरोज सरि पयोधार

(तुलसीदास)

अथवा

'पृथ्वी के उठे उरोज मंजु पर्वत निरुपम'

ये उद्भावनाएँ कुछ–कुछ भाषिक रूढ़ियों पर टिकी हैं ओर कुछ अपनी नई सूझ पर। इसी प्रकार कवि ने सरिता के वक्षस्थल पर प्रतिबिम्बित आकाश को उसका नीला अँचल और शैवाल जाल को उसके कटि प्रदेश में सुशोभित हरितांकुर रूप में प्रत्यंकित कर अपनी भावदीप्ति का परिचय दिया है–

'किस अनंत का नीला अँचल हिला–हिला कर
आती हो तुम सजी मंडलाकार
सोह रहा है हरा क्षीण कटि में अंबर शैवाल।'

यहाँ 'अंबर' शब्द श्लिष्ट होने के कारण गूढ़ार्थवाची हो गया है। कवि ने नारी रूप की रचना ओर उसके मानवीकरण द्वारा सौदर्य–सौकुमार्य की भी यथेष्ट व्यंजना की है। उनकी वासंती प्रकृति 'नवल लतिका' रूप में किसलयों के वस्र धारण किए हुए जिस प्रकार अपने प्रिय तरु का स्नेहालिंगन कर रही है, बसंत की सरसी जिस प्रकार अपने उरोज–सरोज से सुशोभित हो उठी है, कलियों की केशर गंधी–केशर वर्णी केशराशि जिस प्रकार लहरा रही है और पृथ्वी का स्वर्ण शस्य अँचल जिस प्रकार फहराता हुआ चतुर्दिक् शोभायमान हो रहा है, यह समस्त प्रकृति–परिवेश उनकी रस सौंदर्य स्निग्ध काव्यानुभूति का उत्कृष्ण उदाहरण है–

'किसलय वसना नव वय लतिका,
मिली मधुर प्रिय उर तरु पतिका,
आवृत्ति सरसी उर सरसिज उठे
केशर के केश कली के छुटे।
स्वर्णशस्य–अँचल पृथ्वी का लहराया।
सखि बसंत आया।' (गीतिका)

2.4 छायावादी भाषिक संरचना

निराला जी की छायावादी रसानुभूति प्रायः बड़ी व्यंजक है। जिस प्रकार आस्वाद पदार्थों (व्यंजनों) में व्याप्त रस और लावण्य को रसनेन्द्रिय द्वारा एकस्थ इंगित नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार उनके काव्य रस और उसमें सन्निहित सौन्दर्यानुभूति का अंगुलि–निर्देश नहीं किया जा सकता है। निराला का भाव रस–सौंदर्य इतना सूक्ष्म है कि उसकी मात्र अंतः प्रतीति ही संभव है। कवि ने यत्र–तत्र उक्ति वक्रता का प्रयोग किया है जैसे– 'चल चरणों का व्याकुल पनघट।' 'चलचरणों' कह कर उसने विशेषण विपर्यण द्वारा यमुना के घाटों पर होने वाली चहल–पहल की गति और ध्वनि को चित्रित कर दिया है। इसी प्रकार का एक उद्धरण और विचारणीय है–

'मूक आह्वान भरे लालसी कपोलों के

व्याकूल विकास पर

झरते हैं शिशिर से चुंबन गगन के।'

यहाँ कपोलों को जिस प्रकार आह्वान युक्त, लालसापूर्ण एवं भावाकुलतापूर्वक उल्लसित–विकसित होते चित्रित किया गया है और उन पर अंकित होने वाले चुंबन को जिस प्रकार आकाश से झर–झर झरते शिशिर कणों के रूप में अंकित किया गया है, वह काव्य सौष्ठव का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यहाँ छायावादी काव्य भाषा अपने प्रकष पर है।

यह व्यंजना महाकवि निराला के ऐंद्रिय सौंदर्य बोध की चरम परिणति है। कवि ने अपनी सूक्ष्म भावानुभूति को प्रायः काव्यगत सौंदर्य चेतना में परिणत कर दिया है। वस्तुतः उसकी आत्मानुभूति रसात्मक वाक्यों में व्यक्त होकर तद्रूप हो उठी है। उन्होंने अपनी संचित सौंदर्यानुभूति द्वारा विविध रूपों–भावों और दृश्यों की मानसी प्रतिमा स्थापित की है। साथ ही उसका साक्षात्कार भी कराया है। उदाहरणार्थ– 'राम की शक्तिपूजा' में चित्रित जनक–वाटिका प्रसंग में राम सीता के प्रथम 'लतांतराल मिलन' और उससे उद्भूत–चेष्टओं का यह दृश्य अवलोकनीय है–

'नयनों को नयनों से गोपन, प्रिय संभाषण

पलकों का नव नलकों पर प्रथमोत्थान, पतन।

काँपते हुए किसलय, झरते पराग समुदाय

गाते खाग नव जीवन परिचय, तरु मलय वलय।'

(अनामिका)

यहाँ एक ओर विदेह की वाटिका का चित्रण किया गया है, दूसरी ओर राम–सीता की सूक्ष्म रसानुभूतियों से प्रेरित आंगिक अनुभवों का भी। दो अपरिचितों का यह पूर्व राग, उनका पारस्परिक आकर्षण और उनकी भावभंगिमाएँ यहाँ काव्य में यथावत् रूपांतरित हो गई हैं। ये पंक्तियाँ अपनी व्यंजनातिशयता के कारण ही मन को प्रभावित करती है। इनका गूढ़ार्थ विचारणीय है। राम और सीता पारस्परिक साक्षात्कार के क्षणों में जब अकस्मात् एक दूसरे पर दृष्टिपात करते हैं तो सुकुमारी सीता के नेत्र स्त्री सुलभ शील–संकोच के कारण मुंदकर आत्मगोपन करने लगते हैं, किन्तु इस लुकाछिपी द्वारा मौन भाव से वे अपना अनुराग प्रकट कर ले जाती है। सीता की पलकें कुतूहलवश राम की नव (अपरिचित) पलकों पर एक बार उठती हैं अर्थात् दृष्टि परस्पर टकराती हैं और फिर स्वतः

उनकी पलकें झँप जाती हैं। इस भावानुभूति के कारण उनके किसलय जैसे अरुणाधर आंदोलन हो उठते हैं। भावना का मकरंद (माधुर्य) प्रवाहित होने लगता है। वाणी रूपी खग शावक सुगबुगा उठते हैं और अपने अंतः कलराव द्वारा एक नए जीवन का संगीत छेड़ देते हैं। यह प्रणयी युगल मलयल की मृदु मंद तरंगों से हिल्लोलित तरु लता के समान परस्पर वलयीकृत (लोट–पोट) या आबद्ध हो जाता है। कवि ने इन शृंगारिक चेष्टाओं और सात्विक अनुभावों को प्रकृति चित्रण के ब्याज से रूपकातिशयोक्ति के सहारे इतनी सूक्ष्मता और वचन विदग्धता के साथ प्रत्यंकित किया है कि यहाँ उसकी रसानुभूति काव्य रस में परिणत हो गई है। इसी प्रकार कवि ने अपनी पुत्री की जो छवि अंकित की है, उसने 'वाल्य के केलियों का प्रांगण' पार कर धीरे–धीरे तारुण्यपथ की ओर पटक्षेप करती हुई अपनी आत्माजा का सौन्दर्यांकन कर जिस सात्विक साहस और जिस सुसंवेद्य सत्य का संमूर्तन किया है, वह रसानुभूति के संदर्भ में सर्वथा श्लाध्य है–

'कर पार कुंज तारुण्य सुधर
आई, लावध्य भार थर–थर
काँपा कोमलता पर सस्वर
ज्यों मालकोस नव वीणा पर।'

2.5 भाषा संवेदना

निराला का भाषाबोध और काव्यबोध परस्परपूरक हैं। उनके काव्य–सौंदर्य में अनुभूति का सौंदर्य है। ये पंक्तियाँ अनुभूतिमूलक सहज–रस का आस्वाद कराती हैं। वस्तुतः छायावादियों की कल्पनाएँ कवि–कौतुक या बौद्धिक चमत्कार मात्र न होकर अंतस् से फूटी विवशकारिणी (कम्पल्सिव) भाववृत्ति जैसी प्रतीत होती हैं। वे अनुभूतियाँ सहृदय को अपने विविध विभावादि से व्यंजित स्थायीभावों का आस्वादन कराकर स्वयं रसत्व की स्थिति प्राप्त कर लेती हैं। निराला के काव्य में यह अनुभूति एक भावात्मक परिस्थिति और एक मनोदशा रूप में व्याप्त है। कवि की वेदना, उसका अंतर्द्वंद और उसके संवेग सहृदय को एक विशिष्ट भाव का आस्वाद कराते हैं और रस–सौंदर्य रूप में पर्यवसित हो जाते हैं। निराला की ये रचनाएँ, जिनमें कल्पना और बिम्ब का प्रतिविधान नहीं भी किया गया है, अपनी संवेगमयी अनुभूतियों के कारण रसस्पर्शी सिद्ध होती हैं। उनके काव्य में ध्वंसक आवेग, क्रांति की ऊर्जा और जीवन–संघर्ष का ओजस्वी स्वर है। उसमें टूटने का जो दर्द एवं एकाकीपन का जो विषण्णरोदन है और उसके साथ ही उसमें जो अध्यात्मोन्मुखी भावाकुलता, दर्प और दैन्य की जो उदात्तीकृत आत्म विश्रांति दिखाई देती है, वह निस्संदेह रसोद्बोधक है। कवि की ये उक्तियाँ 'मेरा अंतर बज्र कठोर', 'अभी न होगा अंत', 'मैं अकेला, देखता हूँ आ रही मेरे दिवस की सांध्य बेला', 'स्नेह निर्झर बह गया, रेत ज्यों तन रह गया है', 'देख चुका जो–जो आए थे चले गए'– मेरे प्रिय सब बुरे गए सब भले गए, मन का समाहार, करो विश्वाधार, कोई नहीं और कहीं नहीं ठौर, दूर सब जन पौर, करो भव से पार। आदि वास्तव में रसोद्रेक मूलक हैं। तात्पर्य यह है कि निराला का रस–सौन्दर्य बिम्बों, कल्पनाओं आदि के माध्यम से भी प्रकट हुआ है और निराडंबर काव्य की सपाटता द्वारा भी। वस्तुतः स्वानुभूति मूलक सहज रस का सौन्दर्य निराला में सर्वाधिक है।

2.6 निराला की भाषिक प्रकृति

निराला ने एक विशिष्ट कोटि की काव्यभाषा दी है। काव्य की कला के चार उपकरणों का महत्व साहित्य–समीक्षकों ने स्वीकार किया है– रूप, शिल्प, भाषा तथा अभिव्यंजना। यद्यपि इन शब्दों की प्रकृति एकार्थक

नहीं है, क्योंकि इन शब्दों की अर्थ–सीमाएँ पृथक्–पृथक् हैं, फिर भी काव्य कलागत अन्तर्धारा के अन्तर्गत इन शब्दों का लक्ष्य सम्मिलित रूप से एक पूर्णता का अभिव्यक्त करना ही होता है। इन सभी शब्दों की शक्ति भाषा में सन्निहित होती है। निराला ने अपनी काव्य–भाषा को अपने प्रयोगों द्वारा इस सीमा तक परिमार्जित करके समृद्ध बनाया है कि वह अपने पूर्व प्रचलित रूप से पूर्णतः भिन्न प्रतीत होती है। इस संदर्भ में आचार्य नंददुलारे बाजपेयी का यह कथन दृष्टव्य है–

'निराला की दूसरी विशेषता उनकी भाषा निर्मिति है, जहाँ उन्होंने अनेक प्रयोग किए हैं और कहीं–कहीं चिंत्य और चकित करने वाले प्रयोग भी बेहिचक कर डाले हैं। संस्कृत के एक सम्मानित पंडित ने कदाचित इसी कारण निराला के लिए 'मुरारेस्तु तृतीयः पन्थाः' कह कर उनके विलक्षण प्रयोगों की सूचना दी थी। यह सही है कि शब्द रचना और भाषा–निर्मिति की भूमि पर निराला अत्यधिक स्वाधीन रहे हैं। जिस प्रकार मिल्टन की भाषा के संबंध में कहा गया है कि अंग्रेजों की अंग्रेजी नहीं है– कुछ और है, उसी प्रकार निराला की भाषा के संबंध में भी कहा जा सकता है कि वह हिन्दी काव्य–परम्परा की हिन्दी नहीं है, कुछ और है।'

(कवि निराला–210)

उपर्युक्त 'कुछ और है' में निराला के सभी काव्य–भाषा–विषयक प्रयोग सम्मिलित हैं, जिनकी व्याख्या स्वयं उन्होंने भी की है। सर्वप्रथम निराला ने काव्य भाषा में कलावाद के बंधनों का विरोध कर भाषा को बंधन मुक्त किया और कला को आधुनिक जीवन की भूमिका प्रदान की। इस परिप्रेक्ष्य में सर्वप्रथम उन्होंने भाषा की प्रगतिशीलता को प्रमाणिक किया– 'भाषा के उत्थान–पतन पर विचार करते हुए मैंने देखा, वेदों से ब्रजभाष तक भाषा के पतन का एक मनोहर इतिहास तैयार होता है। बदली हुई भाषा क्रमशः सुखानुशायी होती गई है।'

(मेरे गीत और कला, प्रबंध प्रतिभा 199)

लेकिन भाषा की परिवर्तनशीलता के इस इतिहास के साथ निराला को अपनी देशी बानी पर गर्व है। अपने भाषागत प्रयोगों की विवेचन करते हुए निराला ने लिखा–

'यह सब उलटापलट मैंने जानबूझ कर नहीं किया और यह उलटापलट है भी नहीं। इससे सीधा और प्राणों के पास तक पहुँचता रास्ता छन्दों के इतिहास में दूसरा नहीं। वेद इसीलिए वेद है। यह उलटपलट उसके लिए कहा जा सकता था जिसकी मातृभाषा हिन्दी न हुई होती। मेरी बैसवारी, माता–पिता की दी वाग्विभूति, जिससे सभी रसों के स्रात मेरे जीवन में फूट कर निकले हैं, साहित्यिकों में प्रसिद्ध है।

(प्रबंध प्रतिभा)

कला, भाषा की प्राण शक्ति है। निराला जहाँ भाषा के स्तर पर कलात्मक प्रयोग करते हैं, वहाँ उनका ध्यान भाषा की कला पर भी केन्द्रित रहता है। उनके शब्दों में– 'नया जन्म जिस तरह, एक युग की संचित अनुभूतियों को अपने भीतर नया रूप और भाव पैदा करता है, वही युगांतर की कला है।' निराला अपने इसी आलेख में भाषा तथा कला–दोनों की, विवेचना साथ–साथ करते हुए कहते हैं– 'हम दोनों प्रकार की कलाओं को साहित्य में सन्निविष्ट करते हैं। जिस वृन्त पर वह कलिका खिलती है, वह है भाषा। भाषा भी समयानुसार अपना रूप बदलती रहती है। कला के विकास के साथ–साथ साहित्य में नई भाषा भी विकसित होती है। हरा कैड़ेदार मजबूत डंठल भी कृशांगी नवीन कला को चाहिए। कोमल और कठोर आत्मा और प्राणों का ऐसा ही संबंध रहा है। ब्रजभाषा पूर्ण भाषा है। खड़ी बोली हिन्दी के हृदय की अशांत आशा, सार्वदेशिक प्रसाद से लिपटी हुई, जड़ और चेतन के

विश्व–संसर्ग से बंधनहीन भाषा है, चित्र और अचित्र।

(प्रबंध प्रतिभा)

2.7 नाद व्यंजना

स्पष्ट है कि निराला काव्यभाषा के क्षेत्र में सिद्धहस्त हैं।

निराला जी ने अपने कवि कर्म की व्याख्या करते हुए एक बड़ा महत्वपूर्ण सूत्र संकेत किया है। उनकी घोषणा है कि उनके काव्य का एक–एक शब्द बड़ा गठीला अर्थात् भावों के साथ सुसम्बद्ध है, ध्वन्यात्मक है और बिम्बविधान से परिपूर्ण है– "एक–एक शब्द बँधा, ध्वनिमय साकार।" शब्द के ध्वनि बिम्ब और अर्थ बिम्ब से युक्त जितने श्रेष्ठ प्रयोग निराला की कविता में मिलते हैं, उतने अन्यत्र कम ही हैं। उन्होंने रूपात्मक जगत् को अनेक श्रोत बिम्बों द्वारा अंकित किया है। निराला के काव्य में ध्वनि की व्यंजना कई प्रणालियों द्वारा की गई है। उन्होंने अन्तर्बाह्य प्रकृति के विभिन्न रूपों से मिश्रित ध्वनियों को सतकर्तापूर्वक ग्रहण किया है और प्रायः उन्हें ध्वन्यात्मकता के सहारे प्रतिध्वनित भी कर दिखाया है। वस्तुतः निराला की नादव्यंजना बड़ी विलक्षण है। नादतत्व कविता का प्राण है। आचार्य शुक्ल ने बहुत ठीक कहा है कि 'नाद से कविता की आयु बढ़ती है।' 'निराला' जी ने इसीलिए प्रत्येक शब्द को भावानुरूप निनादित करने का प्रयत्न किया है। उनके काव्य में कोमल और कर्कश, मृदु और उदात्त, व्यक्त (मूर्त) और अमूर्त कई प्रकार की ध्वनियाँ हैं। उन्होंने यदि एक ओर प्रलय–जलद, उल्का एवं झंझा की भीषण गुरु गर्जना को कर्णगत किया है तो दूसरी ओर स्वप्नों की निःशब्द आहट भी सुनी है। निराला ने समग्रतः नयनों और श्रवणों को अर्थात् दर्शन एवं श्रवण–व्यापार को एकाकार कर दिया है। 'रात की शक्ति पूजा' में जनक वाटिका के पूर्व राग का स्मरण करते हुए राम को वह दृश्य याद आता है, जब उनके और सीता के नेत्र परस्पर मूक संभाषण कर रहे थे और अपनी–अपनी अंतरंग अनुभूतियों का प्रथम दर्शन के माध्यम से सम्प्रेषण कर रहे थे– 'नयनों का नयनों से गोपन, प्रिय सम्भाषण।' यहाँ रूप और ध्वनि का जो समात्मभाव परिलक्षित होता है, वह निराला जी के नादसौष्ठव का अपना वैशिष्ट्य है। ध्वनि सौन्दर्य के प्रति निराला जी बड़े सचेष्ट रहे हैं। उनकी शब्द योजना प्रायः वर्णमैत्री, अर्न्ततुकान्तता और ध्वन्यात्मकता पर आधारित है। वे जिस एक शब्द का प्रयोग करते हैं, उसके आगे उसी वजन के शब्दों का सार्थक विन्यास करना चाहते हैं। उदाहरणार्थ ये पंक्तियाँ लीजिए–

'शत श्री अकाल काल अनल धक–धक कर जला।
भस्म हो गए थे गुण, तापत्रय मृत्युंजय...।
'सिंही की गोद से छीनता रे शिशु कौन? मौन...
एक मेष माता ही रहती है निर्निमेष।'

(परिमल)

इसमें अकाल और काल, तापत्रय और मृत्युंजय, कौन और मौन, मेष ओर निर्मिमेष ऐसे शब्द हैं जो ध्वनि साम्य के कारण, किन्तु सार्थकतापूर्वक प्रयुक्त हुए हैं। शब्दों का यह बँधाव निश्चय ही निराला को अतिप्रिय है।

ध्वनितत्व से प्रेरित होकर निराला जी ने वीप्सा का भरसक प्रयोग किया है। वे भाव पर जोर देने के उद्देश्य से एक शब्द को कई बाद दुहराते हैं, जैसे–

'जागो—जागो, आया प्रभात।

बीती, वह बीती अंध रात।

बाँधो—बाँधो किरणें चेतन।'

(तुलसीदास)

जहाँ जागो, बीती और बाँधो शब्दों की आवृत्ति ध्वन्यात्मकता से प्रेरित है। वस्तुतः अनुभूति ओर भाषिक ध्वनियाँ परस्पर अविभाज्य हैं। उनके अधिकांश शब्द सस्वर हैं, जो पंत जी के कथनानुसार 'झंकार में चित्र और चित्र में झंकार है।'

निराला जी ने भीषण और मसृण प्रायः सभी प्रकार की ध्वनियों को अंकित किया है। महाप्राण ध्वनियों के प्रतिवे अपेक्षाकृत अधिक लालायित हैं, इसीलिए वे अन्य छायावादी कवियों से कुछ भिन्न दिखाई देते हैं। उनके काव्य में नैसर्गिक ध्वनियों के भी कई—कई बिम्ब दृष्टिगत होते हैं, जैसे—'कोकिल कंठ' उन्हें बहुत प्रिय है। उनके ही शब्दों में 'कूजित पिक उर मधुर कंठ कुठा सब टूटी।' उन्होंने कई स्थालों पर 'पिक कल कूजन तान', (परिमल) 'पिक कुहरित डाल' (तुलसीदास), 'पिक ध्वनि भाषित भैरवी कुंज' (सांध्य काकली) आदि का उल्लेख किया है। भ्रमर गुंजार, 'कलरव, पत्रों के मर्मर आदि के प्रति भी उनके मन में आकर्षण है, किन्तु इनकी तुलना में पवन श्वसन का ध्वनि बिम्ब उन्हें कहीं अधिक प्रिय है।' 'जुही की कली' में निराला जी ने ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा पवन की गति को यथावत् कर दिया है—

'उपवन वन सहित गहन गिरि कानन' इसी प्रकार का ध्वनि बिम्ब है। वायुतरंग के साथ घन गर्जन, वर्षण और जल प्रवाह की ध्वनियाँ उनकी कविताओं में भरी पड़ी हैं। 'बादलराग' में उन्होंने द्वित्ववर्णों द्वारा बादल की गड़गड़ाहट तक को सशब्द कर दिया है—

'झर—झर—झर निर्झर गिरि सर में।

घर मरु तरु मर्मर सागर में—

राग अमर अम्बर में भर निज रोर।'

(परिमल)

इस कविता में बादलों के कई रूप हैं। कहीं 'सघन घोर गुरु गहन रोर' वाला भैरव गर्जन है तो कहीं प्रचंड व्रजघोष प्रवाह।

मूसधार वर्षण करता हुआ बादल जो भेरी वादन करता है, उसे निराला ने अपने शब्दबन्ध द्वारा अविकल रूप में उतार सा दिया है। जल वर्षण की ध्वनियाँ निराला जी को सर्वाधिक रुचिकर हैं। कुछ उदाहण देखिए—

झर—झर, झर—झर, झर धारा झर (गीतिका)

द्रुत समीर कम्पित थर—थर—थर।

झरती धाराएँ झर—झर—झर। (अपरा)

उत्ताल तरंगाघात प्रलय धनगर्जन जलधि प्रबल में (परिमल)

भेरी झर–झर–झरर दमामें घोर नगारों की है चोप

कड़कड़–कड़ सन–सन बन्दूकें, अररर–अररर, अररर तोप। (अनामिका)

छल–छल–छल कहता यद्यपि जल (तुलसीदास)

कलकल, कुलकुल, कलमल, टलमल,टलमल। (परिमल) आदि।

वस्तुतः यहाँ निराला के ही शब्दों में कहा जा सकता है कि 'निर्मल कलकल में बँध गया विश्व सारा।' यहाँ विशेषतः उल्लेखनीय यह है कि निराला जी ने घन–घोष को ध्वनि गांभीर्य का आदर्श माना है और उसे 'मेघ मन्द्र ध्वनि' कहा है। कुछ उदाहरण लीजिए–

गरजो ये मन्द्र बज्र स्वर (गीतिका)

जीवन का स्वर भर छंद ताल मौन में मन्द्र (अनामिका)

कह उठे राम ज्यों मन्द्रित घन (राम की शक्ति पूजा)

नवल कंठ नव जलद मन्द्र रव (गीतिका)

हृदय कंप के जलद मन्द्र स्वर (गीतिका) आदि।

निःसंदेह यह मन्द्र रव तथा यह घनघोष उनके औदात्य और उनके विराट व्यक्तित्व का द्योतक है।

निराला जी ने प्रचंड ध्वनियों की सफल आयोजना की है। वायु विलोड़ित समुद्री तूफान, झंझा का हर–हर नाद और समुद्री ज्वार का यह विक्षुब्ध स्वर एक विरल उदाहरण है–

'शत घूर्णावर्त तरंग भंग उठते पहाड़।

जल राशि–राशि जल पर चढ़ता खाता पछाड़।

... शत वायु वेग बल डूबा अनिल में महाराव।'

(राम की शक्ति पूजा)

यह उत्ताल तरंगाघात ध्वनि सौन्दर्य की दृष्टि से स्पृहणीय है।

मानवीय ध्वनियों में रमणी कंठ को निराला जी ने 'वीणानिन्दित वाणी' कहा है। 'तुलसीदास' में नारी कंठ को उन्होंने 'मधु शीकर निर्झर' की संज्ञा दी है। उन्होंने अट्टहास का एक बड़ा सुन्दर ध्वनि बिम्ब 'शक्ति पूजा' में रावण की भयावह हँसी के प्रसंग में प्रस्तुत किया है–

'फिर सुना हँस रहा अट्टहास रावण खलखल।' इस 'खलखल' शब्द में महाखल रावण जैसे भयावह व्यक्ति के अट्टहास का सुन्दर ध्वनिबिम्ब है।

कोमल ध्वनियों में निराला जी ने नुपूर ध्वनि को सर्वाधिक महत्व दिया है जैसे–

कण–कण–कण कंकण प्रिय किण किण रव किंकिणी।

रणन, रणन नुपूर ध्वनि लाज लौट रंकिणी।

(गीतिव्य)

उन्होंने नुपूरयुक्त (आशिंजित) चरणों की आवृत्ति अपने काव्य में बीस बार से अधिक ही की है। वे पद गति पर मुग्ध हैं। नुपूर ध्वनि को उन्होंने संसार के समस्त छन्दों को परास्त करने वाली कहा है। यह उनका सर्वाधिक प्रिय श्रावणिक बिम्ब है। स्पष्ट है कि निराला जी ने अनुकरणात्मक ध्वनियों को बहुत महत्व दिया है। कोकिल की काकली, भ्रमर गुंजर, मर्मर, श्वसन, घनगर्जन, वर्षण, जलप्रवाह अर्थात् सभी रौद्र और सुकुमार ध्वनियाँ उनके काव्य में समाहित हैं। अपनी इस ध्वनि योजना द्वारा उन्होंने अमूर्त बिम्बों तक को प्रतिध्वनित किया है और इस प्रकार मौन को मुखर कर दिया है, साथ ही अकथित रंगों, गंधों एवं संवेगों को स्वर देते हुए इन्द्रियों को भी भाषा दी है।

2.8 बिम्ब धर्मिता

निराला की भाषा अधिकाधिक बिम्बमयी है। उन्होंने प्रतीकों, रूपकों और नई अद्भावनाओं के सहारे अपनी अनुभूतियों को रूपायित करने का यत्न किया है। 'राम की शक्ति पूजा' में राम महाशक्ति की जो परिकल्पना करते हैं, वह एक विराट् बिम्ब है–

'शोभित–शत हरित गुल्म तृण से श्यामल सुन्दर।

पार्वती कल्पना है इसकी मकरंदबिन्दु।

गरजता चरण प्रांत पर सिंह वह नहीं सिंधु।

दशदिक् समस्त हैं हस्त और देखो ऊपर,

अम्बर में हुए दिगम्बर अर्चित शशि शेखर।'

(राम की शक्ति पूजा)

ऐसे अनेक चित्रफलक निराला के काव्य में द्रष्टव्य हैं, जो कवि हृदय की भावस्फीति के साक्षी हैं। 'भारति जय विजय करे' गीत में उन्होंने जिस प्रकार लंका को भारतमाता के पदतल पर पड़े हुए कमल के रूप में अंकित किया है और हिन्द महासागर को चरण प्रक्षालित करते हुए दिखाया है, साथी ही शस्य–श्यामला भूमि को आच्छादित करने वाले तरु तृण वन लता को उनका परिधान और वन पुष्पों को उनके चंचल में चित्रित बेलबूटे तथा गंगा की वर्तुल धारा को उनके कंठ में सुशोभित धवलहार कहा है, वह उनकी बिम्बधर्मी उद्भावना शक्ति का परिचालक है। इस प्रकार के बिम्ब निराला के भावोत्कर्ष के हेतु हैं।

निष्कर्ष यह है कि निराला का काव्य, स्वयं उनके उपर्युक्त आत्मकथ्यके अनुसार इन तीन बिन्दुओं के कारण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है– (1) शब्दबन्ध (2) ध्वन्यात्मकता (3) बिम्बविधान।

उनकी शब्दावली सर्वोत्तम क्रम में सर्वोत्तम शब्द से परिपूर्ण है। 'राम की शक्ति पूजा' का जैसा टकसाली शब्द प्रयोग हिन्दी कविता का अपवाद ही कहा जाएगा। उन्होंने समस्त पदावली, तत्समबहुला, परिनिष्ठित प्रयोगों में सर्वाधिक सपफलता प्राप्त की है। महाप्राणत्व के साथ–साथ यथा प्रसंग निराला जी ने कोमलकांत पदावली का

भी वायु सुष्ठु प्रयोग किया है। इसके साथ ही उन्होंने आवश्यकतानुसार भाषा के रूढ़ प्रयोगों और उनके पारम्परिक ढाँचों को तोड़ते हुए बोलचाल की व्यंजनागर्भित, मुहावरेदार, किन्तु चुटीली भाषा का भी आविष्कार किया है। 'कुकुरमुत्त और नए पत्ते' की कई कविताएँ इस कथन का उदाहरण हैं। एक ओर 'तुलसीदास' की भाषा और दूसरी ओर परवर्ती रचनाएँ, निराला जी की भाषिक विविधता एवं शब्द शक्ति की साक्षी हैं। निःसंदेह वे शब्दों को प्राणी से अधिक प्यार करते रहे हैं, उन्हें बार–बार माँजते हैं, फिर तोड़ते हैं और नए रूप में गढ़ते हैं। छायावादी काव्य भाषा के विकास का यही मूलाधार है। यह शब्द–सामर्थ्य, यह ध्वनि–योजना और यह बिम्ब–विधान निराला जीकी अन्यतम देन है, जिसके लिए वे सदा सर्वदा स्पृहणीय तथा अनुकरणीय माने जाएँगे।

2.9 भाषा वैविध्य

निराला के काव्य में भाषिक संरचना के कई स्तर हैं। एक ओर 'राम की शक्ति पूजा' की परिनिष्ठत भाषा, दूसरी ओर गीतों की कोमलकांत पदावली और तीसरे कुकुरमुत्ता या परवर्ती कविताओं की खुरदरी शब्दावली। यही नहीं, निराला की आँचलिक एवं छायावृत्ति विहीन 'शब्दावली भी कहीं–कहीं अपनी अति पर है। यह भी उल्लेखनीय है कि निराला ने जनपदीय मुहावरों के सहारे भाषा और भाव की ध्वनि (टोन) तक को प्रतिध्वनित किया है, जैसे –तुलसीदास की यह उक्ति–'उधार लाए हैं चले बड़े' एक विशिष्ट लहजे की सूचक है। उत्कृष्ट भाव–भाषा के बीच ये प्रयोग बड़े विडम्बनापूर्ण लगते हैं। इनका घरेलूपर निश्चय ही छायावादोचित नहीं है।

जनपदीय शब्दों का यह बाहुल्य निराला के परवर्ती काव्य में विशेष दृष्टिगत होता है, जिसका मूल कारण है– उनका तुकांत–मोह तथा ग्राम्य संस्कार। उन्होंने सप्रयास तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया है और निरायास रूप से बैसवारी अवधै का। इन भेदस प्रयोगों द्वारा निराला ने प्रथम बार छायावादी भाषा के आभिजात्य पर प्रहार कर उसका 'निषेध' किया है और ऊबड़–खाबड़ भावों के अनुकूल खुरदरी शब्दावली की सृष्टि की है। निराला की आत्म स्वीकारोक्ति के अनुसार–'बन्द हुई जब उर की भाषा' अर्थात् इस स्तर पर पहले वाली संस्कारवती गिरा नष्ट हो गई है।

इसके अतिरिक्त निराला जी ने यत्र–तत्र उर्दू शब्दावली को भी स्थान दिया है, जैसे नायाबचीज, खुशजहान, रंजोगम, रश्मेअदा, लजीज, खुननसीब, आशियाँ, रंगोआब, (कुकुरमुत्ता) खुदरोदरख्त (नए पत्ते) आदि। ऐसे प्रयोग प्रायः परवर्ती काव्य में मिलते हैं। यह स्मरणीय है कि सिद्धांततः हिन्दी की उर्दवी शैली अथवा सरल हिन्दुस्तानी के विरोधी रहे हैं। 'गांधी जी से बातचीत', 'नेहरू जी से दो बातें' (प्रबन्ध प्रतिभा) आदि अध्यायों में उन्होंने सरलीकरण का स्पष्ट प्रत्याख्यान किया है। उनके मतानुसार भाषा सरल न हो, बल्कि उससे शब्द ज्ञान की वृद्धि हो। 'तुलसीदास', 'राम की शक्ति पूजा' आदि की सामाजिक (समस्त) पदावली और तत्सम शब्दावली उनके इसी मिशन की सूचक है। किन्तु परवर्ती काव्यों में मनोभाव जनित विरूपण के कारण उनकी भाषा के छायावादी संस्कार शिथिल हो जाते हैं, अतः वे बैसवारी, उर्दू आदि का बेझिझक प्रयोग करने लगते हैं। इसके कुछ लक्षण यद्यपि उनकी छायावादी कविताओं में भी दिखाई देते हैं, फिर भी वहाँ कवि की सचेतन शब्द साधना के कारण ये तत्व उभर नहीं पाए हैं। कालान्तर में निराला में शब्द–विन्यास की कड़ियाँ चरमराकर और टूट कर बिखर जाती हैं। यहाँ तक कि उनकी भाषा अपना अर्थबोधन तक खो देती हैं, जैसे–

'कटा था जो फटा रह कर
डटा था जो हटा रह कर।'

पर ये पंक्तियाँ यहाँ व्यर्थ सी लगती हैं, वहाँ इनकी समकालीन दूसरी पंक्तियाँ पर्याप्त अर्थवत्ता तथा भाषायी कसावट लिए दिखाई देती है, जैसे–

'निस्पृह, निःस्व, निरामय, निर्मम

निराकाँक्ष निर्लेप निरुद्गम

निर्भय निराकर निःसम, शम।'

(सांध्यकाकली)

इसमें उपसर्गों का सधा हुआ प्रयोग है। ऐसा भाषाधिकार सिद्ध कवियों को ही मिल पाता है।

उपर्युक्त दोनों प्रयोग निराला के निरालेपन के सूचक है। इनकी अपेक्षा सबसे विलक्षण है भाषा का व्यर्थता बोध। काकु के सहारे और वर्णों को तोड़–तोड़ कर इन्हें जिस प्रकार उभारा गया है, वह सहजगम्य नहीं है। देखिए–

'ताक कमसिनवारि, ताक सिनवारि

ताक कमसिन वारि, सिनवारि, सिनवारि

ता ककमसि, नवारि ताक कमसि नवारि।'

'वारि वन नववारि... '

वारिज बिपुलवारि, फुलवारि फुलवारि

दुमलता तुलवारि,

आकुल मुकुल वारि...'

(सांध्यकाकली)

संभव है कवि मानस में कोई अर्थ बिम्ब रहा हो, यों इसका संप्रेषण वाधित है। ये शब्द प्रयोग कवि के मनः क्षेप के सूचक हैं। ऐसे ही कुछ बीजाक्षरों का प्रयोग 'मंत्र भाषा' बनने के ध्येय से 'वर्तमान धर्म' नामक निबंध में भी उन्होंने किए थे।

2.10 लोकभाषा

निराला जी ने अपनी परवर्ती कृतियों में बैसवारी अवधी बोलचाल वाली लोकभाषा का उन्मुक्त प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

'लगा सावन सुमन भावन–झूलने घर–घर पढ़े...।'

'कर फूल माला साज सखियाँ तीज पूजन को चलो।' (आराधना–96)

'... झूला झूलती गाती है 'सावन'–

औरतें नहीं आस मन भावन।'

'लड़के पेंग मारते हैं बढ़बढ़कर ...।

... लोग रोज रात को अल्हा गाते ढोलामर।' (नए पत्ते–18)

'गाती बारहमासी सावन और कजलियाँ।' (अपरा–200) + 'किसान खेतों में लड़के अखाड़ों में आए (बोला–) उपर्युक्त पंक्तियों में पावस ऋतु में गाए जाने वाले लोक गीतों–जैसे 'आल्हा', सावन, बारहमासी, कजरी, नकटा आदि का उल्लेख है और 'तीज' (अक्षय तृतीय) एवंकजरीतोज जैसे लोकोत्सवों का संकेत भी।

सावन में बैसवाड़ा अंचल की शोभा नयनाभिराम दिखाई देती है। आषाढ़ के पहले 'दौंगरे' के साथ ही खेतों की हलचल तथा अखाड़ों व दग्लों का दलदल निराला जी को साक्षात 'सरस्वती' के रूप में दिखाई देता है। इन्हीं प्राकृतिक दृश्यों के प्रकाश में ये अंचल को महाभारतीया (शक्ति) के रूप में .... करते हैं। 'देवी सरस्वती' कविता में महाकवि निराला जी ने उसे एक विराट बिम्ब में घटित किया है–

'हरी भरी खेतों की सरस्वती लहराई'

बैसवाड़ा पलत के रूप में देवी सरस्वती की आराधना करता हुआ कवि उनका सांगोपाग रेखांकन करता है–

'... हँसते बढ़े ध्यान खेतों में

जल पर ही रेत जैसे ज्वारी नेतों में।'

अहीं उड़द काकुन सावाँ और कोदौं की

निकले कमल सरौं में और करुबयें लहरें...।

खेत निराती हैं बालाएँ कर लिए खुरपियाँ

...सिमटा पानी खेतों का 'ओठ' पर चले हल।

पांस खेत किए जो गए, जोत कर मखमल,

ऐसे 'बाँह–बाँह' की वीणा बजी सुहाई... (अपरा)

रेखांकित शब्द विशुद्ध आँचलिक शब्द हैं। उन्हें बैसवाड़ी की कृषि शब्दावली में सम्मिलित किया जा सकता है। इन वर्णनों द्वारा लेखक बैसावड़ी की कृषि प्रणाली जैसे पांस (खाद) देना, 'ओठ' (नमी) देखकर जुताई करना और कई बाँह (आवृत्ति) करके फसल बोना, फिर खुरपियों (कृषि उपकरणें) से खेत की निराई करना आदि का चित्रण किया है, दुसरी ओर वहाँ की उपज, जैसे– अहीं (अरहर या तुअर) उड़द (दाल) काकुन, कोदो, ज्वार (हाईग्रेन) ध ान (चावल का पूर्वरूप) करुबुआँ (शाक विशेष) आदि का भी संकेत किया है। इन उल्लेखों द्वारा लेखक ने गंगा, लीना और सई नदियों को तटवर्ती उर्वरा शस्यश्यामला धरती की सुस्कुति की है और उक्त अंचल के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की है।

'बैठे गोलबांधकर लोग बिछे खेतों पर...'

'(गीत गा रहे) धनुष भंग के और राम के बनवास के...। (अपरा 209)'

'शुभ राम लीला सुकराशीला, ग्राम–ग्राम जगी हुई

दो पितर देवी पाख बीते...।' (आराधना–96)

शरदऋतु विशेषतः विजय दशमी के निकट 'रामलीला' विषयक नाटक, नौटंकी, संगीत और सामूहिक गायन के जो कार्यक्रम बैसवाड़ा प्रदेश में समायोजित होते हैं, उनका सम्यक् संकेत इन उद्धरणों में प्राप्त है। 'पितर पाख' (पितृपक्ष) का भी नामोल्लेख किया गया है। बैसवाड़ा में सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अतिरिक्त मनोविनोद के जो अनेक साधन प्रचलित हैं, उनकी ओर भी लेखक ने निर्देश किया है। इनमें मल्ल विद्या, मेला–दर्शन और तीर्थ यात्रा उल्लेखनीय हैं। बैसवाड़ा जनपद में, पावस काल में (विशेषतः नागपंचमी को) स्थान–स्थान पर अखाड़ा, दंगल या कुश्ती प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। शक्ति की उपासना का यह सर्वपूज्य दिवस है। निराला जी ने इनके वर्णन के साथ–साथ वहाँ प्रचलित कुश्ती कला तथा विभिन्न दांव–पेंचों का भी यथावत् विवेचन किया है। उनके साहित्य में प्राप्त मल्लविद्या संबंधी ये पारिभाषिक एवं आँचलिक शब्द उद्धरणीय हैं– 'दाव दस्ती', उतार, लोकान, पैज, पट, ढाँक कलाजंग, घिस्सा, सवारी, इता' आदि आदि। अन्य क्रीड़ाओं में निराला जी ने 'पैराव' (तैराकी) रंदा, घूसा (बाक्सिंग) पंजा लड़ाना, पत्थर 'लोकाना' बल्लेबाजी, गड़ीगुडंता, सुरबग्धी, ताश, गोली आदि के यथासन्दर्भ उल्लेख किए हैं। यह स्मरणीय है कि निराला जी इन अभ्यासों, क्रीड़ाओं और कलाओं में स्वयं सिद्धहस्त थे।

मेला और तीर्थयात्रा के अनेक प्रसंग निराला–साहित्य में प्राप्त हैं। कार्तिकी गंगा स्नान (कतकी पुत्रबासी) का बैसवाड़ा में बड़ा माहात्म्य है। स्नानार्थी विविध वाहनों, विशेषतः बैलगाड़ी द्वारा जिस प्रकार गंगा तट तक जाते हैं, उसका वर्णन एवं विवरण दृष्टव्य है।

'यात्री गंगा स्नान के लिए विकल... ' (नए पत्ते–75)

'कतकी में गंगा नहान की बड़ी उमंगें।'

'सजी गाड़ियाँ, चले लोग मन चढ़ती चंगे' (अपरा–200)

'पण्डों के सुधर सुधर घाट हैं'

'तिनके की टूटी के ठाट हैं।'

'यात्री जाते हैं श्राद्ध करते हैं,'

'कहते हैं कितने तारे...।'

'आरे गंगा के किनारे।' (बेला–52)

यात्रा के साधनों और वाहनों के अतिरिक्त लेखक ने अनेक यात्रा संस्मरण भी प्रस्तुत किए हैं। 'कुल्लीभाट' में निराला जी की स्टेशन की ओर पद यात्रा और 'स्फाटिक शिला' कविता में उनकी चित्रकूट यात्रा अत्यन्त रोचक तथा लोमहर्षक है। लेखक ने इन संस्मरणों द्वारा बेलगाड़ी, रब्बा, बहल, रहकला आदि वाहनों का परिचय दिया है

और बैलों की गतिविधि का भी, जैसे–

'बैल दो थे सांवलिया और धौला
धौला गरियार था, बाएँ जुता...।'
'पकड़ ली ऐंठी नाथ...।' (नए पत्ते–39)

सांवलिया, बैला क्रमशः सांवले और सफेद रंग के बैलों के नाम हैं। धौला प्रायः अशक्त माना जाता है, अतः जुएँ में बाएँ जोता जाता है ताकि उसे कम भार वहन करना पड़े। नाथ (नासिका छिद्री में पड़ी हुई रस्सी) द्वारा ही उसे नियन्त्रित किया जाता है। इन वर्णनों में बैसवाड़ा की यातायात व्यवस्था या आवागमन के साधनों का निर्यात चित्रांकन हुआ है।

'निरुपमा' में खेतों की बेदखली, षड़यन्त्रपूर्ण हत्या, सार्वजनिक कुएँ का पानी रोकने और सामाजिक तिरष्कार (बयकट) की जो घटनाएँ दिखाई देती है, उनमें बैसवाड़ी जीवन का सत्य तो है ही साथ ही इनमें निराला के अस्तित्व संघर्ष का भी सुविन्यास है। निराला का विद्रोही व्यक्तित्व इन्हीं परिस्थितियों की देन है। लघुमानबों (जैसे कुल्ली, चतुरी, बिल्लेसुर आदि) के प्रति अनुराग वस्तुतः बैसावड़े के सामन्तों की प्रतिक्रिया का परिणाम है। इस आँचलिक अव्यवस्था के प्रति उत्पन्न होने वाला उनका क्षोभ या आक्रोश अनन्तर हास्य, व्यंग, यथार्थ और विद्रोह रूप में परिणत हुआ है। वे अनेक स्थलों पर इस सामन्ती शासन से असहिष्णु होकर क्रांति का आह्वान करते हैं, जैसे–

"अमीरों की हवेली किसानों की होगी पाठशाला
धोवी, पासी, चमार, तेली...।" (बेला–60)

लेखक ने प्रजावर्ग (परक्षा) अर्थात्–डोम, बाजेदार, पासी, काछी, चमार, छोध, धोबी, तेली, गोड़इत आदि की स्थिति का यथार्थ चित्र खींचा है और हास्य रस का परिपाक भी किया है। लेखक को इनमें नायकत्व से अधि
ाक षोदन दिखता है (द्रष्टव्य कुल्लीभाट की भूमिका) दूसरी ओर इनके जीवन में 'रस की गंगा जमुना' बहती दिखाई देती है (द्रष्टव्य बिल्लेसुर बकरिहा पृष्ठ...)। निराला में कोर–संवेदना और करुणा की जो अनुभूति (यथा भिक्षुक, विध
ावा आदि कविताओं में) दिखाई देती है, उसका उत्स इसी अँचल में है। वे इन दीन–दुःखियों के प्रति प्रायः सहानुभूति दिखाते हैं, जैसे–

'आग तापकर पार कर रहे हैं गृह जीवन...।
जमींदार की बनी महाजन घनी हुए हैं...।' (देवी सरस्वती)
'बीनती है, कांडती हैं, कूटती है, पीसती है।
उंगलियों के सोले अपने रूखे हाथों मीसती हैं।' (नए पत्ते–15)

'कुटौनी–पिसौनी' करना और 'सीला' (बिखरा अन्न) बीनकर मीसना बैसवाड़े में दुःखा दारिद्रय की अति का परिचायक माना जाता है। लेखक ने इन सबका चित्र खींचकर वहाँ का आर्थिक स्तर प्रकट किया है।

इस प्रकार की लोकभाषा निराला के काव्यों में सहजोपलब्ध है। इसका एक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य है और

यह निराला की भाषिक संरचना में एक नए आयाम की उभायक है। आगे चलकर यही भाषा नई कविता का मानक बनी है।

निष्कर्ष यह है कि काव्य भाषा के छह रूप निराला के काव्य में उपलब्ध हैं–

1. तत्सम– परिनिष्ठित एवं सामासिक पद रचना।
2. कोमलकांत पदावली एवं ललित लवंगी भाषा।
3. महाप्राणत्व से ओत–प्रोत, ओजोद्‌दीप्त सघोष गिरा।
4. जनपदीय, आँचलिक (देखज) भेदस बानी।
5. उर्दवीपन से युक्त शब्दावली।
6. काकु व्यंजना और मुक्तापंग से परिपूर्ण शब्दावली।

इन्हीं भाषिक प्रयोगों के कारण ही निराला का साहित्य वैविध्यपूर्ण बन सका है।

2.11 विभिन्न भाषा शिल्प

निराला जी ने कई प्रकार के भाषिक शिल्प काव्य क्षेत्र में आजमाए हैं। 'तुलसीदास' जीवनीपरक काव्य है। उसे खण्डकाव्य भी कहा गया और लम्बी कविता भी। उसमें कथावस्तु, पात्र, देशकाल, संवाद सब तत्व हैं, किन्तु प्रबंधकाव्य की सर्गबद्धता नहीं है। वह एक प्रवाह में लिखे गए 100 छन्दों की रचना है। निराला ने यहाँ शास्त्रीय औपचारिकता का निर्वाह नहीं किया। बीच में तुलसी के मनः उड्डयन के कारण इसमें फैन्टेसी के तत्व भर गए हैं। निराला ने 'कैलाश में शरत' कविता में पुनः फैन्टेसी की सृष्टि की। 'राम की शक्ति पूजा' के हनुमान के ऊर्ध्वारोहण में फैन्टेसी का प्रयोग किया। यह फैन्टेसी उनका एक विशिष्ट काव्य शिल्प है। लम्बी कविताएँ निराला ने बहुत लिखीं–'राम की शक्ति पूजा', 'सरोज स्मृति', 'कुकुरमुत्ता' तीनों प्रबन्धात्मक हैं। 'बनवेला','यमुना के प्रति', 'बादलराग', सहस्राब्दि, शिवाजी का पत्र आदि भाव–विचार प्रधान है। 'जागो फिर एक बार' शृंगारपरक है और ओजपरक भी। उनकी कविताओं में कहीं–कहीं व्यतिरेकी रूप दिखाई देते हैं। एक ओर 'तुलसीदास' की चित्रकूट प्रकृति है और दूसरी ओर ठीक उसके विपरीत 'स्फटिक शिला' की प्रकृति और चित्रकूट यात्रा है। एक ओर सद्यःस्नाता के दिव्य दृश्य, दूसरी ओर 'खजोहरा' की बुआ। उनके प्रगीतों में शास्त्रीय संगीत, लोकाधुन, सुगम संगीत आदि का समाहार हुआ है। स्पष्ट है कि भावाभिव्यक्ति की अनेक प्रणालियाँ उनके काव्य में विद्यमान हैं। यह सर्वस्वीकार्य तथ्य हैं कि जितने भाव भाषागत प्रयोग निराला ने आधुनिक हिन्दी–काव्य में दिए हैं, उतनी किसी दूसरी कवि ने नहीं। उनके काव्य में विषयगत, भावगत और विचारगत विविधता तथा व्यापकता है और भाषा–शैलीगत नवीन प्रयोग भी। ये समस्त प्रयोग निराला की मौलिकता के अर्थवाहक हैं।

निराला की कलागत मौलिकता के कारण ही उनकी काव्य–शैली कवि–व्यक्तित्व के आधार पर अनेक रूपों में विभक्त हुई है। पहले उनकी वह स्वछन्द और विद्रोहिणी शैली व्यक्त हुई है, जो उनके विद्रोही व्यक्तित्व और तद्रूप काव्य–वस्तु का प्रतिनिधित्व करती है। मानव–जीवन की सारी विषमताओं और रूढ़ियों का आपात विनाश करने वाली भाव–चेतना इसी शैली का आश्रय लेकर प्रस्फुटित हुई है। निराला की सौंदर्य–चेतना और दार्शनिक आभा से सम्पन्न उनकी दूसरी शैली को आलोक शैली माना गया है, जिसमें उनके शृंगारिक गीत, प्राकृतिक सौंदर्य छबियाँ, उनकी 'रेखा' और 'स्मृतिचुंबन' जिनमे उनके आत्म विकास की स्मृतियाँ संयोजित हैं– आती है।

निराला की तीसरी शैली वह है, जो उदात्त और विराट् चित्रों का सृजन कर उन्हें महाकाव्योचित उत्कर्ष प्रदान करती है। इसे निराला की पांडित्य शैली भी कह सकते हैं। इस शिल्प–प्रयोग में उन्होंने विशाल चित्र–फलकों पर संलिष्ट और सामाजिक भाषा–प्रयोगों के माध्यम से विराट चित्रों की अवतारणा की है। निराला ने दो अन्य प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है– एक भक्त–कवियों की सी सरल तथा निरलंकृत शैली है। इसे 'ऋजु शैली' भी कहा जा सकता है। दूसरी हास्य, व्यंग्य तथा विनोद–प्रधान शैली है, जिसमें उन्होंने 'कुकुरमुत्ता' और 'नए पत्ते' की रचना की है। निराला के इन शिल्प प्रयोगों की महत्ता एवं सूक्ष्मता को समक्ष रखकर यह कहा जा सकता है कि इतना बड़ा प्रयोक्ता कवि आधुनिक हिन्दी काव्य में अन्यत्र नहीं है।

वस्तुतः निराला जी श्रेष्ठ कलाकार थे। वे काव्य कला के महान साधक तथा जीवन कला के मौलिक विचारक थे। उनकी काव्य–कला का विकास भारतीय अद्वैतवादी परम्परा के आध्यात्मिक धरातल पर हुआ है। उनका कला–दर्शन स्वामी रामकृष्ण तथा विवेकानंद की अद्वैतवादी जीवन–दृष्टि की व्यावहारिकता में पल्लवित एवं विकसित हुआ है। उनकी कलाभिव्यक्ति में वेदांत दर्शन, समाज दर्शन, वैयक्तिक जीवनदर्शन तथा कलादर्शन की समन्वित अभिव्यक्ति हुई है। इसीलिए निराला को छायावादी, प्रगतिशील, प्रयोगधर्मी अर्थात् किसी बोध विधा–विशेष की सीमा में नहीं रखा जा सकता। निराला ने किसी वाद विशेष का आग्रह कभी नहीं किया। उनका एक ही मौलिक आग्रह रहा है– दर्शन, संस्कृति और साहित्य से गहन संबंध। यदि दर्शन को उनके वाद या बोध का आधार मान लिया जाए, तो निराला को भारतीय वेदांत दर्शन का महाकवि कवि कहा जा सकता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि निराला में सीमाओं को अतिक्रांत करने का अपूर्व गुण विद्यमान रहा है। इसके साथ ही उनका एक विशिष्ट जीवन–दर्शन तथा एक निजी कलादर्शन भी रहा है, जो उनके व्यक्तित्व के वैविध्य के बाद भी आद्युत समरस बना रहा।

निराला की भाषा मीमांसा के दो रूप हैं– एक, घोषित काव्यादर्श और दूसरे, उनका अनुप्रयोगात्मक भाषा दर्शन। निराला जी ने अपने निबंधों में साहित्य के प्रयोजन, स्वरूप, हेतु और काव्य रूपों पर काफी लिखा है। 'परिमल' की भूमिका में उन्होंने नई काव्य भाषा, नए छन्दोंविधान और अभिनव रस–सिद्धांत की गंभीर विवेचना की है। स्फुट रूप से उनके साहित्य–सिद्धांत उनकी रचनाओं के बीच से खोजे–निकाले जा सकते हैं। निराला जी ने संस्कृत, अंग्रेजी, बंगला, उर्दू आदि भाषाओं के श्रेष्ठ साहित्य का गंभीर अनुशीलन किया था। हिन्दी के प्राचीन और अर्वाचीन साहित्य को उन्होंने भलीभाँति पहचाना था। तुलसीदास उनके आदर्श थे। समकालीन कवियों में उन्होंने प्रसाद जी को पूरे मन से सराहा था। वे बहु अधीत थे और प्राति–चिंतक भी। तथ्य यह है कि निराला जैसे भाषा मीमांसक (कविर्मनीषी) हिन्दी में कम ही हैं।

निराला जी जब छायावृत्ति से परे हो जाते हैं तो प्वरेंलूपन पर उतर आते हैं और भणीति के भदेस होने की चिन्ता नहीं करते फलतः परवर्ती कविताओं में वे 'झाड़पोछ', जांघिय, लांगोटा, पंजालड़ाने आदि की चर्चा करने लगते हैं। अपनी विपर्यस्त चेतना के कारण वे धड़ल्ले से उस प्रकार के प्रयोग कर बैठते हैं–

'अम्मा हैं, बप्पा हैं, झलड़ हैं, गोलगप्पा है,

क्योंकि यहाँ दाना है।' (बेला–46)

"कर दी सीधी खोपड़ी औंधी"(बेला)

"मेरे लल्लू मेरे लल्ला" (कुकुरमुत्ता)

"ताक पर है नमक मिर्चा जब पिसाई सिल में है

हाथ मत डालो निकालो शीघ्र बिच्छू बिल में है" (बेला)

प्रौढ़ कृतियों– अनामिका, परिमल, तुलसीदास आदि में भी यदा कदा भाषा का यह स्खलन दिखायी दे जाता है, यथा–"उधार लाए हैं चले बड़े, जब देखो तब ये अंडे पड़े " (तुलसीदास)

वस्तुतः निराला का सचेतन मस्तिष्क छायावादी भाषा का निर्वाह करता रहा है, पर उनका अवचेतन चूँकि ग्राम्य संस्कारों से प्रेरित रहता था, इसलिए सौंदर्य समाधि के शिफिल हो जाते पर वे भाषा का विरुपण कर बैठते थे। सरोज स्मृति जैसे शोकगीम में इसीलिए चमरौधे जूते का उल्लेख करके और 'दान' कविता में सुन्दर प्रकृतिचित्रण के बीच चन्दरों का वर्णन करके संस्कारवदी गिरा हो च्युत हो जाता है। इसी प्रकार 'देवी सरस्वती' कविता में विराट रूपक रचना करते–करते निराला ग्राम्य जीवन की शब्दावली पर उतर आते हैं। वनबेल कविता में भी उदात्त प्रकृति पर्यवेक्षण के बीच वे हास्य व्यंग्य पूर्ण तथा आत्मरोदन युक्त शब्दावली का जो प्रयोग करते हैं, वह उनके छायाभ्रंश का सूचक है।

तात्पर्य यह है कि उस प्रकार की भाषा से एक ओर भावगत विसंगती को अवसर मिला है ओर दूसरी ओर नई भाषिक क्रांति को भी। निराला जी का 'कुकुरमुत्ता' इसी दृष्टि से एक नया प्रस्थान बन गया है। उन्होंने सगर्व कहा भी है– "उलट दिया अर्थागय बनकर तुफान"

वस्तुतः यह भाषिक विरूपण उनके निरालेपन की उपज है।

बोध प्रश्न–

1. निराला के काव्य में नाद व्यंजना को समझाइए।

____

____

2. निराला की लोकभा ा को समझाइए।

____

____

2.12 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

निराला जी समर्थ काव्यभाषा के सृष्टा रहे हैं। भाषा पर उनका गहन अधिकार था, अतः प्रत्येक अनुभूति को तदनुकूल अभिव्यक्ति प्रदान करने में उन्हें यथेष्ट सफलता मिली है। निराला की भाषा में एकरसता न होकर विविध ा रूपता प्राप्त होती है, इसीलिए वह आअंत प्रभावोत्पदक प्रतीत होती है। उन्होंने सहज, सुगम भाषा को परीयता दी है, यों कभी–कभी उन्हें यह अनुभव होता था कि भाषा का बहुत सरलीकरण नहीं होना चाहिए। इसी ध्येय से प्रेरित होकर 'सरोज स्मृति' में वे 'उन्नीस' की जगह "ऊनविंश" का प्रयोग करते हैं। इन विभिन्न प्रयोगों के माध यम से निराला की रचना प्रक्रिया का और उनकी मनः स्थिति का समाज मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया जा सकता है।

2.13 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला के भाषा सौष्ठव को समझाइए।
2. निराला की भाषिक प्रकृति पर प्रकाश डालिए।
3. निराला की भाषा विविधता पर प्रकाश डालिए।
4. निराला के भाषा शिल्प को समझाइए।

2.14 नियत कार्य/गतिविधियाँ

थ्नराला की काव्यभाषा को समझने के लिए निराला के काव्य पर विविध लेखकों एवं समीक्षकों द्वारा लिखी गई पुस्तकों की सहायता ली जा सकती है।

2.15 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

2.15.1 चर्चा के लिए बिन्दु

2.15.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

2.16 सन्दर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1. छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन सुकुमार विमल

2. छायावादी काव्य का व्यावहारि सौन्दर्यशास्त्र– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

3. प्रबंध प्रतिभा– निराला

4. प्रबंध प्रद्म– निराला

5. रीतिविज्ञान– डॉ. विद्यानिवास मिश्र

6. छायावाद पुनर्मूल्यांकन–सुमित्रानंदन पंत

7. रवीन्द्र कविता कानन– निराला

8. निराला की काष भाष– डॉ. शिवशंकर सिंह

9. निराला के काव्य बिम्ब और प्रतीक–डॉ. वेदबुल शर्मा

10. निराला और मुक्त छन्द–डॉ.शिवमंगल सिंह

2.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 3.7

2. देखिए 3.10

निराला के काव्य में प्रकृति–चित्रण का वैशिष्ट्य

संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 निराला का प्रकृति प्रेम

3.4 प्रकृति चित्रण के प्रेरणा स्त्रोत

3.5 निराला द्वारा चित्रित प्रकृति के विभिन्न रूप

3.6 निराला के प्रकृति चित्रण का वैशिष्टय

3.7 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

3.8 अपनी प्रगति जाँचिए

3.9 नियत कार्य/गतिविधियाँ

3.10 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

3.11 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.1 प्रस्तावना

महाकवि निराला का काव्य प्रकृति–चित्रण की दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं; उन्होंने जहाँ–जहाँ अन्तर्लीन होकर प्रकृति का चित्रण किया है, वहाँ उनकी कविता शिखर पर पहुँच गई है। प्रकृति–चित्रण करते हुए निराला जी प्रायः दार्शनिक और आध्यात्मिक स्तर का स्पर्श करते हुए दिखाई देते हैं। (उदाहरणार्थ दृष्टव्य है "कौन तम के पार" शीर्षक गीत) इसी के साथ–साथ वे गाँवों की प्रकृति का जब चित्रण करते हैं तो लोक संस्कृति से जुड़ जाते हैं ओर लोक भाषा का आश्रय लेते हें। उनका प्रकृति–चित्रण छायावादी काव्य काल में जितना ललित कलित कल्पनाओं से ओत–प्रोत है, परवर्ती कृतियों में उतना ही यथार्थ ओर विद्रय भी है। प्रकृति की इतनी विविधता किसी अन्य कवि में दृष्टव्य नहीं है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है विद्यार्थियों को निराला–काव्य में चित्रित प्रकृति के भिन्न–भिन्न दृश्यों, रूपाकारों और कवि की ताद्विषयक मनोवृत्तियों से अवगत कराना। इसके लिए एक ओर प्रकृति परक कविताओं का सघन पाठ अपेक्षित है और दूसरी ओर उनकी व्याख्या–विवेचना भी। इस इकाई में भरसक यह प्रयास किया गया है कि निराला के प्रकृति–चित्रण का वैशिष्ट्य उद्घाटित हो जाए।

3.3 निराला का प्रकृति प्रेम

हिन्दी में प्रकृति–विषयक स्वतन्त्र काव्य का प्रायः अभाव सा रहा है। सूर–तुलसी प्रभृति महाकवियों के काव्य की प्राण चेतना थी प्रकृति, किंतु भक्तिकाल के नैतिकता–प्रधान काव्य में प्रकृति की स्वतन्त्रता की उपेक्षा हुई। सन्त–साहित्य में चूँकि संसार को माया बताया गया, इसलिए प्रकृति–सौन्दर्य एक छलावा ही लगा। सगुण भक्तों में कृष्ण–भक्ति शाखा के कवियों ने अवश्य ही अपने आराध्य कृष्ण की लीला भूमि ब्रज के प्राकृतिक सौन्दर्य का अंकन किया है। रीतिकाल में प्रकृति का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। वह उद्दीपन रूप में कवि के इंगित पर नर्तन करने वाली कठपुतली मात्र है।

हिन्दी कविता में सर्वप्रथम द्विवेदी युग के कवियों ने प्रकृति के स्वतन्त्र अस्तित्व को स्वीकार किया। इसके अनन्तर छायावादी कवियों ने अपने काव्य में प्रकृति–चित्रण को विशेष रूप से अपनाया। पल–पल परिवर्तित ऋतुचक्र के ये सारे आरोह–अवरोह प्रत्येक छायावादी कवि के काव्य में खोजे जा सकते हैं। निराला में भी वे भरपूर मात्रा में हैं, पर अपने निरालेपर के साथ।

निराला–काव्य की लगभग समस्त प्रवृत्तियों का दिग्दर्शन उनके प्रकृतिपरक काव्य में होता है। उन्होंने अपनी रचना–प्रक्रिया में प्रकृति को सदैव सहचरी बनए हैं। चूँकि वे बंगाल और अवध के ग्रामींण अंचलों में पर्याप्त समय तक रहे, अतः वहाँ की प्रकृति–रमणी ने उन्मुक्त रूप से उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया।

सन् 1947 ई. में डॉ. रामविलास शर्मा, ने निराला के बादल तथा बादल–राग के विषय में उसका उल्लेख करते हुए कहा–

"उन्होंने बंगाल अवध (वैसावाड़ा) दोनों की ही बरसात देखी। शायद कोई भी हिन्दी का कवि मूसधार पानी में इतना ना भीगा होगा। बाहर घूमते हुए बारिश आ गई तो उन्हें घर लौटने की जरा भी चिन्ता नहीं। बादल घिरे हों तो भी दोस्तों को यह समझाते हुए कि पानी बरसने की जरा भी शंका नहीं है, वह उनके साथ घूमने देते।"

अन्य छायावादी कवियों की भाँति निराला ने प्रकृति का भरसक मानवीकरण किया। 'संध्या–सुन्दरी' जुही की कली, वनबेला नामक कविताओं में मानवीकरण की छटा और प्रकृति का अलंकरण विशेषरूप से किया गया है।

'संध्या–सुन्दरी' कविता में संध्या का यह चित्रण कदाचित् सारी भारतीय भाषाओं की रचनाओं में बेजोड़ है। इतनी व्यापक चित्रपटी और इतनी सहज कला जहाँ छायावाद के युग में अलभ्य थी, वहाँ इतने वर्ष बाद आज भी दुष्प्राप्य है।

सामाजिक स्वाधीनता और आत्समुक्ति से छायावादी कवि को प्रकृति का जो नया परिचय प्राप्त हुआ, वह एक नूतन जीवन–दृष्टि के सूचक है। छायावाद कवि को ऐसा लगा कि यह आलोक स्वयं प्रकृति से ही आ रहा है। कवि को संसार का नया परिचय प्राप्त हुआ। इसीलिए निराला की प्रकृति चित्त का उदात्तीकरण करती है। 'तुलसीदास' के सन्दर्भ में कई समीक्षकों ने इस तथ्य की ओर संकेत किया है। वस्तुतः "निराला के तुलसीदास के सम्मुख जब चित्रकूट के तरुवीरूप आए तो उनके मन में नए भाव पैदा हुए। प्रकृति ने उसने ऐसी अभूतर्पूव भाषा में बातें की कि वे उसे अनुभव करते हुए भी ठीक–ठीक न समझ सके; जैसे ऊषा को कुहरे का टेढ़ा जाल घेरे हो, उसी तरह प्रकृति भी एक ऐसी भाषा में बातें कर रही थीं, जो पूरी तरह समझ में न आती थी–"

"वह भाषा–छिपती 'छवि सुन्दर

वह खुलती आभा में रंग कर

वह भाव कुरल कुहरे–सा भरकर भाया।"

फिर भी प्रकृति ने उन्हें एक ऐसी चेतना का पता दिया, जिसके स्पर्श से ही पाषाण–खण्ड हार बनते हैं, नहीं तो प्रकृति में झरने, झाड़ी, नदी, कगार, पशु–पक्षियों के बिहार को छोड़कर और कुछ नहीं है।

प्रकृति के प्रति कवि का यह अपना एक विशिष्ट दृष्टिकोण है। रहस्यात्मकता के कारण कहीं–कहीं निराला की प्रकृति का चित्र अतिरंजित हो उठा है, फिर भी, प्रकृति के ये चित्र बड़े सुन्दर बन पड़े हैं।

निस्संदेह "निराला ने प्रकृति के जड़चित्रों में अपनी कवि–कल्पना से जीवन–स्पंदन भी भरा है। कहीं–कहीं प्रकृति के कई चित्र बड़े सुन्दर बन पड़े हैं। कहीं–कहीं पंत की तरह निराला जी प्रकृति के व्यवहार व्यापारों के प्रति मात्र कुतूहल प्रकट करते हैं।, किन्तु पंत से निराला का अन्तर यह है कि निराला ने प्रकृति के व्यापक विशद रूप का अंकन किया है। प्रकृति के कठोर एवं कोमल दोनों रूप उन्हें समान रूप से प्रिय हैं। उनके काव्य में एक ओर 'जुही की कली' की सुरभि है, तो दूसरी ओर 'बादल राग' की गर्जना भी। प्रकृति की ओर निराला का एक और दृष्टिकोण है। उन्होंने प्रकृति को रहस्यवादी और अद्वैतवादी दृष्टि से देखा है। आत्मा ओर परमात्मा के रूप का सुन्दर चित्रण 'जुही की कली' शीर्षक कविता में हुआ है। "

निराला जी बहुत दिनों तक बंगाल में रहे थे। अतः प्रकृति वर्णन में वहाँ का प्रभाव कहीं–कहीं लक्षित होता है।

एक बात और निराला की कृतियों में प्रकृति के प्रति दुहरा आकर्षण पाया जाता है। एक ऐसा आकर्षण, जहाँ प्रकृति के तत्व एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो जाते हैं, जैसे–रात दिन के प्रति आकर्षित है, जल पृथ्वी के प्रति, किरण लहर के प्रति, और लहर कमल के प्रति। अन्य कृतियों से 'अनामिका' में यह प्रवृत्ति अधिक मुखर हो उठी है। कहीं–कहीं इस आकर्षण में ऐन्द्रियता का भी पुट पाया जाता है, जैसे चन्द्रमा और धरती के मिलन में। निराला जी की कविता में प्राकृतिक वातावरण का सुन्दर चित्रण हुआ है। वह रम्य भी है, जैसे 'सखि बसंत आया' 'शोफलिका', 'यमुना के प्रति, देवी सरस्वती आदि। दूसरी ओर उनकी प्रकृति विषय भी है, जैसे– 'गहरी विभावती शीत की, खुला आसमान आदि। कुल मिलाकर उनकी प्रकृति शुभ है।'

निराला ने "तुलसीदास" व "राम की शक्ति–पुजा" में भावनाओं की भित्ति पर जिस वातावरण की सृष्टि की है, वह अद्भुत है। जिस प्रकार मन की भावना से सारा सृष्टि प्रसार अपना रूप बदल लेता है, उसका सर्वोत्तम रूप 'तुलसीदास' मिलता है। प्रकृति के आधार पर खड़ी हुई ये सृष्टियाँ भावनाओं के उत्थान–पतन स्पष्ट करती हैं।

तात्पर्य यह है कि निराला जी ने प्रकृति को कई रूपों में देखा है। उनका प्रकृति–चित्रण प्रायः सोद्देश्य रहा है। उन्होंने प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करके उसके भीतर निहित तत्वों का अनेक प्रकार से निरूपण किया है। उनके प्रकृति–चित्रण की अनेक पद्धतियाँ रही हैं। निराला काव्य में प्रकृति के यथार्थ और काल्पनिक दोनों ही प्रकार के वर्णन उपलब्ध हैं।

निराला के सृजनात्मक स्वर को वाणी देने के लिए प्रकृति ने अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रकृति से ही उनके काव्य में महान् प्रेरणा ग्रहण की है।

प्रकृति का उल्लसित और वैभवपूर्ण स्वरूप मानव जीवन के उल्लास और आनन्द का मूल उत्स है। निराला का प्रकृति चित्रण नव–निर्माण की ठोस भूमिका के रूप में आया है, चाहे उसमें प्रकृति का उल्लसित रूप हो अथवा दुर्धष रूप। निराला ने अन्तः प्रकृति को बाहल प्रकृति से प्रेरित (परस्पर अन्योन्याश्रित) दिखाया है। तुलसीदास चित्रकूट की प्रकृति की शोभा देखकर तन्मय हो जाते हैं और उनके मन में ज्योतिः प्रपात झरने लगता है। वनबेला को देखकर वही समानुभूति निराला के अन्तर्मन में जाग्रत हो जाती है।

निराला के काव्य में प्रकृति लोकमंगल कारिणी है। जीवन में नव–प्रभात का उदय एक व्यक्ति के लिए नहीं होता। करुणा की किरणों से पता नही कितने क्षुब्ध हृदय पुलकित होते हैं? गिनती नहीं हो सकती।

निराला काव्य में प्रकृति बहूद्देशीय भूमिका में दिखती है। निराला का प्रकृति–वर्णन उनके विचारों को यथातथ्य रूप में प्रकट कर देता है। एक प्रकार से वह 'निराला–फिलॉसफी' का दप्रण है। उनके प्रकृति–चित्रण में प्रकृति के मानवीकरण की प्रवृत्ति विशेष रूप से दिखलाइ पड़ती है। प्रकृति का प्रेरक रूप उन्होंने प्रत्यक्ष किया है। यह प्रेरणा प्रायः दार्शनिक, सामाजिक एवं सौन्दर्यपरक क्षेत्रों की दिशाओं में प्रकट हुई हैं। निराला जी का प्रतीकात्मक चित्रण ही उनका वैशिष्ट्य है। अतः परम्परगत प्रकृति–वर्णन की अपेक्षा उसका स्वच्छन्द रूप निराला जी के काव्य में अधिक विशदता से प्रतिफलित हुआ है।

3.4 प्रकृति चित्रण के प्रेरणा स्रोत

निराला का प्रकृति प्रेम उनके वेदांत लोक सांस्कृतिक लगाव और प्राचीन साहित्य के जुड़ाव से प्रेरित है। संस्कृत से लेकर प्रत्येक भाषा की कविता और प्रकृति का बहुत घनिष्ट संबंध है।

कांग्यम में (पृथिवी सूक्त में) ऋषि कवि ने प्रकृति मर पृथिवी की वन्दना करते हुए कहा था–

"दुल्हा चिछ या वनस्पतीन्क्ष्मया दर्धर्ष्य ओलासा

यत ते अभ्रस्य विद्यतो दिवो वर्षन्ति वृष्टयः।"

अर्थात् जीवधात्री हमारी या, दृढ़ा है, विश्वंभरा है। द्योरछन्दा भूमि सागर अंबरा है। जिसकी गोद में शस्यम श्यामल प्राण खेले खुले हैं जिसके दूध से सब धुले हैं। वही प्रतिमा प्रभा या दिव्य हेमवती उमा है। मेघवर्णी वृष्टि झंझा रसमयी रूपांबरा है। वह ऊर्ध्वगामी मन वनस्पति की शिख है। वह आग्नेयी है, सुधावर्षी सोमधारा है, वह पार्वतेयी चेतना है। कहीं वह स्रोतस्विनी हैख कहीं तेजस्विनी है। वह क्षमाशीला, सती तपसिन, स्वधा, स्वाहा उर्वरा है।

भूमि सूक्त ऋषिकवि अथर्वा ने वसुधा की वन्दना करते हुए कहा है कि यह मधुवंती हैं नदी की धाराएँ हैं इसकी बाहें। सागर हैं उसका आँचल। यह शास्र श्यामला धरती लक्ष्मीरूपा है, अन्नपूर्ण है, नवजीवन प्रदायिनी है और यह कृषकों की वास्तविक सीता सावित्री है।

यह उन्ममय सन्ता का स्वर है। यही प्राणमय चिन्मय निर्झर है। यह पृथिवी रसस्वदा मैमेयी है। यही आँगन में सोमवृष्टि करती है। उसके स्पर्श मात्र से स्पंदन पैदा हो जाता है।

उसी वैदिक परंपरा से प्रेरित होकर सस्कृत वाली प्रकृति तथा अपभ्रंश के कवि निरंतर प्रकृति चित्रण करते रहे। कालिदास, माध, भास, श्रीहर्षा, वाण, भवभूति, शंकराचार्य, जयदेव आदि ने जो प्रकृति–परिक्रमा की उसका गहरा प्रभाव हिन्दी कवियों पर पड़ा। हिन्दी कवियों में जायसी के बारहमासा, तुलसीदास, सूर के ऋतु वर्णन सेनापति, देव, पद्माकर, घनानंद आदि के षउकत वर्ण और भारतेन्दु, मैथिलीशरण, प्रसाद, पंत, महादेवी, दिनकर, अज्ञेय आदि के स्फुट या विविध वर्णनों को देखते हुए यह सहजतः स्वीकार्य होगा कि प्रकृति की रूपच्छवियों को हिन्दी कवियों ने पूरे मनोयोग के साथ उभारा है। इन पर बंगाल तथा अंग्रेजी का भी कुछ प्रभाव पड़ा है। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक काव्यधारा, जिसका उद्गम राष्ट्र की धरती से होता है, प्रायः प्रकृति प्रेम से ओत–प्रोत रहती है। छायावाद अपेक्षाकृत कुछ अधिक ही प्रकृति–परायण रहा है। इन कवियों का प्रकृति प्रेम देशप्रेम का हेतु प्रतीत होता है। राष्ट्र के मौलिक स्वरूप से मुग्ध ये कवि प्रकृति के प्रति प्रलुब्ध रहे हैं। इन कवियों के प्रकृति–प्रेम का मूल कारण था, व्यक्तिगत स्वतंत्रता की आकांक्षा। घुटन भरे सामाजिक जीवन से त्रस्त होकर ये कवि प्रकृति की ओर मुड़ गए

थे। वस्तुतः छायावादी–प्रेम जड़ सामूहिकता की प्रतिक्रियावश जाग्रत हुआ था। प्रकृति द्वारा इनके जीवन के विभिन्न अभावों की भावनात्मक पूर्ति होती थी। छायावादी कवियों ने प्रकृति को विश्वसुन्दरी कहा ह।। उन्हें प्रकृति से ही सौन्दर्य– विद्यायिनी दृष्टि मिली थी। जड़ प्रकृति उन्हें आत्म चैतन्य की ओर प्रेरित करती रही है। प्रकृति नाना रूप धारण करके इनके काव्य में प्रकट हुई है।

निराला जी की छायावादी कविताओं में प्रकृति का एक आध्यात्मिक पक्ष भी दिखाई देता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने "प्रकृति के आध्यात्मिक मान को छायावाद" माना है। उनके अनुसार निराला जी एक निसर्ग कवि थे। प्रकृति उनके छायावादी सौन्दर्य बोध की मूल हेतु रही है। प्रकृति के सहचर्य वश वे सौन्दर्य स्वप्न दृष्टा तथा कल्पनालीवी कवि बने। प्रकृति–निरीक्षण और उसके सौन्दर्य सम्मोहन के कारण थे तत्व चिंतन की ओर अग्रसर हुए।

निराला जी ने प्रकृति के कोमल और कठोर सभी रूपों को चित्रित किया है। उसके कोमल रूप का चित्रण करते हुए प्रायः उसका मानवीकरण तथा नारीकरण किया है। इसका उदाहरण 'संध्या सुन्दरह', 'जुहीं की कली', 'शेपफालिका' आदि कविताओं में दृष्टव्य है। यहाँ प्रकृति अत्यन्त भावनामयी एवं रूपमयी है। कवि ने उस पर नारीत्व का आरोपण किया है।

निराला जी ने प्रकृति को जीवन में घटित होते दिखाया है। 'तुलसीदास' नामक काव्य में तुलसी में जो सौन्दर्य चेतना और युगीन अन्तदृष्टि जाग्रत होती है, उसका कारण है उनका प्रकृति दर्शन। निराला के अनुसार प्रकृति जड़ हृदय में भी चेतना का संचार कर देती है, जिससे उसका मन ऊर्द्धगामी होकर दर्शन की उदात्त भूमिका पर आरूढ़ हो जाता है। कवि का यह प्रकृति दर्शन उसकी रोमांटिक अनुभूति से प्रेरित है।

निराला का प्रकृति प्रेम उनकी अनुभूति से संबद्ध रहा है। उन्होंने स्वानुभूति तथा पर्यवेक्षण द्वारा प्रकृति का पर्याप्त ज्ञान आर्जित किया था। कहीं–कहीं उन्होंने कवि–प्रोढ़ोक्तियों का भी आश्रय लिया है। उनका प्रकृति चित्रण परम्पराबद्ध भी है और प्रयोगशील भी। इतना निश्चित है कि निराला ने प्रकृति का मात्र कौतुकी दर्शन ही नहीं किया है, बल्कि प्रकृति को आध्यात्मिक उन्नयन का साधन घोषित किया है। उन्होंने प्रकृति रूपों के अनेक स्वप्न दृश्य अंकित किए हैं और इस प्रकार कुरूप का भी सौन्दर्यीकरण किया है। निरालाजी ने प्रकृति को प्रायः आलम्बन रूप में स्वीकार किया है। इसे आचार्य शुक्ल ने 'रसानुभावी' कहा है। बच्चन जी का मत है कि 'जिनके दिल का पौध ा मुरझा जाता है, वे ही प्रकृति को सींचते हैं, ("नींड का निर्माण फिर पृष्ठ......") किन्तु यह कथन निराला पर लागू नहीं होता। उन्होंने जीवन और प्रकृति दोनों में समन्वय किया है।

3.5 निराला द्वारा चित्रित प्रकृति के विभिन्न रूप

बाध्य प्रकृति के विभिन्न रूपों की ओर निरालाजी की दृष्टि गई है। उदाहरणार्थ उन्होंने पर्वतीय प्रकृति को बड़े मनोयोग के साथ अंकित किया है। 'राम की शक्ति पूजा' में उन्होंने महाशक्ति की परिकल्पना करते हुए पर्वत का एक विराट बिम्ब प्रस्तुत किया है–

"देखो बन्धुवर, सामने स्थित लो यह भूधर

शोभित शत हरित गुल्म तृण से शोभित सुन्दर।

पार्वती कल्पना है इसकी मकरंद बिन्दु।"

सागर सरिता एवं निर्झर का भी उनकी कविता में यत्र–तत्र वर्णन हुआ है। इस दृष्टि से उनकी तीन कविताएँ महत्वपूर्ण हैं। (1) तरंगों के प्रति (2) यमुना के प्रति (3) धारा।

कवि ने लहरों का मानवीकरण किया है–

किस अनन्त का नीला आँचल, हिला–हिला कर आती हो तुम सजी मण्डलाकार।

ये लहरें अपनी कटि में शैवाल जाल लपेटे हुए हैं। ये संगीत एवं नृत्य की मुद्रा में दिखाई देती हैं। कवि ने यमुना के 'बिलोल–हिल्लोल, चरण–प्रवाह' का सूक्ष्म चित्रण किया है। निराला को नदी की बाढ़ ओर पावस की प्रगल्भ धारा विशेष प्रिय रही है। उन्होंने 'पंक प्रवाहित सरि' अर्थात् मटमैले पानी से भरी लहराती हुई सरिता के उफान का कई स्थलों पर वर्णन किया। यमुना के तट का वर्णन करते हुए एक बड़ा विलक्षण प्रयोग उन्होंने किया है।

"चल चरणों का व्यकुल पनघट।"

निराला चूँकि बैसवारा एवं बंगाल से संबद्ध थे, इसलिए बाढ़ के जो दृश्य उन्होंने देखे थे, उन्हें अपने प्रचण्ड व्यक्तित्व के अनुरूप ढ़ालते रहे हैं। तात्पर्य यह है कि– 'चंचल तरगिणी की तरल तरंगें उन्हें बहुत प्रिय रही हैं।'

चन्द्र ज्योत्स्ना निराला जी को प्रायः अपनी ओर खींचती रहीं हैं। 'जूही की कली' में जब उनके पवन को चाँदनी की धुली हुई आधी रात याद आती है तो वह उन्मत हो जाता है। निराला ने आकाश के टिमटिमाते हुए एकांकी नक्षत्र को कई बार रूपांरित किया है। 'संध्या–सुन्दरी' कविता में उन्होंने नक्षत्र को निशा सुन्दरी की ऊतकों में गुँथे हुए पुण्य के रूप में चित्रित किया है।

"हँसता है तो ऊपर तारा एक।

गुँथा हुआ वह काले–काले घुँघराले बालों में निशा सुन्दरी का करता था अभिषेक।"

यही एकांकी नक्षत्र 'राम कीं शक्ति पूजा' में श्रीराम को शक्ति प्रदान करते हैं। "चमकतीं दूर ताराएँ ज्यों–ज्यों हों कहीं पास।"

ऊषाकाल निराला को विशेष प्रिय रहा है। उन्होंने पूर्व दिशा में उतरती हुई प्रकाश किरणों को सुरुची पूर्वक उकेरा है। तुलसीदास में वे लिखते हैं–

"देखा नीलम सोपानों पर

नभ के बढ़ती आभा सुन्दर पग धर–धर।"

'परिमल' की एक कविता में उन्होंने "रश्मि चमत्कृत स्वर्णालंकृत नवल प्रभात" के प्रति आकर्षण व्यक्त किया है। 'राम की शक्ति पूज़ा' में राम को जब 'नभ के ललाट पर प्रथम किरण' दिखाई देती है तो उनके भीतर नई अन्तज्योर्ति भर जाती है। " जागी रघुनंदन के छग महिमा ज्योति हिरण।"

मध्यान्ह धूप का वर्णन छायावादी कवियों में केवल निराला जी ने किया है। उनके शब्दों में देखिए–

"प्रखर से प्रखरतर, प्रखरतम

देखती दुपहर की धूप सी।"(परिमल)

वह तोड़ती पत्थर में ऐसी ही दोपहरी है–

"दिवा का तम तमामा रूप, उठी झुलसाती हुई लू रुई सी जलती हूई भू गर्द चिनगी छा गई, प्रायः हुई दुपहर।"

कवि को 'दिनकर के खर किरण जाल', भौवें ताने दिवा का प्रखर रूप ओर उत्तप्त दिग् मण्डल भी प्रिय लगा है।

निराला ने सूर्यास्त और संध्याकाल के कई दृश्य अंकित किए हैं। संध्या–सुन्दरी में उन्होंने उसका मानवीकरण किया है, देखिए–

"दिवसावसान का समय

मेघमय आसमान से उतर रही है

यह संध्या सुन्दरी

परी सी

धीरे–धीरे–धीरे।"

संध्या अम्बर पथ से छाँह सी धीरे–धीरे उतरती हुई यहाँ दिखाई गई है। अन्यत्र भी कवि ने संध्या के पीताम एवं निर्धूम दिगन्त प्रसार का रूपायन किया है।

रात्रि कालीन प्रकृति विशेषतः उसका सघर अन्धकार निराला को प्रिय रहा है। 'रात की शक्ति पूजा' में वे लिखते हैं–

" है अभा निशा उगलता गगन घन अन्धकार

खो रहा दिशा का ज्ञान स्तब्ध है पवन चारे।"

उन्होंने जीवन में अन्धकार यानी वेदना, निराशा का बारम्बार अनुभव किया है। उनके शब्दों में–

"जीवन की गति कुटिल अन्धतम जाल

केवल अन्धकार।"

एक गीत में वे लिखते हैं–

"गहन हैं यह अन्धकारा

खड़ी है दीवाल तम की घेर कर

इस गगन में नहीं दिनकर नहीं हिमकर नही तारा।"

यहाँ बाध्य प्रकृति ओर अन्तः प्रकृति, दोनों एकाकार हो गई हैं।

प्रकृति के विभिन्न काल खण्डों में निराला जी ने सर्वाधिक वर्णन किया है– अर्द्धरात्रि का उनके अनुसार यह बेला कवि को भावाकुल कर देती है।

"अर्द्ध रात्रि की नीरवता में हो जाता जब लीन

कवि का बढ़ जाता अनुराग।

विरहाकुल कमनीय कंठ से

आप निकलता पड़ता तब एक विहाग।''

ऋतु सौन्दर्य के प्रति निराला जी सत्त सचेष्ट रहे हैं। उन्हें सबसे प्रिय रही है वर्षा ऋतु। यों उन्होंने षड़ऋतु का प्रायः एक साथ कि वर्णन किया है जैसे–

'ब्रज बादल

उपल वृष्टि, फिर शीत घोर, फिर ग्रीष्म प्रबल।'

निराला को शरद पूर्णिमा अनछी लगी है। ''शरद पूर्णिमा की विदायी'' कविता में उन्होंने इसे ऋतुओं की रानी कहा है। हेमन्त की ठण्डक, हाड़ तक बेध जाने वाली उसकी शीतलहरी ओर कुहरे की भीषणता का भी उन्होंने वर्णन किया है। ओस–बिन्दुओं के प्रति उन्हें लगाव महसूस हुआ है। जैसे–''कुसुम कपोलों के वे लोल शिशिर कण।'' इसे उन्होंने गगन का पृथ्वी–चुंबन कहा है ''झरते हैं शिशिर से चुंबन गगन के।''

बसंत निराला की कविता में उल्लास का प्रतीक बनकर आया है। वे यह भी मानते हैं कि यह सौन्दर्य प्रायः कवि कल्पित होता है। 'कवि' नामक कविता में वे लिखते हैं–

''फूलते नहीं है फूल वैसे वसंत में

जैसे तब कल्पना की ड़ालों पर खिलते।''

निराला जी ने लगभग एक दर्जन बसंत विषयक कविताएँ लिखी हैं, जिनमें मुख्य हैं– बासन्ती, बसन्त समीर, दूत अलि ऋतु पति के आए सखि बसन्त आया, सुमन भरि न लिए सखि बसन्त गया, सखी सी ये डाल बसन बासन्ती लेती आदि–

तुम और मैं कविता में कवि ने 'गन्ध कुसुम कोमल, पराग', 'मृदु गति मलय समीर', 'पिक कल कुँजन आदि का सुन्दर उल्लेख किया है।' तूलसीदास में चित्रकूट की यही बासन्ती प्रकृति चित्रित हुई है–

'पिक कुहरित ड़ाल–ड़ाल

है हरित विटप सब सुमन माल

हिलती लतिकाएँ ताल–ताल पर सस्मित

पड़ता उन पर ज्योतिः प्रभात हैं, चमक रहे सब कनक गात।'

'बेला' की एक गजल में ले यही दृश्य प्रस्तुत करते हैं–

''पल्लव–पल्लव हरियाली फूटी

बोली कलि की प्याली

मधु भरकर तरु पर उफनाई।''

ग्रीष्म का वर्णन निराला ने सर्वाधिक किया है। उन्होंने लू के तत्व झोंकों का, जलती भू–भूल का एवं प्रचण्ड मार्तण्ड का वर्णन करते हुए एक कविता में ग्रीष्म को 'सिद्ध योगी' घोषित किया है–

भोर जटा पिगल मय

देव योग जन सिद्ध

उगलते आग धरा आकाश।

पावस प्रकृति निराला को बहुत प्रिय है। इस दृष्टि से सर्वोत्तम कविता है, 'बादल राग।' इसमें उन्होंने बादल के अनेक रूपों और ध्वनियों को प्रतिबिंबित तथा प्रति ध्वनित किया है।"

जैसे– 'झर–झर–झर निर्झर गिरि सर में

घर मरु तरु मर्मर सागर में

आनन–आनन में रव घोर कठोर

राग अमर अम्बर में भर, मिज रोर।'

कवि को बादलों का गर्जन और जल प्रवाह दोनों प्रिय हैं। एक ओर सघन घोर गुरु गहन रोर और दूसरी ओर–

"धँसता दल–दल

हँसता है नद खल–खल,

बहता कहता कुल–कुल कल–कल–कल–कल।"

निराला जी का 'बादल–व्यक्तित्व' बादलों के साथ एकाकार हो गया है। मेघ मंद्र ध्वनि ओर जल प्रवाह की ध्वनियाँ उनकी कई कविताओं में भर गई है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं–

(1) "झर–झर झर–झर झर धारा झर"

(2) द्रुत समीर कंपित थर–थर थर।

(3) "झरती धाराएँ झर–झर–झर" (गीतिका)

(4) "उत्ताल तरंगा घात प्रलय घन गर्जन" (परिमल)

(5) "भेरी झर–झर झरर दमा में घोर नकारों की है चोपा।"

(6) "काड़ा काड़ा कड़ सन–सन बन्दूकें, अररर, अररर अररर तोप"।

(7) "छल–छल छल कहता यद्यपि जल वह मंत्र मुग्ध सुनता कल कल।"

(8) नीचे प्लावन की प्रलय धार ध्वनि हर–हर" (तुलसीदास)

(9) 'कुल–कुल कल–कल तलमल–तलमल' आदि।

निराला जी ने इस प्रकार की महाप्राण ध्वनियों का नियोजन सुरुचि पूर्वक किया है और यह घोषित भी किया है कि–

'निर्मल कल–कल में बँध गया विश्व सारा।'

उन्होंने पावस की फुहारों के साथ-साथ चमकती हुई बिजली, कूकते हुए पपीहों की ध्वनि, मेढ़कों की टर्र-टर्र आवाज आदि को भी सूक्ष्मता पूर्वक पकड़ा है। तात्पर्य यह है कि प्रकृति का प्रायः प्रत्येक रूप निराला की कविता में अंकित हुआ है। उनकी पावस विषयक प्रमुख कविताएँ हैं–

(1) 'अलि घिर आये घन पावस के'(अपरा)

(2) 'घन आये, घनश्याम न आये'(गीत गुंज)

(3) 'बरसे झूम-झूम कर सावन'(गीत गुंज)

(4) 'श्याम गगन नव घन मण्डलाए'(सांध्य का कली)

(5) 'गगन मेघ छये'

(6) 'फिर नभ घन घहराए'

(7) 'बरसो मेरे आँन बादल' (सांध्य का कली) आदि।

निराला जी ने बादलों को विप्लव का प्रतीक माना है। 'जलदि के प्रति' शीर्षक कविता में उसे नवजागरण का बाहक कहा गया है। इनका एक रूप सुन्दर है और दूसरा भीषण। कवि कहीं 'नील सिंधु में खिले कमल दल' से उनकी उपमा देता है, कहीं 'हरित ज्योति चपला' और 'किरण तूलिका से अंकित इन्द्र धनुष' का वर्णन करता है तो कहीं मूषलधार वर्षण, प्रचण्ड बज्र घोष, ओला वृष्टि आदि का वर्णन करता है। तात्पर्य यह है कि ऋतुप्रकृति के इन सभी रूपों के प्रति निराला जी ने अपनी आसक्ति व्यक्त की है।

पशु-पक्षियों और वनस्पतियों के प्रति भी उनके मन में आकर्षण रहा है। उन्होंने कुछ काव्योपम पशु-पक्षियों का उल्लेख करते हुए काव्येतर (क्षेत्रिय) पक्षियों के भी नाम गिनाय हैं जैसे– भुजैल, पिड़की, बया, रुक्मिन, ढ़ेख, महोख, सवन लोमड़ी, स्पार, चौमड़ा, नीलगाय, लकड़बग्घा, आदि। भ्रमर खद्योत तितली आदि भी यत्र-तत्र चित्रित हुए हैं। तात्पर्य यह है कि प्रकृति को उन्होंने पूरे आकार में ग्रहण किया हैं।

वनस्पतियों के प्रति निराला जी निरन्तर आकृष्ट दिखाई देते हैं। निराला की साहित्य साधना भाग-एक में उनकी जीवनी प्रस्तुत करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है कि जब वे लखनऊ में 'सुधा' का सम्पादन (1928-1940) करते हुए निवास कर रहे थे, उन दिनों वे लखनऊ के उन पार्कों और बगीचों को देखने अवश्य पहुँचते थे, जिनमें मौसम के अनुसार जुही, गुलाब, शेफालीख रजनीगंधा, मोगरा, चमेली आदि खिले हुए होते थे। निराला जी ने अनेक प्रकार की वनस्पतियों का वर्णन किया है। वे रूप रंग और गंध, इन तीनों गुणों के अनुसार वनस्पति का चुनाव करते रहे हैं।

इस दृष्टि से उन्होंने सर्वाधिक महत्व दिया है, जुही, (चूपिका) रजनीगंधा अथवा यामिनीगंधा को। "जुही की कली" कविता में उन्होंने उसका एक रूपक रचा है। कवि के अनुसार–

"विजन वन वल्लसी पर
सोती थीं सुहाग भरी
अमल कमल कोमल तनु तरुणी
जुही की कली

दृग बंद किए

सिकिल पतांक में।"

इस कविता में जुही को योवन मदमाती षोडसी सुन्दरी के रूप में चित्रित किया गया है। उसका प्रेमी पवन मिलनातुर होकर दूर देश से चलकर अर्द्धरात्रि में उसके पास पहुँचता है, पर निद्रालस्त जुही जब नहीं जागती तो पवन उसे झकझोरता है। जागने पर जुही जब पवन को अपने निकट देखती है तो खिल उठती है। इस कविता में एक अन्तः कथा हैं, पवन–प्रवाह और जुही के उल्लास जो विकास का एक रूपक है। स्वयं निराला जी ने उसकी व्याख्या की है, उसके अनुसार जुही की कली आत्म तत्व की प्रतीक है और पवन किसी लोकोत्तर सत्ता का प्रतीक है। अर्थात् यह कविता जितनी रोमांटिक है, उतनी ही आध्यात्मिक। यह भी स्मरणीय है कि यह निराला की प्रथम रचना है, जिसके माध्यम से 1916 में उन्होंने मुक्त छन्द का प्रवर्तन किया था। यह कविता आरम्भ में सम्पादकों द्वारा लौटा दी गई थी। इसीलिए इसका प्रकाशन बहुत बिलम्ब से हुआ। कुछ विद्वानों ने इस कविता को निराला के निजी मिलन प्रसंग से भी जोड़ा है युवा कवि निराला दूर देश (महिषादल) से चलकर अपनी प्रिया के पास पहुँचते हैं और फिर दोनों रस मग्न हो जाते हैं इसका सूक्ष्म संकेत भी इन स्मृति बिम्बों से निकाला गया है।

निराला जी को शेफाली भी बहुत प्रिय रही है। 'शेफालिका' कविता में वे कहते हैं–

"बन्द कंचुकी के सब तोड़ दिए प्यार से

यौवन उभार ने

पल्लव पर्यंक पर सोती शेफालि के।"

निराला जी को जिस पुष्प के साथ अपनापन महसूस हुआ है, वह है वन बेला। जंगल में खिला हुआ वन बेला प्रायः अनदिखा रह जाता है। उसे देखकर निराला को लगता है कि मैं भी इसी तरह अलक्षित और उपेक्षित पड़ा हुआ हूँ।

एक अन्य पादप जिसके साथ उन्होंने अभिन्नता स्थापित की है, वह है कुकुरमुत्ता। उन्होंने अपनी लम्बी कविता 'कुकुरमुत्ता' में कुकुरमुत्ता को सर्वगुण संपन्न सिद्ध करते हुए प्रतीक प्रस्तुत किए हैं, उनमें गुलाब है अभिजात वर्ग अथवा विदेशी चका चौंध वाला बाबू वर्ग और कुकुरमुत्ता, है सर्वहारा वर्ग अथवा 'नेटिव' कमल। इस कविता में निराला जी कुकुरमुत्ता से जुड़ गए हैं। वे गुलाब को चुनौती देते हैं, उसका उपहास करते हैं और कुकुरमुत्ता को एक स्वयंभू शक्ति के रूप में स्थापित करते हैं। कुकुरमुत्ता गर्वोक्ति करता हुआ कहता है–

'आप अपने से उगा मैं'

उसका दावा है कि– ओम फलस ब्रह्मावर्त उसी में है। बड़े–बड़े दार्शनिक उसका लोहा मानते हैं। संसार की बड़ी–बड़ी राजधानियाँ उसके पैरों तले हैं। विभिन्न कलाओं में उसकी गति है। उसका पूरा व्यक्तित्व रसमय है। वह दावा करता है कि मैं बड़े काम का हूँ। चीन का बना छाता भारत का राजछत्र और पैरासूट मेरी नकल में बना है, मेरी आकृति विष्णु के सुदर्शन चक्र, यशोदा की मथानी, राम के धनुष और बलराम के हल जैसी है। मेरा आकार नाव के तल्ले, तराजू के पल्ले और नौका के पाल जैसा है। मैं जब चाहता हूँ पार लगा देता हूँ, या मजध ार में डुबो देता हूँ। कुकुरमुत्ता संसार के विभिन्न वाद्ययंत्रों से अपनी तुलना करता है, विभिन्न नृत्य कलाओं का परिचय देता है और कहता है 'सब में मेरी ही गाठ' लगी हुई है। चूँकि उसके शरीर में काष्ठ नहीं है, केवल रस है, इसलिए सब उसी के रस में डूबे हुए हैं, सब उसी से सफेदी प्राप्त करते हैं। कुकुरमुत्ता का कलिया–कबाब तो इतना लजीज सिद्ध होता है कि नबाव अपने बगीचे में गुलाब की जगह कुकुरमुत्ता लगाने का निर्णय लेता है, किन्तु

तभी माली यह सविनय निवेदन करता है कि कुकुरमुत्ता उगाए नहीं उगता अर्थात् वह एक नैसर्गिक निधि है। निष्कर्ष यह है कि निराला जी ने अनेक फूलों, लताओं, वृक्षों तथा स्फुट वनस्पतियों के प्रति अनुराग प्रकट किया है। जिन वनस्पतियों का उन्होंने ज्यादा उल्लेख किया है, उनमें है कुंद, बेला, मल्लिका, मालती, पलास, कुरबक, पाटल, शतदल, बकुल, कुमुद, हरसिंगार, कर्णिकार,चमेली, माघवी, केतकी जयालक्तंकख कचनार आदि। जंगली पुष्पों में उन्होंने झाऊ बहेड़ा को भी याद किया है और कई विदेशी पुष्पों को भी।

निराला जी ने कुछ वनस्पतियों का उल्लेख करते हुए जाने–अनजाने त्रुटियाँ भी की है जैसे उन्होंने कुरबक पुष्प को केतकी पुष्प मान लिया है, जबकि वह जंगली 'कटसरैसा' का फूल होता है।

निराला जी ने प्रकृति के प्रायः सभी रूप चित्रित किए हैं। शस्यश्यामला प्रकृति का भी और बीहड़ का भी। उनके काव्य में चाँदनी रात चित्रित हुई है तो गर्मी की दुपहरी भी। उन्होंने ज्योति, अधंकार, आँधी, बाढ़, इन्द्रधनुष, बसंत, पतझड़ यानी प्रकृति के सर्वस्व का साक्षात्कार किया है। निराला की प्रकृति एक मुद्रा नहीं है, बल्कि एक जीवंत संवेदना संचार है। उन्होंने परम्परा निर्वाह के लिए केवल नाम गणना नहीं कराई है, बल्कि प्रकृति के साथ आत्मीयता स्थापित की है। उनकी प्रकृति तंग भूमि एवं अवध की धरती से संबंधित है। यह प्रकृति उनकी मनःस्थिति के अनुसार बराबर बदलती रही है। चूँकि उनकी अधिकतर कविताएँ भावावेग से जुड़ी हैं, इसलिए प्रकृति का विराट रूप उन्होंने ज्यादा उभारा है। 'राम की शक्ति पूजा' में रात का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं–

उगलता गगन घन अंधकार

खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार।

अप्रति हत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल

भू–धर ज्यों ध्यान मग्न केवल जलती मशाल।

यह आवेग विशेषरूप से चित्रित हुआ है हनुमान की उड़ान के प्रसंग में। हनुमान जी पवन के पुत्र हैं। ये कैलाश पर आक्रमण करने जा रहे हैं। उनकी उड़ान से चारों ओर एक तूफान सा पैदा हो जाता है। समुद्र, पृथ्वी और आकाश सब हिल जाते हैं। कवि के शब्दों में–

"शत् घूर्णवर्त तरंग भंग उड़ते पहाड़

जलराशि राशिजल पर चढ़ता खाता पहाड़।

तोड़ता बंध, प्रतिसंघ धरा हो स्फीत वक्ष

दिग्विजय अर्थ प्रतिपल समर्थ बढ़ता समक्ष।"

यहाँ वात्या चक्र का वर्णन किया गया है– जो निराला के तूफानी व्यक्तित्व की देन है।

3.6 निराला के प्रकृति चित्रण का वैशिष्ट्य

प्राप्त तथ्यों से सिद्ध है कि निराला की कविता में प्रकृति के भाँति–भाँति के दृश्य अंकित हुए हैं। उनकी छायावादी कविताओं में बासन्ती प्रकृति है। वहाँ रह रहकर परियाँ, अप्सराएँ तथा दिग्कुमारिकाएँ उतरती हैं। चारों ओर परिमल बिखरा हुआ है, अर्थात् सब कुछ बड़ा रमणीय और शोभन है। उनकी परवर्ती कविताओं में देहाती, कुरूप तथा बीभत्स प्रकृति भी है। एक ओर उन्होंने तुलसीदास में जहाँ चित्रकूट की दिव्य प्रकृति का वर्णन किया है यथा–

'मग में पिक कुहरित ड़ाल–ड़ाल।'

तो दूसरी ओर 'स्फाटिक शिला' नामक कविता में उसी प्रकृति का कुरूप वर्णन भी किया है। एक ओर 'तट पर' विजयनी का चित्रण करते हुए उन्होंने संघस्नातर, की छवि अंकित की है तो दूसरी ओर 'खजोहरा' नामक कविता में सरोवर में स्नान करती हुई एक युवती की दुर्दशा भी उन्होंने की है। उनकी पावस प्रकृति रम्य भी है और भीषण भी। बहुत दिनों तक दुर्दिन होने के कारण गॉव की जनता पीड़ित हो गई है। जिस दिन वर्षा थमती है तो सबको राहत मिलती है। निराला लिखते हैं– "बहुत दिनों बाद खुला आसमान।"

यह भी उल्लेखनीय है कि प्रकृति देवी को निराला ने भगवती सरस्वती की उपमा दी है। 'देवी सरस्वती' नामक कविता में वे कहते हैं कि– यह खुली हुई गोचन भूमि भगवती का आँचल है। लहलहाती हुई हरी भरी फसलें देवी की वीणा है। इस धरती को जब जितनी बार जोता जाता है, लगता है वीणा से तरंगें उट रहीं हैं–

"बाँह–बाँह की वीणा बजी सुहाई

हरे भरे खेतों की सरस्वती लहराई।"

अपने प्रसिद्ध गीत 'भारती जय विजय करें' में निराला जी ने समूची भारत भूमि को भारत माता के रूप में अंकित किया है। हिमालय उनका किरीट है। वन–उपवन उनके बेल बूटेदार आँचल की तरह हैं। गंगा, यमुना की धाराएँ उनके गले में पड़ी मुक्ता माला जैसी हैं। तीनों ओर के समुद्र उनके पगपखार रहे हैं। लंका उनके चरणों में पड़े हुए कमल सदृश्य है। इस प्रकार के सांग रूपक निराला के प्रकृति प्रेम, राष्ट्र प्रेम और उनके कला–कौशल के प्रमाण हैं।

निराला के प्रकृति–चित्रण की एक और विशेषता है। वे अन्य छायावादी कवियों की तरह प्रकृति पर्यवेक्षण करते हुए केवल कल्पनालोक में ही विचरण नहीं करते, बल्कि बीच–बीच में धरती पर भी उतर आते हैं। उदाहरण के लिए दृष्टव्य है– 'सखि बसन्त आया' नामक गीत। इसमें पहले ये लता, मुकुल, परिमल, भ्रमर, कोकिल, शीतल मंद सुगंध समीर आदि का वर्णन करते हैं। तभी उन्हें ध्यान आ जाता है, उस किसान की याद आती है जो बसन्त ऋतु में रबी की पकी हुई फसल को देखकर प्रसन्न हो उठा है। निराला लिखते हैं–

'स्वर्ण शस्य अँचल पृथ्वी का लहराया,

सखि बसन्त आया।'

इस प्रकार स्पष्ट है कि निराला जी ने प्रकृति को अपने परिपूर्ण रूप में ग्रहण किया है। उन्होंने अपनी अन्तः प्रकृति के अनुरूप बाह्य प्रकृति का चित्रण किया है। उनकी यह प्रकृति काव्योंपम है और स्वानिभूति में केन्द्रित अत्यन्त यथार्थ भी। प्रकृति की इतनी विविध रूपता और किसी कवि में सुलभ नहीं है। हिन्दी कवियों में प्रकृति को प्रायः आलम्बन रूप में ग्रहण किया है। कहीं–कहीं वह दृष्टांत रूप में प्रस्तुत हुई है। पंत जी ने अवश्य प्रकृति को बहुत विस्तार के साथ चित्रित किया है, किन्तु उनकी प्रकृति मूलतः कमनीय है। निराला ने प्रकृति के कोमल, कठोर, सुन्दर–असुन्दर सभी रूपों को अंकित करके अपनी एक विशिष्ट छाप छोड़ी है।

बोध प्रश्न–

1. निराला प्रकृति प्रेमी हैं, संक्षिप्त में समझाइए।
2. निराला ने प्रकृति के कौन–कौन से रूपों का चित्रण किया है?

3.7 इकाई सारांश/स्मरण योग्य बातें

इस इकाई में कवि निराला की प्रकृति परक रचनाओं और उनकी प्रमुख उपलब्धियों का विवेचन किया गया है। इन तथ्यों से अवगत हो जाने पर यह स्पष्ट हो जाएगा कि निराला का काव्य उनकी अन्तर्बाह्य प्रकृति का दर्पण है। उन्होंने जड़ प्रकृति का दार्शनिक ओर आध्यात्मिक विवेचन किया है। उनके काव्य में प्रकृति के विभिन्न रूप अंकित हुए हैं, जैसे– विभिन्न ऋतुएँ, कालखण्ड, वनस्पतियाँ, पशु–पक्षी और विभिन्न दृश्य। उनकी प्रकृति सुन्दरम् भी है और सत्यम भी। वह आश्रम भी है ओर आलम्बन भी। बंगाल से लेकर अवध तक की सारी प्रकृति उनकी कविताओं में नाना रूप धारण करके प्रकट हुई है। इन बिन्दुओं का स्मरण करना अत्यावश्यक है।

3.8 अपनी प्रगति जाँचिए

1. निराला को प्रकृति चित्रण की प्रेरणा कहां से मिली? समझाइए।
2. निराला द्वारा चित्रित प्रकृति के विभिन्न रूपों पर प्रकाश डालिए।
3. निराला के प्रकृति चित्रण के वैशिष्ट्य को समझाइए।

3.9 नियत कार्य/गतिविधियाँ

निराला के काव्य में विविध प्रसंगों में प्रकृति का चित्रण मिलता है। अतः प्रकृति चित्रण को समझने के लिए निराला की काव्य रचनाओं तथा विविध समीक्षकों की पुस्तकों का सहारा लिया जा सकता है।

3.10 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

इस इकाई के अध्ययन के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्प टीकरण की मांग कर सकते हैं, उन बिन्दुओं को नीचे अंकित कर सकते हैं।

3.10.1 चर्चा के लिए बिन्दु

3.10.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

3.11 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1. कवि निराला– आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी
2. निराला डॉ. रामविलास शर्मा
3. अलक्षित निराला–डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
4. निराला की साहित्य साधना (3 खण्ड) – डॉ. रामविलास शर्मा
5. क्रांतिकारी निराला–डॉ. बच्चन सिंह
6. निराला की आत्मकथा– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
7. निराला का व्यक्तित्व– कृतित्व डॉ. धनंजय वर्मा
8. निराला समग्र– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
9. निराला का अलक्षित अर्थगौरव–डॉ. शशिभूषण 'शीतांशु'
10. छन्द छन्द में कुमकुम– बहुवचन, म.गा.अ. हिन्दी विश्व. वर्धा।
11. छायावादी कवियों का व्यावहारिक सौन्दर्यशास्त्र–डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
12. निराला काव्य का अध्ययन–डॉ. भगीरथ मिश्र
13. राम की शक्ति पूजा, कुकुरमुत्ता, भाषा–समीक्ष–डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
14. राम की शक्ति पूजा–डॉ. नगेन्द्र

15. निराला अभिनन्दन ग्रंथ– हेम बरुआ
16. निराला का गद्य–डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
17. कला सृजन प्रक्रिया और निराला–डॉ. शिवकरन सिंह
18. उत्तर संस्कृति दलित विमर्श और निराला–डॉ. अवधेश नारायण मिश्र
19. कवि मनीषी निराला–सम्पादक. डॉ. सुधाकर सिंह
20. निराला काव्य में मानव मूल्य और दर्शन–डॉ. देवेन्द्रनाथ त्रिवेदी
21. महाप्राण निराला–सम्पादक–भूपति राम
22. निराला के काव्य बिम्ब और प्रतीक–डॉ. वीरव्रत शर्मा
23. निराला की काव्य भाषा–डॉ. शिवशंकर सिंह
24. निराला का गीतिकाव्य–डॉ. रामदेव यादव
25. निराला होने का अर्थ–सम्पादक राजेन्द्र कुमार
26. निराला की दो लम्बी कविताएँ–डॉ. जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव
27. युगकवि निराला– सम्पादक रजनीकांत
28. निराला– साहित्य और युगदर्शन– शिवशेखर द्विवेदी
29. निराला– परमानन्द श्रीवास्तव
30. निराला और मुक्तछन्द–शिवमंगल सिद्धन्तकर
31. निराला का कालपयी व्यक्तित्व केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय
32. निराला रचनावली सम्पादक–डॉ. नंद किशोर नवल

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 2.3
2. देखिए 2.5

म.प्र. भोज मुक्त विश्वविद्यालय, भोपाल

एम. ए. पूर्वार्द्ध : हिन्दी

चतुर्थ प्रश्न–पत्र : विशेष कवि (निराला) का अध्ययन

पंचम खण्ड :

इकाई–1. **निराला के काव्य में विद्रोह के स्वर**

इकाई–2. **निराला के काव्य का व्याकरणिक विवेचन**

इकाई–3. **निराला के काव्य में प्रकृति चित्रण के विविध रूप**

लेखक

प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित

....

लखनऊ

सम्पादक

प्रो. हरिमोहन बुधौलिया

एम. ए. पूर्वार्द्ध : **हिन्दी**

चतुर्थ प्रश्न–पत्र : **विशेष कवि (निराला) का अध्ययन**

पंचम खण्ड :

खण्ड परिचय–

इकाई—एक

निराला की काव्य भाषा

इकाई संरचना

1.1 उद्देश्य
1.2 प्रस्तावना
1.3 निराला की काव्य भाषा का स्वरूप
1.4 शब्द योजना
1.5 व्याकरणबद्धता
1.6 निराला की भाषा में सौष्ठव विधायीगुण
1.7 निराला की काव्य भाषा में अन्य विशेषतायें
1.8 इकाई सारांश
1.9 नियत कार्य/गतिविधियां
1.10 चर्चा के बिन्दु/स्पष्टीकरण के बिन्दु
1.11 बोध प्रश्नों की उत्तर माला
1.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.1 उद्देश्य :

इस इकाई का उद्देश्य है कि छात्र जान सकें :

1. निराला के काव्य भाषा की विशेषताओं के बारे में ।
2. निराला के काव्य की शब्द योजनाओं के बारे में ।
3. निराला के काव्य की व्याकरण की विशेषताओं के बारे में ।
4. निराला की भाषा का स्वरूप के बारे में ।
5. निराला की भाषा सौष्ठव के बारे में ।
6. मुहावरे तथा लोकोक्तियों के बारे में ।

7. निराला के काव्य की कतिपय तथा अन्य विशेषताओं के बारे में ।

8. निराला की काव्य में अलंकार-योजनाओं के बारे में ।

9. निराला की काव्य की शब्द शक्तियों के बारे में ।

1.2 प्रस्तावना

निराला अपनी स्वच्छतावादी दृष्टि और उन्मुक्त वृत्तियों के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। वे छायावादी युग के सर्वाधिक प्रयोग शील कवि कहे जा सकते उनकी अनुभूतियों, शैलीयों और छन्दों मे विविधता और विस्तार का आधिक्य है । इस प्रकार भाषा के सम्बन्ध मे निराला ने अपनी स्वतन्त्र अभिरूचि और प्रयोगशीलता का परिचय दिया है निराला काव्य मे भाषा मे एक और शुद्ध संस्कृतनिष्ठता तो दूसरी और ठेठ ग्रामीणता का मणि–कंचन योग है भाषा के सम्बन्ध मे पवित्रवादी दृष्टि निराला की नही है वे किसी शब्द को परित्जयनीय नही मानते निराला जी की भाषा सर्वत्र कोश का अनुकरण नही करती यही कारण है कि उनके काव्य मे निःसंकोच वैविध्य विस्तार एवं अनेकरूपता के दर्शन होते हैं। निराला की भाषा मे सर्वत्र एक अद्भुत दीप्ति मिलती हैं । जिसके कारण उनके शब्द चमकते दिखाई देते हैं " तुलसी की भाषा मे जो प्रसाद तत्व की अतिरिक्त विशेषता प्रायः सर्वत्र मिलती है उसकी कमी निराला ओज से पूर्ण करते हैं । मधुर और कोयल प्रसंगो मे जहाँ वे मंजू ललित पदावली रखते हैं वहाँ भी भाषा मे एक एक तीक्ष्ण अप्रतिहत प्रवाह रहता है । जिसमे उनके पौरूष प्रधान व्यक्तित्व की झलक स्पष्ट दिखाई देती है निराला की भाषा मे गाम्भीर्य है । स्वाभिमान है और वह प्रवाह पुरूषता लेकर चलता है उनकी भाषा स्वतन्त्र चेतना के सजग धरातल पर है । पूर्वाग्रह की कठोर सीमा और वृत्त के पूर्ण बाहर भी जिसमे दृढ व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप दीख पड़ती है । उनके प्रायः सभी गीतों मे भाषा का तारतम्य, सरलता, सुदृढता, पुरूषता, लयात्मक प्रवाह तथा एक स्वरूपगत गति है । भाव और भाषा मे प्रायः सहयोग रहा है परन्तु कहीं कहीं भावों की गहनता के कारण भाषा जटिल हो उठी है परिमल से ले कर गीत गुंज तक की भाषा के प्रवाह मे अलगाव तो अवश्य है परन्तु वहाँ भी भावों की अभिव्यक्ति शैली पर सूदय प्रयोग और कोमल हैं । परूषता के साथ साथ सौन्दर्य का पथ गमन करती हूई इनकी भाषा आध्यात्मिकता की और से निकल कर पूर्ण मानवतावादी बन जाती है निराला के सम्पूर्ण काव्य मे सुर और शब्द का अद्भुत संयोग है निराला जी के काव्य मे शब्द चयन मे सार्थकता, छायात्मकता कही कही उनकी गीत पंक्तियों मे ध्वन्यार्थ व्यंजक कला का भी स्तर ऊँचा है।

भाषा

भावों की अभिव्यक्ति के लिए मानव को भाषा की नितान्त आवश्यकता है । भाषा यदि शरीर है तो भाव आत्मा दोनों का सम्बन्ध अन्योयश्रित है । भाषा भावों को साकारता प्रदान करने का एक मात्र साधन है यह काव्य का उपकरण नही, अभिन्न अंग है । भाष के व्यापक तथा सीमित दो अर्थ लिये जाते हैं । व्यापक अर्थ मे भाषा के अर्न्तगत वे सभी वाक्य या संकेत आ जाते हैं, जिनकी सहायता से प्राणी अपने मनोभाव प्रकट करता है सीमित अर्थो मे भाषा सार्थक शब्दों का ऐसा समूह है जिनके द्वारा मनुष्य मनोभावनाओं और विचारो को प्रकट करता है । इसी के माध्यम से मानव अपनी बात दूसरों तक पहुंचाता है तथा दूसरों की स्वयं समझता है किसी घटना वस्तु अथवा दृश्य के सम्बन्ध मे जो चित्र बुद्धि स्मृति अथवा कल्पना के सहचर्य से कवि के मानसिक जगत् मे खिंच जाते हैं, पाठक या श्रोता को उनका अनुभव कराने का माध्यम भाषा ही है । कविगण अपनी भाषा को प्रभावशाली बनाने का विशष प्रयत्न करते हैं क्योंकि उनकी रमणीय अनुभूति साधारण भाषा द्वारा भली भाँति प्रेषणीय नहीं बनाई जा सकती। अब हम निराला की भाषा का अध्ययन करेंगे ।

1.3 निराला की भाषा का स्वरूप–

भाषा का प्रमुख तत्व है– शब्द । इसके अतिरिक्त भाषा के गुण शक्ति वृत्ति आदि को भी परखना होता है रचना का सबसे बड़ा आधार और साधन ही शब्द हैं। ये काव्य को प्रभावशाली बनाते हैं तथा अर्थ की प्रतीति कराते हैं । एक कवि की शब्द राशि का अपरिमित होना आवश्यक है तभी वह उचित स्थान पर उचित शब्द का प्रयोग कर सकता है कवि के लिए यह भी आवश्यक है कि वह शब्दों मे निहित विभिन्न तथा सूक्ष्मतम अर्थो का अध्ययन करे उनके सूक्ष्म अर्थ भेद को समझे तथा अनुभूति को व्यक्त करने के लिए अभिलषित शब्द का प्रयोग करें एक शब्द के अनुचित प्रयोग से अर्थ का अनर्थ हो सकता है एवं रसाघात होने की सम्भावना होती है।

मूल स्त्रोत–

निराला की भाषा का स्त्रोत एक स्थान नही रहा उन्हे जहाँ से अपने काव्य के उपयुक्त भाषा मिली, उन्होने उसे अपना लिया । अतः उनकी भाषा कबीर की भाँति विस्तृत और वैविध्य पूर्ण बनी उनकी भाषा के निम्न रूप किये जा सकते हैं।

(1) संस्कृत–बहुल कोमल–कान्त माधुर्य व्यंजक पदावली श्रृंगार रसादि में ।

(2) ओजपूर्ण समास–बहुल पदावली–वीर रस की अभिव्यक्ति में ।

(3) सरल, ठेठ हिन्दी भाषा–अणिमा, कुकुरमुत्ता, नयें पत्ते में ।

(4) प्रयोगात्मक भाषारूप–बेला में ।

(5) हिन्दी–संस्कृत का मिश्रा साहित्यिक रूप–गीतिका, अर्चना, आराधना में ।

यही कारण है कि उनके काव्य मे हमे संस्कृत के तत्सम शब्द प्रयोग ने जहाँ उनकी भाषा को दुरूह तथा कठिन बनाया है, वहीं प्रान्तीय तथा विदेशी शब्दों के प्रयोग ने चलताऊ बना दिया है ।

(1) **संस्कृत के शब्द–** निराला संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे । एक बार तुलसीदास जयन्ती के अवसर पर उन्होने समस्त भाषण संस्कृत मे देकर श्रोता गण तथा विद्वत्समाज को आश्चर्यचकित कर दिया था । अग्निमय, दुर्जय, निरभ्र, निर्धुम, अशनिपात, प्रतिपन्न–परिवर्तित व्यूह, प्रत्यूह, विच्छुरितवर्ि, लोचन, महीयान, मदमोचन,समाश्वासि, विनिस्तन्द्र,दिवकुमारिको, प्रस्नवण, उद्गीरण, तमिस्संक्षर, घनुक अव्द, तूर्ण इत्यादि संस्कृत के शब्दों ने काव्य में दुर्बोधता तो अवश्य ला दी है, किन्तु साथ ही काव्य मे स्पष्टता भी आई है । एक ही शब्द मे समस्त भाव भरकर संक्षेप मे कवि ने अपना मन्तव्य स्पष्ट कर दिया है । यहाँ यह ज्ञातव्य है कि निराला को संस्कृत के शब्द प्रयोग मे लाने के लिए कभी परिश्राम नही करना पड़ा वे स्वतः ही उनके भाषा भण्डार मे आ मिले थे । निराला के इस प्रकार के शब्दों के प्रयोग द्वारा भाषा मे सुस्पष्टता आई है । एक उदाहरण प्रस्तुत है–

"देखते हुए निष्पलक याद आया उपवन"

यहाँ निष्पलक का प्रयोग सार्थक तथा उचित है । 'निष्पलक' शब्द एक पर्दे का निर्माण करता है, जिसके सम्मुख सीता के संग की घटनाएँ दिखाई जाने वाली थीं इस प्रकार के और भी अनेक उदाहरण प्राप्त हैं । किन्तु जटिल, दुर्बोध, दुरूह भाषा द्वारा निराला भाव की जटिलता को सुस्पष्ट कर देते हैं संस्कृत के शब्दों का प्रयोग करके भी 'राम की शक्तिपूजा' मे प्रसंगानुकूल गीत और प्रवाह है, स्पष्टता है ।

(2) बंगला के शब्द– निराला के शब्द–संग्रह के क्षेत्र की कोई सीमा नही । वे उर्दू, फारसी, अरबी, अंग्रेजी से ही शब्दों का चयन नही करते, बंगला और प्रान्तीय भाषाओं से भी यत्रतत्र उन्होने शब्द ग्रहण किये हैं । बंगला तो उनकी मातृभाषा थी और टैगोर उनके प्रिय साहित्यकार, अतः बंगला के शब्द उनके काव्य मे स्वतः आ गये हैं :

हहह

अनामिका (द्वितीय संस्करण)– मुधार (172)

अर्चना (प्रथम संस्करण)– पाथार सकलयाम

अणिमा (प्रथम संस्करण)– मेला

आराधना (प्रथम संस्करण)– वश्य, शक्ल आदि ।

' गीतागुंज' में उनकी एक पूर्ण कविता ही बंगला मे है, जो उन्होने पन्तजी के पत्र के प्रत्युत्तर मे लिखी थी निराला बंगला के केवल परिचित ही न थे, अपितु उसके मर्मज्ञा थे ।

(3) अन्य प्रान्तीय भाषाओं के शब्द– ब्रजभाषा के शब्द भी हमारे कवि की भाषा मे प्रयुह्म हुए हैं, जैसे–

"उसके निकट गया मैं धाय

लगाय उसे गले से हाय"

'धाय' का प्रयोग यद्यपि यहाँ तुक–निर्वाह के लिए ही हुआ है ऐसे प्रयोग स्पृहणीय नही हैं । कहीं कहीं तुक मिलाने के लिए शब्दों को बिगाड़ा है इसी प्रकार हेरें, धाय, मांझ, दुई, सोहना, सरसाई, गात, अखान, मूरत,

छांह इत्यादि शब्दों का प्रयोग उन्होने खुलकर किया है ।

(4) विदेशी शब्द– इस प्रकार के शब्द–प्रयोग द्वारा भावना मे विशेष तीव्रता का आगमन हुआ कहीं कहीं ऐतिहासिक वातावरण की सृष्टि करने के लिए कवि ने मुसलमानो के सम्बन्ध मे लिखते हुए उर्दू का प्रयोग किया है । कहीं कहीं व्यंग्य की तीव्रता की वृद्धि के लिए अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है कहीं खोज के प्रदर्शन के लिए भी विदेशी शब्दों का प्रयोग हुआ है ।

उर्दू शब्द– दाग, स्ने–हुसन, जमाल, पहलू, दमदार, फलांतू, बहार, खुश्बू, बेकरार, मगर, गैर, शमशीर, बांके तिरछे, हवाबाज, नव्वाब, तहजीब, तरतीब, चमन, खुश्नुमा, जानिब, हस्ती, नजर, बन्दों, शाही–दीवान–आम, चाव, रंजो गम, आला, रस्में, जानदार, सुल्तान इत्यादि ।

अंग्रेजी शब्द– अंग्रेजी शब्दों द्वारा भाषा मे तीखापन तथा चुटिलापन आ गया है अतः इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग अधिकतर व्यंग्य के लिए हुआ है । 'कुकुरमुत्ता' में अंग्रेजी शब्दों का आधिक्य है–

"कैपिटलिस्ट, पैराशूट, बैनजाइन, कास्मोपालिटन, मैट्रोपलिटिन, फलसफा, लायर, लिरिक, गीटार, क्लियोपेट्रा, रोमान्स,कलाइमेक्स, फालोवर, पोयट इत्यादि ।"

कुछ अंग्रजी शब्द जहाँ तहाँ अन्य संकलनो मे भी मिल जाते हैं । ग्रेड, पेपर, कैमरा, हाइकोर्ट, मार्लवटो, सोश्यलिस्ट डायलाग्स, प्रेस, पासपोर्ट, कान्सटेबल, ग्रेजुएट।

'कुकुरमुत्ता' मे जो अंग्रेजी के शब्द प्रयुक्त हैं वे कठिन भी हैं और प्रतिदिन की भाषा मे भी प्रयोग नही आतें जबकि अन्य पुस्तकों के ग्रेड, पेपर, कैमरा, प्रेस, पासपोर्ट, ग्रेजुएट इत्यादि शब्द प्रतिदिन के प्रयोग के शब्द हैं । इन शब्दो के प्रयोग द्वारा कवि की भाषा की प्रभावशालिता में वृद्धि हुई है ।

1.4 शब्द योजना

शब्दार्थ को स्पष्ट करने वाला व्यापार है– शब्द–शक्ति है । शब्द–शक्तियाँ तीन होती हैं– अमिधा, लक्षणा, व्यंजना । अमिधा और लक्षणा का आश्राय शब्द है तथा व्यंजना शब्द और अर्थ दोनो के आश्रित हैं. । प्रधानतः हमारे कवि की भाषा व्यंजना–प्रधान है तथापि लक्षणा और अमिधा के भी प्रचूर प्रयोग प्राप्त हैं । अमिधा का प्रयोग वस्तु स्थिति के प्रस्तुति करण के लिए हुआ है । लक्षणा द्वारा चित्रोपमता आई है तथा व्यंजना द्वारा भावों को नवीन दिशा प्रदान की गयी है ।

अमिधा

यद्यपि अमिधात्मक काव्य को उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया है तथापि इसका सही प्रयोग भी अत्यन्त कठिन कार्य है । अमिधा द्वारा शब्द की प्रत्यक्ष एवं साक्षात् अर्थ–अभिव्यक्ति होती है । यह जिस अर्थ को व्यक्त करती है, उसे वाच्यार्थ या मुख्यार्थ कहा जाता है । जब अमिधा द्वारा ही तीव्रतम भावों की अभिव्यक्ति की जाये तब तो इसका प्रयोग अत्यन्त कठिन हो जाता है । 'मैं अकेला' में मन के अत्यन्त तीव्र भावों की सप्रभाव अभिव्यक्ति की गयी है । किन्तु अत्यन्त प्रत्यक्ष अमिधात्मक भाषा में । देखिए–

पके आधे बाल मेरे,
हुए निष्प्रभ गाल मेरे,
चाल मेरी मन्द होती जा रही है,
हट रहा मेला ।"

और भी एक उदाहरण लीजिए–

"बोली वह देख के,–"एक महाराज
आये हैं आज
पीले–पीले कपड़े पहने
होंगे उस घड़े की दुकान पर खड़े
इतना अच्छा घड़ा
मुझे ले दिया ।
जाओ, पकड़ो उन्हे, जाओ
ले देंगे खाने को, खाओ ।"

अमिधा द्वारा ही जनता के भूखों मरने तथा किसी साधु द्वारा सहायता की बात प्रभावपूर्ण ढंग से स्पष्ट की गई है ।

लक्षणा

जब अमिधा द्वारा अभिष्ट अर्थ का बोध नही हो पाता तब लक्षणा का सहारा लेना पड़ता है । निराला–काव्य से इसके अनेक उदाहरण अभिव्यंजना शिल्प के अन्तर्गत दिये जा चुके हैं । यहाँ भी एक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं–

"षड् ऋतुओं का श्रृंगार,

कुसुमति पवन में नीरव पद संचार,

अगर कल्पना में स्वच्छन्द विहार

व्यथा की भूली हुई कथा है,

उसका एक स्वप्न अथवा है ।"

उपर्युक्त अवतरण में विधवा का उल्लेख कहीं नहीं हैं । गुणों द्वारा ही आधार भी लक्षणा ही होती हैं । मुहावरे और लोकोक्तियों का अलग से इसी अध्याय में विवेचन किया गया है ।

व्यंजना

जब पूर्ववर्ती दोनों शक्तियाँ अर्थबोध कराने में असमर्थ रहती है तो व्यंजना शक्ति का आश्राय लेना पड़ता है । आलोच्य कवि ने अधिकार इसी का प्रयोग किया है । 'बकता' हमारे कवि को अत्यधिक प्रिय थी, अतः इस प्रकार के प्रयोगों का आधिक्य है।

"नयन मुदेंगे, तब क्या देंगे ?

चिर प्रिय–दर्शन ?"

में मृत्यु के पश्चात् क्या होगा ?–की सफल एवं स्पष्ट अर्थ–अभिव्यंजना है । इसी प्रकार 'कौन, तम के पार, रे कह ?' में भी गूढार्थ की अभिव्यक्ति व्यंजना द्वारा स्पष्ट होती है ।

1.5 व्याकरण बद्धता

वैयाकरणिक नियमो का विशेष ध्यान छायावादी कवियों ने नही रखा फलस्वरूप कहीं कहीं लिंगानुसार क्रिया प्रयोग नही है 'कितनी बार' के स्थान पर 'कितने बार' का प्रयोग हुआ है कुछ विशेष प्रयोग भी प्राप्त हैं । 'तुम' का प्रयोग उन्होने सम्मानार्थ किया है तथा दूसरा समान आयु वाले अथवा समान पद वाले व्यक्ति के लिए किया है । इस प्रकार के प्रयोग भाषा के क्षेत्र मे क्रान्ति के ही सूचक हैं यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि हमारा कवि अपने काव्य के कला–विधान के प्रति अत्यन्त सतर्क रहा है, अतः विशिष्ट प्रयोग उसके काव्य मे कम ही मिलेंगे, अथवा उनका समस्त काव्य व्याकरण के नियमो पर सही उतरता है।

सन्धि तथा समास प्रयोग

गम्भीर, गहन तथा उदात्त वर्णन के लिए कवि ने समासात्मक तथा सन्धियुक्त शब्दों का प्रयोग भी यथास्थान किया है । यह कहना अति शयोक्ति न होगा कि उनका यह प्रयोग व्याकरण–सम्मत है कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं– विषण्णानन, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, अष्टादशाध्याय, स्तब्धान्धकार, वक्षस्थलागेलित, भावोदय, अर्थागमोपाय,। इसी प्रकार

उनके काव्य मे सामासिक पदों की कमी नही है कई स्थानो पर लम्बे–लम्बे समासों का प्रयोग है–

"विच्छुरित–व‍ि राजीवनयन–हतलक्ष्य–वाण

उद्धव–लंकापति–मर्दित–कपि–दल–बल–विस्तार"

संधि तथा समास का प्रयोग निराला ने अधिकतर वहाँ किया है जहाँ उन्हे कठिन भावों को उत्पन्न करना होता था और उनके अनुसार दुर्बोध भावों की अभिव्यक्ति के लिए कठिन भाषा की आवश्यकता है, अतः उन्होने ऐसे प्रयोग किये । वास्तव मे यह प्रयोग अनुचित भी नही है उनके लिए 'निपाठकला' की आवश्यकता है। श्रीनारायण चतुर्वेदी का मत है कि जब निराला जी 'राम की शक्तिपूजा' का पाठ करते थे, तो श्रोताओं के लिए वह तनिक भी कठिन न रह जाती थी।

विराम चिन्हों का प्रयोग–

क्रान्तिकारी निराला को विराम–चिन्हों का नियमबद्ध प्रयोग भी स्वीकार नही था यह भी उनकी अपनी सुविध ाानुसार प्रयुक्त हुए हैं। निराला के गीत 'निपाठकला' पर आधृत हैं, अतः विराम–चिन्हों को भी उसका सहारा लेना पड़ता है। उन्होने पूर्ण–विराम, अल्प–विराम, अर्द्ध–विराम, डैश, विस्मयादि सूचक चिन्ह, प्रश्न सूचक इत्यादि सभी चिन्हों का आवश्यकतानुसार प्रयोग से उनके काव्य मे नाटकीयता, चमत्कार, ओज मे तीव्रता, भावात्मकता तथा भाव मे परिवर्तन आदि का संयोजन हुआ है–

"रवि हुआ अस्त, ज्योति के पत्र मे लिखा अमर,

रह गया राम–रावण का अपराजेय समर।"

उपर्युक्त उद्धरण मे प्रथम पंक्ति मे अर्द्ध–विराम ने नाटकीयता की आयोजना की है। इसी प्रकार राम–रावण में मध य की रेखा ने दोनो के आमने–सामने होकर युद्ध मे प्रवृत्त होने का दृश्य प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार संम्बोधन–चिन्ह तथा कोष्ठक द्वारा चमत्कार उत्पन्न हुआ है–

"जानकी ! हाय उद्धार प्रिया का न हो सका"

यहाँ 'जानकी' शब्द के आगे सम्बोधन चिन्ह आने के कारण वियोगावस्था प्रकाश मे आई है।

"(प्रिय) यामिनि जागी"

में 'प्रिय' को कोष्ठक मे रखकर प्रिय तथा यामिनि के दो भावों की अभिव्यक्ति करके चमत्कार की उतपत्ति की गयी है। कहीं कहीं संयोजक–रेखा का प्रयोग भाव–परिवर्तन के लिए हुआ है एक उदाहरण प्रस्तुत है–

"राह प्रीति की अपनी–वह कंटकाकीर्ण"

प्रीति की राह का वर्णन करते–करते कवि कण्टकाकीर्ण राह दिखाकर भाव–परिवर्तित करता है। उपर्युक्त सभी उदाहरणों से यह निष्कर्ष निराला जा सकता है कि विराम–चिन्हों का प्रयोग निराला के काव्य मे बहुत अधिक महत्व रखता है। पढ़ते समय विराम–चिन्हों के सही प्रयोग का ध्यान रखने से कवि के भावो में स्वतः स्पष्टता आ जाती है।

1.6 निराला की भाषा का सौष्ठव विधायी गुण

अब तक हमने निराला की भाषा के स्वरूप का ही विवेचन किया है, किन्तु भाषा मे सौष्ठव का भी अपना महत्व है। उसका विवेचन भी नितान्त आवश्यक है जिसका विवेचन हम आगे करेंगे।

गुण भरत के नाट्य–शास्त्र में दस काव्य–गुणों का उल्लेख हुआ है–

(1) श्लेष, (2) प्रसाद, (3) समता, (4) समाधि, (5) माधुर्य (6) ओज, (7) पद–सौकुमार्य, (8) अर्थ–व्यक्ति, (9) उदारता, (10) कान्ति। किन्तु अधिक मान्यता 'काव्य–प्रकाश' में उल्लिखित तीन गुणो को ही मिली है, जो निम्नलिखित हैं : (1) माधुर्य, (2) ओज, (3) प्रसाद। कुछ आचार्यो ने दोषों के अभाव में गुणो की अवस्थिति स्वीकार की है यदि ऐसा मान लिया जाए तो गुणो की संख्या निर्धारण करने की कोई आवश्यकता न रहेगी। गुण कोई अतिरिक्त विशेषता न रहेगी वास्तव मे काव्य गुण अपने आप मे एक वैशिष्ट्य हैं। इनसे काव्योत्कर्ष होता है, अतः ये काव्य के आवश्यक तत्व हैं। अब हम निराला काव्य में सर्वमान्य तीन गुणें की स्थिति पर विचार करेंगे।

माधुर्य गुण

यह गुण चित्त को प्रमुख एवं द्रवीभूत करने की क्षमता रखता है। "संयोग श्रृंगार से करूण, करूण से विप्रलम्भ तथा विप्रलम्भ से शान्त मे इसी गुण की अधिकाधिक अनुभूति मानी गयी है।" काव्य मे माधुर्य के समावेश के लिए केवल भावों की मधुरता ही नही अपितु शब्दों की कोमलता की भी आवश्यकता है। शब्दो मे कर्णकटु शब्दों को छोड़कर कवर्ग, चवर्ग, तवर्ग, पवर्ग तथा ङ, ण, न, म की आवश्यकता होती है। निराला के काव्य से एक उदाहरण प्रस्तुत है–

"याद आया उपवन

विद्रोह का–प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन,

नयनों का–नयनो से गोपन–प्रिय सम्भाषण,

पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान–पतन

उपर्युक्त उदाहरण में कोमल वर्णो के प्रयोग से श्रृंगार की सरसता मे निश्चय ही अभिवृद्धि हुई है।

'गीतिका तो मधुर भाव तथा कोमल शब्दों से भरी पड़ी है। इसमे अधिकांश गीत प्रेम के हैं–

"(प्रिय) यामिनि जागी।

अलस पंकज–दृग–अरूण–मुख

तरूण–अनुरागी।"

उपर्युक्त उद्धरण मे यदि 'श्रृंगार' जैसा कोमन भाव है तो वर्ण भी कोमल है। 'गीतिका' की अधिकतर रचनाएँ ऐसी ही हैं।

ओज गुण

ओज से मन मे स्फूर्ति और तेज का आगमन होता है। गुण के द्वारा बीर, बीभत्स, तथा रौद्र रस की अनुभूति होती है। इस प्रकार की रचनाओं में संयुक्त वर्ण, र, ट, ठ, ड, ढ आदि कठोर वर्णो समासात्मक पदावली का प्रयोग होता है। युद्ध का वर्णन अथवा क्रान्ति की बात करते हुए निराला ने अनेक ओज गुण–सम्पन्न कविताओं की रचना की है–

"ऐ उद्दाम।

अपार कामनाओं के प्राण।

बाधारहित बिराट।

ऐ विप्लव के प्लावन।

सावन–चोर गगन के

ऐ सम्राट् !

ऐ अटूट पर छूट छूट पड़ने वाले उन्माद

विश्व–विभव को लूट–लूट लड़ने वाले अपवाद,

श्री बिखेर, मुख फेर कली के निष्ठुर पीड़न।

छिन्न–भिन्न कर पत्र–पुष्प–पादप–वन–उपवन,

वज्र–घोष से ऐ प्रचण्ड।

आतंक जमाने वाले।

कम्पित जंगम–नीड़–विहंगम,"

यहाँ अटूट, छिन्न–भिन्न, प्रचण्ड, उद्दाम इत्यादि ऐसे शब्द हैं। जो ओज की सृष्टि करते हैं। संयुक्त वर्ण तथा समासात्मक पदावली का अत्याधिक प्रयोग 'राम की शक्ति पूजा' में हुआ है, यद्यपि अन्य कविताओं मे भी स्थान–स्थान पर ऐसे प्रयोग प्राप्त हैं। 'राम की शक्तिपूजा' ओज का सटीक उदाहरण है–

"रवि हुआ अस्त:, ज्योति के पत्र मे लिखा अमर,

रह गया राम–रावण का अपराजय समर,

आज का, तीक्ष्ण–शर–विधृत–क्षिप्त–कर, वेभ प्रखर,

शत शैलसम्वरणशील, नील नभ गर्ज्जित स्वर ।

प्रसाद गुण

यह गुण चित्त में अतिशीघ्र व्याप जाता है । जिस रचना मे व्यक्त विचार पाठक या श्रोता के लिए सरल,सुबोध तथा वाग्जाल–रहित हों, वह रचना प्रसाद गुण युक्त कही जाती है ओज एवं माधुर्य गुणों के रसों का

क्षेत्र सीमित है । 'प्रसाद' गुण से युक्त रचना किसी भी रस की हो सकती है यद्यपि निराला 'ओज के कवि' के रूप मे प्रसिद्ध है, किन्तु प्रसाद गुण से उनकी रचनाओं मे संख्या कम नही 'अर्चना', 'आराधना', गीतगुंज, 'परिमल' में इसी गुण के अनेक उद्धरण उपलब्ध हैं । इन गीतों की प्रत्येक पंक्ति मे सरलता तथा सुबोधता है प्रसाद गुण की प्रतीति ही सरल एवं सुबोध शब्द–योजना के आधार पर होती है । कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

(1) "वह तोड़ती पत्थर,
देखा मैने उसे इलाहबाद के पथ पर,
वह तोड़ती पत्थर ।

(2) "रमण मन के, मान के तन
तुम्हीं जग के जीव–जीवन ।

(3) "आज नदी जल बल घटता है
पौरूष का पुरूष पलटता है
ज्ञानमान मानों बटता है
बिसरे गुण बिना बिसारे ।"

निराला के काव्य में गुणों की अवस्थिति के सम्बन्ध में डॉ. रामबिलास शर्मा का मत उल्लेखनीय है–"वास्तव मे निराला जी ने ओज और प्रसाद गुण के अनुपम प्रयोग किये हैं । उनमे प्रसाद और ओज का अनुपम सम्मिश्राण है।"

रीति तथा वृत्तियाँ

रीति से तात्पर्य है– विशिष्ट पद रचना अथवा पद–स्थापन । व्यक्तियों के संस्कार, विचार, आदर्श और व्यक्तित्व की भिन्नता के साथ–साथ रीतियों के भेद भी परिवर्तित होते रहते हैं । रीति के तीन भेद मान्य हैं :

(1) वैदर्भी,

(2) गोड़ी, और

(3) पांचाली

वृत्ति रचना का आधार लेती है । रसादि के अनुकूल शब्द और अर्थ के औचित्यपूर्ण व्यवहार को ही 'वृत्ति' कहते हैं । आचार्य मम्मट ने 'वृत्ति' की परिभाषा इस प्रकार दी है–

"वृत्तिर्नियत वर्णागतो रस विषयो व्यापारः"

अर्थात वृत्ति नियत वर्णो के रसानुकूल व्यापार का नाम है । वृत्तियों की संख्या भी तीन मानी गयी है–(1) उपनागरिका, (2) परूषा,एवं (3) कोमला । छायावादी कविता पर, विशेषता निराला की कविता पर, इन काव्य रूढियों को नियमो के रूप में आरोपित नही किया जा सकता है । सामान्यतः कहीं–कहीं इनके उदाहरण देखे जा सकते हैं ।

उपनागरिका वृत्ति (वैदर्भी रीति)

यह वृत्ति माधुर्य गुण वाले व्यंजनों से युक्त होती है एवं उसी के आश्राय से रसव्यंजना में योग देती है । एक उदाहरण देखिए–

"सोचती अपलक आप खड़ी,
खिली हुई वह विरह–वृत्ति की
कोमल–कुन्द–कली ।"

यहाँ 'ल' वर्ण द्वारा कोमलता की अभिव्यंजना हुई है । इसी प्रकार और भी अनेक उदाहरण प्राप्त हैं, जैसे–

"मौन रही हार
प्रिय–पथ पर चलती
सब कहते श्रृंगार ।

और–

"दृगों की कलियाँ नवल खुलीं ।"

परूषा वृत्ति (गौड़ी रीति)

यह ओज–प्रकाशक वर्णो द्वारा रस–व्यंजना में योग देती है । निराला ओज के कवि के रूप मे प्रसिद्ध हैं । उनके काव्य से इसके दो उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं–

"शेरों की मांद में
आया है आज स्यार–
जागो फिर एक बार !
सतश्री अकाल
माल–अनल धक–धक कर जला"

और–

"घोर–जट–पिंगल मंगलमय देव । योगी–जन–सिद्ध ।
धूलि–धूसरित, सदा निष्काम ।
उग्र । लपट यह लू की है या शूल–करोगे बिद्ध
उसे जो करता हो आराम ।"

उपर्युक्त उद्धरणो में समास का प्रयोग हुआ है।

कोमला वृत्ति (उपनागरिका रीति)

इसमें पंचम वर्ण को महत्व प्रदान होता है। इन्ही के संगुम्फन से रस की व्यंजना होती है–

"गगन मेघ छये
नये नयन नये।
प्राण धन के श्याम धन ये,
ताप जल शीतल प्रवण ये,
पुण्य के शुभ प्रस्रवण ये,
ह्मदय द्वार गये।
यामिनी की कामिनी दिन,
कल्पना सुख तला अनगिन
सहज रिमझिम बाद रिन रिन
अनवसादन रे ।"

यहाँ 'पंचम वर्ण प्रयोग' ने रस–व्यंजना मे योग प्रदान किया है । इसके और भी अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

1.7 निराला की काव्य भाषा में अन्य विशेषताएं –

छाया युग को 'आलोकमय विशेषणों, चित्रमय और ध्वन्यात्मक शब्दों का युग' कहा जाता है । निराला की भाषा में उउपलब्ध हैं ।

आलोकमय विशेषणों का प्रयोग

निराला पर संस्कृत की विशेषण पद्धति का बहुत प्रभाव था । 'सौन्दर्य–गर्विता–सरिता, एक ऐसा ही उदाहरण है जिसमें 'सरिता' का विशेषण 'सौन्दर्य–गर्विता' देकर कवि ने सरिता का रूप सौन्दर्य से आलोकित कर दिया है । इस प्रकार के शब्द–प्रयोग में अनुप्रास का ध्यान रखा गया है ।

परिमल– चकित–चितवन (34)

मदिर नयन

अर्द्ध–निमीलित–लोचन } (129)

गीतागुंज– दशन पुह्मि कुन्दावकालित, हर हसित विमोह लिखे (42)

आराधना– सुगन्धवासित तन (24)

निःस्व प्राण (53)

अंग्रेजी–हिन्दी के विशेषण का सम्मिश्राण भी प्राप्त हैं–भुक्खड़ फालोवर । इसी प्रकार उर्दू–संस्कृत का मिश्राण भी देखिए–फल सर्वश्रोष्ठ नायाब चीज ।

चित्रमयता

निराला जी केवल शब्दों के शिल्पी न थे, उन्हे शब्दों की आत्मा का भी गहरा ज्ञाान था । वे जानते थे कि कौन सा शब्द किस स्थान पर उपयुक्त होगा । वे उसमे बाँकपन लाते थे । उनकी इच्छा थी कि काव्य प्रभावशाली हो, उसका वाक्य–नियोजन भावानुकूल हो इसके लिए विभिन्न प्रकार के शब्दो की आवश्यकता थी और यही हमारे कवि का वैशिष्ट्य है । भाषा के चित्रमय प्रयोग का विवेचन इसी अध्याय में अन्यत्र किया जा चुका है, अतः यहाँ एक दो उदाहरण देकर विवेचन समाप्त करेंगे 'यमुना के प्रति' कविता में प्राचीन वैभव और वर्तमान दयनीय दशा दोनो का चित्र अत्यन्त सजीव है–

"वह अभिराम कामनाओं का
लज्जित उर, उज्जवल विश्वास
वह निष्काम दिवा–विभावरी,
वह स्वरूप–मंजुल–हास ,
वह सुकेश–विस्तार कुंज में
प्रिय का अति उत्सुक सन्धान,
तारों के नीरव समाज में,
यमुने, यह तेरा मृदु गान ।"

वर्तमान दशा का चित्र–

"भटक रहे हैं किसके मृग–दृग ?
बैठी पथ पर कौन निराश ?
मारी मरू–मरीचिका की–सी
ताक–रही उदास आकाश ।
हिला रहा अब कुंजो के किन
द्रुम पुंजो का हृदय कठोर
विगलित विफल वासनाओं से
कुन्दन–मलिन पुलिन का रोर ।"

ध्वन्यात्मकता

"लता कुंज में मधुप–पुंज के गुन गुन गुन गुंजन ।"

में 'गुन–गुन–गुन' शब्द मधुप की ध्वनि को उपस्थित करता है । निराला ने शब्दों की ध्वनि को भली प्रकार पहचाना है तथा उनका उचित प्रयोग भी किया है । श्री गंगाप्रसाद पाण्डेय निराला–कृत नादमय शब्द प्रयोग के सम्बन्ध में लिखते हैं, "नादमय चुने हुए थोड़े शब्दों से अधिक आशय व्यक्त करने की उनकी चातुरी बहुत ही अद्भुत और अनोखी है । इस दृष्टि से उनके जैसी अर्थवाही और संगीत प्राण एवं मुहावरेदार भाषा मे लिखने वाले कम ही लोग हैं ।" ध्वन्यात्मक शब्दों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

अनामिका

(1) जलतरंग ध्वनि, कलकल– पृ. 10

(2) तपा किया, सन–सन–सन (पृ. 14)

(3) कूउ कू–उ, बोली कोयल अन्तिम सुख स्वर (पृ. 89)

(4) झूम–झूम मृदु गरज–गरज घन घोर (पृ. 148)

(5) रणन–रणन नूपुर, उर लाज (पृ. 8)

(6) गरजो ए मन्द्र, वज्र–स्वर (पृ. 59)

(7) नूपुरों में भी रूनझुन–रूनझुन नहीं (पृ. 59)

और भी अनेक उद्धरण ऐसे अनायास मिल सकते हैं जिनसे कवि के ध्वनि ज्ञान तथा ध्वन्यात्मक शब्दों के विशाल भण्डार का परिचय प्राप्त हो जाता है ।

भावनुकूल भाषा

भाव काव्य की आत्मा तथा भाषा उसका परिधान है । अपने जीवन में जिस प्रकार निराला परिधान को इतना महत्व न दे पाये, उसी प्रकार काव्य के क्षेत्र में भी उन्होने भाव की उच्चता पर ही बल दिया, यद्यपि उनकी भाषा उनके असीम ज्ञान के कारण कभी हलकी न पड़ी । उनकी भाषा उनके भावों के अनुकूल थी ।

निराला जी मुख्यतः सौन्दर्य के कवि थे, यही कारण है कि सौन्दर्य पक्ष उनके काव्य में प्रमुख है । सौन्दर्य पक्ष के उद्घाटन में उन्होने सर्वत्र कोमल वर्णो का ही प्रयोग किया है । अधिक माधुर्य के लिए पंचम वर्ण का भी अधिक प्रयोग है ।

"आओ, मधुर–सरण मानसि मन
नुपूर–चरण–रणन–जीवन नित
बंकिम–चितवन चित चारू मरण ।"

हमारे कवि की अधिकांश रचनाओं में दार्शनिक, आध्यात्मिक तथा रहस्यवादी भाव मिलते हैं । इस प्रकार के भावों को प्रकट करने के लिए उनका झुकाव संस्कृत प्रधान शब्दावली की ओर होता है । यही कारण है कि इस प्रकार के गीतों में तत्सम शब्दावली प्रमुख है, और कवि पीताभ, अग्निमय, दुर्जय, निर्धूम, निरभ्र, दिगन्त–प्रसार, अशनिपात, दिव कुमारिको प्रस्रवण, उद्गीकरण, संगर, स्रस्त, कामुक, तमिस, संक्षर, घणुक, अब्द, तूर्ण, सुखलुण्ठन, शीर्ण सारिणी,

तीर्ण तारिणी आदि शब्दों का प्रयोग करता है । उनकी इस प्रकार की शब्दावली के प्रयोग के सम्बन्ध में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी का मत अवलोकनीय है, "उन्होंने हिन्दी पद विन्यास को भी अधिक प्रौढ़ तथा अधिक प्रशस्त बनाने का सफल प्रयास किया है । अत्यन्त सार्थक शब्द–सृष्टि द्वारा निरालाजी ने हिन्दी को अभिव्यक्ति की विशेष शक्ति प्रदान की है । शब्द–संगीत परखने और व्यवहार में लाने में वे आधुनिक हिन्दी के दिशानायक हैं ।" प्रस्तुत कवि ने केवल संस्कृत–गर्भित शब्दों का ही प्रयोग नही किया है, स्थान–स्थान पर उन्होने भावानुकूल भाषा बनाने के लिए अपनी शब्दावली को समासात्मक भी किया है, जैसे–

"क्लेद–युक्त, नर्तन–निर्झर, हंसी–हिंडोल, अलि–अलकों, विरह–विटप, पल्लव–पलने, चित्त–चकोर, कमल–कुसुम, कुसुम–कपोल इत्यादि ।" युद्ध का वर्णन करते हुए लम्बे–लम्बे ओज पूर्ण समासों का प्रयोग किया है–

"विच्छुरित–वह्नि–राजीव–नयन–हतलक्ष्य–वाण

उद्धत–लंकापति–मर्दित–कपि–दल–बल–विस्तर ।"

कवि का परवर्ती काव्य अत्यन्त सरल एवं सुबोध भाषा का सटीक उदाहरण है । इस काव्य की भाषा को सरल बनाने के लिए कवि ने अंग्रेजी, उर्दू, फारसी, बंगला, देशज आदि शब्दों का प्रचुर प्रयोग किया है । प्रगतिवादी काव्य की रचनाओं में विशिष्टतया इसी प्रकार के भाषा–प्रयोग देखे जा सकते हैं । "इन तीनों (अणिमा, बेला, नये पत्ते) की भाषा साधारण के अत्यधिक नजदीक हे । 'अणिमा' के गीतों की भाषा प्रायः सरल है । और साथ ही गद्यानुसार भी । इसकी भाषा उर्दू के शब्दों से भी प्रभावित है। प्रान्तीय भाषाओं से खासकर हिन्दी में यह प्रकरण और जोरों पर चल रहा है । इसके बाद में 'बेला' में भाषा की सरलता और मुहावरेदारी और बढ़ती गयी है ।"

मुहावरे तथा लोकोक्तियों का प्रयोग

हमारे कवि पर बैसवाड़े के ग्रामीण वातावरण का प्रभाव था, जहाँ की भाषा मुहावरों, लोकोक्तियों के प्रतिदिन के व्यवहार से सजीव थी । फलस्वरूप निराला की अपनी भाषा भी इनसे सजी है । इसके प्रयोग ने भाषा को अधिक प्रेषणीय बनाया है । कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

मुहावरे

"फूलों की सेज पर सोये हो

काँटो की राह भी अति भर पार की ।

ईंट का जबाब पत्थर से देना है ।

साँप आस्तीन का (पृ.65)

लोकोक्तियों का प्रयोग प्रस्तुत कवि की भाषा में अपेक्षाकृत कम है, फिर भी कहीं–कहीं छुट–फुट मिल जाता है–

"कहीं की रोड़ा, कहीं का लिया पत्थर,

टी. एस. इलियट ने दे मारा ।"

उपर्युक्त लोकोक्ति 'कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा, भानुमति ने कुनबा जोड़ा' का परिवर्तित रूप है ।

शब्दालंकार प्रयोग

शब्दालंकार भी भाषा–सौष्ठव के प्रधान उपकरण माने जाते हैं । ये भाषा के बाह्य सौन्दर्य में अभिवृद्धि करते हैं । अभिव्यंजना में प्रभाव तथा प्रवाह भी लाते हैं । निराला में भी अनेक शब्दलंकारों का प्रयोग अनायास मिल जाता है :

(1) **अनुप्रास–** इसमें एक ही वर्ण की अनेक बार आवृत्ति होती है, फलतः भाषा में संगीतात्मकता उत्पन्न होती है । निराला में इस प्रकार के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं :

"जननि, जनक, जननि–जननि,

जन्मभूमि–भाषो ।"

यहाँ 'ज' की आवृत्ति द्वारा एक विशेष झंकार उत्पन्न हो गयी है । कुछ और उदाहरण प्रस्तुत हैं–

"नववन–नवजन ? नव तन, नव मन ।"

"लेकर कर कल तूलिका कला ।"

उपर्युक्त उदाहरणों मे आवृत्ति से उत्पन्न नाद–सौन्दर्य दर्शनीय है ।

(2) **यमक–** भिन्नार्थक शब्द–समुदाय की आवृत्ति को यमक कहते हैं । निराला कवि को भाषा पर सहज अधिकार प्राप्त था अतः अलंकार भी स्वतः आ गये हैं । यमक का उदाहरण देखिए–

"अर्थ हुआ जीवन यह भार,

देखा संसार, वस्तु वस्तुतः आसार ।"

और–

"तने सहज छादन–आच्छादन ।"

उपर्युक्त उद्धरणों में वस्तु–वस्तु तथा छादन–छादन की आवृत्ति में यमक है । इससे भाषा चमत्कृत हो गई है ।

(3) **वीप्सा–** इसमें पुनरावृत शब्द समानार्थक तो होते हैं, किन्तु उससे अर्थ को सौरस्य प्राप्त होता है । ऐसे प्रयोग हमारे कवि की भाषा में अनन्यास ही प्राप्त हैं । जैसे–

"मधुर–मधुर हैं दोनों उसके अधर ।"

"तनु–तनु पर जाते बलि

बार–बार–बार ।"

यहाँ 'मधुर–मधुर' द्वारा माधुर्य की मात्रा स्पष्ट की गयी है तथा बार–बार–बार द्वारा संख्या का आधिक्य बताया गया है । और भी अनेक उदाहरण अन्य आलंकारिक विशेषताओं से पूर्ण मिल जाते हैं । ये काव्यांश निराला के कवि की सफलता के लिए उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत किये जा सकते हैं । बन्धन विमुक्त निराला वास्तव में शब्दालंकारों के बन्धन में नही बंधे थे । यह तो उनकी कवि–प्रतिभा का फल था कि अलंकार सहज ही उनकी भाषा में आ गये ।

कुछ विचित्र प्रयोग– कवि को स्वतंत्र शब्द–निर्माण में समर्थ माना गया है, एवं काव्य–शास्त्रियों ने इसकी छूट भी दी है । किन्तु कभी–कभी ऐसे शब्दों का निर्माण करता है, जिनका प्रचलित अर्थ न लेकर और ही अर्थ लिया जाये । निराला काव्य में कुछ ऐसे प्रयोग भी मिलते हैं, जैसे–

(1) 'किन्नर–गण' का अर्थ 'नपुंसक' से लिया गया है ।

(2) 'फैली हल चलवाई'– फसल का उग आना ।

इस प्रकार 'क्षमता' के स्थान पर 'क्षम' का प्रयोग, 'दैत्य' के स्थान पर 'दित्य' का प्रयोग, 'सरित' के स्थान पर 'सुरित' का प्रयोग भी किया गया है । कहीं–कहीं तुक मिलाने के लिए निरर्थक शब्दों का प्रयोग किया है–

(1) हलके–हलके हलके न हुए
दलके–दलके दलके न हुए
उफले–उफले फलके न हुए,
बेदाने थे तो दाने क्या ।

—— —— ——

(2) "दो घड़े, काँख, कर
कन्धे पड़ी रसर
चली अपनी डगर
देखने की सरन ।"

—— —— ——

(3) "बिगड़ी बनती बन जाय सही
डगड़ी गड़ती गढ़ जाय सही ।"

कतिपय शब्दों के प्रति अतिरिक्त मोह–यद्यपि आलोच्य कवि का शब्द भण्डार अत्यन्त समृद्ध था, फिर भी कुछ शब्दों का प्रयोग अत्यधिक मात्रा में हुआ है, शायद उनसे कवि का संस्कारगत मोह रहा हो । नव, नूतन, नई, नया इत्यादि का अतिरिक्त प्रयोग हुआ है । कवि अनेक बार नवजीवन, नवकिरण, नवज्ञान, नव–नव अभिलाषा, नव–नीलभ, नव–नव जीवन, नव नव, नव जन, नव चिर परिचित इत्यादि का प्रयोग करता है । 'रे' शब्द के प्रति भी कवि का विशेष मोह दृष्टव्य है । शायद यह कवि की संगीत–प्रियता का सूचक है ।

इसका आधार लेकर वह अनेक स्थानों पर संगीत की कड़ियों को पूर्ण करता है । कुछ उदाहरण देखिए–

रे असुन्दर, रे कह, बह जात रे, है तभी मरण रे, रे, कुछ न हुआ तो क्या, रे खिल, रे रेणु इत्यादि । इनमें अधिकतर उद्धरण 'गीतिका' के हैं ।

निराला की भाषा पर काठिन्य का आरोप

निरालाजी की भाषा को लेकर प्रायः उन पर कठिनता का आरोप लगाया गया है । उनकी भाषा को संस्कृतनिष्ठ, समासात्मक तथा क्लिष्ट कहा जाता रहा है । स्वयं भाषा की कठिनता के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा

है– "भाषा क्लिष्टता से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्न हिन्दी की तरह अपन भाषाओं में नही उठते । हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानने वाले या बनाने वाले लोग साल में तेरह बन आर्त चीत्कार करते हैं । भाषा सरल होनी चाहिए, जिससे अनेक शब्दों का लोगों को ज्ञान हो, जनता क्रमशः ऊँचे सोपान पर चढ़े। वास्तव में बात यही है । हमारा विनम्र निवेदन इस प्रकार के आक्षेप लगाने वालो से यही है कि वे अपनी भाषा के स्तर को ऊँचा करके देखें कि क्या तब भी निराला कठिन लगता है ? वास्तव में आलोच्य कवि ने कठिन भावों को व्यक्त करने के लिए कठिन भाषा का प्रयोग किया है । उनका मत है कि जो मनुष्य जितना गहरा है, वह भाव तथा भाषा की उतनी ही गम्भीरता तक पैठ सकता है । और पैठता है । साहित्य में भावों की उच्चता का विचार रखना चाहिए । भाषा भावों की अनुगामिनी है । उपर्युक्त मत के उदाहरणस्वरूप उनका काव्य प्रस्तुत किया जा सकता है । जहाँ एक ओर 'राम की शक्तिपूजा' की समासात्मक भाषा है, तथा दूसरी ओर 'रानी', 'खोजहरा' तथा 'गर्म पकोड़ी' की–सी चलती भाषा की कविता है । कवि पर कठिनता का आरोप लगाने वालो ने 'राम की शक्तिपूजा' के अतिरिक्त उनकी अन्य रचनाएँ पढ़ने का प्रयत्न नही किया होगा । वास्तव में हमारे कवि की भाषा को समझने के लिए निपाठकला (Art of recitation) की आवश्यकता है । उनके सम्पर्क मे आने वाले लोगो ने यही कहा कि 'राम की शक्तिपूजा' भी जब वे लय से पढ़ते थे तो स्वतः समझ में आ जाती थी उनका सम्पूर्ण काव्य–साहित्य पढ़ लेने पर यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उनके काव्य में नब्बे प्रतिशत कविताएँ सरल एवं सुबोध हैं, केवल दस प्रतिशत ही कठिन हैं ।

निष्कर्ष

निराला कवि अपनी कला के प्रति सजग थे अतः उसमे दोष तो अल्प ही मिलते हैं । वह एक सफल कलाकार थे अतः उसकी कला अनुपम है । शैली पर कवि के व्यक्तित्व का प्रभाव होता है, यही कारण है कि महाप्राण निराला की भाषा–शैली भी भव्य, उदात्त तथा विराट है । निराला की काव्य भाषा के सम्बन्ध में डॉ. शर्मा का मत उल्लेखनीय है, "...... केवल मैदान में सर्–सर् करती हुई गंगा की भाँति नहीं, वरन् पहाड़ों से टकराती, घनी अंधेरी घाटियों में पत्थरों को काटती, बहाती, वह तुमुल शब्द करती चलती है ।" वास्तव में अपने कुछ गिने चुने दोषों के साथ निराला की भाषा अपने सशक्त व्यक्तित्व की परिचायक है । उनकी भाषा एवं भाव में सम्यक समानता है । उनका शब्द–ज्ञान विस्तृत था, जिसे उन्होने विदेशी शब्दों के योग से और अधिक व्यापक बनाया है । विराम–चिन्हों के विशिष्ट प्रयोग द्वारा भी उन्होने अपनी भाषा को सरल तथा चमत्कारपूर्ण बनाया है । ओज गुण उनकी भाषा का वैशिष्ट्य है । ध्वनि की सही पहचान ने उनकी भाषा को प्रभावात्मकता प्रदान की है । निपाठ–कला के संयोग ने उसे अद्भुत दीप्ति प्रदान की है । यदि कुछ दोष हैं भी, वे उनके व्यक्तित्व की निरंकुशता एवं क्रान्तिकारिता को देखते हुए क्षम्य हैं । उनके अतिरिक्त जो कुछ है, वह हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिए एक महत्वपूर्ण अध्याय है ।

1.8 इकाई सारांश–

(1) भावों की अभिव्यक्ति के लिए मानव को भाषा की नितान्त आवश्यक्ता है । भाषा यदि शरीर है तो भाव आत्मा निराला के काव्य की भाषा स्वच्छंदतावादी और इलियटवादी (निर्वेयक्तिकतावादी) दोनो समीक्षा धाराएँ काव्य गत आनंद की व्याख्या मे दो अतिवादी छोरों तक चली जाती है और काव्य के हृदय की बुद्धि के योग पर उनका ध्यान केन्द्रित होता है । निराला का संसार अद्वैत, भक्ति, दर्शन, चिन्तन उदात्त जीवन बोध करूणा और विद्रोह का संसार है । निराला की भाषा के व्यापक तथा सीमित दो अर्थ लिये हैं ।

(2) निराला की भाषा का स्त्रोत एक स्थान नही रहा । उन्हे जहाँ से अपने काव्य के उपर्युक्त भाषा मिली उन्होने उसे अपना लिया अतः उनकी भाषा कबीर की भाँति विस्तृत और वैविध्यपूर्ण बनी संस्कृत बहुल, कोमल, कान्त, ओजपूर्ण, समास, वहुल, पदावली प्रयोगात्मक भाषा रूप मे यही कारण है कि उनके काव्य मे हमे संस्कृत के तत्सम प्रान्तीय शब्द विदेशी सभी प्रकार के शब्द प्राप्त होते हैं ।

(3) वैयाकरणिक नियमो का विशेष ध्यान छायावादी कवियों ने नही रखा फलस्वरूप कहीं कहीं लिंग सम्बंधी दोष आ गया है निराला काव्य में भी स्थान स्थान पर लिंगानुसार क्रिया प्रयोग नही हैं कितनी बार के स्थान पर कितने बार का प्रयोग हुआ है । कुछ विशष प्रयोग भी प्राप्त 'तुम' का पद वाले व्यक्ति के लिए लिया है अतः विशिष्ट प्रयोग उसके काव्य मे कम ही मिलेंगे अन्यथा उनका समस्त काव्य व्याकरण के नियमो पर सही उतरता है ।

(4) निराला की भाषा के स्वरूप का विवेचन अत्यंत लोकप्रिय है किन्तु भाषा मे सौष्ठव का भी अपना महात्व है । निराला ने अपने काव्य मे भाषा का अनुपम प्रयोग किया है जिससे उनका काव्य सौष्टन प्रखरता पर पहुंचता है वास्तव मे निराला जी ने ओज और प्रसाद युग के अनुपम प्रयोग किये हैं । उनमे प्रसाद और ओज का अनुपम समिश्राण है ।

(5) रीति से तात्पर्य है विशिष्ट पद रचना अथवा पद स्थापन व्यक्तियों के संस्कार विचार आदर्श और व्यक्तित्व की मित्रता के साथ साथ रीतियों के भेद भी परिवर्तित होते रहते हैं । निराला की कविता पर इन काव्य रूढियों को नियमों के रूप मे आरोपित नही किया जा सकता ।

(6) शब्दार्थ को स्पष्ट करने वाला व्यापार है शब्द शक्ति शब्द शक्तियाँ तीन होती हैं अमिधा, लक्षणा, व्यंजना । अमिधा और लक्षणा का आश्राय शब्द है तथा व्यंजना शब्द और अर्थ दोनो के आश्रित है । प्रधानतः कवि निराला की भाषा व्यंजना प्रधान है तथपि लक्षणा और अमिधा के भी प्रचूर प्रयोग प्राप्त हैं । अमिध ाा का प्रयोग वस्तु स्थिति के प्रस्तुतिकरण के लिए हुआ है । लक्षणा द्वारा चित्रोपमता आई है तथा व्यंजना द्वारा भावों को नवीन दिशा प्रदान की गयी है ।

(7) निराला के काव्य मे अन्य विशषताएँ भी पायी गयी हैं । जैसे निराला पर संस्कृत की विशेषण पद्धति का बहुत प्रभाव था सौन्दर्य गर्विता सरिता एक ऐसा ही उदाहरण है । जिसमे सरिता का विशेषण सौन्दर्य 'गर्विता' देकर कवि ने सरिता का रूप सौन्दर्य से आलोकित कर दिया हैं । इस प्रकार के शब्द प्रयोग मे अनुप्रास का ध्यान रखा गया है ।

(8) निराला के काव्य मे भावानुकूल भाषा का प्रयोग भी पाया गया है भाव काव्य की आत्मा तथा भाषा उसका परिधान हैं अपने जीवन मे निराला परिधान को इतना महात्व न दे पाये उसी प्रकार काव्य के क्षेत्र मे भी उन्होने भावों की उच्चता पर ही बल दिया यद्यपि उनकी भाषा उनके असीम ज्ञान के कारण कभी हलकी न पड़ी भाषा उनके भावों के अनुकूल थी ।

(9) निराला पर वैसवाड़े के ग्रामीण वातावरण का प्रभाव था जहाँ की भाषा मुहावरों लोकोक्तियों के प्रतिदिन के व्यवहार से सजीव थी फलस्वरूप निराला की अपनी भाषा भी इनसे सजी है इनके प्रयोग ने भाषा को अधिक प्रेषणीय बनाया है ।

(10) यद्यपि कवि निराला का शब्द भण्डार अत्यन्त समृद्ध था फिर भी कुछ शब्दों का प्रयोग अत्यधिक मात्रा मे हुआ है । शायद उनसे कवि का संस्कारगत मोह रहा हो नव, नूतन, नई, नया इत्यादि का अतिरिक्त

प्रयोग हुआ है कवि अनेक बार नव जीवन, नव किरण, नव ज्ञान, नव–नव अभिलाषा, नव नीलभ, नव–नव जीवन, नव, नव जन नव चिर परिचित इत्यादि का प्रयोग करता है । रे शब्द के प्रति भी कवि का विशेष मोह द्रष्टव्य है शायद यह कवि की संगीत प्रियता का सूचक है ।

(11) कवि निराला अपनी कला के प्रति सजग थे । अतः उसमे दोष तो अल्प ही मिलते हैं वह एक सफल कलाकार थे अतः उनकी कला अनुपम शैली पर कवि के व्यक्तित्व का प्रभाव होता है यही कारण है कि महाप्राण निराला की भाषा शैली भी भव्य उदात्त तथा विराट है । निराला की काव्य भाषा हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिए एक महात्वपूर्ण अध्याय है ।

1.9 नियत कार्य/ एवं गतिविधियाँ / लघुउत्तरीय प्रश्न

लघुउत्तरीय प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

प्र.1 भाषा क्या है ? स्पष्ट कीजिए ।

प्र.2 निराला की भाषा का स्वरूप स्पष्ट कीजिए ?

प्र.3 व्याकरण के नियमों के बारे मे आप क्या जानते हैं ?

प्र.4 निराला के काव्य की भाषा का सौष्टव कीजिए ?

प्र.5 भाषा मे कौन–कौन से गुणों का होना आवश्यक है ? स्पष्ट कीजिए ।

प्र.6 रीति तथा वृत्तियाँ क्या हैं समझाईये ?

प्र.7 शब्द शक्तियाँ क्या है ? अर्थ स्पष्ट कीजिए ।

प्र.8 निराला के काव्य की अन्य विशेषताएँ वताईये ?

प्र.9 भावानुकूल भाषा क्या है बताईये ?

प्र.10 निराला काव्य भाषा की विशेषताएँ वताईये ? (कोइ चार)

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

प्र.1 मुहावरे तथा लोकोक्तियों क्या है ? समझाईये ।

प्र.2 शब्दालंकार का क्या अर्थ है ? उदाहरण सहित समझाईये ।

प्र.3 निराला की भाषा पर एक टिप्पणी लिखिए ?

प्र.4 निराला की काव्य भाषा से आप क्या जानते हैं ?

प्र.5 लक्षणा शब्द शक्ति क्या है ? वताईये ।

प्र.6 व्यंजना शब्द शक्ति के वारे मे आप क्या जानते हैं ?

प्र.7 माधुर्य गुण क्या हैं स्पष्ट कीजिए ?

प्र.8 काव्य गुणो का उल्लेख कीजिए ?

प्र.9 सन्धि तथा समास क्या है इनका प्रयोग किस प्रकार होता है ? समझाईये ।

प्र.10 विदेशी शब्दो के वारे मे आप क्या जानते है ? वताईये ।

बोध प्रश्न–

निम्नलिखित के सही विकल्प दीजिए ?

प्र. .1 भाषा का प्रमुख तत्व है–

(क) समास

(ख) सन्धि

(ग) व्याकरण

(घ) शब्द

प्र. 2 काव्य गुण होते हैं–

(क) तीन

(ख) बारह

(ग) एक

(घ) दो

प्र. 3 माधुर्य गुण होता है–

(क) सुख पहुंचाता है

(ख) दुख देता है

(ग) क्रोध उत्पन्न करता है

(घ) चित्त को प्रसन्न एवं द्रवीभूत करने की क्षमता रखता है

प्र. 4 रीति से तात्पर्य है–

(क) विशिष्ट पद रचना अथवा पदस्थापन

(ख) उदारता

(ग) कान्ति

(घ) अर्थ व्यक्ति

प्र. 5 शब्दार्थ को स्पष्ट करने वाला व्यापार है–

(क) कोमलता वृत्ति

(ख) शब्द शक्ति

(ग) लक्षणा शब्द शक्ति

(घ) विदेशी शब्द

प्र. 6 भावानुकूल भाषा है–

(क) भाव सुख प्रधान

(ख) भाव ओज पूर्ण है

(ग) भाव काव्य की आत्मा तथा भाषा उसका परिधान है

(घ) भाव भक्ति प्रधान है

प्र. 7 ओज गुण से होता है

(क) करूणा उत्पन्न होती है–

(ख) अघात होता है

(ग) ओज से मन में स्फुर्ति और तेज का आगमन होता है

(घ) युद्ध होता है

प्र. 8 प्रसाद गुण होता है–

(क) काव्य गुण

(ख) छन्द योजना

(ग) यह गुण चित्त मे अतिशीघ्र व्याप्त जाता है1.

(घ) शब्द योजना सरल होती है

1.10 चर्चा के बिन्दु

____

____

____

____

स्पष्टीकरण के बिन्दु

1.11 बोध प्रश्नो की उत्तर माला

(घ) शब्द

(क) तीन

(घ) चित्त को प्रश्न एवं द्रविभूत करने की क्षमता रखता है

(क) विशिष्ट पद रचना एवं पदस्थपन

(ख) शब्द शक्ति

(ग) भाव काव्य की आत्मा तथा भाषा उसका परिधान है

(ग) ओज से मन मे स्फुर्ति और तेज का आगमन होता है

(ग) यह गुण चित्त मे अतिशीघ्र व्याप्त जाता है

1.12 संदर्भ ग्रंथ सूची–

(1) काव्य दर्पण – राम दहिन मिश्रा

(2) निराला – शिव प्रसाद गोयल

(3) निराला की साहित्य साधना – डॉ. रामविलास शर्मा

(4) आधुनिक साहित्य – आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी

(5) अनामिका – निराला

(6) परिमल – निराला

(7) निराला की काव्य दृष्टि – डॉ. रामकृष्ण कौशिक

(8) निराला – पद्मसिंह 'कमलेश'

(9) छायावाद का काव्य शिल्प – डॉ. प्रतिभा कृष्णबल

(10) गीतिका – निराला

(11) निराला की संगीत साधना – डे. जी. वालिया

(12) युग कवि निराला – डॉ. राम मूर्ति शर्मा

इकाई—2

निराला के काव्य में प्रकृति चित्रण के विविध रूप

इकाई संरचना

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 निराला की काव्य में प्रकृति चित्रण के विविध रूप

3.4 (आलम्बन रूप में) प्रकृति चित्रण

3.5 उद्दीपन रूप में प्रकृति चित्रण

3.6 मानवीकरण रूप में प्रकृति चित्रण

3.7 वातावरण रूप में प्रकृति चित्रण

3.8 प्रतीक रूप में प्रतीक—चित्रण

3.9 रहस्यानुभूति के प्रकाशन में प्रकृति

3.10 अप्रस्तुत विधान में प्रकृति का चित्रण

3.11 इकाई सारांश

3.12 नियत कार्य गतिविधियाँ

लघु उत्तरीय / दीर्घ उत्तरीय बोध प्रश्न

3.13 चर्चा के बिन्दु / स्पष्टीकरण के बिन्दु

3.14 बोध प्रश्नो की उत्तर माला

3.15 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.1 उद्देश्य :

इस इकाई का उद्देश्य है कि छात्र जान सकें :

1. निराला के काव्य और प्रकृति के बारे में ।
2. मानव, प्रकृति और काव्य की विशेषताओं के बारे में ।
3. आलम्बन रूप में प्रकृति चित्रण की विशेष गुणों के बारे में ।
4. प्रकृति चित्रण के रूप में प्रतीक विधान के बारे में ।
5. अलंकार विधान के रूप में प्रकृति चित्रण की विशेषताएं ।
6. प्रकृति और निराला के संबंध के बारे में ।
7. निराला का प्रकृति शिल्प चित्रण के बारे में ।

2.2 प्रस्तावना–

भारतीय साहित्य में प्रकृति का चित्रण विधान नाना रूपों में प्राप्त होता है । कविवर निराला को प्रकृति नटी से घनीभूत अनुराग है । उन्होने सच्चे सौन्दर्य चित्रण की सृष्टि का हेतु प्रकृति को अंगीकार किया उनकी मान्यता है कि सौन्दर्य की कल्पना प्रसाद से नही वन से शुरू होती है निराला ने प्रकृति को जो छवि प्रदान किया है । उससे मानव में पार्थक्य करना अति दुरूह है निराला की कविता में प्रकृति की निराली सृष्टि अपने पूर्ण आयामों के साथ प्रस्तुत हुई है । उनके काव्य में विद्यमान प्रकृति की नाना छवियों के मनोरम चित्र मन को मुग्ध करते हैं । जिस प्रकार से चिर पुरानत प्रकृति प्रतिपल नवीना और नवोल्लास से सम्पन्न रहती है उसी प्रकार निराला की तूलिका भी प्रकृति के अनेक नव्य रूपों को रचती जाती है । फूल हो या कांटे, सागर हो या सरिता, नगर हो या कानन, शरद हो या शिशिर, बसन्त हो या हेमन्त, गर्मी हो या वर्षा, रात हो या हो दिन ऐसे प्रकृति ने अनेकानेक आयाम निराला की कविता में अपने यथार्थ रूप को प्राप्त हुए हैं । प्रकृति में सम्बन्धित जो भी रूप कवि के द्वारा रचा गया है । उसके साथ कवि का तादात्मय है । निराला की प्राकृतिक चित्रण ही बाह्यम्यंतर सुन्दर सार्थक है । और पूर्ण है, प्रकृति में व्याप्त अनन्त चित्रण हृदयवर्जक होने के साथ साथ श्रान्त मन को विश्राम देता है । और क्षणे–क्षणे नूतनता को धारण करती प्रकृति मानव मन को प्रफुल्लित करती है । कवि निराला की अभिव्यक्ति को प्रकृति अपने नाना उपादनों से पुष्ट प्रस्फुट करती चलती है । अपनी इसी सार्थकता के कारण प्रकृति जन–जन के लिए रमणीय और प्रेरणा प्रसन्न बन गई है । कवि निराला और प्रकृति का प्रगाढ़ सम्बन्ध है । कवि प्रकृति को विभिन्न रूपों में देखता है । और अपने अनुभव को उसके माध्यम से अभिव्यक्त करता है । काव्य में प्रकृति अपने अनुपम रूप को विखेरती रहती है । इस प्रकार निराला का प्रकृति चित्रण अघात हृदय तकता पहुंचाता है ।

2.3 निराला के काव्य में प्रकृति चित्रण के विविध रूप –

भारतीय साहित्य में प्रकृति का सौन्दर्य–विधान नाना रूपों में प्राप्त होता है । कविवर निराला को प्रकृति नटी से घनीभूत अनुराग है । उन्होने सच्चे सौन्दर्य की सृष्टि का हेतु प्रकृति को अंगीकार किया है । उनकी मान्यता है कि सौन्दर्य की कल्पना प्रसाद से नही वन से शुरू होती है । निराला ने प्रकृति को जो छवि प्रदान किया है, उससे प्रकृति और मानव में पार्थक्य करना अति दुरूहं है । निराला की कविता में प्रकृति की निराला सृष्टि अपने पूर्ण आयामो के साथ प्रस्तुत हुई है उनके काव्य में विद्यमान प्रकृति की नाना छवियों के मनोराम चित्र मन को मुग्ध ा करते हैं । जिस प्रकार से चिर पुरातन प्रकृति प्रतीपल नवीना और नवोल्लास से सम्पन्न रहती है उसी प्रकार निराला की तूलिका भी प्रकृति के अनेक नव्य रूपों को रच जाती है । फूल हों या कांटे, सागर हो या सरिता, नगर हो या कानन, शरद हो या शिशिर, वसन्त हो या हेमन्त, गर्मी हो या वर्षा, रात हो या दिन्न, ऐसे प्रकृति ने अनेकानेक आयाम निराला की कविता में अपने यथार्थ रूप को प्राप्त हुए हैं । प्रकृति में सम्बन्धित जो भी रूप कवि के द्वारा रचा गया है उसके साथ कवि का तादात्म्य है । शास्त्रीय विधानों से प्रकृति सुन्दरी की स्वाभाविकता और जीवन्नता कहीं पर भी खण्डित नही हुई है । 'इयमधिकमनोज्ञाा वल्कलेनापि तन्वी' की भाँति सदा रमणीय है । अध्ययन की सुविधा को ध्यान में रखते हुए कविवर निराला की प्राकृतिक सौन्दर्य चेतना को निम्न शीर्षकों में प्रस्तुत करना अधिक समीचीन प्रतीत होता है ।

1. आलम्बन रूप में प्रकृति–सौन्दर्य

(क) षडऋतु	(ख) नाना पुष्पों का सौन्दर्य
(ग) उषा प्रभात	(घ) सन्ध्या
(ङ) रात	(च) निर्झर

(छ) वन–उपवन (ज) सर–सागर–सरिता

(झ) खगकुल कीट पतंग (ञ) उत्सव महोत्सव आदि

(ट) खेत–खलिहान (ठ) चाँद, चाँदनी और तारकावलियाँ

(ड) बादलों के विविध रूप

2. उद्दीपन रूप में प्रकृति–सौन्दर्य

3. मानवीकरण रूप में प्रकृति–सौन्दर्य

4. वातावरण के रूप में प्रकृति–चित्रण

5. प्रतिक–विधान के रूप में प्रकृति–चित्रण

6. अलंकार विधान रूप में प्रकृति–चित्रण

7. रहस्यात्मक अभिव्यक्ति के रूप में प्रकृति–चित्रण

8. प्रकृति–वर्णन और कवि–प्रसिद्धयाँ

2.4 (आलम्बन रूप में) प्रकृति चित्रण

(क) ऋतु :

भारत का कोना–कोना प्रसन्न प्रकृति से शोभित है । यहाँ की प्रकृति षट् ऋतुओं से अपनी शोभा को विस्तार प्रदान करती है। महाकवि निराला उच्चकोटि के सौन्दर्य स्रष्टा और सौन्दर्य द्रष्टा हैं । कवि ने प्रकृति की छवियों को बड़ी आत्मीयता से निहारा है और प्रत्येक नवऋतु के आगमन पर नवरूपाकृति धारण करती प्रकृति के बहूविध चित्र रचे हैं । साहित्य हो या जीवन–जगत्, सर्वत्र वसन्त की वासन्ती सुषमा का उल्लास मर्म को बेधता है । अतः निराला जी ने भी ऋतु राज वसन्त के मनोहर चित्रों की फुहारों तथा अन्य ऋतुओं का भी प्रफुल्ल चित्रण उत्फुल्ल मन से किया हैं ।

वसन्त :

निराला नवल वसन्त के कवि हैं । वसन्ती वस्त्रों में सजी–धजी धरती ऋतुराज वसन्त के स्वागत में धन्य हो रही है। कलियों के वृक्षों के हृदय की अरूणिमा और भी तरूण–तरूण हो गई है । कोयल एवं पंचम स्वर और पक्षियों का स्वरूप अत्यन्त सुन्दर है । प्रणयक्लमा नायिका की भाँति वनश्री चारूतरा हो गई है :

रँग गयी पग–पग धन्य धरा,
हुई जग जगमग मनोहरा ।
वर्णगन्ध धर, मधुमरन्त भर,
तरू उर की अरूणिमा तरूणतर
खुली रूप–कलियों में पर भर
स्तर–स्तर सुपरिसिरा ।
गूँज उठा पिक पावन पंचम,

खग–कुल–कलरव मृदुल मनोरम,
सुख के भय काँपती प्रणय–क्लम
वन श्री चारूतरा ।

ऋतुराज के मनभावन आगमन की सजावटें हो रही हैं । उसके स्वागत में प्रकृति और नगरी दोनो ही अति व्यस्त हैं । स्वागतगान के रूप में कोकिल वन्दन ध्वनि गाने को है, द्रुम–दल नवपल्लव नवोत्साह से सिहर रहे हैं और श्रृंगारयुक्त कन्याएँ रूपीकलिकाएँ अपने प्रियतम को खोजती लज्जा के कारण मुँह फेर ले रही हैं । ऋतुराज को मुकुट पहनाने के लिए आम्रदल की मञ्जरियों का मुकुट होगा जिसमें नये नीलम जड़ित होंगे । ऐसी आनन्दमयी बेला में, प्रसन्नता से डालें झुक–झुक कर लड़ियों की छवि को ग्रहण कर रही हैं :

अति ही मृदु गति ऋतुपति की
प्रिय डालों पर, प्रिय आओ,
पिक के पावन पंचम में,
गाओ, वन्दन–ध्वनि गाओ !
सिहरे–द्रुम–दल, नव पल्लव
फूटे डालों पर कोमल,
लहरे मलयानिल, कलरव
भर लहरों में मृदु–चंचल !
मुद्रित–नयना–कलिकाएँ
फिर खोल नयन निज, हेरें,
पर मार प्रेम के आयें,
अलि, बालाएँ मँह फेरें !
मंजरियों के मुकुटों में
नव–नीलम आम्र–दलों के
जोड़ो मंजुल घड़ियों में
ऋतुपति को पहनाने को
झुक डालों की लड़ियों में !

किसी चक्रवर्ती सम्राट की तरह ऋतुराज अपने आगमन की पूर्व सूचना भेज देता है । जिससे प्रत्येक हृदय में प्रणय का उन्मेष हो जाता है । सभी की आँखे इधर ही लग जाती हैं । जिधर से ऋतुराज बसन्त का आगमन होने वाला है ।

दूत, अलि, ऋतुपति के आये ।
फूट हरित पत्रों के उर से

स्वर–सप्तक छाये ।
दूत, अलि, ऋतुपति के आये ।
काँप उठी विटपी, यौवन के
प्रथम कम्प, मिस्रमन्द पवन से,
सहसा निकल लाज चितवन के
भाव–सुमन छाये ।
वही हृदय–हर प्रणय–समीरण,
छोड़ छोर नम–ओर उड़ा मन,
रूप–राशि जागी जगती–तन
खुले–नयन, भाये ।
देख लोल लहरों की छल–छल,
सखियाँ मिल कहतीं कुछकल कल
वहीं साँस में शीतल–परिमल
तन–मन लहराये–
दूत अलि ऋतुपति आये ।

ऋतुराज वसन्त आ जाता है । ऐसे पावन पर्व पर बालाएँ अपनी तरलिम भावना को गीतों में ढालकर मनोबल रूप में गाती हैं :

सखि, वसन्त आया
भरा हर्ष वन के मन
नवोत्कर्ष छाया
किसलय वसना नव–वय–लतिका
मिली मधुर प्रिय–उर तरू पतिका
मधुप–वृन्द बन्दी–
पिक स्वर नभ सरसाया ।
आवृत सरसी–उर–सरसिज उठे,
केशर के केश कली के छूटे,
स्वर्ण–शस्य–अंचल
पृथ्वी का लहराया ।

अर्थात ऋतुराज बसन्त के आगमन का स्वागत सभी ने अलग–अलग किया । प्रसन्न वन के मन में नवोत्कर्ष छा गया किसलयवसना लतिका उर में मधुर प्रिय को लिए तरूपति से मिल रही है । भ्रमरसमूह गान कर रहे हैं, कोयल का वन्दन स्वर सम्पूर्ण गगन में गुंजायमान हो रहा है । पृथ्वी के हृदय में कमलों का समूह छा गया है केशर रूपी केश में अर्द्धप्रस्फुटित कलियाँ गुँथ गई हैं । पीत और हरित शस्य सम्पन्न धरती का अंचल लहरा उठा है ।

ऋतुराज की शोभा सर्वत्र छायी है । वासन्तिक मादकता से निराला का कवि मन मस्त हो उठा है । सर्वत्र छायी मादकता कोकित की पंचामतान से और भी मधुर मदिर हो गई है :

आज प्रथम गायी पिक पंचम ।
गूँजा है मरू विपिन मनोरम ।
मरूत–प्रमद, कुसुम–तरू झूले,
बौर–बौर पर भौंरे भूले,
पात–गात के प्रमुदित झूले,
छायी सुरभि चतुर्दिक उत्तम
प्रथम वर्ष की पाँख खुली है,
शाख–शाख किसलयों तुली हैं,
एक और माधुरी घुली है,
गीत–गन्ध–रस वर्णो अनुपम ।

मृदुलता धरती की वसन्ती शोभा में भी निहित है । कवि का मन गद्गद् होकर गा उठता है :

(1) आओ, आओ फिर, मेरे वसन्त की परी–
छवि विभावरी–
सिहरो, स्वर से भर–भर अम्बर की सुन्दरी
छवि विभावरी !

(2) आयी है फिर मेरी 'बेला की यह बेला,
'जुही की कली' की प्रियतम से परिणय–हेला,
तुमसे मेरी विर्णन बातें,–सुमिलन बेला,
कितने भावों से हर जब हो मन पर विहरी–
छवि विभावरी ।

वर्षा :

वासान्तिक मदिरता के पश्चात बरसात के निरूपम में कवि का मन खूब रमा है । काली कजरारी श्याम घटाएँ, बादलों की फुहारों ने निराला के मन को मोह लिया है । बिजली के कौंध की छन–छन, नीड़ों में पक्षियों का निःस्वन और सरिता की सजलता से कवि का मन आनन्दित हो उठा है । लोक धुन से प्रसन्न निम्न पंक्तियाँ देखें :

श्याम घटा घन घिर आयी ।
पुरवाई फिर–फिर आयी ।
बिजली कौंध रही है छन–छन,
काँप रहा है उपवन–उपवन,
चिड़िया नीड़–नीड़ में निःस्वन
सरित–सजलता तिर आयी ।

जो काली बदरिया गगन में छायी थी, अब और गहन हो गई और बादलों का उमड़ना–घुमड़ना आरम्भ हो गया है । वर्षा के आगमन की कल्पना से मयूरों ने नृत्य प्रारम्भ कर दिया, दादुरों और बगुलों का मन प्रसन्न हो गया । पक्षिगण पुलकित हो गए और उधर युवतियाँ अपने परदेशी प्रियतम के आने से विभोर हो रही है :

उमड़–घुमड़ घन
सावन आये ।
मन–मन के मनभावन आये ।
मोर शोर करते हैं वन में,
नाच रहे हैं फिर निर्जन में,
दादुर की रट भी छन छन में,
विपुल–बलाक की धावन आये ।
बूँदो की रिमझिम फुहार है,
पवन–अवनि, फिर–फिर बहार है,
खगकुल की पुलकित गुहार है,
पुर के पाहुन पावन आये ।

बरसात से उत्पन्न प्रकृति सुन्दरी का एक रूप और अध्याय है :

फिर नभ घन घहराये
छाये, बादल छाये ।

कौंधी चपला अलक–बन्ध की
परी प्रिया के मुख की छवि–सी
बूँदो सुख के आँसू ढलकर
पृथ्वी के उर आये ।
उगी दूब की अति हरियाली
गली–गली सुख–सेज बिछाली,
प्रकृति सुन्दरी नें शोभा के
रँगकर दिखलाये ।

भौतिक दृष्टि से वर्षा की बड़ी महिमा है । जल से सभी जड़ और चेतन जीवन प्राप्त करते हैं । नर–नारी, किसान–मजदूर, जीव–जन्तु, बाल–वृद्ध सभी को वर्षा अच्छी लगती है :

प्राण तुम पावन–सावनगात
जलज जीवन–यौवन अवदात
मृदु बूँदो चितवन की लड़ियाँ,
केश, मेघ, मुख पलक अँखड़ियाँ,
प्रमन चारू चिन्तन की घड़ियाँ,
जलभर भूमिसुजात, प्राण तुम
ही ज्वार की परियाँ झूमी,
उड़द बदलकर फैली घूमी,
लिए मूँग ने पात प्राण तुम ।

निराला के काव्य में वर्षा के अनेक मनोहारी छन्द हैं । कवि ने इनमे प्रकृति की आनन्दमयता को अत्यन्त सहज रूप में प्रस्तुत किया है । वर्षा ऋतु से सम्बन्धित अन्य छन्दों में भी कवि ने वर्षा आगमन पर प्रफुल्लित नारी और प्रकृति दोनों के शोभाशाली सामंजस्य की आलहादमयी पीठिका पर अपनी कविता का वितान रचा है । निराला ने ध्वन्यात्मक कौशल के द्वारा चित्र को सचेत बना दिया है । निराला की कविता कामिनि वर्षा की फुहारों से सहृदयों के चित्र को आनन्द से आर्द्र बना देती है ।

शरद् :

वर्षा ऋतु के बाद शरद् ऋतु का आगमन होता है । शरद् का आकाश स्वच्छ होता है । ओस की बूँदो का भी अवतरण हो जाता है । वन में हर सिंगार मुसकुराते हैं । ऐसे समय, शुभ्र शरद् की शुभ्रता को शब्दाकार देते हुए निराला लिखते हैं :

शुभ्र शरत आयी अम्बर पर,
बड़ी रास कमलों की सर–सर ।
हरसिंगार के फूल प्रात को
बिछे रश्मि से लजी–गात ओ ।
शीर्ण हो चली नदियाँ, झरने ।
बदले वेश जनों ने घर–घर !
खँजन देख पड़े, आये हैं,
देख, महोख सबन छाये हैं,
तरूणी की पक्ष्मल आँखो की
लहरायी छबि सुन्दर–सुन्दर ।

शारदीय सुषमा का एक चित्र और देखें :

शरत की शुभ्र गन्ध फैली
खुली ज्योत्सा की सित शैली ।
काले बादल धीरे–धीरे
मिटे गगन को चीरे–चीरे,
पीर गई उर जाये पी रे,
बदली धुति मैली ।
शीतावास खगों ने पकड़े,
चहचह से पेड़ों को जकड़े,
यौवन से वन–उपवन अकड़े,
ज्वारों की लटकी है थैली ।

शिशिर :

कवि निराला ने शिशिर का भी चित्रण बड़े यथार्थ रूप में किया है । शीत की गहरी विभावरी में बहती शिशिर समीर का एक बिम्ब देखें :

बह चली अब अलि, शिशिर–समीर !
काँपी फीरु मृणाल वृन्त पर

नील–कमल–कलिकाएँ थर–थर,
प्रात अरूण को करूण अश्रु भर
लखती अहा अधीर !
बन–देवी के हृदय द्वार से
हीरक झरते हर सिंगार के,
बेध गया उर किरण–तार के
विरह–राग का तीर ।
विरह–परि–सी खड़ी कामिनि
व्यर्थ बह गयी शिशिर–यामिनि,
प्रिय के गृह की स्वाभिमानिनी
नयनों में भर नीर !'

हेमन्त :

निराला ने हेमन्त परी की सुन्दरता का वर्णन इस प्रकार है :

कुन्दों के विकास के
शुभ्रहास पर उतरी
ओस बिन्दुओं से शीतल
हेमन्त की परी
भू की तुम्हीं हरित नभ पर
हो श्वेत मंजरी,
मन्द–गन्ध–संचारिता
शीता, ऋता, किभरी
मटर–पुष्प के सौरभ–धन से
लुटी हुई तुम,
सरसों के पीले पुष्पों की
साड़ी पहने,
अलसी के नीले फूलों की
रेखा जिसमें ।

ग्रीष्म :

ऋतुओं का सर्वाधिक कष्टदायी ग्रीष्म ऋतु है । ग्रीष्म ऋतु की झुलसाती किरणों से आन्दोलित कवि की ये पंक्तियाँ देखें:

ग्रीष्म तापमय, लू की
लपटों की दोपहरी
झुलसाती किरणों की,
वर्षों की आह ठहरी,
गेहूँ, चने, मटर, मड़कर
घर आये अतिशय
दिखा ग्राम में जहाँ नहीं
साधन का संचय ।

ऋतुओं के सौन्दर्य वर्णन में निराला जी जहाँ जुही, बेला, चमेली तथा अन्य विविध पुष्पों के सुगन्ध का रस लेते हैं वहीं खेत–खलिहान, अलसी, मटर, सरसों, के फूलों के सौन्दर्य को समेटना भी नहीं भूले हैं ।

नाना पुष्पों का सौन्दर्य :

सर्वाधिक अमूल्य और हृदयहारी निधि हैं । ये चित्त को घनीभूत रूप से आकृष्ट करते हैं । 'जुही' निराला जी का सर्वाधिक प्रिय पुष्प है :

विजन–वन वल्लरी पर
सोती थी सुहाग भरी–स्नेह–स्वप्न–मग्न–
अमल–कोमल–तनु–तरूणी–जुही की कली ।

उपवन में जुही के साथ विकसित नाना पुष्पों की छवि को उरेहते हुए निराला लिख रहे हैं कि :

फिर उपवन में खिली चमेली
मन्द पवन गन्ध की अकेली
छीन लिए सुख साज आज के
रूपवती युवती समाज के
बादल के दल के दल के बल
कोमल कमल विलास सहेली
अपराजिता, नयन की सुनीयत
अपने ही यौवन से विव्रत

जुही मालती आदिक सखियाँ
हंसती, करती है रँगरेली ।

निराला ने नर्गिस, शेफालिका, मटर, सरसों और अलसी के भी पुष्पों का वर्णन अपनी कविताओं में किया है । नर्गिस की प्रभावशीलता को रेखांकित करते हुए वे लिखते हैं कि :

युवति धरा का यह था भरा वसन्त–काल...
पृथ्वी स्वर्ग से ज्यों कर रही है होड़ निष्काम
मैंने फेर मुख देखा, खिलीं हुई अभिराम
नर्गिस...
वह हवा नर्गिस की, मन्द छा गयी सुगन्ध,
धन्य, "स्वर्ग यहीं", कह किये मैंने दृग बन्द ।

शेफालिका :

खुलती मेरी शेफली
हँसती थी डाली डाली
किसकी यह शोभा छीनी
जो वृन्तो पर रँगिनी ।
हल्के दल, भीनी भीनी ।
आयी सुगन्ध मतिवाली ।

पुष्पों का एक वर्णन और देखें–

मटर पुष्प के सौरभ–धन से
लुटी हुई तुम,
सरसों के पीले पुष्पों की
साड़ी पहने
अलसी के नीले फूलों की रेखा जिसमें ।

उषा–प्रभात :

रात के अन्तिम प्रहर से उषा का अभ्युदय होता है । प्राची दिशा में आकाश को राग–रंजित करते हुए अरुण के आलोक से निराला का रोम–रोम रंजित हो उठा है । प्रथम रवि की किरणों के खिलते ही सम्पूर्ण विश्व में जागरण का उद्‌घोष हो उठता है :

अभयसंख बजा तुम्हारा विश्व में

प्रथम रवि की किरण की कलि जब खिली

कली के गोरे अधर को चूमकर

अनिल से पल्लव हिंडोला झूलती ।

इसी प्रकार निराला ने सूर्योदय का सम्पूर्ण रूप प्रस्तुत कर दिया है । प्रभात के स्वर्णिम सौन्दर्य को देखकर निराला का भावुक–विदग्ध चित्त बहुत कुछ सोचने लगता है । कवि ऐसे समय लोगों को उद्‌बोधित करते हुए लिखता है कि :

"जागो जागो आया प्रभात,

बीती वह, बीती अन्धरात,

झरता भर ज्योतिर्मय प्रप्रात पूर्वाचल,

बाँधो, बाँधो किरणें चेतन

तेजस्वी, हे समजिज्जीवन,

निराला जी ने प्रकृति के रमणीय उपादनों पर चेतनता का आरोप कर प्रत्येक दृश्य को चेतन बना दिया है ।

संध्या :

संध्या का अत्यन्त सचेत वर्णन निराला ने किया है । कवि ने संध्या को श्यामा के रूप में प्रस्तुत किया है।

निराला की 'संध्या सुन्दरी' नामक अपनी लाक्षाणिकता सूक्ष्मता तथा चेतनता के कारण जगत् में अति चर्चित रही है । कवि ने इस कविता में सन्ध्या, कविता और कामिनि का तादाम्य स्थापित कर दिया है । कवि की सोच और पहुँच विशेष रूप से द्रष्टव्य है :

दिवसावसान का समय

मेघमय आसमान से उत्तर रही है

वह सन्ध्या–सुन्दरी परी–सी

धीर–धीरे–धीरे ।

तिमिरांचल में चंचलता का कहीं कहीं आभास,

मधुर–मधुर है दोनों उसके अधर,

किन्तु गम्भीर, नही है उसमें हास–विलास

हँसता है तो केवल तारा एक

गुँथा हुआ उन घुँघराले काले बालों में,

ह्मदय राज्य की रानी का वह करता है अभिषेक ।

अलसता की–सी लता
किन्तु कोमलता की वह कली
सखी–नीरवता के कन्धे पर डाले बाँह
छाँह–सी अम्बर पथ से चली
नहीं बजती उसके हाथों में कोई वीणा
नहीं होता कोई अनुराग–राग–आलाप,
नुपुरों में भी रून–झुन, रून–झुन, रून–झुन नहीं,
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द सा "चुप चुप चुप"
है गूँज रही तब कहीं,
व्योममण्डल में–जगती–तल में
मदिरा की वह नदी बहाती आती
थके हुए जीवों को वह सस्नेह
प्याला वह एक पिलाती,
सुलाती उन्हे अंक पर अपने,
दिखलाती फिर विस्मृति के वह कितने मीठे सपने ।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि निराला जी ने इस कविता में सन्ध्या का बड़ा ही जीवन्त चित्र खींचा है । कवि के शब्द विधान में संध्याकालीन वातावरण को मदिर, मानवी सौन्दर्य, रूपाकृति प्रदान किया है ।

रात :

सूर्यास्त के बाद संध्या की लालिमा नीलिमा में परिवर्तित हो जाती है । निराला ने रात का बड़ा ही स्वाभाविक चित्रण किया है । ये चित्रण दो प्रकार का है । कहीं रात का कोयल रूप है :

निशा का यह स्पर्श शीतल
भर रहा है हर्ष उत्कल
तारिकाओं की विभा से स्नात
अंलियो की कुन्द–कलिका–गात
हिल रहा है श्वेत अंचल शान्त
पवन से अज्ञात प्रतिपल ।
चन्द–प्रिय–मुख से लगे हैं नयन,
शिखर–शेखर भवन पर है शयन,
वायु व्याकुल कर रही चमन

अलक–उपवन, गन्ध अन्ध चपल ।

–और कहीं अन्धकार से स्तब्ध कठोर रूप है–

है अमानिशा उगलता गगन घन अन्धकार,
खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार,
अप्रहित गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल,
भूधर ज्यों ध्यान–मग्न, केवल जलती मशाल ।

निर्झर :

प्रकृति का उन्मुक्त सौन्दर्य निर्झर के झर–झर प्रवाह में दृष्टिगत होता है । शिखर के शेखर से उद्वेलित झरने का दृश्य देखें:

अचल के चंचल क्षुद्र प्रपात !
मचले हुए निकल आते हो,
उज्जवल ! धन–वन अन्धकार के साथ
खेलते हो क्यों क्या पाते हो
तुम्हारा करता है, गतिरोध
पिता का कोई दूत अबोध–
किसी पत्थर से टकराते हो
फिर कर जरा ठहर जाते हो,
उसे जब लेते हो पहचान–
समझ जाते हो उस जड़ का सारा अज्ञान,
फूट पड़ती है ओठों पर तब मृदुमुस्कान,
बस अजान की ओर इशारा करके चल देते हो,
भर जाते हो उसके अन्तर में तुम अपनी तान ।

वन–उपवन :

वसन्त के आगमन पर पुष्पों से विहँसित आनन वाले उद्यानों का रूप रूपायित करते हुए निराला लिखते हैं–

सिहरे द्रुम दल, नव पल्लव
फूटे डालों पर कोमल,

लहरे मलयानिल, कलरव
भर लहरों में मृदु–चंचल ।
मुद्रित–नयना–कलिकाएँ
फिर खोल नयन निज हेरें,
अधि, पल्लव के पखनों पर
पालो कोमल तन पालो,
आलोक–नग्न पलकों पर,
प्रिय की छवि खींच उठा लो ।

सर–सागर–सरिता :

निराला ने सर–सागर–सरिता का बड़ा ही सहज रूप चित्रित किया है । प्रातःकालीन शतदलों से शोभित निर्मल सरोवरों का चित्र बनाते हुए वे लिखते हैं–

खिले अंग–अंग अमल
सर के प्रातः, शतदल
पावन–पावनोत्कलवपल,
अकलमन्द–गन्द–नयन ।

निराला जी ने उत्ताल तरंगाघात प्रलय घनगर्जन करते विशाल अम्बुधि का भी गम्भीर रूप अंकित किया है :

"उत्ताल तरंगाघात–प्रलय–घन–गर्जन–जलधि–प्रबल में,"

सूर्योदय होते ही हिमाच्छादित शिखरों पर किरणें पड़ती हैं– किरणें बहुरंगी होती हैं बहुवर्णी रश्मियों से सम्पृक्त सरोवरों का सौन्दर्य ऐसा प्रतीत होता है मानों प्रकृति क्षण–क्षण अपनी रेशमी साड़ी बदल रही हो :

चोटियों की बर्फ पर
किरणें जब पड़ती हैं,
सप्तवर्णी रश्मियाँ
पड़ती हैं तालों पर,
प्रतिक्षण रेशमी रंग बदलता हुआ
कभी पीला, कभी नीला,
कभी इन्द्रधनुषी है

छायापात जैसा हुआ,
जैसे किरीटिनी
प्रकृति क्षण–क्षण बाद,
साड़ी बदलती हो ।

सरिता :

यमुना और गंगा की छबि देखें :

यमुने मेरी इन लहरों में
किन अधरों की आकुल तान
पथिक–प्रिया–सी जगा रही है
उस अतीत के निरव गान ।
उर–उर में नूपुर की ध्वनि–सी
मादकता की तरल तरंग
विचर रही है मौन पवन में
यमुने, किस अतीत के संग ।

पतित पावनी गंगे !
निर्मल–जल–कल–रंगे !
कनकाचल–विमलधुली,
शत–जनपद–प्रगटः खुली
मदन–मद न कभी तुली
लता वारि–भू–भंगे ।

धारा :

सरिता के साथ कवि ने उसकी धारा का भी वर्णन किया है । बेरोक–टोक बहती धारा, मतवाली धारा का निरूपण निराला ने इस प्रकार किया है :

देखते नहीं–वेग से हहराती–
नग्न प्रलय का–सा ताण्डव हो रहा–
चाल कैसी मतवाली है–
बहती कैसी पागल धारा !
छुटी लट इधर–उधर लटकी है,

श्याम वक्ष पर खेल रही है
स्वर्ण–किरण–रेखाएँ ।...
उसी तरह हंसती पागल–सी बहती–
"यह जीवन की प्रबल उमंग,
जा रही मैं मिलने के लिए,
पारकर सीमा,
प्रियतम असीम के संग ।"

खककुल, कीट–पतंग :

निराला ने विशेष रूप से कोकिल और भ्रमर का वर्णन किया है, फिर भी कोयल उन्हें अतिप्रिय है :

कुंज–कुंज कोयल बोली है
स्वर की मादकता घोली है ।

गूँज उठा पिक पावन पंचम
खग–कुल कलरव मृदुल मनोरम ।

भ्रमर पर वे लुब्ध हैं :

मरूत–प्रवाह, कुसुम–तरू फूले
बौर–बौर बर भौंरे भूले ।

उत्सव महोत्सवादि :

परिवर्तन प्रकृति की शाश्वत प्रवृत्ति है । प्रकृति के रूप और प्रकार में सतत यह संलक्ष्य है । इसी परिवर्तन के फलस्वरूप उत्सवों में भी परिवर्तन एवं मनाने की भावना दिखायी पड़ती है । भिन्न–भिन्न ऋतुओं में भिन्न–भिन्न के त्यौहार आयोजित होते हैं । फाल्गुन के महिने में होली का उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया जाता है । फाल्गुन के वैशिष्ट्य को निरूपित करते हुए निराला लिखते हैं कि :

फूटे हैं आमों में बौर,
भौंर वन–वन टूटे हैं ।
होली मची ठौर–ठौर,
सभी बन्धन छुटे हैं ।
फागुन के रंगराग,
बाग–वन–फाग मचा है,
भर गये मोती के झाग,

जनों के मन लूटे हैं ।
माथे अबीर से लाल,
गाल सेंदुर के देखे,
आँखे हुई हैं गुलाल,
गेरू के ढेले कूले हैं ।

वसन्तागम से उल्लास का वातावरण छा गया है । कलियों, किसलियों में फाग का रंग निहित कर कैंसी मनोज कविता निराला रचते हैं :

केशर की, कलि की पिचकारी
पात–पात की गात सँवारी ।
राग–पराग–कपोल किये हैं
लाल–गुलाल अमोल लिये हैं
तरू–तरू के तन खोल दिये हैं
आरती जोत–उदोत उतारी
गन्ध–पवन की धूप सगरी ।
गाये खग–कूल–कण्ठ गीत शत,
संग मृदग तरंग–तीर–हत,
भजन मनोरंजन–रत–विरत,
राग–राग को फलित किया री
विकल अंग कल गगन–विहारी ।

खेत–खलिहान :

निराला जीवन के कवि हैं, नागरिक जीवन के ही नहीं, वरन् ग्राम्य जीवन के भी अत्यन्त सुन्दर रूप उन्होने रूपायित किये हैं । वे खेत–खलिहान का दृश्य बताते हुए लिखते हैं कि :

रबी करी आम के तले
खलिहान लगाया,
चना, मटर, जौ, गेहूं, सरसों
कटकर आया ।
पड़ी चारपाई, जिस पर
बैठा तकवा हा ।
चूल्हा वहीं कहीं लगवाया

जिसने चाहा...

लगे खलिहान,

सुवेशा जैसे मस्ती ।

चाँद, चाँदनी और तारकावलियाँ

आकाश में चाँद आ विराजा है । सरोवर में चाँदनी के उतरते ही कमलों ने पलकों को बन्द कर लिया है, कवि कल्पना करता है, मानो नहाती हुई चाँदनी की सुन्दरता को देखकर कमल बन्द हो गये हैं । इसी कल्पना को शब्दायित करते हुए कवि कहता है कि :

शरत् कमल, कमलों पर

आया विरोधाभास

उतरी है चाँदनी

मुद चलें इन्दीवर...

चन्द्र आकाश पर पूरी तरह निकल आया

स्निग्ध वह चन्द्रिका

उतरी सरोवर पर

स्वर्ग की अप्सरा

स्नान करने के लिए

लोक–लोचनो से परे

जिसकी छवि देखकर

कमल वे मुँद गये

सब कुछ स्वर्गीय है,

लोग जन कहा किये ।

बादलों के विविध रूप

बादलों को जितनी निकटता से निराला ने देखा है उसके रूप और प्रकृति का अनुभावन किया है, शायद ही हिन्दी का कोई वैसा कवि कर पाया हो । निराला जी के बादलों के सौन्दर्य दर्शन एवं वर्णन में मौलिकता और नवीनता है । कवि निराला की बादल बिषयक कविताओं का अध्ययन दो वर्गो में किया जा सकता है :

बादलों का कोमल सुकुमार रूप :

कवि निराला नें बादलों को शिशु रूप में चित्रित किया है । शिशु का रूप बड़ा ही हृदयावर्जक होता है । बादलों के ऐसे अभिराम सौन्दर्य को प्रस्तुत करते हुए कवि कहता है :

उमड़ सृष्टि के अन्तहीन अम्बर से,

घर से क्रीड़ारत बालक–से

ऐ अनन्त से चंचल शिशु सुकुमार...
तुम्हारे कुंचित केशों में
अधीन विक्षुब्ध ताल पर
एक इमन का–सा अति मुग्धविराम ।

बादलों का एक रूप और भी देखें :

मुक्त ! तुम्हारे मुक्त कण्ठ में
स्वरारोह, अवरोह विघात
मधुरमन्द्र, उठ पुनः पुनः ध्वनि
छा लेती है गगन, श्याम कानन
सुरभित उदयान,
झर–झर–रवे भूधर का मधुर प्रपात ।
बधिर विश्व के कानों में
भरते हो अपना राग,
मुक्त शिशु ! पुनः पुनः एक ही राग अनुराग ।

पूरा आकाश बादलों से भरा हुआ है । वे इधर–उधर दौड़ रहे हैं । निराला उनका गत्वरसौन्दर्य प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि :

निरंजन बने नयन अंजन !
कभी चपल गति, अस्थिर गति,
कभी जलनिधि–जल विपुल अथाह,
कभी क्रीड़ारत सात प्रभंजन–
तने नयन–अंजन !
कभी किरण–कर पकड़–पकड़कर
चढ़ते हो तुम मुक्त गगन पर,
झलमल ज्योति अयुत–कर–किंकर
सीस झुकाते तुम्हें तिमिरहर ।

बादलों की चलायमान श्यामल घटाओं को देखकर निराला का हृदय इस प्रकार उच्छलित होकर गाने लगता है :

बने नयन—अंजन !

आज श्याम—घन श्याम, श्याम छवि,

मुक्त कण्ठ है तुम्हें देख कवि,

अहो कुसुम—कोमल—कठोर—पवि !

शत—सहस्र—नक्षत्र—चन्द्र—रवि—संस्तुत

नयन—मनोरंजन !

बने नयन अंजन ।

बादलों का क्रान्तिकारी रूप

निराला ने बादलों के प्रखर क्रान्तिकारी रूप की भी व्यंजना की है । 'बादल राग' नामक कविता में वे लिखते हैं कि :

झूम—झूम मृदु गरज—गरज घनघोर !

राग—अमर ! अम्बर में भर निज रोर ।

झरझर—झर निर्झर—गिरि—सर में,

घर, मरू, तरू—मर्मर, सागर में,

सरित—तड़ित—गति चकित पवन

मन में, विजय—गहन—कानन में,

आनन—आनन में रव—घोर—कठोर

राग—अमर ! अम्बर में भर निजरोर ।

क्रान्ति सदैव शोषक वर्ग के प्रति होता है, इस क्रान्ति से सदैव छोटे वर्ग (कृषक, मजदूर, अबला, निर्धन) लाभान्वित होते हैं । बादलों की क्रान्ति का परिणाम हुआ कि छोटे—छोटे पौधे विकसित होने लगे, अट्टालिकाओं पर वज्रपात होने की आशंका छा गयी है । वज्रगर्जन से धनी भयभीत हैं और किसान उन्हें अधीर होकर बुला रहा है । क्रान्ति और क्रान्ति के परिणाम चित्रण निराला जी इस प्रकार करते हैं :

तिरती है समीर सागर पर

अस्थिर सुख पर दुःख की छाया

जग के दग्ध हृदय पर

निर्दय विप्लव की प्लावित माया

यह तेरी रण—तरी

भरी आकांक्षाओं से—

हंसते हैं छोटे पौधे लघुभार—

शस्य अपार,

हिल–हिल

खिल–खिल

हाथ हिलाते

तुझे बुलाते

विप्लव–रव से छोटे ही हैं शोभा पाते...

धनी–वज्र–गर्जन से बादल !

त्रस्त नयन–मुख ढाँप रहे हैं ।

जीर्ण बाहु है, जीर्ण शरीर,

तुझे बुलाता कृषक अधीर,

ऐ विप्लव के वीर !

चूस लिया है उसका सार,

हाड़–मात्र ही है आधार

ऐ जीवन के पारावार !

बादलों की गर्जना सुनकर धरती के हृदय में पड़े बीज भी अंकुरित होना प्रारम्भ हो जाते हैं । यह अंकुरण उनकी प्रसन्नता की प्रतीति कराता है :

घन, भेरी–गर्जन से सजग सुप्त अंकुर

उर में पृथ्वी के आशाओं से

नवजीवन की,ऊँचा कर सिर,

ताक रहे हैं, ये विप्लव के बादल ।

निराला ने उच्छृंखल, सम्राट और उन्मुक्त शिशु, दोनों का हीं रूपक विधान बादलों के क्रमशः भयंकर और कोमल रूप के लिए किया है । "मेरे पागल बादल से बादलों की उन्मत्तता की प्रभावशाली व्यंजना हुई है । बादलों के सुकुमार व्यापक और रोद्र रूप का पूर्ण दर्शन 'बादल राग' कविता में होता है ।

2.5 उद्दीपन रूप में प्रकृति चित्रण

निराला मानते हैं कि वन, उपवन, लतान्तराल वर्षा वसन्त तथा प्राकृति के एकान्त मनोरम प्रांगण आदि के विराट वैभव में ही सदा प्रेम पलता है । किन्तु प्रेमास्पद के प्रवासी होने पर ये ही रमणीय प्राकृतिक उपादान प्रेमी की वेदना को और भी विवर्धित कर देते हैं । प्राकृति के उद्दीपनगत को रूप को भी कवि ने बड़ी सहृदयता से उकेरा है ।

वर्षा ऋतु में वियोगिनी व्यथित है । आकाश में बादल छा हुए हैं और जल के बरसते ही विरहिणी की आँखो में आँसू छा जाते हैं । चारों और हर्षोल्लास का वातावरण छाया है, लेकिन वह अपने घनश्याम के अभाव में चिन्तित

व्याकुल है :

घर आये घनश्याम न आये
जल बरसे आँसू दृग छाये ।
पड़ें हिंडोले, धड़का आया
बढ़ी पेंग घबरायी काया,
चले, गले गहराई छाया,
पायल बजे, होश मुरझाये,

प्रियतम परदेशी है । पावस के घर घिर आये हैं । काले–काले बादल, नील सिन्धु में खिले कमलदल, हरितज्योति, चंचलचपला हृदय को व्यथित कर रहे हैं । ऐसी स्थिति में नायिका अपनी सखी से अपनी अन्तर्वेदना को निवेदित कर रही है :

अलि, घिर आये घन पावस के ।
लख ये काले–काले बादल
नील सिन्धु में खुले कमल–दल
हरित ज्योति, चपला अति चंचल,
सौरभ के, रस के
अलि, घिर आये घन पावस के ।
छोड़ गये गृह जब से प्रियतम
बीते अपलक दृश्य मनोरम,
क्या मैं हूँ ऐसे ही अक्षम,
क्यों न रहे बस के–
अलि, घिर आये घन पावस के ।

वसन्त, शिशिर, हेमन्तादि ऋतुओं में भी प्रणयिनि की व्यथा को भी कवि ने निरूपित किया है । इन स्थलों पर विरहिणी की वेदना कवि की वेदना बन गई है ।

2.6 मानवीकरण रूप में प्रकृति चित्रण

प्रकृति के सुन्दर सुकुमार उपादानों पर मानवीय चेतना का आरोप करते हुए जब उसका सौन्दर्योन्मीलन किया जाता है तब 'मानवीकरण' का दर्शन होता है । निराला के मन में प्रकृति के सूक्ष्म–से–सूक्ष्म, विराट–से–विराट उपादान उनकी कविता में मानवीय सुख–दुःख के अनुरुप अपना रूप प्राप्त करते हैं । निराला ने प्रकृति का मानवीकरण दो रूपी में किया है :

(1) नारी रूप में ।

(2) पुरुष रूप में ।

BoutFrontBlackMA Hindi Paper IV Nirala193-416#1

"जुही की कली" नामक कविता में मुग्धा नायिका का–सा भाव आ गया है । अमल–कोमल तनु–तरूणी–जुही की कली दृग बन्द किये शिथिल पत्रांक में सो रही है । प्रियतम पवन के झकझोर कर जागने पर वह नम्रमुखी खिलखिला कर आत्मसमर्पण करती है । 'जुही की कली' नायिका का रूप धारण कर कैसी जीवन्त अद्भुत हो गयी है :

विजन–वन–वल्लरी पर
सोती थी सुहाग–भरी–स्नेह–स्वप्न–मग्न
अमल–कोमल–तनु तरूणी–जुही की कली,
दृग बन्द किये, शिथिल–पत्रांक में...
नायक ने चूमें कपोल,
डोल उठी वल्लरी की लड़ी जैसे हिण्डोल ।
इस पर जागी नहीं
चूक–क्षमा माँगी नहीं ।
निद्रालस बंकिम विशाल नेत्र मुँदे रहीं ।

'संध्या' पर सुन्दरी का आरोपण वाला रूप देखें :

दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह सन्ध्या सुन्दरी परी सी
धीरे–धीरे–धीरे ।

शरद् और शिशिर के मध्य रेखा खींचना कठिन है । शरद् और शिशिर को दो बहनें मानकर निराला ने उनका कैसा अद्भुत रूप प्रस्तुत किया है :

सोती हुई सरोज–अंक पर
शरत्–शिशिर दोनों बहनों के
सुख–विलास–मद–शिथिल अंग पर
पदम–पत्र पंखे झलते थे
मलती थी कर चरण समीरण धीरे–धीरे आती
नींद उचट जाने के भय से थी कुछ कुछ घबराती ।
बड़ी बहन वर्षा ने उन्हें जगाया–
अन्तिम झोंका बड़े जोर से एक,
किन्तु क्रोध से नही, प्यार से,

अमल–कमल–सुख रेख,

झुक हँसते हुए लगाया,

सोते से उन्हें उठाया ।

(2) पुरूष रूप में

निराला जी ने पवन को नायक के रूप में चित्रित किया है । पवन से अपनी प्रिया 'जुही की कली' को जगाया, पर वह निद्रालस बंकिम विशाल नेत्र मूँदे ही रही । पवन के धैर्य का बाँध टूट गया और कली की सुन्दर सुकुमार देह झकझोर डाली :

निर्दय उस नायक ने

निपट निठुराई की

कि झोंको की झाड़ियों से

सुन्दर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली,

मसल दिये गोरे कपोल,

इस प्रकार निराला ने जड़ प्रकृति के ऐसे अनेक सजीव चित्रण किये हैं । निराला की प्रकृति विषयक इस धारणा के सन्दर्भ में दीनानाथ शरण ने लिखा है कि– प्रकृति को वह एक सहानुभूतिशील हृदय रखने वाली चेतन–मानवी के रूप में देखता था । यही कारण है कि छायावाद में प्रकृति निर्जीव और जड़ नहीं है । उसमें मानवीय भावनाएँ हैं, चेतना है ।

2.7 वातावरण के रूप में प्रकृति चित्रण

प्रकृति के इस रूप का चित्रण गद्य और पद्य दोनो ही विधाओं में होता है निराला जी ने वातावरण के रूप में प्रकृति का निरूपण किया है । वसन्त हो या बरसात, प्रातः हो या सन्ध्या, शरद हो या शिशिर, कोमल हो या कठोर सभी वर्णनों में सहजता दिखायी पड़ती है । रात के भयानक दृश्य को देखें जो भय मुक्त राम को भी हिला देती है :

है अमानिशा, उगलता गगन घन अंधकार,

खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन–चारू,

अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल,

भूधर ज्यों ध्यान मग्न, केवल जलती मशाल

स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय,

रह–रह उठता जग–जीवन में रावण–जय–भय ।

2.8 प्रतीक रूप में प्रकृति चित्रण

निराला ने प्रकृति के विभिन्न उपादनों का प्रतीक विधान के रूप में प्रयोग किया है । कलियों को मुग्धनायिका, पपीहा–विरहणी, भ्रमर का रसलोलुप पुरूष सरिता सरोवर प्रेम लता नवयौवना पतझार विरहिणी के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त हुए हैं । गुलाब का प्रयोग कवि ने शोषक (उच्च वर्ग) के लिए किया है । देखे :

अबे ! सुन बे गुलाब
भूल मत गर पाई तूने खुशबू रंगो आब
खून चूसा है खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा है कैपिटलिस्ट,

2.9 रहस्यानुभूति के प्रकाशन में प्रकृति चित्रण

कवि निराला ने रहस्यात्मक अभिव्यक्ति के लिए भी प्रकृति का विधान किया है । निराला उस परोक्ष सत्ता को जानने के लिए कैसे उत्सुक हैं ?

कौन तम के पार ? (रे, कह)
गन्ध–व्याकुल–कुल उर–सर
लहर–कचकर कमल–मुख पर
हर्ष–अलि हर स्पर्श द्वार सर,
गुंज बारम्बार । (रे, कह)

एक उदाहरण और देखें :

तुम भव सागर दुस्तार,
पार जाने की मैं अभिलाषा ।
तुम नभ हो, मैं नीलिमा,
तुम शरतकाल के बाल इन्दु
मैं हूँ निशीथ–मधुरिमा

2.10 अप्रस्तुत विधान में प्रकृति का चित्रण

निराला के प्रकृति वर्णन आलंकारिक रूप में भी किया है । कारण, प्रकृति, उनके मन में अनन्य अनुराग है । कवि ने उपमा रूपक आदि के माध्यम से प्रकृति सौन्दर्य का कामनीय रूप रचा है । कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य है :

उपमा :

फूल सी देह, द्युति सारी
हल्की तूल–सी सवारी ।

रूपक :

रूपक के रथ–रूप तुम्हारा
शारद विभावरी, नभ तारा
खिली चमेली देह गन्ध मृदु,
अन्धकार शुचिकेश, कुटिल ऋतु

नाद–व्यंजना का एक उदाहरण देखें :

कण–कण पर कंकण प्रिय
किण–किण एवं किंकिण
रण न–रण न नुपुर, उर लाज
लौट रंगिणी

2.11 इकाई सारांश–

(1) निराला ने प्रकृति को जो छवि प्रदान किया है । उससे प्रकृति और मानव में पार्थक्य करना अति दुरुह है । निराला की कविता में प्रकृति निराला सृष्टि अपने पूर्ण आयामों के साथ प्रस्तुत हुई है । उनके काव्य में विद्यमान प्रकृति की नाना छवियों के मनोरम चित्र मन को मुग्ध करते हैं जिस प्रकार से चिर पुरातन प्रकृति प्रतिपल नवीना और नवोल्लास से सम्पन्न रहती है उसी प्रकार निराला प्रकृति के अनेक नव्य रूपों को रचती जाती है ।

(2) मानव विवेकशील प्राणी है । सृष्टि के अनेक रूप हैं । इन नाना रूपों मे इसका प्राकृतिक रूप ही सर्वाधिक हृदयकर्शी है । और प्रकृति मानव की चिर सहचरी रही । चिरनवीना, अलौकिक अनेक रूपा प्रकृति के रूप को देखकर मानव अपने लोभ का संवरण न कर सका । उसने दीप्ति प्रकृति को चिर सहचरि बनाने के लिए आशाभरी दृष्टि से देखा, प्रकृति ने उसके मनोरथ को सुना और समझा तथा प्रियतम मानव को अपनी सहमति प्रदान कर दी ।

(3) भारत का कोना कोना प्रशन्न प्रकृति से शोभित है । यहाँ की प्रकृति षट् ऋतुओं से अपनी शोभा को विस्तार प्रदान करती हे । महाकवि निराला उच्च कोटि के सौन्दर्य स्त्रष्टा और सौन्दर्य द्रष्टा है । कवि ने प्रकृति की छवियों को बड़ी आत्मीयता से निहारा है और प्रत्येक नव ऋतु के आगमन पर नवरूपाप्रकृति धारण करती प्रकृति के वहुविध चित्र रचे हैं । अतः निराला ने भी ऋतुराज बसन्त के मनोहर चित्रों की फुहारों तथा अन्य ऋतुओं का भी प्रफुल्ल चित्रण उत्फुल्ल मन से किया है ।

(4) निराला नवल वसन्त के कवि हैं । वसन्ती वस्त्रों में सजी धजी धरती ऋतुराज वसन्त के स्वागत में धन्य हो रही है । कलियों के मधुरगन्ध वृक्षों के हृदय की अरूणिमा और भी तरूण–तरुण हो गई है । कोयल का पंचम स्वर और पक्षियों का कलरव अत्यन्त सुन्दर है ।

(5) नाना पुष्पों का सौन्दर्य सर्वाधिक अमूल्य और हृदयहारी विधि है । ये चित्र को घनीभूत रूप से आकृष्ट करते हैं 'जुही' निराला जी का सर्वाधिक प्रिय पुष्प है । उपवन में जुही के साथ विकसित नाना पुष्पों की छवि को उरेहते हुए निराला ने प्रकृति का मनोरम रूप चित्रण किया है ।

(6) निराला मानते हैं कि वन, उपवन, लतान्तराल, वर्षा, बसन्त तथा प्रकृति के एकान्त मनोरम प्रांगण आदि के विराट वैभव में ही सदा प्रेम पलता है किन्तु प्रेमास्पद के प्रवासी होने पर ये ही रमणीय प्राकृतिक उपादान प्रेमी की वेदना को और भी विवर्धित कर देते हैं । प्रकृति के उद्दीपनगत रूप को भी कवि ने बड़ी सहृदयता से उकेरा है ।

(7) मानवीकरण के रूप में प्रकृति चित्रण का आरोप करते हुए जव उसका सौन्दर्योन्मीलन किया जाता है । तव मानवी करण का दर्शन होता है । निराला के मन में प्रकृति के सूक्ष्म से सूक्ष्म विराट से विराट उपादान उनकी कविता में मानवीय सुख दुःख के अनुरूप अपना रूप प्राप्त करते रहे हैं । निराला ने प्रकृति का मानवीकरण दो रूपों में किया है ।

(1) नारी रूप में

(2) पुरूष रूप में

(8) प्रकृति के इस रूप का चित्रण गद्य और पद्य दोनो ही विधाओं में होता है । निराला जी वातावरण के रूप में प्रकृति का निरूपण किया है । वसन्त हो या बरसात, प्रातः हो या सन्ध्या, शरद हो या शिशिर, कोमल हो या कठोर सभी वर्णनो में सहजता दिखायी पड़ती है । रात के भयानक दृश्य को देखे जो भय मुक्त राम को भी हिला देती है ।

(9) निराला ने प्रकृति के विभिन्न उपादनों का प्रतीक विधान के रूप में प्रयोग किया है । कलियों को मुग्धानायिका पपीहा वरिहणी भ्रमर का रसलोलुप पुरूष, सरिता, सरोवर, प्रेम, लता, नव, यौवना, पतझर, विरहिणी के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत हुए हैं ।

(10) निराला ने प्रकृति वर्णन आलंकारिक रूप में भी किया है । कारण प्रकृति के प्रति उनके मन में अनन्य अनुराग है। कवि ने उपमा रूपक आदि के माध्यम से प्रकृति सौन्दर्य का कमनीय रूप रचा है ।

(11) कवि निराला ने रहस्यात्मक अभिव्यक्ति के लिए भी प्रकृति का विधान किया है । निराला उस परोक्ष सत्ता को जानने के कैसे उत्सुक हैं ।

(12) निराला ने अपनी कविताओं में कतिपय कवि प्रसिद्धयों का भी सफल प्रयोग किया है । कोकिल का वसन्त में ही कूकना, पपीहा, की.पी. ध्वनि चकोर का चन्द्र दर्शन पारस आदि इस दृष्टि से द्रष्टव्य है ।

(13) निराला जीवन के कवि हैं नागरिक जीवन के ही नही, वरन् ग्राम्य जीवन के भी अत्यन्त सुन्दर रूप उन्होने रूपायित किये हैं । वे खेत खलिहान का दृश्य बताते हैं ।

(14) परिवर्तन प्रकृति की शाश्वत् प्रवृत्ति है । प्रकृति के रूप और प्रकार में सतत् यह संलक्ष्य है इसी परिवर्तन के फलस्वरूप उत्सवों में भी परिवर्तन एवं मनाने की भावना दिखायी पड़ती है । भिन्न–भिन्न ऋतुओं में भिन्न–भिन्न के त्यौहार आयोजित होते हैं । फाल्गुन के महिने में होली का उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया जाता है ।

(15) वसन्त के आगमन पर पुरूषों से विहँसित आनन वाले उद्यानों का रूप रूपायित करते हुए निराला एक उच्च प्रकृतिवादि कवि हैं ।

(16) निराला उच्चकोटि के प्रकृति चित्रण स्त्रष्टा है । उनकी धारणा है कि प्रकृति देवी विभुति हैं जो मानवीय जगत् और प्राकृतिक जगत् में सम समान रूप से ।

2.12 नियत कार्य एवं गतिविधियाँ–

लघुउत्तरीय प्रश्न :

प्र.1 निराला काव्य और प्रकृति के बारे में आप क्या जानते हैं ?

प्र.2 प्रकृतिं और काव्य का संबंध स्पष्ट कीजिए ?

प्र.3 निराला काव्य के बारे में आप क्या जानते हैं ?

प्र.4 भारतीय साहित्य में प्रकृति चित्रण का क्या महात्व है ? बताईये ।

प्र.5 आलम्बन रूप में प्रकृति चित्रण का वर्णन कीजिए ?

प्र.6 निराला नवल वसन्त के कवि हैं । स्पष्ट कीजिए ।

प्र.7 निराला ने हेमन्त परी सुन्दरता का वर्णन किस प्रकार किया है ?

प्र.8 कवि निराला के शिशिर ऋतु का चित्रण अपने काव्य में किस प्रकार किया है ?

प्र.9 निराला ने सर–सागर–सरिता का बड़ा ही सहज रूप से चित्रण किया है । स्पष्ट कीजिए ।

प्र.10 कवि निराला ने बादलों को शिशु रूप से चित्रण किया है । स्पष्ट कीजिए ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

प्र.1 प्रकृति चित्रण का मानवीकरण रूप में वर्णन कीजिए ?

प्र.2 निराला जी ने वातावरण के रूप में प्रकृति का निरूपण किया ? समझाईये ।

प्र.3 प्रकृति चित्रण में अलंकार विधान का महात्व स्पष्ट कीजिए ?

प्र.4 रहस्यात्मक अभिव्यक्ति के रूप प्रकृति चित्रण का महत्व स्पष्ट कीजिए ?

प्र.5 कवि निराला का प्रकृति वर्णन स्पष्ट कीजिए ?

प्र.6 कवि निराला की प्रसिद्धयाँ स्पष्ट कीजिए ?

प्र.7 भारत का कौना–कौना प्रसन्न प्रकृति से शोभित है । इस कथन को स्पष्ट कीजिए ?

प्र.8 निराला काव्य में वर्षा के अनेक मनोहारी छन्द हैं । से क्या आशय है बताईये ?

प्र.9 निराला जी ने अपने काव्य मे पवन को नायक के रूप में चित्रित किया से क्या आशय है ?

प्र.10 शरद् और शिशिर को दो बहने मानकर निराला ने उनका कैसा अद्‌भुत रूप प्रस्तुत किया है ? स्पष्ट कीजिए।

बोध प्रश्न

निम्नलिखित वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर दीजिये ।

प्र.1 निराला की कविता में किस तरह का अनुराग है ।

(क) घनीभुत अनुराग

(ख) प्रकृति परक अंनुराग

(ग) व्यक्तिगत अनुराग

(घ) सर्वमौमिक अनुराग

प्र.2 निराला के काव्य में किस तरह के मूल्य पाये जाते हैं ।

(क) प्रकृति परक

(ख) सौन्दर्य परक

(ग) व्यक्ति वैशिष्ट्य परक

(घ) मानवीकृत

प्र.3 निराला किस वसन्त के कवि हैं ।

(क) गत वसन्त

(ख) मध्य वसन्त

(ग) नवल वसन्त

(घ) सरो–वसन्त

प्र.4 निराला के काव्य में वर्षा का चित्रण किस प्रकार से हुआ है ।

(क) प्रकृतिमय

(ख) स्वरमय

(ग) गतिमय

(घ) जीवन्त

प्र.5 महाकवि निराला को कौन सा पुष्प सबसे प्रिय था ।

(क) गुलाब

(ख) कमल

(ग) जुही

(घ) चमेली

प्र.6 निराला ने अपने काव्य में सुन्दरीय का संज्ञा किसे दी है ।

(क) उषा

(ख) प्रवाह

(ग) चमेली

(घ) संध्या

प्र.7 प्रकृति के उन्मुक्त सौन्दर्य को कवि निराला ने निम्नलिखित किन शब्दों मे प्रकट किया है ।

(क) वह तोड़ती पत्थर

(ख) संध्या सुन्दरी

(ग) निर्झर के झर–झर प्रवाह

(घ) वसन्त सुन्दरी

प्र.8 निराला ने अपने काव्य में प्रकृति के किस रूप को पुरूष से उपमय किया है ।

(क) बादल

(ख) पानी

(ग) पवन

(घ) आकाश

2.13 चर्चा के बिन्दु

स्पष्टीकरण के बिन्दु

2.14 बोध प्रश्नों की उत्तर माला

(क) घनीभूत अनुराग

(घ) मानवीकृत

(ग) नवल वसन्त

(घ) जीवन्त

(ग) जुही

(घ) संध्या

(ग) निर्झर के झर–झर प्रवाह

(ग) पवन

2.15 संदर्भ ग्रंथ सूची

(1)	काव्य में सौन्दर्य और उदात्त तत्व	शिव बालक राय
(2)	हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण	डॉ. किरण कुमारी गुप्ता
(3)	छायावादी कवियों का सौन्दर्य विधान	डॉ. सूर्य प्रसाद दिक्षित
(4)	सौन्दर्य शास्त्र	हरद्वारीलाल शर्मा
(5)	आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प	डॉ. कैलाश वाजपेयी
(6)	नये पत्ते	निराला
(7)	काव्य विम्व	डॉ. नगेन्द्र
(8)	कवि निराला	आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी
(9)	कुकुरमुत्ता	निराला
(10)	निराला की सौन्दर्य चेतना	अंशु शर्मा

म.प्र. भोज मुक्त विश्वविद्यालय, भोपाल

एम. ए. पूर्वार्द्ध : **हिन्दी**

चतुर्थ प्रश्न–पत्र : **विशेष कवि (निराला) का अध्ययन**

षष्टम खण्ड :

इकाई–1 **निराला और राम की शक्ति पूजा आलोचना और व्याख्या**

इकाई–2 **निराला और सरोज स्मृति आलोचना और व्याख्या**

इकाई–3 **निराला और कुकुरमुत्ता आलोचना और व्याख्या**

लेखक

प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित

....

लखनऊ

सम्पादक

प्रो. हरिमोहन बुधौलिया

एम. ए. पूर्वार्द्ध : **हिन्दी**

चतुर्थ प्रश्न–पत्र: **विशेष कवि (निराला) का अध्ययन**

षष्टम खण्ड :

खण्ड परिचय–

हिन्दी एच्छिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आप चतुर्थ प्रश्न–पत्र जिसमें विशेष कवि निराला का अध्ययन करने जा रहे हैं।

जिन विद्यार्थियों ने निराला को एच्छिक प्रश्न–पत्र के रूप में चुना है उन्हें निराला द्वारा रचित 'राम की शक्ति पूजा', 'सरोज स्मृति' और 'कुकुरमुत्ता' को जानना आवश्यक है। अतः इस खण्ड की पहली इकाई में निराला और राम की शक्ति पूजा की आलोचना और व्याख्या, दूसरी इकाई में निराला और सरोज स्मृति की आलोचना और व्याख्या एवं तीसरी इकाई में निराला और कुकुरमुत्ता की आलोचना और व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

निराला द्वारा रचित राम की शक्ति पूजा की आलोचना और व्याख्या का इस पहली इकाई में विस्तार से अध्ययन करने को मिलेगा।

इस खण्ड की दूसरी इकाई में निराला की रचना सरोज स्मृति की आलोचना और व्याख्या का विस्तार से अध्ययन करने को मिलेगा।

इस खण्ड की तीसरी इकाई में निराला द्वारा रचित कुकुरमुत्ता की आलोचना और व्याख्या का विस्तार से अध्ययन करने को मिलेगा।

इकाइयों के अंत में संदर्भ ग्रन्थों की सूची भी प्रस्तुत की गई है, जिनका अध्ययन विषयों की विस्तृत, विश्लेषण के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

सभी इकाइयों में बोध प्रश्न दिए गए हैं। अध्ययन के पश्चात बोध प्रश्नों के उत्तरों का इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलान कर सही उत्तर देने का प्रयास कीजिए।

निराला और राम की शक्ति पूजा : आलोचना और व्याख्या

संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 'राम की शक्तिपूजा' समीक्षा का विकास–विश्लेषण

1.4 महाप्राण 'निराला' कृत राम की शक्तिपूजा का वैशिष्ट्य

1.5 व्याख्यांश

1.6 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

1.7 अपनी प्रगति जाँचिए

1.8 नियत कार्य/गतिविधियाँ

1.9 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

1.9.1 चर्चा के लिए बिन्दु

1.9.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

1.10 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.1 प्रस्तावना

महाप्राण निराला के रचना संसार में राम की शक्तिपूजा का महत्वपूर्ण स्थान है। इस लम्बी कविता द्वारा उन्होंने राम कथा में कुछ नयी उद्भावनाएं प्रस्तुत की हैं। शक्ति की पूजा करते हुए, कमल के अभाव में अपने एक नेत्र को अर्पित कर देने की घटना का संकेत कृतिवास रामायण में आया है, पर निराला जी ने उसे अधिकाधिक प्रभावोत्पादक बना दिया है। इसमें श्रीराम का शील निरूपण इस प्रकार किया गया है कि वे कहीं लोकोत्तर दिखायी देते हैं और कहीं सामान्य मानव। इसमें एक ओर यौगिक प्रक्रिया अपनायी गयी है और दूसरी ओर वैष्णव भक्ति। कवि ने कई उपासना पद्धतियों तथा दार्शनिक विचारधाराओं का इसमें सफल समन्वय किया है।

काव्य भाषा की दृष्टि से इस कविता का विशेष महत्व है। ऐसी सामासिक पद रचना, विराट बिम्ब योजना, प्रतीक पटुता, परिस्थिति योजना, ध्वन्यात्मकता, भावावेग, ओज तथा करुणा पूर्ण भक्ति भावना और किसी कविता में नहीं दिखायी देती। निःसंदेह यह निराला जी की सर्वश्रेष्ठ कृति है, बल्कि हिन्दी की उत्कृष्टतम कृतियों में गण्यमान है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है, 'राम की शक्ति पूजा' के मूल मर्म से विद्यार्थियों को पूर्णतः परिचित कराने का। तत्सम शब्दावली की बहुलता के कारण इसके कुछ शब्द (पद बंध) क्लिष्ट हो गए हैं। दूसरे, इसमें योगदर्शन, शाक्त साधना आदि की जो बारीकियां हैं, उन्हें पूर्ण मनोयोग के बिना नहीं समझा जा सकता है। इस इकाई में यही प्रयास किया गया है कि इस कविता के सम्पूर्ण कथ्य–तथ्य को पहले समझकर, फिर अक्षरशः उसकी व्याख्या करते हुए इसके प्रतिपाद्य विषय को आत्मसात कराया जाए।

1.3 'राम की शक्ति पूजा' समीक्षा का विकास–विश्लेषण

'राम की शक्ति पूजा' 'भारत' (इलाहाबाद) के 26 अक्टूबर 1936 ई. अंक में प्रकाशित हुई थी। हिन्दी जगत में इसकी सही समझ और स्वीकृति में लगभग एक दशक का समय लग गया। इसके प्रकाशनोपरान्त आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने राम के नये चरित्र पर विचार करते हुए लिखा कि इसमें ब्रह्म की पूर्णता के बदले मनुष्य की अपूर्णता है। राम अधीर हो जाते हैं, सीता की स्मृति से मोहित हो जाते हैं, आँखों से आँसू गिराने लगते हैं। इसीलिए शक्ति की साधना इतनी महत्वपूर्ण है। जाहिर है कि शुक्ल जी राम के शील निरूपण से और शक्ति साधना के औचित्य से पूर्ण सहमत नहीं हो पाए।

उनके परवर्ती समीक्षकों में इस कविता के सही मूल्यांकन का प्रथम श्रेय डॉ. रामविलास शर्मा को है। उन्होंने 1946 में प्रकाशित 'निराला' नामक ग्रन्थ में घोषित किया कि–

1. इस कविता का प्रमुख स्वर है– उदात्त और सहज गुण है ओज।
2. इसमें राम का जय–पराजय प्रेरित द्वन्द्व स्वयं निराला का जीवन संघर्ष है।
3. इस कविता में नाटकीयता का गहरा पुट है।
4. 1962 में प्रकाशित 'निराला की साहित्य–साधना' (खण्ड–2) में उन्होंने इस कविता की फैंटेसी पर प्रकाश डाला। इनके अनुसार निराला की भाव–शक्ति ही यहां स्वप्न–चित्र बन गई है।
5. शर्मा जी ने इस कविता की द्वन्द्वदात्मकता और विविधरूपता को पहली–पहली बार सराहा। उनके शब्दों में 'राम की शक्ति पूजा' में एक ओर राम का पराजित मन है तो दूसरी ओर हनुमान का शक्ति प्रदर्शन है। एक ओर विभीषण की दीनता और राज्य–लोलुपता है तो दूसरी ओर लक्ष्मण का अमोघ–तेज। इस कविता में युद्ध की विभीषिका है तो 'माँ' को याद करते हुए भक्ति–प्रपत्ति भी है।
6. शर्मा जी यह मानते हैं कि 'धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध' पूरी कविता का सूत्र है, जो कवि के जीवन पर खूब घटित होता है।
7. इसके संदेश पर विचार करते हुए उनकी स्थापना है कि मनुष्य का मन हार कर भी पराजय स्वीकार नहीं करता। शक्ति पूजा का यही महान आशावादी संदेश है।
8. शुक्ल जी के आक्षेपों को निरस्त करते हुए शर्मा जी ने तर्क दिया कि यहां इस मानवीय रूप की संकल्पना को ऊर्ध्वमुखी उदात्त परिणति दी गई है।
9. इसकी पौराणिकता में आधुनिकता का सन्निवेश भी उन्होंने स्वीकार किया है, साथ ही इसके भावानुकूल

शिल्प का समर्थन भी किया है। उनका एक निष्कर्ष सही नहीं है। वह है अन्त से सम्बन्धित। उनके अनुसार देवी दर्शन अनपेक्षित है। दरअसल यहाँ शर्मा जी की वैचारिक प्रतिबद्धता बाधक हो गयी है। वे निराला की भक्ति भावना को भरसक टालते रहे हैं। कुल मिलाकर स्पष्ट है कि 'राम की शक्ति पूजा' की प्रायः समस्त विशेषताओं की ओर शर्मा जी की दृष्टि गई है और 1946–1962 के बीच इस कविता को समुचित पद प्रतिष्ठा प्रदान करने में उन्होंने ऐतिहासिक भूमिका निभाई है।

'क्रान्तिकारी कवि निराला' (1946) के माध्यम से डॉ. बच्चन सिंह ने इस कविता से सम्बन्धित कुछ नये चिन्तन बिन्दु प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने इसके स्रोतों का उल्लेख करते हुए विशेषतः 'देवी भागवत' और 'कृतिवासी रामायण' का तुलनात्मक आकलन करते हुए ये तीन स्थापनाएं की हैं–

1. दोनों का बहिरंग समान है, किन्तु अन्तःकरण भिन्न है।
2. कृतिवास से तथ्य लिए गये हैं, किन्तु उस कथात्मक वर्णनात्मक कृति को निराला ने मनोविश्लेषणात्मक बना दिया है।
3. कृतिवास की कथा में अतिप्राकृत तत्वों की भरमार है, जबकि निराला ने उसे अति आधुनिक बना दिया है।

शक्ति–पूजा के काव्य–रूप को लेकर बहुत दिनों तक विवाद होता रहा। 1954 की 'अवन्तिका' में आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री ने इसे प्रबन्ध–काव्य की संज्ञा दी। डॉ. दशरथ ओझा और डॉ. विजेन्द्र स्नातक ने 'सुकवि समीक्षा (1958) में यह घोषणा कर डाली कि इस कविता में पाँचों कार्यावस्थाओं का निर्वाह किया गया है। इसमें सभी नाट्य संचारियों का संन्निवेश है और भाषा–शैली में महाकाव्य सदृश उदात्त गरिमा है। कहना न होगा कि ये निष्कर्ष प्रमाण पुष्ट न होकर भावोच्छ्वास मात्र है। आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने 1965 में प्रकाशित 'कवि निराला' नामक ग्रंथ में शक्ति पूजा काव्य पर विचार करते हुए इसे महाकाव्य मानने में आपत्ति की। उनके अनुसार यह गाथा–काव्य की उपज है। धीरे–धीरे यह विचार स्थिर होता गया कि यह एक लम्बी कविता है। हाँ, इसकी भाव–भाषा महाकाव्योचित गरिमा से ओत–प्रोत है।

प्रगतिवादी समीक्षकों ने इस कविता के सम्बन्ध में द्विविधा का प्रदर्शन किया है। वे एक ओर 'शक्ति पूजा' की दार्शनिकता, पौराणिकता और आध्यात्मिकता का समर्थन नहीं कर सकते थे, दूसरी ओर निराला जैसे कवि से अपने साहित्य–आन्दोलन को पृथक् भी नहीं करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने कुछ नये तर्क गढ़े, जैसे–

1. गहरी हताशा ही अध्यात्म का रूप धारण कर लेती है और वह क्रांति की पूर्व पीठिका बनती है।
2. शक्ति–पूजा की पौराणिक घटना प्रकारान्तर से जनवादी और जनद्रोही शक्तियों के संघर्ष से सम्बद्ध है।
3. इस कविता में उपनिवेशवादी शक्तियों का विरोध किया गया है। इसे स्वतंत्रता आन्दोलन से प्रेरित, प्रभावित या जुड़ी हुई कविता अथवा राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना की उपज कहते हुए तो इन प्रगतिशील समीक्षकों को सैद्धान्तिक बाधा महसूस हो रही थी, पर युग संघर्ष और निराला की आत्म–गाथा कहने में कोई आपत्ति नहीं हुई। उन्होंने तर्क दिया कि इस कविता में वर्णित शक्ति को दैवी या आध्यात्मिक शक्ति न माना जाये, क्योंकि निराला ने शक्ति की मौलिक कल्पना की है और नवीन पुरुषोत्तम के रूप में आधुनिक जुझारू मानव की स्थापना की है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि संघर्ष के लिए कभी–कभी अध्यात्म का सहारा लेना होता है। उनके मतानुसार यह संघर्षेच्छा राम में पैदा हुई है–संशय के कारण।

वस्तुतः राम की शक्ति पूजा की ये ही मूलभूत विशेषताएं हैं, जो छठें दशक तक पूरी तरह स्थापित हो गई। बाद की टिप्पणियों में उन्हीं का पिष्टपेषण शब्द बदलकर किया गया है। इतना अवश्य है कि आरम्भिक समीक्षाओं ने कई टिप्पणियां निन्दापरक भी थीं। कुछ इसके भाषा को लेकर छटपटा रहे थे और कुछ नई उद्भावनाओं से असहमत थे। आचार्य नंद दुलारे जैसे निराला प्रेमी समीक्षक को इसकी भाषा नहीं रुची। पंत जी ने इसे प्रयास साध्य कहा। अज्ञेय आचार्य नगेन्द्र आदि भी बहुत दिनों तक सहमत नहीं रहे। धीरे–धीरे यह कविता प्रायः सर्वसम्मति से केवल निराला की ही नहीं, बल्कि समस्त हिन्दी काव्य की सर्वोत्तम प्रदीर्घ कविता के रूप में स्थापित हो गई। फिर बाद में तो किसी ने इसकी शैली वैज्ञानिक समीक्षा की, किसी ने मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय, काव्य–शास्त्रीय, ऐतिहासिक अर्थात् भाँति–भाँति की कसौटियों पर इसको परखा और फिर यह घोषित किया कि यह निःसन्देह एक क्लासिक कविता है।

महाप्राण निराला की 'राम की शक्ति–पूजा' जैसी बहुचर्चित लम्बी कविता पर समीक्षकों ने विस्तार से लिखा है। सही व्याख्या के अभाववश, इस कविता के प्रति कुछ अन्याय भी हुआ है। कालजयी रचना का यह एक महत्वपूर्ण लक्षण बताया जाता है कि उसमें चुनौती देने की क्षमता विद्यमान हो, ताकि काल के किसी भी पड़ाव पर पाठक उस रचना के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त किये बिना न रह सके। 'राम की शक्ति–पूजा' इस कसौटी पर निश्चय ही खरी उतरती है।

आज भी शक्तिपूजा विवादों के घेरे में है। कुछ आलोचकों को इसमें निराला की वैयक्तिक वेदना दिखी, कुछ को उनकी अटूट संकल्प–शक्ति मिली। किसी आलोचक को इसमें असमर्थता का चित्रण दिखा। दूसरी ओर मनुष्य का मन पराजित होकर भी पराजय स्वीकार नहीं करता– युद्ध के लिए, वह पुनः पुनः चेष्टा करता है। किसी को यह आशावादी संदेश मिला। किसी के हाथ 'राम के आराधन' का सूत्र लगा और वह भी आन्तरिक शक्ति की आराधना का। किसी की कल्पना–शक्ति ने इतनी तीव्र उड़ान भरी कि राम–रावण का संघर्ष उसके सामने छायावादी और छायावाद–विरोधी शक्तियों का संघर्ष बनकर प्रकट हुआ। राम की शक्ति–पूजा पर जितने साहित्यिक और सांस्कृतिक प्रभाव पड़े थे, उनकी छानबीन करके कुछ समीक्षकों ने निराला की कई मौलिक विशेषताओं की ओर संकेत किया है। वस्तुतः किसी भी रचना का विवादास्पद होना उसकी शक्ति का परिचायक होता है। इस कविता का कथ्य एवं शिल्प काफी नया है, गम्भीर है और सार्वभौमिक है। रावण के साथ युद्ध में पराजित राम की मनःस्थिति में निराला की व्यक्तिगत पीड़ा भी मुखरित हुई है। समाज विरोधी शक्तियों के साथ किए गए संघर्ष के फलस्वरूप अन्त में अपनी दृढ़ संकल्प–शक्ति से रावण को पराजित करने और विजय पाने का वरदान इस कविता की मुख्य प्रेरणा है। यहीं राम के आलौकिक व्यक्तित्व को एकदम मानवीय धरातल पर उतार कर निराला ने जीवन की यथार्थ भूमि का स्पर्श किया है।

इस कविता की विषय–वस्तु आरम्भ से ही आलोचकों की जिज्ञासा का विषय रही है– इस संदर्भ में आज से सात दशक वर्ष पूर्व आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा था–

"वे राम, जो हमारी तरह हैं, जो वनवास के समय सीता हरण के प्रसंग में कहते हैं–'हे खग–मृग हे मधुकर श्रेनी! तुम देखी सीता मृग नयनी।' और इसी के साथ राम की इस सामान्यता में भी असामान्यता को निराला ने भुला नहीं दिया है। तुलसी के 'भृकुटि विलास सृष्टिलय होई' की तरह राम के शक्तिशाली और संकल्पी व्यक्तित्व का सांगोपांग चित्रण किया गया है।" ये राम तुलसीदास के मर्यादा पुरुषोत्तम नहीं है। इनमें ब्रह्म की पूर्णता के बदले मनुष्य की अपूर्णता है। वह अधीर हो जाते हैं, सीता की स्मृति से मोहित हो जाते हैं, आँखों से आँसू गिरने लगते हैं। इसीलिए शक्ति की साधना इतनी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती है। राम के रूप में कवि ने जीवन की परिस्थितियों को एक बार फिर चुनौती दी है।

जाहिर है, शुक्ल जी राम के इस शील–निरूपण से और शक्ति साधना के औचित्य से सहमत नहीं थे। परवर्ती समीक्षकों ने इस कविता को निराला का निजी जीवन से जोड़ा। निराला (1946) नामक पुस्तक में डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा–

"निराला काव्य का प्रमुख स्वर है उदात्त। उसका सहज गुण है ओज। 'राम की शक्ति–पूजा' में राम–रावण का संघर्ष, राम की पराजय और क्षोभ, परोक्ष रूप में स्वयं निराला के जीवन संघर्ष का चित्रण है। उसे एक नाटकीय रूप दिया गया है, राम के चरित से।"

अपनी परवर्ती पुस्तक– 'निराला की साहित्य साधना' (द्वितीय खण्ड) में 'राम की शक्ति–पूजा' की फैन्टेसी पर कुछ नया प्रकाश डाला है। उनके अनुसार–

" 'राम की शक्ति–पूजा' का पूर्वार्द्ध एक सशक्त फैन्टेसी है। इसकी कथा राम–रावण के युद्ध तक सीमित नहीं है। भाव–शक्ति से प्रेरित होकर ये उपादान कवि के उपचेतन से उठते हुए रचनाकार वाले मन पर छा जाते हैं।...... निराला का अन्तर्द्वन्द्व तीव्र होकर उन्हें राम–रावणयुद्ध से जोड़ देता है। निराला की भावशक्ति ही परिवर्तित होकर स्वप्न चित्र बन जाती है।" डॉ. शर्मा ने इस कविता की द्वन्द्वात्मकता ओर द्विविधरूपता की बड़ी सराहना की। उनके शब्दों में– 'राम की शक्ति–पूजा' में एक ओर राम का पराजित मन है तो दूसरी ओर हनुमान का शक्ति–प्रदर्शन है। यहाँ विभीषण की दीनता और राज्य लोलुपता है तो दूसरी ओर लक्ष्मण का अमोघ तेज है। कविता में युद्ध की विभीषिका का वर्णन है तो 'माँ' को याद करते हुए राम की भक्ति प्रपत्ति है।"

वे यह मानते हैं कि "धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध" यह पंक्ति पूरी कविता का सूत्र है। कहना न होगा कि–"यह पंक्ति स्वयं कवि के जीवन पर घटित होती है।" शर्मा जी के अनुसार इसमें गजब की नाटकीयता भी है 'राम की शक्ति–पूजा' जैसी नाटकीयता निराला जी की और किसी कविता में नहीं है। यहां उन्होंने अपने जीवन की अनुभूति और विजय कामना को नाटकीय रूप दिया है।"

उन्होंने इस कविता के संदेश को महत्वपूर्ण माना है। उनके शब्दों में "मनुष्य का मन पराजित होकर भी पराजय स्वीकार नहीं करता। युद्ध के लिए वह पुनः चेष्टा करता है। 'राम की शक्ति–पूजा' का यही महान आशावादी संदेश है।"

शर्मा जी के कथनानुसार निराला जी ने 'राम की शक्ति–पूजा' नामक कविता में राम के मानवीय रूप की संकल्पना की है। मन की आशा–निराशा, सुख–दुःख, सत्य–असत्य आदि के द्वन्द्व से ऊपर ऊर्ध्वमुखी और उदात्त बनकर विकारों में विजय पाने की शक्ति ही उनकी पूजा है। वस्तुतः विभिन्न विरोधी तत्वों के सम्मिलन द्वारा 'शक्तिपूजा' के औदात्य को उभारा गया है। राम के माध्यम से निराला ने अपने संघर्षपूर्ण जीवन पर से यवनिका उठाई है। 'शक्तिपूजा' के राम का द्वन्द्व न केवल राम का है, बल्कि निराला के जीवन में भी घटित होता हुआ भी देखा जा सकता है। परिजनों के आकस्मिक विछोह और सम्पादकों के विरोधी रवैये ने निराला को 'शक्तिपूजा' के राम की भाँति ही विषादयुक्त बना दिया था। अस्तु, पौराणिकता में आधुनिकता का सन्निवेश करते हुए 'राम की शक्ति–पूजा' के माध्यम से सत् की असत् पर विजय दिखाकर एक स्वस्थ जीवन–संदेश प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने यही मत स्थिर किया है कि अधर्म की विजय होती देख धर्म को निरुत्साहित नहीं होना चाहिए।

तात्पर्य यह कि समीक्षकों ने शक्तिपूजा के स्रोतों पर काफी चिंतन किया है। वस्तुतः " 'राम की शक्ति–पूजा' की कथा दो मुख्य स्थानों से संकलित की गई। 1. 'देवी भागवत' जिसमें रावण वध के समय राम द्वारा की गयी शक्ति–आराधना का उल्लेख है। दूसरी, 'कृतिवास की बँगला रामायण'।.... यदि दोनों कथानकों का तुलनात्मक अ

ययन किया जाए तो ज्ञात होगा कि निराला ने 'कृतिवास' से ज्यादा तथ्य ग्रहण किये हैं। हाँ, दोनों कथाओं का बहिरंग ही समान मालूम पड़ेगा। एक बड़ा अन्तर यह है कि 'कृतिवास' ने कथा को वर्णनात्मक बना दिया है तो निराला ने राम के अन्तर्मन के चित्रण द्वारा उसे मनोविश्लेषणमय रूप दे दिया है। कृतिवास ने अपने कथानक के लिए अनेक अतिप्राकृत तत्वों का सन्निवेश भी किया है, जबकि निराला ने अपनी कथा में दार्शनिक भावना के समावेश करते हुए उसे आधुनिक युग के अनुकूल बना दिया है। इसकी पुष्टि करते हुए 1962 में डॉ. बच्चन सिंह ने लिखा था–

"इस काव्य में एक अतिशय उदात्त जीवन–दर्शन अंकित है, इसलिए यह महत है। कोई काव्य तब तक महान नहीं हो सकता, जब तक उसमें कोई महत्तर/जीवन–मूल्य न हो। केवल शैलीगत औदात्य काव्यात्मक औदात्य की कसौटी नहीं है। शैली साधन है, साध्य नहीं। इस कविता में शैली की प्रशंसा तो बहुत हुई है, पर प्रायः यह नहीं देखा गया कि वह क्या वहन करती है।" (क्रांतिकारी निराला, 1962)

निष्कर्ष यह कि इस अर्थविशद रचना में क्रान्तिदर्शी कवि निराला का अभीष्ट मात्र परम्परा का पिष्टपेषण नहीं है। राम के माध्यम से कवि ने अपने व्यक्तित्व का ही प्रच्छन्न चित्र उपस्थित किया है। राम के नैराश्य तथा अवसाद–ग्रस्त क्षणों में स्वयं कवि के अभाव ग्रस्त एवं संघर्षों से टूटे हुए हृदय की पीड़ा मुखरित हुई है। कुछ काल तक संशयग्रस्त रहने के अनन्तर वे कृत संकल्प हो शक्ति की आराधना करते हैं।

निराला जी की इस ख्यातिलब्ध रचना में केवल अभिव्यक्ति पक्ष ही उदात्त नहीं है, अनुभूति पक्ष भी उदात्त है। इसमें शैली के साथ जिन भावों और विचारों को वहन किया गया है, उसके औदात्य के सम्बन्ध में दो मत नहीं हो सकते हैं। स्पष्ट है कि 'शक्तिपूजा' के संदेश, स्रोत और शिल्प वैशिष्ट्य की मुख्य बातें हिन्दी जगत में चौथे दशक अर्थात् रचनाकाल के दस वर्षों के भीतर पकड़ में आ गयी थी। हाँ, काव्यरूप को लेकर बहुत दिनों तक द्विविधा छायी रही।

सन 1954 की पत्रिका 'अवन्तिका' में आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री ने 'राम की शक्ति–पूजा' को महाप्रबन्ध काव्य माना। उन्होंने कहा–

'राम की शक्ति–पूजा' जैसा स्वल्प आकार–प्रकार का परम प्रौढ़ प्रबन्ध काव्य विश्व की किसी भाषा में नहीं लिखा गया।"

शास्त्री जी ने 'शक्तिपूजा' को कथात्मक या प्रबन्धात्मक मानते हुए भी स्पष्ट कहा कि निराला ने शक्तिपूजा की कथा में मार्मिक स्थलों की पहचान की है। कविता में भाव या रसों का संयोजन है, उदात्तता तथा नाटकीयता है। इसका प्रारम्भ बड़ी ही सूक्ष्मता एवं सुसम्बद्धता से किया गया है और समूचा ढाँचा प्रबन्धपटुता से परिपूर्ण है।

'छायावाद विश्लेषण और मूल्यांकन' (सन 1958) में निराला की काव्य–साधना नामक शीर्षक में डॉ0 इन्द्रनाथ मदान ने कहा–

"वास्तव में मेरी दृष्टि में निराला जनकवि है। जनता के भावों का जितना चित्रण निराला कर सके हैं, उतना छायावाद का कोई दूसरा कवि नहीं कर सका है।... अनेक भारतीय पुट अतीत–प्रेम पर लिखी रचनाएं कवि की देशभक्ति के प्रमाण हैं। इस दृष्टि से 'शिवाजी का पत्र', 'राम की शक्ति–पूजा' और 'तुलसीदास' के नाम लिये जा सकते हैं। पंत जहां प्रकृति से मानव की ओर मुड़े, वही निराला दर्शन से मानव की ओर। यहां निराला जी नर शक्ति के उपासक एवं जनशक्ति के विश्वासी है।

'सुकवि–समीक्षा' (सन 1958) में ही डॉ. दशरथ ओझा एवं डॉ0 विजयेन्द्र स्नातक ने 'राम की शक्ति–पूजा' के बारे में कहा कि "राम की शक्ति–पूजा निराला की सबसे प्राणवान, ओज गुण प्रधान रचना है। इस कविता की टक्कर

की दूसरी कविता हिन्दी में नहीं मिलती। पौराणिक कथानक को कवि ने अपनी कल्पना और काव्य सौष्ठव द्वारा पल्लवित करके जो रूप दिया है, वह सर्वथा नूतन है। इस कविता में वर्णित राम का अन्तर्द्वन्द्व नाटकीयता में अपने चरमबिन्दु का स्पर्श करने वाला है। नाटक की पांचों अवस्थाओं का विधिवत पालन करते हुए कवि ने इस कविता को उत्कर्ष के सर्वोच्च धरातल पर ले जाकर खड़ा किया है। युद्ध के वातावरण की उत्तेजना और उसकी भूमिका में राम की सभा का विषादपूर्ण चित्रण हुआ है। राम की निराशा, हनुमान की उत्तेजना और उड्डयन प्रयत्न है। राम द्वारा पूजा का विधान नियताप्ति है और अन्त में शक्ति द्वारा विजय–मंगल का वरदान फलागम है।'

कविता का प्रारम्भ और अन्त ऐसे नाटकीय ढंग से होता है कि पाठक के मन में विषाद, हर्ष, उत्कंठा, औत्सुक्य आदि नाट्य–संचारियों का ताँता बँधा रहता है। भाषा और शैली में आदि से अन्त तक महाकाव्य सदृश उदात्त गरिमा अनुस्यूत है।

राम की शक्ति पूजा केवल एक लम्बी आख्यानक कविता ही नहीं, अपितु वह अभिव्यंजना सौष्ठव का चरम उत्कर्ष प्रस्तुत करने वाली कविता है। सन 1962 में डॉ. शंभुनाथ सिंह ने राम की शक्ति पूजा के काव्य रूप पर प्रकाश डालते हुए, महाकाव्य के बारे में कहा–

"महाकाव्य के छन्दोबद्ध कथानक, क्षिप्र कथा–प्रवाह, अलंकृत और मनोवैज्ञानिक वर्णन, रसात्मकता, प्रभावान्विति, यथार्थ कल्पना की सम्भावना, जीवन–वृत्त का पूर्ण या आंशिक चित्रण, युग के सामूहिक जीवन का प्रतिनिधित्व, उद्देश्य की सिद्धि, गम्भीर अथवा आश्चर्योत्पादक और हास्यमय घटना, संश्लिष्ट और समन्वित रूप से जाति विशेष या युग विशेष के समग्र जीवन के विविध पक्षों, रूपों, मानसिक अवस्थाओं अथवा नाना रूपकात्मक कार्यों का वर्णन और उद्घाटन उदात्त और गरिमामयी शैली आदि का समायोजन किया जाता है।"

तात्पर्य यह है कि 'राम की शक्ति पूजा' में महाकाव्य का गाम्भीर्य और औदात्य तो है, पर विस्तार नहीं है, बल्कि विस्तार की अपेक्षा इसमें गहराई अधिक है।

इसमें न तो सम्पूर्ण जीवन का चित्र है और न खण्ड जीवन का। इसमें जीवन के एक क्षण को राम की शक्ति पूजा के रूप में रूपायित किया गया है। इस दृष्टि से 'शक्ति पूजा' का सम्प्रेषण किसी भी महाकाव्य से कम नहीं है।

आचार्य नन्ददुलार वाजपेयी (सन 1965) ने शक्ति पूजा पर कुछ इस तरह प्रकाश डाला– "राम की शक्ति पूजा वस्तुतः एक गाथा काव्य है, जिसे निराला ने गाथा की भूमि से उठाकर महाकाव्योचित गाम्भीर्य देना चाहा है। गाथा काव्य में लोक विश्वासों की प्रचुरता, अतिरंजना के चमत्कार और अलौकिकता की योजना रहा करती है। ये सभी योजनाएँ राम की शक्ति पूजा में भी हैं, परन्तु इसके साथ ही शक्तिपूजा को असाधारण गाम्भीर्य देने की चेष्टा भी की गयी कथा के हैं। महाकाव्य का औदात्य, संतुलन, गाथा की अतिरंजना और असम्भाव्यता अनुरूप है। जब निरालाजी गाथा की लोक–सामान्य भाव–भूमिका से महाकाव्य की असामान्य भूमि पर प्रवेश करते हैं, तो एक मौलिक विरोधाभास अनायास प्रतीत होता है। 'शक्तिपूजा' का शिल्प इन दोनों के बीच किस प्रकार का सेतुबंध कर सका है, यह हमें देखना होगा।" इसी तरह आचार्य वाजपेयी ने आलोचना के 28 वें अंक में कहा– "महाकाव्योचित औदात्य निराला के अंतरं की उपज नहीं। एक तरह से वह अपेक्षाकृत अधिक पांडित्य का परिणाम है।"

वाजपेयी जी के अनुसार इस रचना की महाकाव्योचित गरिमा में राम की पराजय जनित वेदना और निराशा ने व्याघात डाला है। यहां भावों की तीव्र अभिव्यंजना और मनोवैज्ञानिक आन्तरिक संघर्ष की योजना से औदात्य लाने का प्रयत्न है। शक्तिपूजा में हनुमान का उछलना और फिर अंजना रूप में शक्ति द्वारा फटकारने पर नीचे उतरना एक गाथा काव्य जैसा चमत्कार ही है। अतः शक्तिपूजा महाकाव्य नहीं, अधिक से अधिक वह किसी महाकाव्य का एक सर्ग हो सकता है।

डॉ. धनंजय वर्मा (सन 1965) ने राम की शक्ति पूजा को काव्य कला की उत्कृष्टता और भावों के औदात्य का उदाहरण मानते हुए लिखा कि "उसमें निराला काव्य की ओजस्विता और पौरुष, आध्यात्मिकता और दार्शनिकता तथा स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के उपकरण एक साथ सन्निहित है।" वर्मा जी राम की शक्ति पूजा में महाकाव्योचित गुणों का अन्वेषण करते हुए लिखते हैं– "मेरा यह विश्वास है कि यद्यपि निराला जी ने किसी महाकाव्य की रचना नहीं की, तथापि उनकी इस कृति में औदात्य है, गरिमा है और वे सम्मिलित प्रभाव से किसी महाकाव्य से कम नहीं है।"

कालक्रम में यह भी माना गया कि यह कृति केवल शक्तिपूजा का ही काव्य नहीं है, अपितु उच्च मानव मूल्यों के समर्थन में, दुष्ट मानव मूल्यवादियों के विरुद्ध संघर्ष के क्षणों में यह काव्य, प्रत्येक भद्र व्यक्ति के मन की अन्तर छवि का दर्पण है।

शक्तिपूजा वस्तुतः किसी पौराणिक घटना का प्रत्याख्यान मात्र नहीं है, इसमें सामयिकता एवं कवि के मन की द्वन्द्वावस्था भी अनुस्यूत है। उपाध्याय जी ने शक्तिपूजा को जातिगत भावों का काव्य बताया, जो कि जनवादी और जनद्रोही शक्तियों का संघर्ष है।

कुछ अन्यान्य समीक्षकों ने महाशक्ति की इस आराधना के कई प्रेरक स्रोत बताये हैं। उनके अनुसार, "निराला ने विभिन्न स्रोतों से कथा का संचयन कर शक्ति के एक मौलिक रूप की नवीन युग के अनुरूप कल्पना की है। उन्होंने 'देवी भागवत', 'शिव महिम्नस्तोत्र' आदि प्राचीन पौराणिक धार्मिक ग्रंथों तथा बंगाल में प्रसिद्ध राम–रावण युद्ध की उस पौराणिक कथा को अपना आधार बनाया है। 'राम की शक्ति पूजा' में जाम्बवान की मंत्रणा द्वारा निराला जी ने यह संदेश देना चाहा है कि शक्तिशाली अधर्मी का दमन शक्ति की संयत साधना द्वारा ही किया जा सकता है। राम की यह शक्ति की मौलिक आराधना विषमताओं से त्रस्त मानवता को रावणीय व्यवस्था के विरोध में अनवरत् संघर्ष करने का आवाह करती है। विजय उन शक्तियों की होती है, जो मानवता की मुक्ति हेतु राम के समान अनवरत संघर्षरत रहते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' की शक्ति को दैवी या आध्यात्मिक शक्ति के रूप में देखना भूल होगी। जिस भूधर में राम पार्वती की कल्पना करते हैं, वह शक्ति का विराट प्राकृतिक रूप है। किन्तु निराला को शक्ति विषयक मौलिक कल्पना इस प्राकृतिक रूपान्तर से और आगे बढ़कर शक्ति को नैतिक विजन से संचालित कर देती है।.... शक्ति की मौलिक कल्पना करने के साथ ही निराला ने शक्ति के साधक राम की प्रतिमा का निर्माण भी नवीन पुरुषोत्तम के रूप में किया है। होगी जय, होगी जय हे पुरुषोत्तम नवीन–" कहकर महाशक्ति जिस राम के शरीर में लीन हुई, वे न तो वाल्मीकि के राम हैं, न तुलसी के।.... वे राम मर्यादा पुरुषोत्त्म से अधिक नवीन पुरुषोत्तम आधुनिक मानव है।"

यहाँ निराला जी जन–जन में शक्ति का संचार करना चाहते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' में राम की पराजय, निराशा और अन्त में विजय स्वयं निराला की ही आत्मगाथा है। निराला ने वस्तुतः आजीवन विरोध सहा, पर वे घुटने टेकने वाले जीव नहीं थे।

'राम की शक्ति पूजा' की भारतीयता उनमें स्वीकृत पौराणिकता से भी अधिक स्वाधीनता संग्राम की आधुनिक चेतना में है।

कुछ समीक्षकों के अनुसार राम की शक्ति पूजा निराला की दोहरी विजय का काव्य–प्रतीक है। वह रचना अपनी ओजस्वी कलात्मक प्रौढ़ती के माध्यम से महाकाव्योचित शिखर का स्पर्श करती हुई निराला को महाकवि की प्रसिद्धि देती है तो दूसरी तरफ शक्ति साधना द्वारा निराला का व्यक्तित्व राम की तरह असत (रावण) को पराजित करने की सिद्धि प्राप्त कर लेता है।"

वस्तुतः 'शक्ति पूजा' के माध्यम से निराला का संघर्षरत व्यक्तित्व उभार आया है।

स्वतंत्रता प्राप्ति की आकाँक्षा संजोए हुए एक प्रदीर्घ कविता, यद्यपि संदर्भों का यह रूपक अपने पूर्ण रूप में कविता में प्रतिष्ठित नहीं है तथापि उसके सूत्र पूरी कविता में बिखरे पड़े हैं। एक स्थूल ढंग से राम की विजय और सीता की मुक्ति की चिंता को हम राष्ट्रमुक्ति और मर्यादा की रक्षा के लिए युद्ध में नियोजित होने के नैतिक पक्ष को कविता में से खींच सकते है। यह राष्ट्रीय मुक्ति किसी महान वीर पुरुष के हाथों ही सम्भव है।..... निराला इसके लिए शक्ति की आराधना का एक पक्ष लेते हैं।

निराला के राम वस्तुतः पूर्ण रूपेण मानवीय धरातल पर स्थित है। इसके बावजूद इस कविता में अनेक ऐसे मिथकीय पात्र और सन्दर्भ है, जो पाठक को पौराणिक सन्दर्भों की ओर ले जाते हैं। शक्तिपूजा की कथा को यदि राजनीतिक सन्दर्भ में स्थूल रूप से व्याख्यायित किया जाये और यदि भारत के स्वतंत्रता संग्राम की ओर देखें तो स्पष्ट होगा कि 'राम की शक्ति पूजा' में बड़ी क्षिप्रता और गति है। चरित नायक की एक विशिष्ट मनः स्थिति के साथ कवि का आत्म प्रक्षेप आरोपित नहीं लगता, बल्कि सहज लगता है।

युगीन चेतना इस कथा में स्थान–स्थान पर नजर आती है। अतः शक्ति की आराधना सम्बन्धी कवि की उक्तियां आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं, जितनी की राष्ट्रीय गुलामी के समय में थी।

विष्णुकांत शास्त्री (1997) ने कृतिवास और निराला द्वारा अंकित राम की शक्ति पूजा का तुलनात्मक विवेचन शीर्षक के अन्तर्गत शक्तिपूजा पर अपनी प्रतिक्रिया कुछ इस प्रकार व्यक्त की–

"राम की शक्ति पूजा कृतिवासी रामायण के एक प्रसंग पर आधारित होते हुए भी उसी प्रकार एक मौलिक एवं आध्‍ुनिक रचना है, जिस प्रकार कालिदास कृत 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' महाभारत के आदि पर्व में वर्णित दुष्यन्त शकुन्तला के आख्यान पर आधारित होते हुए भी मौलिक कृति है।.... निराला ने कच्चे उपादान के रूप में कृतिवास द्वारा वर्णित राम की शक्ति पूजा की कथा का उपयोग कर उसे अपने युग की चुनौतियों का योग्य प्रत्युत्तर देने वाली परिणति कलाकृति का रूप दे दिया है। दोनों महाकवियों की कृतियों के तुलनात्मक अनुशीलन से यही सत्य उजागर होता है।" प्रो. शिवकुमार मिश्र ने राम की शक्ति पूजा की पीठिका के अंतर्गत कृतिवास और निराला की तुलना करते हुए कहा कि "यह अनुमान करना असंगत न होगा कि 'राम की शक्ति पूजा' के संशयग्रस्त राम एक सीमा तक स्वयं निराला एवं उनकी पीढ़ी के युवकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उसी तरह राम–रावण युद्ध भी अपनी ऐतिहासिक पीठिका के बावजूद एक सीमा तक अंग्रेजों से स्वाधीनता सीता का उद्धार करने के लिए लड़े जा रहे है राजनीतिक समर का प्रतिनिधित्व करता है।"

उपर्युक्त समीक्षाओं में आचार्य वाजपेयी, डॉ. रामविलास शर्मा और डॉ. बच्चन सिंह की समीक्षाएं तथा डॉ. विद्यानिवास मिश्र, डॉ. नगेन्द्र आदि कुछ विशिष्ट विद्वानों की व्याख्याएं ऐतिहासिक महत्व की हैं। इनके आधार पर कहा जा सकता है कि यह कविता प्रायः सबके द्वारा सराही गयी है।

1.4 महाप्राण 'निराला' कृत 'राम की शक्ति पूजा' का वैशिष्ट्य

'राम की शक्ति पूजा' निराला जी के द्वारा विरचित एक लम्बी कविता है। रामकाव्य परम्परा में इस कविता का महत्वपूर्ण स्थान है। यह निराला जी की सर्वश्रेष्ठ रचना है। विषयवस्तु और शिल्पविधि, दोनों दृष्टियों से यह एक विशिष्ट प्रयोग भी है। इसकी प्रमुख विशेषताएं हैं–

1. मौलिक उद्भावना

रामकथा से सम्बन्धित विश्व–भाषाओं में हजारों कृतियाँ देश और देशान्तर में प्रस्तुत की गयी हैं। इनसे राम के चरित से सम्बन्धित कोई घटना शायद ही छूटने पायी हो। इसके बावजूद निराला जी ने अपनी प्रतिभा द्वारा इस नए प्रकरण की खोज कर ली है। इस कविता में राम और रावण के मध्य होने वाले अंतिम निर्णायक युद्ध में राम की पराजय, फिर जाम्बवान के परामर्श से की जाने वाली उपासना और अन्ततः राम को प्राप्त होने वाली सिद्धि का वृत्तान्त प्रस्तुत किया गया है। इस कथा के कुछ सूत्र बंगला की 'कृतिवास रामायण' में तथा 'देवी भागवत', 'कालिका पुराण', 'शिव महिम्न स्तोत्र' आदि कृतियों में प्राप्त होते हैं। निराला जी ने अपनी उद्भावना शक्ति द्वारा इस कथा में अनेक मार्मिक स्थलों की अवतारणा की है और इसे सर्वथा मौलिक रूप दे दिया है।

2. अभिनव शील निरूपण

प्रबन्ध काव्य में चरित्र चित्रण पर बहुत जोर दिया जाता है। निराला जी ने इस कविता में राम, विभीषण, सुग्रीव, जाम्बवान आदि पात्रों का प्रत्यक्ष चरित्र–चित्रण किया है, साथ ही हनुमान, लक्ष्मण, शिवशक्ति आदि को परोक्ष रूप में चित्रित किया है। राम का चरित्र एक ओर दैवी गुणों से युक्त दिखाई देता है तो दूसरी ओर वह सहज मानवीय चरित्र प्रतीत होता है। कवि ने उनके लिए जहाँ 'अच्युत', 'शेषशयन', हनुमान के लिए 'राम का लीला सहचर' आदि शब्दों का प्रयोग करके राम को 'सच्चिदानंद', परब्रह्म, परमात्मा और लीलावतार घोषित किया है वहीं तीन स्थलों पर उन्हें शक्ति के पक्षपात तथा भौतिक बाधाओं से पीड़ित होकर रोते हुए एवं संशयग्रस्त होते हुए भी चित्रित किया है। अंत में शक्ति के मुख से उन्हें 'पुरुषोत्तम नवीन' कहलाया गया है। विभीषण को कवि ने राम के सखा के रूप में चित्रित किया है, किन्तु साथ ही स्वार्थपरायण भी सिद्ध किया है। जाम्बवान को निराला जी ने अत्यंत धैर्यशील, अनुभवी और निष्ठावान व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है। हनुमान के प्रति निराला जी के मन में गहरी आस्था दिखाई देती है। योद्धा होने के साथ–साथ वे राम के भक्त हैं। शक्ति के पक्षपात से क्षुब्ध होकर इसीलिए वे भावावेश पूर्वक सप्ताकाश पर आक्रमण कर देते हैं, लेकिन माँ अंजना के समझाने से वे शांत भी हो जाते हैं। लक्ष्मण को भी कवि ने एक स्थान पर क्रोध करते हुए प्रस्तुत किया है। शिव–शक्ति के युग्म को निराला जी ने इस कविता में विस्तारपूर्वक चित्रित किया है। वे नीतिपूर्वक जिस प्रकार हनुमान के आक्रमण का प्रतिरोध करते हैं, उससे उनका नया शील हमारे सामने उभरता है।

निराला के राम अप्रतिहत योद्धा हैं। युद्ध क्षेत्र में दिव्य शस्त्रों के असफल हो जाने के कारण वे पहले तो आहत होते हैं, किन्तु मन से परास्त नहीं होते। कवि के शब्दों में–

"कल लड़ने को होर हा विकल वह बार–बार
असमर्थ मानता मन उथत हो हार–हार।"

राम कहीं शंकाकुल दिखाई देते हैं और कहीं मंगलाशा पूर्ण। जब उन्हें समस्त अंतरिक्ष को आच्छादित किये हुए महाशक्ति दिखाई देती हैं तो वे चिंतित हो जाते हैं और निराश होकर कह पड़ते हैं– "मित्रवर, विजय होगी न समर"।

लेकिन जब उन्हें अपनी शक्ति का स्मरण होता है तो वे नये उत्साह से और विश्वास से भर जाते हैं। कवि के शब्दों में– "फिर विश्व–विजय–भावना हृदय में आयी भर"।

सीता के प्रति राम के मन में अनन्य अनुराग है। पराजय के क्षणों में वे प्रथम बार जनक वाटिका में दिखने

वाली कुमारिका सीता की छवि का स्मरण करते हैं, जिससे उनके मन में दिव्य ज्योति जाग्रत हो जाती है और वे सीतामय हो उठते हैं। कवि कहता है–

"खिंच गये दृगों में सीता के राममय नयन"

निराला जी ने एक ओर शिव शक्ति को युग्मरूप या अर्द्धनारीश्वर रूप में प्रस्तुत किया है तो दूसरी ओर सीता और राम को परस्पर पूरक सिद्ध किया है। उनके अनुसार सीता भी शक्ति स्रोत है। उन्हीं के कारण राम शक्तिमान हुए हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि इन चरित्रों में एक और दैवी गुण भरे गये हैं, दूसरी ओर उन्हें मानवीय चरित्र के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस युद्ध में राम की सबसे बड़ी चिंता है–

"जानकी! हाय, उद्धार प्रिया का हो न सका।"

एक सौ आठवां कमल जब महाशक्ति द्वारा छिपा दिया जाता है और पूजा खण्डित होने लगती है तो राम एक बार फिर भावाकुल हो उठते हैं। अपने जीवन को कोसते हुए वे कहते हैं– "धिक जीवन को जो पाता ही आया विरोध"

किन्तु तभी उनका आत्मविश्वास जाग्रत हो उठता है। कवि कहता है कि राम का भौतिक मन तो हताश हो जाता है, किन्तु उनके पास एक और मन भी है, जो–

"नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय"

इस विषम परिस्थिति में भी वह बुद्धिबल से यह युक्ति खोज लेता है कि मेरी माँ मुझे 'राजीव नयन' कहा करती थीं। इसका तात्पर्य यह हुआ कि मेरे पास दो नीलकमल अभी शेष हैं। वे निश्चय करते हैं कि एक कमल अर्थात् नेत्र निकालकर देवी के चरणों में अर्पित कर देंगे, ताकि अनुष्ठान खण्डित न होने पाये। राम का यह दृढ़संकल्प उनके चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता है। इसके अतिरिक्त उनका शील और सौन्दर्य भी कवि के द्वारा बारम्बार चित्रित किया गया है। वे अत्यंत सहनशील और धैर्यवान व्यक्ति हैं। विभीषण भावावेश में उनकी कटु निन्दा कर जाते हैं– "धिक राघव, धिक–धिक" जैसे शब्दों से धिक्कारपूर्वक, किन्तु राम पर उसकी कोई प्रतिक्रिया नहीं होती है। कवि के शब्दों में वे–

"छोड़ते हुए, शीतल प्रकाश देखते विमन" रूप में प्रस्तुत किये गये हैं। राम के इस मर्यादा पुरुषोत्तम रूप की सराहना इसीलिए वरदान देती हुई महाशक्ति तक ने की है–

"साधु, साधु साधक धीर धर्म–धृति धन्य राम!"

तात्पर्य यह है कि निराला जी के द्वारा किया गया यह चरित्र चित्रण अत्यंत सजीव तथा स्वाभाविक है।

3. परिस्थितियों का घात–प्रतिघात

इस कविता की बहुत बड़ी विशेषता है भावों का आरोह और अवरोह। कवि ने देशकाल के तो अधिक प्रयोग नहीं किये हैं, क्योंकि यह सारी घटना एक ही स्थान (युद्ध शिविर) में कुल नौ दिनों के बीच घटित हुई है। पहला दिन युद्ध के वर्णन से सम्बन्धित है और शेष आठ दिनों में शक्ति की पूजा सम्पन्न हुई है। निराला जी ने युद्ध का वर्णन स्मृति संचारी (Flash back) पद्धति से किया है। कविता आरम्भ हुई है संध्याकाल से अर्थात् युद्ध समाप्ति के बाद शिविर की ओर लौटते हुए और कल के युद्ध पर विचार–विमर्श करते हुए अर्द्धरात्रि के बीच। दूसरे शब्दों में कहें तो कविता का आरम्भ और अंत हो अर्द्धरात्रियों से जुड़ा हुआ है। जब देवी वरदान देती हैं, वह भी अर्द्धरात्रि

की ही बेला है। कविता का घटना स्थल भी एक ही है। अपने शिविर में स्फटिक शिला पर बैठे हुए राम शक्ति पूजा का संकल्प लेते हैं और वहीं एकासन बैठे हुए आठ दिनों का यह अनुष्ठान सम्पन्न करते हैं। इस देशकाल और कार्य की एकरूपता के कारण इस कविता में संकलनत्रय का बड़ा सुन्दर निर्वाह हुआ है।

इस कविता की सर्वोपरि विशेषता है घटनाओं के घात–प्रतिघात। राम के भीतर अंतर्द्वन्द्व छाया हुआ है। शक्ति के पक्षपात से वे दुखी हो उठे हैं। तभी वे अपनी शक्ति अर्थात सीता का स्मरण करते हैं। उनका मन प्रेम और सौन्दर्य से भर जाता है। फिर उसमें उत्साह का संचार होता है। विश्व विजय का ओज मन में जाग्रत हो उठता है। तभी उन्हें शक्ति की भीमा मूर्ति दिख जाती है और वे शंकित हो उठते हैं। इसी बीच उन्हें रावण का अट्ठहास सुनाई देता है, जिसमें वे मर्माहत हो उठते हैं और उनकी आँखों से आँसू टपक पड़ते हैं। भावों का यह उतार–चढ़ाव बड़ा मनोवैज्ञानिक है। इसी प्रकार का भावात्मक आरोहावरोह हनुमान में दिखाया गया है। वे श्रीराम के पाद प्रदेश में बैठे हुए हैं और उनके चरणों के सौन्दर्य में खोये हुए हैं। उन्हें श्री राम " सच्चिदानंदरूप विश्राम–धाम" प्रतीत होते हैं। हनुमान को ऐसा अनुभव होता है जैसे ये चरण राम के नहीं, बल्कि महाशक्ति के हैं। उन चरणों पर गिरे हुए आँसुओं को देखकर लगता है, जैसे देवी की मूर्ति में हीरा और कौस्तुभ जड़ा हुआ हो। हनुमान राम भक्ति में तन्मय हैं। वे भौतिक भाव से ऊपर उठ गये हैं। राम की आँखों से गिरते हुए आँसू उन्हें दिखाई देते हैं, किन्तु उन्हें लगता है, जैसे आकाश से दो तारे टूटकर गिर रहे हों। कुछ क्षणों बाद उनके मन में भौतिक भाव का संचार होता है। कवि के शब्दों में–"संदिग्ध भाव की उठी दृष्टि, देखा अविकल"। जब उन्हें राम के डबडबाये हुए नेत्र दिखायी देते हैं तो सारी स्थिति समझ में आती है। हनुमान पलक मारते ही समझ लेते हैं कि महाशक्ति ने जो पक्षपात किया है, उससे क्षुब्ध होकर उनके आराध्य आज रो पड़े हैं। वे तुरंत निर्णय लेते हैं कि महाशक्ति को नष्ट कर देना चाहिए। हनुमान सप्ताकाश पर आक्रमण कर देते हैं, किन्तु महाशक्ति जब माँ अंजना का रूप धारण कर डांटती और पुचकारती हुई उन्हें समझाती हैं, तो वे तुरंत मान जाते हैं और अपनी पूर्व दशा में लौट आते हैं। इस प्रकार के द्वन्द्वात्मक चित्रण को काव्य शास्त्र में भाव–संधि कहा जाता है। इस भाव संधि का तीसरा उदाहरण मिलता है–शक्ति पूजा के अंतिम प्रकरण में। एक सौ आठवें कमल के लुप्त हो जाने के बाद पहले राम क्षुब्ध होते हैं, फिर हताश होते हैं, और फिर युक्ति खोजते हैं। देवी के प्रकट हो जाने के बाद वे श्रद्धा भक्ति पूर्वक उनके चरणों में प्रणत हो जाते हैं। निष्कर्ष यह है कि देशकाल और परिस्थिति के ये घात–प्रतिघात निराला जी की बहुत बड़ी उपलब्धि है और यह उनके काव्य की प्रिय प्रवृत्ति भी है। उनकी कोई लम्बी कविता सीधी साधी लकीर पर चलती नहीं दिखायी देती। उदाहरणार्थ–'तुलसीदास' 'सरोज–स्मृति' 'कुकुरमुत्ता' 'वनबेला' आदि को लिया जा सकता है।

4. संवाद–कौशल

शक्ति पूजा में दो प्रकार के संवाद हैं–

1. स्वागत कथन
2. पारस्परिक वार्तालाप

साधना के क्षणों में राम ने महाशक्ति को सम्बोधित किया है–"मातः, दशभुजा, विश्व–ज्योतिः, मैं हूं आश्रित यह स्वगत संभाषण का उदाहरण है। प्रत्यक्ष वार्तालाप राम, विभीषण, सुग्रीव और जाम्बवान के बीच और सप्ताकाश में शिव–पार्वती (शिव शक्ति) के बीच हुआ है। महाशक्ति ने अंजना रूप में हनुमान को जो प्रबोध दिया है, उसे एकालाप कहा जा सकता है। शेष पात्रों के संवाद न देकर केवल उनके विवरण कवि के द्वारा प्रस्तुत कर दिये गये हैं। ये संवाद पात्रानुकूल है। इनमें पर्याप्त नाटकीयता है, इसलिए ये प्रभावोत्पादक सिद्ध हुए हैं।

5. रस–परिपाक

इस कविता में अनेक काव्य रसों का प्रयोग हुआ है, किन्तु प्रमुखता दो रसों की है– 1. वीर रस, 2. भक्ति रस। यहां शक्ति का प्रसंग है और महाप्राण निराला चूंकि विशेष रूप से ओज और विद्रोह के कवि रहे हैं, इसलिए अधिकतर समीक्षकों ने वीर रस को इसका अंगीरस (प्रमुख रस) मान लिया है। विचारणीय बिन्दु यह है कि अंगीरस का निर्णय फलागम के अनुसार किया जाता है। इस कविता में फलागम अर्थात् शक्ति का वरदान राम को पूजा के कारण प्राप्त हुआ है। पूजा मूलतः भक्ति का उपक्रम है, इसलिए उसका अंगीरस भक्ति रस ही हो सकता है। अन्य रूपों में श्रृंगार रस को काफी वरीयता दी गयी है। जनक वाटिका का स्मरण करते हुए राम के मन में जो पूर्व राग जाग्रत होता है–

"नयनों का नयनों से गोपन–प्रिय सम्भाषण....."

यह श्रृंगार का उत्कृष्ट उदाहरण है। कवि ने इस श्रृंगार की परिणति रस में की है। राम के मन में इसका ध्यान आते ही ज्योतिः प्रपात फूट पड़ता है। निराला जी लिखते हैं–

"ज्योतिः प्रपात स्वर्गीय ज्ञात छवि प्रथम स्वीय,

जानकी नयन–कमनीय प्रथम कम्पन तुरीय।"

श्रृंगार की इस दशा को तुरीयावस्था (जो यौगिक साधना की चरमावस्था है) से जोड़ देना निराला जी का एक विलक्षण प्रयोग है।

इस कविता में करुण रस का भी स्थान–स्थान पर सन्निवेश किया गया है। श्रीराम शक्ति के पक्षपात से और उनकी माया से दो बार दुखी हुए हैं और रो पड़े हैं। कवि के शब्दों में–

"अन्याय निधर है उधर शक्ति" कहते छल–छल

हो गये नयन, कुछ बूंद पुनः ढलके दृगजल,

रुक गया कण्ठ;.....।"

अंतिम कमल के लुप्त हो जाने पर वे फिर रो उठते हैं–"जानकी! हाय, उद्धार प्रिया का हो न सका।" ये सभी करुण रस के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

निराला जी ने वीर रस के साथ रौद्र और भयानक रस की भी अवतारणा यत्र–तत्र की है। युद्ध करते हुए राम को उन्होंने 'विच्छुरितवह्नि', 'लोहित लोचन' आदि विशेषण दिये हैं। इसी प्रकार राम की सेना को जिस प्रकार घायल होते दिखाया गया है–

"विद्धांग–बद्ध–कोदंड–मुष्टि–खर–रुधिर–स्राव,

रावण–प्रहार–दुर्वार–विकल वानर–दल–बल,

मूर्च्छित–सुग्रीवांगद–भीषण–गवाक्ष–गय–नल,

वारित–सोमित्र–भल्लपति–अगणित–मल्ल–रोध,

गर्ज्जित–प्रलयाब्धि–क्षुब्ध–हनुमत–केवल–प्रबोध।"

ये भयानक रस के उदाहरण हैं। साधना के क्षणों में राम को शांत रस और निर्वेद संचारी के साथ प्रस्तुत किया गया है। कवि के शब्दों में–''उमड़ता नहीं मन, स्तब्ध सुधी हैं ध्यान धार?।'' चित्त की यह निरूद्विग्नता शांत रस का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस प्रकार विभिन्न रसों से ओतप्रोत यह कविता रस परिपाक की दृष्टि से सर्वथा सफल कही जा सकती है।

6. भाषा–सौष्ठव

शक्ति पूजा में अधिकांशतः संस्कृत तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया गया है। इसमें सामासिक पद रचना अपनी अति पर दिखायी देती है। आरम्भिक सोलह पंक्तियां तो समस्त पदावली के सहारे ही रची गयी हैं–

''रावण वारण राघव–लासव गत युग्म प्रहर।''

यह शब्दावली क्लिष्ट है, कर्कश और ध्वन्यात्मक है। इसमें महाप्राणल की व्यंजना की गयी है। द्वित्व शब्दों के प्रयोग युद्ध के शस्त्रों की टंकार और झंकार को प्रतिध्वनित करने के लिए किये गये हैं। शृंगार के प्रसंगों में निराला की भाषा कोमलकांत पदावली से भर जाती है। जैसे–

''काँपते हुए किसलय–झरते पराग– समुदय

गाते खग–नव–जीवन–परिचय–तरु मलय–बलय।''

करुणा के प्रसंग में भाषा प्रवाहपूर्ण दिखायी देती है– ''अन्याय जिधर है उधर शक्ति।''

या रावण अधर्मरत भी अपना मैं हुआ अपर
यह रहा शक्ति का खेल समर, शंकर शंकर!''

इन कथनों में बड़ा आवेग है। पूजा के क्षणों में भाषा में स्थिरता या भावशक्ति के लक्षण दिखायी देते हैं। तात्पर्य यह है कि निराला जी की इस कविता में पर्याप्त भाषा–वैविध्य है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है गूढ़ार्थ व्यंजना। कवि ने स्थान–स्थान पर सूक्ष्म संकेत दिये हैं, जैसे–'रवि हुआ अस्त' का विशिष्ट गूढ़ार्थ है। 'तरु मलय–वलय' इन तीनों शब्दों द्वारा राम सीता के परिरम्भण (आलिंगन) का दृश्य उपस्थित किया गया है। इसी प्रकार के सूक्ष्म संकेत आद्यंत भरे पड़े हैं। कवि ने यथा प्रसंग पारिभाषिक तकनीकी शब्दों का प्रयोग किया है। पूजा की प्रक्रिया में चक्र, त्रिकुटी, सहस्रार, आज्ञा, ध्यान, धार, जैसे अनेक गूढ़ शब्दों के प्रयोग किये गये हैं। कुछ शब्दों द्वारा पूरी की पूरी घटना का संकेत किया गया है, जैसे–'श्यामा के पदतल भार धरण हर' में 'कालिका पुराण' की पूरी गाथा है। निराला जी ने जगह–जगह अपने नये शब्द बनाये हैं। उन्होंने समास और संधि के नये प्रयोग किये हैं। उनके कुछ प्रयोग भले ही व्याकरण सम्मत न हों, लेकिन वे अभिव्यंजना में सहायक अवश्य हैं। यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि 'राम की शक्तिपूजा' जैसी टकसाली भाषा आज तक कोई दूसरा कवि नहीं रच पाया है।

7. निराला का युगबोध

इस कविता की मूलवस्तु पुराख्यान से सम्बन्धित है, लेकिन इसका संदेश समकालीन जनजीवन से जुड़ा हुआ है। यह कविता रची गयी थी स्वतंत्रता आन्दोलन की अवधि में। निराला जी निराश हताश भारतीय जनता को इसलिए प्रेरित करते हुए जाम्बवान के शब्दों में कहते हैं– ''शक्ति की करो मौलिक कल्पना, करो पूजन'' और अंत में शक्ति के मुख से इसीलिए यह अभयदान दिलाते हैं– ''होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन।'' इस कविता में निराला जी ने मानवीय शक्ति से दैवी शक्ति को ओतप्रोत करके आसुरी शक्ति को नष्ट होते दिखाया है। यही

इस कविता का चरम उद्देश्य है। इसमें इतिहास, पुराण, दर्शन, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र आदि के अनेक सूत्र संग्रथित किये गये हैं, किंतु कुल मिलाकर यह कविता मनुष्य की जिजीविषा और विजयेषणा की गाथा है।

8. काव्योत्कर्ष

निराला की काव्य कला 'शक्ति पूजा' में अपने शिखर पर पहुँची है। उन्होंने भाव, भाषा– दोनों स्तरों पर अपनी शक्ति का भरपूर प्रदर्शन किया है। उनके कवित्व का मुख्य उपादान है–बिम्ब विधान। कवि ने स्थान–स्थान पर व्यक्त प्रकृति के अनेक चित्र प्रस्तुत किये हैं। आरम्भ में युद्ध क्षेत्र का चित्र है, फिर शिविर की ओर लौटते हुए सैनिकों की गति का चित्र दिखायी देता है, जैसे–

"लौटे युग दल। राक्षस–पदतल पृथ्वी टलमल,

बिध महोल्लास से बार–बार आकाश विकल।

वानर–वाहिनी खिन्न, लख निज–पति चरण–चिन्ह

चल रही शिविर की ओर स्थविर दल ज्यों विभिन्न।"

ये दोनों गत्वर बिम्ब हारने–जीतने वाली दो भिन्न मनोदशाओं के सूचक हैं। जनक वाटिका प्रसंग में निराला जी ने रूपकातिशयोक्ति का सुन्दर प्रयोग किया है। इसमें एक ओर बसंत का चित्रण है, दूसरी ओर राम–सीता के पूर्वराग का–

"नयनों का नयनों से गोपन–प्रिय सम्भाषण,

पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान–पतन,

काँपते हुए किसलय झरते पराग–समुदय,

गाते खग– नव–जीवन–परिचय–तरु मलय–वलय।"

यहां निराला जी ने दो विराट बिम्ब प्रस्तुत किये हैं, जो महाशक्ति से सम्बन्धित हैं। एक परिकल्पना के सहारे, दूसरा पर्यवेक्षण के सहारे।

शक्ति की नूतन कल्पना करते हुए राम उनका एक श्रीविग्रह बना रहे हैं–

"देखो बन्धुवर, सामने स्थित जो यह भूधर

शोभित–शत–हरित–गुल्म–तण से श्यामल सुन्दर,

पार्वती कल्पना है इसकी, मकरंद बिन्दु

गजरता चरण प्रांत पर सिंह वह, नहीं सिन्धु

दशदिक समस्त हैं हस्त और देखो ऊपर

अम्बर में हुए दिगम्बर अर्चित शशि–शेखर

लख महाभाव मंगल पदतल धँस रहा गर्व

मानव के मन का असुर मन्द, हो रहा खर्व।"

दूसरा दृश्य है, जब भगवती साक्षात प्रकट हो जाती हैं–

"देखा राम ने सामने श्रीदुर्गा, भास्वर
वामपद असुर–स्कन्ध रहा दक्षिण हरि पर
ज्योतिर्मय रूप, हस्त दश विविध अस्त्र सज्जित,
मन्द स्मित मुख लख हुई विश्व की श्री लज्जित।"

इस विराट विग्रह में जिस प्रकार लक्ष्मी, सरस्वती, कार्तिकेय, गणेश और शिव को प्रतिष्ठित किया गया है, जिस प्रकार महिष और सिंह को चित्रित किया गया है, और जिस प्रकार दशभुजा को विभिन्न अस्त्रों से सुसज्जित किया गया है, वह बिम्ब जितना सजीव है, उतना ही रहस्यमय भी।

प्रकृति चित्रण की काव्य कला अपेक्षाकृत अधिक प्रगल्भ हुई है, चाहे सूर्योदय का वर्णन हो जैसे–

"निशि हुई विगत नभ के ललाट पर प्रथम किरण
फूटी रघुनन्दन के दृग महिमा–ज्योति–हिरण।"

चाहे रात्रि का वर्णन हो जैसे–

"है अमानिशा, उगलता गगन घन अंधकार
खो रहा दिशा का ज्ञान स्तब्ध है पवन चार
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल
भूधर ज्यों ध्यान मग्न, केवल जलती मशाल।"

और चाहे हनुमान के उड्डयन या चक्रवात (बवंडर) का वर्णन हो जैसे–

"शत घूर्णावर्त तरंग भंग उठते पहाड
जल–राशि–राशि–जल पर चढ़ता खाता पछाड।
तोड़ता बन्ध प्रतिसंन्ध घरा हो स्फीत वक्ष
दिग्विजय अर्थ प्रतिपल समर्थ बढ़ता समक्ष
शत–वायु–वेग–बल, डुबा अतल में देश–भाव
जलराशि विपुल मथ मिला अनिल में महाराव
वज्रांग तेजघन बना पवन को, महाकाश
पहुँचा, एकादश रुद्र क्षुब्ध कर अट्टहास।"

ये सभी दृश्य काव्योपय हैं। इससे निराला की चित्रण कला, उनकी प्रतीक वदुता, रूपक–रचना और उनकी बिंब धर्मिता का प्रमाण मिलता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि कला और चिंतन, इन दोनों दृष्टियों से 'राम की शक्ति पूजा' न केवल निराला की ही, बल्कि समूचे हिन्दी साहित्य की शिखर उपलब्धि है।

1.5 व्याख्यांश

'रवि हुआ अस्त.. अपराजेय समर।'

सूर्य अस्त हो गया और प्रकारान्तर से संकेत यह है कि सूर्यवंशी राम प्रायः परास्त या पस्त हो गये हैं। सूर्यास्त के साथ ही किसी प्रकार आज का युद्ध समाप्त हो गया। इस कविता का समारम्भ विचित्र ढंग से किया गया है। सूर्यास्त से काव्यारम्भ करना इष्टकर नहीं है, किन्तु यह निराला जी का एक विशिष्ट प्रयोग है। इसे मंगलारम्भ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि अस्त किसी का हो, अनिष्ट ही होता है। यहाँ अस्त के पीछे कवि का कुछ गढ़ अर्थ है। यह अस्त सूर्य का है और सूर्यवंशी मर्यादा पुरुषोत्तम का भी। प्रकट रूप से यह पंक्ति वाल्मीकि रामायण में प्रयुक्त "रवि अस्तंगतः" का रूपान्तर है। यह निराला का लघुतम वाक्य है। इसी प्रकार का समारम्भ निराला ने तुलसीदास में किया है–"अस्तमित आज रे तमस्तूर्य दिग्मण्डल।" वस्तुतः 'सन्ध्याबेला' निराला का एक प्रिय काल खण्ड है। इसे वे पराभव का प्रतीक मानते हैं और स्वयं कहते हैं–'देखता हूँ, आ रही मेरे दिवस की सान्ध्यबेला।' 'रवि हुआ अस्त' निराला का केवल तीन पदों का वाक्य है। उसी तरह, जैसे–'जूही की कली' में 'सोती थी' अथवा इसी कविता में 'निशि हुई विगत' या 'है अमानिशा।' यह लघुपद गुम्फ विशेष प्रकार की प्रभावान्विति उत्पन्न करता है। वाक्य–विस्तार के कारण कभी–कभी आवेग बिखर जाता है, जबकि संक्षिप्त–संगठित वाक्य में वह पूरे वेग के साथ मुखरित होता है।

दूसरे वाक्य में कवि ने एक रूपक सजाया है। वह है– ज्योति के पत्र पर अंकित राम–रावण के चिरन्तन संघर्ष की गाथा का। ज्योति का पत्र अर्थात् नीलाकाश या अन्तरिक्ष। सूर्यास्त के पूर्व इस नील नभोमण्डल पर प्रखर प्रकाश छाया हुआ था। सूर्यास्त की बेला में वह अरुणिम आभा से भर गया है। कवि की उद्भावना है कि अस्तोन्मुख सूर्य की रंग–बिरंगी लाल किरणें जैसे आज के अपराजेय युद्ध की गाथा लिख रही हैं। इस आलेख के लिए अमर विशेषण का प्रयोग किया गया है और समर को अपराजेय कहा गया है। अपराजेय का अर्थ यहाँ है–अनिर्णीत। राम और रावण मानव की चिरन्तन वृत्तियों के प्रतीक हैं। एक सत् का प्रतीक, दूसरा असत् का। उनके बीच निरन्तर अन्तस्संघर्ष चलता रहता है। इसका कभी अन्त नहीं होता। कभी एक पक्ष प्रबल हो जाता है, कभी दूसरा पक्ष। 'प्रसाद' जी ने भी लिखा है–

'देवो की विजय दानवों की हारों का होता युद्ध रहा।
संघर्ष सदा उर अन्तर में जीवित रह, नित्य विरुद्ध रहा।'

ज्योति के पत्र पर अंकित यह लेख स्वयं में एक विराट बिम्ब है, अनन्त आकाश का महाफलक। श्वेत–श्याम तथा रंग–बिरंगी रेखाओं से अंकित जय–पराजय की गाथा। इससे कुछ मिलते–जुलते बिम्ब का प्रयोग मैथिलीशरण गुप्त ने भी किया है–

"लिखकर लोहित लेख डूब गया है दिन अहा।"(साकेत)

अन्तर इतना है कि वहाँ लोहित लेख मृत्यु (या डिक्लेरेशन आफ डेथ) का अर्थ देता है, जबकि यह 'ज्योति–लेख' मानव की अमिट और अकुंठ संघर्ष–साधना का सूचक है। इसीलिए कवि ने समर को अपराजेय कहा

है। परास्त होकर भी मन, वचन, कर्म से पराजय स्वीकार न करना मनुष्य की एक विशिष्ट जिजीविषा शक्ति है, और वह एक उदात्त मानवीय वृत्ति है। राम आज परास्त हुए हैं, लेकिन मन से नहीं। कवि लिखता है–

'कल लड़ने को हो रहा विकल वह बार–बार।

असमर्थ मानता मन उद्यत हो हार–हार।।'

राम के मन में जय–पराजय का विचित्र द्वन्द्व है। एक ओर गहरी हताशा है। वे घोषित कर देते हैं– 'बन्धुवर विजय होगी न समर', क्योंकि 'यह नहीं रहा नर–वानर का राक्षस से रण।' दूसरी ओर गहरी आस्था है तथा दृढ़ इच्छा शक्ति है। राम का मन, कवि के शब्दों में– 'जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय' अर्थात् सदा–सर्वथा अप्रतिहत है। कवि ने आरम्भ में ही राम को इस द्वन्द्वात्मक भूमिका पर उतार दिया है। तीव्र अन्तर्द्वन्द्व से आरम्भ होने वाली यह कविता इसीलिए भाँति–भाँति के घात–प्रतिघात प्रस्तुत करती है। इससे रचना में ऊर्जा का संचार हुआ है, साथ ही कुतहूल की सृष्टि भी।

प्रथम पंक्ति के दो पाठ प्राप्त होते हैं। एक है– 'ज्योति के पत्र पर लिखा अमर', दूसरा है– 'ज्योति के पत्र में लिखा अमर।' दोनों में अधिकरण कारक (परसर्ग) हैं, लेकिन दोनों के अर्थों में तात्विक भेद है। प्रश्न यह है कि कोई आलेख 'पत्र' में लिखा जाता है या 'पत्र पर' लिखा जाता है। 'मैं' का अर्थ है भीतर। उसका अर्थ होगा–आकाश के भीतरी स्तर में, यानी उस पार। जबकि यह संघर्ष–कथा अन्तरिक्ष (आकाश) के ऊपरी स्तर पर अंकित दिखाई पड़ती है। भीतर लिखी होने पर वह अदृश्य हो जाती। दूसरा एक और प्रमाण है। निराला जी वर्णमैत्री और आनुप्रासिकता के प्रति निरन्तर लालायित रहे हैं। उनकी भाषा में अन्तर्तुकान्तता का बहुशः प्रयोग मिलता है। इस पंक्ति में 'पर, अमर, समर' ये तीनों श्रुतिसम अन्तर्तुकान्त ध्वनियाँ हैं। ठीक उसी प्रकार, जैसे–'जागो फिर एक बार'– कविता की ये पंक्तियाँ–

"सत श्री अकाल भाल,

अनल धक–धक कर जला।

भस्म हो गए थे गुण तापत्रय मृत्युंजय।

सिही की गोद में छीनता रे शिशु कौन?

मौन भी वह रहती क्या रहते प्राण, रे अजान?

एक मेष माता ही रहती है निर्निमेष।"

यहाँ ध्वनिसाम्य और अन्तर्तुकान्तता का आग्रह स्पष्ट है। इन पंक्तियों में 'अर–अर–अर' वाली ध्वनियों के भी बहुत से शब्द प्रयुक्त हुए हैं। जैसे क्षिप्रकर, वेग प्रखर गर्जित स्वर। इससे एक विशेष प्रकार का ध्वनि–बिम्ब निर्मित हुआ है। युद्ध–क्षेत्र में सरसराते हुए बाणों की ध्वनि कविता की आरम्भिक 16 पंक्तियों में शस्त्रास्त्रों की विभिन्न ध्वनियाँ के साथ प्रतिध्वनित की गई हैं।

विद्वानों ने एक काव्यशास्त्रीय आपत्ति "र" को लेकर उठायी है। इस दग्धाक्षर से काव्यारम्भ नहीं होना चाहिए था, किन्तु 'राम' की आवृत्ति करते हुए गोस्वामी जी ने संस्कृत पिंगल शास्त्र की इस मान्यता का हिन्दी कविता के लिए संक्षमण करा दिया है। अतः अब यह प्रयोग वर्जनीय नहीं रहा।

यह आज के युद्ध का आँखों देखा दृश्य है। समूचा दृश्य एक श्रव्यात्मक कमेण्ट्री है। इसमें अनेक चाक्षुष बिम्ब है। अनेकानेक ध्वनिबिम्ब हैं। नाद–सृष्टि इसकी सबसे बड़ी उपलब्धि है। निराला जी ध्वन्यात्मकता के प्रबल प्रयोक्ता रहे हैं। "बादल राग" कविता इसका प्रमाण है। वहाँ घन–गर्जन और जल–वर्षण की विचित्र ध्वनियाँ यथावत् अंकित कर दी गयी हैं। जब ध्वनन से क्रिया–व्यापार का प्रतिविधान कर दिया जाता है तो वहाँ कविता स्वतः स्पन्दित हो उठती है। "जूही की कली" में निराला जी पवन की गति के ध्वनि बिम्ब निर्मित करते हुए लिखते हैं–

'फिर क्या पवन? उपवन सर सरित गहन गिरि कानन–

कुंजलता पुंजों को पारकर।'

यहाँ 'पवन, उपवन, गहन, कानन' में आनुनासिक ध्वनियाँ हैं। उनसे वायु की सनसनाहट का ध्वनि बिम्ब निर्मित हुआ है। 'पार कर' क्रिया में 'पा' प्लुत स्वर है। उससे एक उछाल व्यंजित हुआ है। संकेत है– उत्ताल गति अर्थात् वायु का तीव्र झोंका। इसका तात्पर्य यह है कि इस कविता की आरम्भिक पंक्तियों से ही नाद बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

यहाँ एक शब्द विशेषतः विचारणीय है, वह है ज्योति। पन्त जी ने निराला को 'ज्योति का कवि' कहा है। निराला स्वय कहते हैं–'मैं कवि हूँ पाया है प्रकाश, ज्योतिस्तरणा के चरणों पर।'

एक स्थल पर वे लिखते हैं कि 'मुझे ज्योति भी दिखी, पर स्तर भेद है। मूषा को पहाड़ पर दिखी थी, रवि बाबू को आराम कुर्सी पर, मुझे गाँव के गलियारे में।' शक्तिपूजा में उनके सम्मुख ज्योति का विशाल पटल खुला हुआ है, जो सूर्यास्त अर्थात् पराजय के बावजूद मंगलाशा का सन्देश दे रहा है–'होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन।' वस्तुतः यह कथा ज्योति की है। यह भारतीय अस्मिता की अमर गाथा है और यही 'शक्तिपूजा' का मूल उपक्रम है।

अमानिशा.. मशाल।

अमावस्या की काली अँधेरी रात है। राम अपने शिविर के पास स्फटिक शिला पर बैठे हुए हैं। चारों ओर इतना सघन अंधकार छाया हुआ है, मानों आकाश अंधकार के आवर्त या अंबार उगल रहा है। उगलने का यह बिम्ब विलक्षण एवं अभूतपूर्व है। ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे कोई महादैत्य अंधकार का वमन कर रहा है। शायद धुवाँ उगलती चिमनी का दृश्य कवि–मानस में रहा हो। इससे घटाटोप जैसे अंधकार का अतिरेक व्यंजित होता है। अध ंकार प्रतीक है तमस का एवं राम की हताशा का। प्रसाद जी ने कामायनी (चिंतासर्ग) में प्रलय रात्रि की 'घनी कालिमा को स्तर–सत जमती पीन' होती कहा है। वहाँ तह दर तह सघनता है और यहां प्रति आवर्त' है। अमा निशा स्वयं में लघुत्तम वाक्य है, किन्तु अर्थ–व्यंजना महत्तम है।

इस सुसंगठित वाक्य द्वारा एक विशेष प्रकार की प्रभान्विति प्रकट हुई है। कवि जैसे अमावस्या की घनी कालिमा को ललकार रहा हो। इस सघनांधकार से आकाश, वायु, जल, पृथ्वी और अग्नि पाँचों तत्व अलग–अलग प्रकार से प्रभावित हुए हैं। आकाश लुप्त हो गया है, क्योंकि दिशाओं का ज्ञान नष्ट हो गया है। अर्थात् सम्भावनाएँ क्षीण हो गई हैं।

इस दिशा हीनता के कारण दिगन्त से आने वाली वायु स्तब्ध अर्थात् अवरुद्ध है। यहाँ पवन चार का अर्थ चारों दिशाओं से प्रवाहित होने वाली वायु और हवा के चलने (वायु संचार) दोनों से है। कवि ने इसका मानवीकरण किया है। राम अपनी दिग्मूढ़ता के कारण स्तब्ध अथवा निश्चेतन हैं, इसलिए वायु की गति भी ठहरी हुई है। वायु

का संचरण न होने से घुटन और बेचैनी की अनुभूति हो रही है। प्रकारान्तर से व्यंजना यह है कि श्रीराम किंकर्तव्यविमूढ़ भी हैं और आकुल–व्याकुल भी।

राम जहाँ बैठे हैं, उसके पृष्ठभाग में हिन्द महासागर उत्ताल तरंगाघात करता हुआ अविराम गुरु–गर्जना कर रहा है। परोक्ष रूप से यह सागर राम के आंतरिक विक्षोभ और तीव्र अन्तर्द्वन्द्वों से ग्रस्त जीवन का प्रतीक है। इस समुद्र के परिपार्श्व में है, नील, सुबेल पर्वत, जिसके शिखर ध्यानमग्न दिखाई देते हैं। वे राम के अनवरत ऊध्‍र्व चिंतन के सूचक हैं।

यहाँ सभी पंचतत्व मौजूद हैं। भूधर पृथ्वी तत्व है। पृथ्वी का गुण है स्थैर्य। श्रीराम भरसक स्थिरता और धीरता के कारण अपने कर्तव्य–मार्ग पर भूधर की तरह अचल अडिग, अर्थात दृढ़तापूर्वक स्थिर हैं। अम्बुधि जल तत्व है। वह जीवन का प्रतीक है, जिसमें आज अस्तित्व का संघर्ष कुछ ज्यादा ही भर गया है। युद्ध शिविर में किसी किनारे मात्र एक मशाल जल रही है। वह अग्नि तत्व की प्रतीक है। संकेत यह है कि राम के मन और चित्त में विद्यमान ऊष्मा अभी बुझी नहीं है। वह अपनी पूरी शक्ति के साथ चल रही है और दिग्–दिगंत तक व्याप्त अमा–निशा के सूची भेद्य अंधकार को तिल–तिलकर काट रही है। यह मशाल सम्भावना और मंगलाशा की प्रतीक है। इस छन्द के आरम्भ में है अमा–निशा और अन्त में है–'जलती मशाल'। यही अंधकार और प्रकाश का चिरन्तन द्वन्द्व है।

इनके माध्यम से निराला जी ने राम के अन्तर्विरोधग्रस्त जीवन पर प्रकाश डाला है। एक ओर वे दिशाहारा हैं और दूसरी ओर जलती मशाल की तरह अनन्त सम्भावनाओं के केन्द्र हैं। एक ओर वे नितान्त स्तब्ध हैं और दूसरी ओर उनके प्राणों में भीषण हाहाकार मचा हुआ है। स्फटिक शिला पर स्थिर उनकी मुद्रा भूधर जैसी ध्यानावस्थित दिखाई दे रही है। यही वास्तविक रामतत्व है। निराला के राम तुलसी के राम जैसे निर्विकार नहीं है। उनका एक रूप आधिदैविक है और दूसरा सहज मानवीय। कवि ने इसीलिए अगली पंक्ति में स्पष्ट करते हुए लिखा है–

'स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय'।

अर्थात् राम को सन्देह बारम्बार अस्थिर कर रहा है। वे जितने दृढ़ चेता थे, उतने ही आज शंकालु हो उठे हैं। पूरी कविता में आशा–निराशा का यही द्वन्द्व प्रस्तुत किया गया है। इससे राम का नर–चरित्र व्यक्त हुआ है, समस्त सीमाओं–सम्भावनाओं सहित।

कुछ समीक्षकों ने इसी वाक्य से नरेश मेहता की 'संशय की एक रात' कृति को प्रेरित बताया है। नरेश जी के राम में संशय है–युद्ध करने के प्रश्न पर, जिसे एक अकारण ऊहापोह कहा जा सकता है। 'शक्तिपूजा' का संशय है–विजय को लेकर। यह राम के कटु अनुभव की देन है। अतः दोनों में अन्तर है। तुलसी के राम हर स्थिति में समरस रहते हैं। उनके शब्दों में–'प्रसन्नतां यो न गताभिषेकस्तथा न मम्ले वनवास दुःखतः।' यानी न अभिषेक के समाचार से खुश, न वनवास से दुःखी। निराला के राम यत्र–तत्र कवि के संस्कारवश परब्रह्म के रूप में भले ही चित्रित हो गये हों, पर वे है मूलतः नर राम। हाँ, उनका व्यक्तित्व आद्यंत ऊर्जावान है। निराला जी ने उनमें अकूत मात्रा में महाप्राणत्व का सन्निवेश किया है।

उपर्युक्त पंक्तियों में पंच तत्वों, पंच भूतों, पंच प्रकृतियों और पंच तन्मात्राओं का परोक्षतः जो संकेत किया गया है, यह दार्शनिक निराला जी का प्रिय विषय है। उनकी रचनाओं में इसकी सायास, निरायास बहुशः प्रतिष्ठा हुई है। जैसे–'कौन तम के पार रे कह' गीत की इन पंक्तियों में–

'गंध–व्याकुल कूल उर–सर,

लहर कच कर कमल मुख पर,

हर्ष अलि हर स्पर्श शर–सर

गूँज बारम्बार

यहाँ गंध (पृथ्वी) सर (जल) स्पर्श (वायु) गूँज (ध्वनि) और तेज (अग्नि) सभी पाँचों तत्वों का एकत्र सन्निवेश है।

'शक्तिपूजा' के इस सम्पूर्ण पदबन्ध का आशय है कि श्रीराम को आज कुछ सूझ नहीं रहा है। कहीं कोई एक क्षीण आशा–किरण मन में शेष है। महाशक्ति का अन्याय देखकर वे क्षुब्ध हो उठे हैं। उसका प्रतिकार वे चूंकि नहीं कर सकते, इसीलिए भीतर–भीतर बड़ी घुटन है। सारी स्थिति पर वे ध्यानावस्थित होकर मात्र विचार करने को ही विवश है। यहाँ महासागर और भूधर एक ओर प्रकृति–परिवेश का ज्ञान कराते हैं और दूसरी ओर ये राम के व्यक्तित्व की गहराई और ऊँचाई के प्रतीक बनकर आये हैं। उल्लेखनीय है कि आकाश तत्व और वायु तत्व निष्क्रिय हो गए हैं। शेष हैं पृथ्वी, जल और अग्नि। इन्हीं के सहारे राम को आगे संघर्ष करना है।

यहाँ 'जलती मशाल' से कुछ विद्वानों ने राम की आँखों का संकेतार्थ ग्रहण किया है। मेरे विचार से यह दुराग्रह है। इसका अभिधार्थ ग्रहण करना ही अपेक्षाकृत अधिक निरापद होगा। एक तो इसलिए कि मशाल का प्रयोग एकवचन में हुआ है। यदि कवि उन्हें आँखों का उपमान बनाना चाहता तो दो मशालों का नामोल्लेख अवश्य करता। प्रसंग गर्भत्व की दृष्टि से इसे एक सुदूरगामी व्यंजना माना जा सकता है। मेरे मत से इसे राम के मन की सतत जाज्वल्यमान ऊर्जा का अर्थग्रहण करना बेहतर होगा।

इस पदबन्ध का सर्वाधिक उल्लेखनीय वैशिष्ट्य है–बहिरंग प्रकृति और अन्तःप्रकृति की परस्परता का रेखांकन। वातावरण में घटाटोप अंधकार है और राम के मन में भी नैराश्यान्धकार। घनीभूत अंधकार के कारण कुछ दिखाई (सूझ) नहीं रहा है, अर्थात् राम किंकर्तव्यविमूढ़ हो रहे हैं। पवन स्तब्ध है अर्थात् राम स्तम्भित और जड़ीभूत हो गये हैं। हाँ, भूधर की तरह वे ध्यानावस्थित अर्थात् चिन्तनमग्न अवश्य हैं। समुद्र की गुरु–गर्जना राम के मन में उठने वाले ऊहा पोह की प्रतीक है। एकमात्र जलती हुई मशाल सफलता की क्षीण सम्भावना की सूचक है। कवि ने पारम्परिक प्रतीकों के माध्यम से राम का अन्तर्बाह्य परिदृश्य प्रस्तुत किया है। यहाँ आकाश, पवन, समुद्र, भूध र का मानवीकरण किया गया है। अंधकार और रावण में रूप गुण साम्य है। 'पवन चार' राम के स्पन्दन का, अम्बुधि ा उनके अन्तर्द्वन्द्व का भूधर उनके व्यक्तित्व का और मशाल उनकी मंगलाशा की प्रतीक है। इसमें सांगरूपक है। भाषा में आद्यंत ओज है, इसीलिए बलाघात का प्रयोग हुआ है।

'स्थिर राघवेन्द्र..हार–हार'।

श्रीराम स्वभावतः दृढ़चेतन हैं, किन्तु संशय का भाव आज बार–बार उनके मन में प्रवेश करके उन्हें बारम्बार हिलाए दे रहा है। हिला देना एक मुहावरा है। यहाँ 'फिर–फिर', 'रह रह' 'हार हार' जैसे वीप्सा मूलक शब्द द्वन्द्व के परिचालक हैं। अपने भविष्य के प्रति आश्वस्त होते हुए भी राम यदा–कदा भयभीत या द्विधाग्रस्त हो जाते हैं कि वे इस नर–लीला में रावण पर विजय प्राप्त कर सकेंगे या नहीं? मर्यादा पुरुषोत्तम राम जगजीवन में रावण अर्थात् राक्षसी वृत्तियों से संघर्ष करके मानुष धर्म का एक आदर्श स्थापित करना चाहते हैं, लेकिन आज की घटना के कारण यह स्थिति संदिग्ध हो गयी है।

यहाँ जगजीवन शब्द द्वारा निरालाजी ने राम की भागवती सत्ता की ओर भी संकेत किया है। पूरी कविता में पाँच–स्थलों पर इस प्रकार के संकेत सूत्र प्राप्त होते हैं, जिनके आधार पर 'राम की शक्तिपूजा' के राम परब्रम्ह परमात्मा के लीलावतार प्रतीत होते हैं। उन्हें अच्युत, शेषशयन, अस्ति–नास्ति के भेद से युक्त, सच्चिदानन्द,

लीला–सहचर आदि रूपों में यथाप्रसंग प्रस्तुत किया गया है। निरालाजी ने सम्पूर्ण कविता में उन्हें मानवीय मनोवृत्तियों संघर्ष, क्षोभ, साधना, संकल्प शक्ति और शुभाशंसा का संवाहक माना है। राम आसुरी वृत्ति से संघर्ष करते हैं, परास्त होकर सहज मानव की तरह शोकग्रस्त हो जाते हैं, करुण क्रन्दन भी करते हैं, किन्तु विचलित और पूर्णतः पराभूत नहीं होते, वरन् जाम्बवान का प्रबोध पाकर यथा समय पूर्ण शुभाशंसा के साथ अकुंठ भाव से शक्ति की समाराधना करते हैं एवं पूर्ण प्रपत्ति के सहारे अपने अहम् का विसर्जन करके, दुस्साध्य साधना और सत्संकल्प द्वारा अन्ततः चरम–सिद्धि प्राप्त करते हैं। इस प्रकार 'शक्ति–पूजा' में विभिन्न मानवीय मनोवृत्तियों का सन्निवेश किया गया है।

यहाँ राम के आधिदैवत और आधिभौतिक रूपों के बीच सफल सामंजस्य है। उनकी यह छवि अन्तर्द्वन्द्व के कारण जीवन्त हो उठी है। कवि कहता है कि राम का जो हृदय कभी किसी शत्रु से परास्त (रिपु दम्य) नहीं हुआ, वह मन जो कभी थका नहीं, जो अयुत (लाखों करोड़ों) लक्ष्यों के बीच एक बार भी त्रस्त नहीं हुआ, वह मन आज परास्त हो गया है, लेकिन युद्ध हेतु उद्यत उनका मन हार–हार कर भी अपने को पूर्णतः अक्षम मानने को तैयार नहीं है, इसलिए बार–बार अकुलाहट के साथ वह प्रतीक्षा कर रहा है कि शीघ्रातिशीघ्र निशा समाप्त हो और कल प्रातःकाल होते ही रावण से पुनः युद्ध किया जाए।

इन पंक्तियों में एक अन्तर्विरोध भी है। आज के युद्ध में रावण का पक्ष लेती हुई महाशक्ति को देखकर राम ने यह अन्तिम निष्कर्ष निकाल लिया है, (जिसे उन्होंने सुग्रीव के सम्बोधन के बाद कहा भी है) 'मित्रवर! विजय होगी न समर।' उन्होंने अब युद्ध न करने का निर्णय लिया है, किन्तु ठीक इसके विपरीत कवि ने इन पंक्तियों में–'कल लड़ने को हो रहा विकल' भी कहा है। सम्भवतः इसके माध्यम से रचनाकार राम का अन्तर्द्वन्द्व चित्रित करना चाहता है। यह मन का ऊहापोह है। मन स्वभावतः चंचल होता है। राम अपने अंतस में तो यह मान बैठे हैं कि महाशक्ति के विरुद्ध अब युद्ध सम्भव नहीं है। उन्हें अपनी मानवीय क्षमता की सीमाओं का ज्ञान है, परन्तु उनका लौकिक मन पराजय के बावजूद फिर–फिर जूझने के लिए आकुल है।

निराला जी ने इसके माध्यम से जड़–व्यवस्था से जूझती हुई जनशक्ति की ओर भी संकेत किया है। लगता है, भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन के दौरान ऐसे भी क्षण आये, जब विदेशी सत्ता पहले से अधिक ताकतवर और आन्दोलनकारी पूर्वापेक्षा कुछ कमजोर दिखाई देने लगे। फलस्वरूप जनमानस में यह भाव दृढ़तर होने लगा कि भारत आजाद नहीं हो पायेगा। निराला ने क्रान्तिकारियों की दुरवस्था देखी थी, कुछ देशवासियों की गद्दारी देखी थी और देखा था प्रथम विश्वयुद्ध में अपने प्रतिपक्ष (ब्रितानी सत्ता) की विजय। कदाचित् यही हताशा 'विजय होगी न समर' वाक्यांश में मुखरित हुई है।

निराला के काव्य में पराजय बोध भी गहरे स्तर पर है। उनका एक प्रसिद्ध गीत है–'हो गया व्यर्थ जीवन मैं रण में गया हार'। अपने अन्तिम गीत में उन्होंने लिखा–' मल्ल मल्ल की मारें मूर्च्छित हुईं, निशाने चूक गए हैं।' निष्कर्ष यह कि संघर्ष, विजय की आकांक्षा और पराजय, सब एक साथ राम के मन में विद्यमान है।

ऐसे क्षण.. तुरीय।

इन तीव्र अन्तर्द्वन्द्वग्रस्त क्षणों में राम को अकस्मात् सीता का स्मरण हो आता है। यह पूर्वदीप्ति–प्रविधि है जीवन–मरण की स्थिति से गुजरते हुए प्रियजन का स्मरण करना तथा पूर्वकृत कर्म का संकल्प लेना सहज स्वाभाविक ही है। निराला ने 'जूही की कली', 'स्मृति', 'प्रिया के प्रति', 'जानकी' आदि कई रचनाओं में स्मृति संचारी का प्रयोग किया है। किन्तु आश्चर्य है कि कवि ने विगत चौदह वर्षों में सीता के साथ बिताये हुए साहचर्य का स्मरण राम को नहीं कराया है, बल्कि विवाह पूर्व की कुमारिका छवि का ध्यान कराया है। कवि के शब्दों में–जैसे घने अ

ाकार के मध्य सहसा बिजली कौंध जाती हो, उसी प्रकार शंकाकुल राम के मन में पृथ्वी पुत्री कुमारिका अयोनिजा जानकी की एक झलक जगमगा उठी है। यह जनक वाटिका का प्रसंग है, जहाँ प्रथम बार राम–सीता ने परस्पर पूर्वराग का अनुभव किया था। प्रिय के प्रथम मिलन का आजीवन स्मरण करते रहना एक मनोवैज्ञानिक सत्य है। वह स्मृति–बिम्ब किसी न किसी रूप में अवचेतन में विद्यमान रहता है और परिस्थिति तथा उससे प्रेरित मनःस्थिति के दबाव से उभर आता है। भयावह अंधकार के बीच वाटिका का यह मनोरम दृश्य व्यतिरेकी काव्यकला के सहारे प्रस्तुत किया गया है।

निराला जी ने कुमारिका छवि का जो उल्लेख किया है, वह बड़ा सोद्देश्य है। शाक्त दर्शन में कुमारिका को गौरी कन्या कहा गया है। यह सीता का एक नाम भी है। कौमारी कार्तिकेय की पत्नी का भी नाम है। भारतीय पुराख्यानों में ऐसे अनेक वृत्तान्त हैं, जहाँ कौमारी शक्ति ने ही आसुरी शक्तियों को परास्त किया है। इसे एक मिथ तथा आद्यबिम्ब कहा जा सकता है और कथानक रूढ़ि भी। यह तान्त्रिक क्रिया से भी सम्बद्ध है। लोक जीवन में दुर्गा, काली, महिषासुरमर्दिनी आदि के प्रति कुछ ऐसी ही आस्था है। बंगाल से बैसवारा तक कुमारी कन्या देवी स्वरूपा अर्थात् सर्वथा पूज्य मानी जाती है। निराला जी में इस लोकास्था का गहरा संस्कार रहा है। सीता के लिए यहाँ पृथ्वी तनया शब्द साभिप्राय है। मिथक के अनुसार वे पृथ्वी से उत्पन्न हुई हैं, प्रतीकार्थ की दृष्टि से वे लोकशक्ति है, जो दैवीशक्ति के विरुद्ध उठ खड़ी हुई हैं।

निराला जी ने महाशक्ति अथवा श्यामा का जो श्री विग्रह प्रस्तुत किया है, वह है'–आच्छादित किये हुए सम्मुख समग्र नभ को'। यह नभ है, राम का मन। उसे घेर रही है शक्ति। एक ओर ब्रम्हाण्ड की दिव्यशक्ति और दूसरी ओर पार्थिव शक्ति। एक ओर ब्रिटिश 'इम्पायर', जिसमें सूरज नहीं अस्त होता था और दूसरी ओर जनशक्ति। यानी महारानी विक्टोरिया बनाम भारतमाता। शक्ति के जवाब में दूसरी शक्ति की यह उद्भावना निस्सन्देह विशिष्ट है। वह स्मृति संचारी है। यहाँ श्रृंगार अंगीरस है, लेकिन उज्ज्वल–मधुर–रस के रूप में। इसके आश्रय श्रीराम हैं और आलम्बन कुमारिका सीता हैं। उद्दीपन है विदेह वाटिका में आई वसन्त ऋतु।

राम के इस अन्तःदर्शन से उत्पन्न रसानुभूतियों की विभिन्न कोटियों का उपक्रम यहाँ निराला जी ने प्रस्तुत किया है। एक भौतिक मनोवृत्ति की परिणति किस प्रकार लोकोत्तर चेतना में होती है? विदेह कन्या के सान्निध्य में राम किस प्रकार देहातीत होकर अपनी चित्त वृत्ति का उदात्तीकरण करते हैं? यही इस प्रसंग का प्रमुख प्रतिपाद्य है। कवि ने उनके लिए अच्युत शब्द का प्रयोग किया है अर्थात् जो कभी च्युत न होता हो, जिसकी समाधि भंग न होती हो। गीता के योगेश्वर कृष्ण के लिए यह शब्द प्रयुक्त हुआ है। मर्यादा पुरुषोत्तम (दृढ़व्रत) राम के लिए भी यह शब्द सर्वथा सटीक है। श्रीराम स्थिर भाव से कुछ क्षणों तक सीता के उस रूप को देखते रहते हैं। देखते–देखते उनकी दृष्टि–पथ पर उभर आती है, जनक की वाटिका, जहाँ लतान्तराल में (लता–कुंजों के मध्य) सीता से उनका प्रथम मिलन हुआ था। इस 'जनक वाटिका प्रसंग' को प्रायः प्रत्येक राम कवि ने पूरी रसात्मकता के साथ उभारा है। तुलसी जैसे मर्यादावादी कवि ने भी बड़े सधे स्वरों में, किन्तु सविस्तार इस पूर्वराग को वर्णन किया है। गोस्वामी जी के अनुसार राम सीता दोनों एकटक एक दूसरे को देखते रह जाते हैं–'भये विलोचन चारु अचंचल।' निराला ने नेत्रों की इस एकटक मुद्रा को सर्वाधिक लक्ष्य किया है। उनके अनुसार राम–सीता, जो परस्पर आश्रय–आलम्बन हैं, एक–दूसरे को पहले कुतूहलवश देखने लगते हैं, फिर अपने सहज शील या लोक लाज के कारण संकोच अनुभव करने लग जाते हैं, जिससे आँखें गोपन या लुका–छिपी करने लगती हैं, किन्तु फिर भी अपनी इंगिति से वे हृदगत भावों का आदान–प्रदान कर ही लेते हैं। बिहारी की नायिका की 'भरे भौन में करत है नैनन ही सों बात' जैसी स्थिति है यहाँ। गोस्वामी जी की सीता जी राम की छवि को लोचनमार्ग से अपने हृदय में भर लेती हैं और पलक–कपाट बन्द कर लेती हैं, ताकि इच्छा भर उस रूप–राशि में अवगाहन कर सके–

'लोचन मग रामहि उर आनी।

दीन्हें पलक कपाट सयानी।।'

तुलसी का श्रृंगार मुखर है, निराला का व्यंजना गर्भित। तुलसी ने दोनों (रामसीता) को समान्तर सक्रिय दिखाया है, निराला ने यहाँ केवल राम को प्रणय स्मृति के बीच केन्द्रित किया है। तुलसी का दृश्य वर्तमान से जुड़ा है, निराला का अतीत से। तुलसी का उद्देश्य था–प्रणय–परिणय। निराला का ध्येय है–प्रेम द्वारा शक्ति–संचय।

निराला ने यहाँ नेत्र–निमीलन की लम्बी अवधि नहीं रखी है। दोनों में परस्पर गोपन चल रहा है, जो भक्ति की अपेक्षा श्रृंगार के अधिक निकट है। सीता में लज्जा है, राम में शील। तुलसी की सीता में तन्मयता है और निराला के इन पात्रों में रस–कौतुक। निराला के आश्रय–आलम्बन की पलकें अपने–अपने आश्रय–आलम्बन की नवपलकों की ओर पहले उठती हैं, फिर मुँद जाती है। यह प्रथमोत्थान–पतन निर्निमेष मुद्रा नहीं है, जबकि निराला ने ऊपरी पंक्ति में राम को निष्पलक कहा है।

व्यंजना यह है कि पूरे दृश्य का स्मरण करते हुए राम निष्पलक है, लेकिन उन्हें सीता को परस्पर निहारती हुई जो छवि दिखाई दे रही है, उससे नेत्र निमीलन और उन्मीलन की प्रक्रिया तीव्रगति से चल रही है। इस प्रथम दर्शन में कई प्रकार के अनुभव भी स्वतः उत्पन्न हो गये हैं, जैसे किसलय (कोंपल) काँपने लगे हैं, पराग–पुंज स्रवित (प्रवाहित) होने लगा है, पक्षी चहचहा उठे हैं। तात्पर्य यह कि जीवन वन में वसंतागम (यौवनागम) हो गया है। वाटिका के वृक्ष वायु के झकोरों से लोट–पोट हुए जा रहे हैं। स्थूल रूप से यह जनक वाटिका का प्रकृति–परिवेश है, किन्तु कवि ने रूपकातिश्योक्ति के सहारे किसलय, पराग, खग, मलय आदि उपमानों द्वारा उपमेय (राम और सीता) की मनःस्थिति का, उनकी कोमल अनुभूतियों का चित्रण किया है। यहाँ किसलय का अर्थ है, अधरोष्ठ। यह भारतीय साहित्य का एक रूढ़ उपमान है, वर्ण साम्य और रूप साम्य की दृष्टि से। किसलय ईषत् हरिताभ अर्थात् हल्का गुलाबी और हरित होता है। प्रसाद जी ने भी–

'रक्त किसलय पर ले विश्राम,

अरुण की एक किरण अम्लान–'

कहकर यही वर्ण साम्य प्रदर्शित किया है। कोमलता दोनों (अधरोष्ठ और किसलय) का गुण है। शायद इसीलिए कालिदास ने 'अधरः किसलयरागः' कहा है। इन किसलयों में कंपन्न हो रहा है, जो श्रृंगार, कुतूहल और रोमांच का सूचक है। दोनों के मन में रसोद्रेक हो रहा है। पराग माधुर्य और आनन्द का प्रतीक है। मन कानन में आनन्द का सहसा उन्मेष हो उठा है, यह भाव दोनों ही भंगिमाओं से व्यक्त हो रहा है। आज दोनों को जो नवजीवन प्राप्त हो रहा है, उसके कारण मन में एक विशेष प्रकार का गुंजन भर गया है, जैसे भावना के पंछी भीतर ही भीतर चहचहा उठे हों। दोनों परस्पर सम्मोहित हैं। वे लोट–पोट हुए जा रहे हैं, प्रगाढ़ परिरंभण की मुद्रा में, उसी प्रकार जैसे मलय वायु के झकोरों से झूमते हुए चन्दन वृक्ष (मलय) वलयीकृत (कंगन की तरह गोलाकार) होकर परस्पर लोट–पोट हो जाते हैं। यद्यपि वृक्षों का इस प्रकार लोट–पोट होना आँधी के झोंकों से सम्भव होता है, मलयज के झकोरों से नहीं, पर झूम–झूम जाने की स्थिति मलय और प्रभंजन (आँधी) दोनों में दिखायी देती है। शायद–निराला जी का यही प्रतिपाद्य है कि दोनों के अन्तस् में झंझा झकोर है और मलय जैसा मादक सम्मोहन है। मलय का एक अर्थ बगीचे से भी लिया गया है।

इस दृश्य को देखकर एक दिव्य प्रेरणा अथवा स्वर्गिक ज्योति झरने लगती है। सीता को जब वयः– सन्धि की बेला में अपने यौवनागम का पहली–पहली बार आभास होता है तो उनके सुन्दर नेत्रों में रस की प्रथम हिलोर

उत्पन्न होती है। कवि ने इसे तुरीयावस्था कहा है। यहाँ शक्ति में राम और राम में शक्ति है। श्रृंगारिक प्रसंग में योग दर्शन की रूढ़ शब्दावली 'तुरीय' का प्रयोग कुछ विचित्र तो है, किन्तु विचारोत्तेजक भी है। तंत्र के अनुसार तुरीय देवी का चौथा आयुध है, जिससे वे मधुपान करती हैं और फिर शत्रु संहार। यह प्राणों के आसव का प्रतीक है। तुरीयावस्था में मन ऊर्ध्वगामी होता है। यहाँ राम का मन औदात्य की अनुभूति कर रहा है। राम स्वीय अर्थात् निजी नित्य छवि से ओतप्रोत हो जाते हैं। किसलय, समुदय, परिचय, मलय, वलय, स्वर्गीय, स्वीय, कमनीय, तुरीय आदि शब्दों में जो अन्तर्तुकान्ता और वर्ण–मैत्री है, कवि की उस अभिव्यक्ति का विश्लेषण किया जा चुका है। 'ज्योतिः प्रपात' निराला का प्रिय बिम्ब है। पूरे प्रसंग में स्थिर नहीं, वरन् गत्वर बिम्ब अंकित हुआ है। निराला का काव्य ज्योतिर्मय है। वे बारम्बार लिखते रहे हैं–

'ज्योति प्रात, ज्योति रात।

ज्योति नयन, ज्योति गात।

ज्योति चरण, ज्योति चाल।

ज्योति विश्व आलबाल।' (आराधना)

'परिमल' का एक गीत है–

'जग को ज्योतिर्मय कर दो।'

उन्होंने दिवा स्वप्न देखा–'ज्योतिर्मय समुद्र। श्यामा की बाँह पर रखे लहरों पर हिल रहे हैं। उनके प्रेमानन्द जी में देखते–देखते हुए कृष्ण की ज्योति समा जाती है।' 'अर्चना' के एक गीत में वे 'ज्योति के पंख' लगाकर उड़ना चाहते हैं। मूलतः वे ज्योति के कवि माने गए हैं, बावजूद इस तथ्य के कि उनके काव्य में अंधकार के भी अनेक बिम्ब आए हैं। इस कविता में भी आरम्भ में चित्रित देवी श्यामा (काली) है। उनकी भीमामूर्ति है। मध्य में पार्वती रूपा मूर्ति बनती है और अन्त में 'श्री दुर्गा भास्वर' का ज्योतिर्मय विग्रह आता है। यहाँ सित असित वर्ण–प्रतीकों का विशिष्ट गूढ़ार्थ है। इसमें 'ज्योति का दर्शन' समाहित है। इस सौन्दर्य–दर्शन की अनेक प्रतिक्रियायें राम के मन पर होती है, जिन्हें कवि ने अगले चरण में प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार की अनुभूति निराला के तुलसीदास को रत्नावली–दर्शन के बाद हुई थी। निराला के शब्दों में 'जागी योगिनी अरूप लगन।' तात्पर्य यह कि बड़ा प्रियबिम्ब है यह निराला का।

शतघूर्णावर्त.......

जैसे ही हनुमान के मन में यह विचार स्थिर हो जाता है कि वे ये आँसू श्रीराम के हैं अर्थात् आज शक्ति ने राम को रूला दिया है तो हनुमान के मन में श्रद्धा–भक्ति का उद्रेक, बल्कि विस्फोट सा हो जाता है। यह भावावेश उनकी आस्था का प्रबल साक्ष्य है। निराला जी ने इस विश्व–प्रपंच को शक्ति–खेल–सागर कहा है। यह भव–सागर जो अछोर और अपरम्पार है– उनकी ही क्रीड़ाभूमि है। हनुमान के मन में सहसा एक उद्वेलन पैदा होता है, जो 'शक्ति खेल सागर' को झकझोर देता है। वे पवन–पुत्र हैं। उन्हें पैतृक निधि रूप में वायु की प्रलयंकर उन्चास गतियों की शक्ति प्राप्त है। वे सर्वप्रथम दीर्घ प्रश्वास लेते हैं और वायुमंडल के उस तुमुल (तूफानी) आवर्त को उच्छ्वास रूप में अपने भीतर भर लेते हैं, फिर अपने वक्ष में एकत्र उस वाष्प–शक्ति अथवा अश्रुधार के सहारे वे ऊपर की ओर उड़ चलते हैं। उनके वेग से जो वात्याचक्र पैदा होता है, उससे पृथ्वी पर एक–एक साथ शतघूर्णावर्त (सैकड़ों–सैकड़ों बवण्डर) उत्पन्न हो जाते हैं। इसका सर्वप्रथम प्रभाव पड़ता है–समुद्र पर। उसमें द्रव–रूप में जो जल है, वह

अस्त–व्यस्त हो जाता है। समुद्र की तरंगों में भयावह भंगिमा पैदा होती है। लहरें टूट–टूटकर बिखर जाती हैं। परस्पर टकराकर ये लहरें ऊपर की ओर उछल पड़ती हैं, जिससे समुद्र में सहसा कई जल पहाड़ उठ खड़े होते हैं। उठते पहाड़ का यह बिम्ब बड़ा विशिष्ट है। पन्त जी ने भी 'मौन निमंत्रण' कविता में–

"क्षुब्ध जल शिखरों पर जब बात,

अनिल में मथकर फेनाकार।"

कहकर यही चाक्षुष बिम्ब प्रस्तुत किया है। हनुमान की वायु–तरंगों से टकराकर जलराशि समुद्र का राशि–राशि (ढेर सारा) जल स्तर पहले ऊपर उठता है और फिर पछाड़ खाकर लौट आता है। वह धरती को जोड़ देता है। वायु के प्रहार से बाँध और प्रतिसंध (जोड़) टूट जाता है और फिर धरती और सागर की वह प्रतिसंध ा–मिलन–बेला (सिन्धु–बेला) भी समाप्त हो जाती है। लगता है, सर्वत्र समुद्र लहलहा रहा है। पवन की गति अभी रुकी नहीं है। स्फीत (लम्बे–चौड़े) वक्ष का विस्तार फैलता जा रहा है। हनुमान दिग्–दिगन्त को जीत लेना चाहते हैं। वे महाशक्ति की सारी सत्ता और महिमा को नष्ट कर देना चाहते हैं। इस दिग्विजय के लिए वे प्रतिपल पूरी शक्ति और सम्पूर्ण सामर्थ्य के साथ सामने (समक्ष) अर्थात् ऊपर बढ़ते जा रहे हैं। उनके पास इस समय सैकड़ों पवनों का वेग (बल) है, जिसके कारण देश भाव यानी देशकाल की अवधारणा धरातल के बहुत नीचे (अतल में) विलीन हो गई है अर्थात् खो गयी है। वायु तरंगों ने जलराशि (समुद्र) को पूरी तरत मथ डाला है। एक ओर वायु की टकराहट और दूसरी ओर मथे जाते हुए समुद्र की गुरु–गर्जना। वायुमंडल में भीषण निनाद भर गया है। रण–ध्वनि से कई गुना बड़ा महाराव। हनुमान इस समय सचमुच वज्रांग हैं, जिन्हें लोकजीवन में 'बजरंगी' या 'बजरंगबली' कहा जाता है। वे तेजघन हैं, अर्थात् सघन शक्तिपूंज। अपनी इस असामान्य शक्ति के सहारे वे सप्ताकाश पर पहुँच गए हैं। वे यहाँ एकादश रुद्र के रूप में हैं और भीषण अट्टहास करके स्वयं रुद्र को क्षुब्ध कर रहे हैं। इस प्रकार के ध वनि–प्रवाह–बिम्ब 'बादल राग' कविता में बहुत आए हैं।

इस प्रसंग में आद्यन्त महाप्राणत्व की व्यंजना है। यह घोषवती भाषा है, जो एक साथ पवन की गति एवं सिन्धु गर्जना को प्रतिध्वनित कर रही है। यहाँ 'अनिल' वायु और अन्तरिक्ष दोनों के लिए आया है। जलराशि और राशिजल तथा बंध और प्रतिसंघ जैसे शब्दों द्वारा कवि ने वाक्–वैदग्ध्य एवं भावगत बारीकी प्रदर्शित की है। वायुवेग के पूर्व यहाँ 'शत'–विशेषण रखा गया है, जबकि वायु की गतियाँ 49 होती हैं। दिति के पुत्र हैं ये 49 वायु। शत से अभिप्राय 'अधिक परिमाण' से है। 'शतघूर्णावर्त', 'शत सेल संवरण' आदि में 'शत' शब्द प्रयुक्त हुआ है। यह शब्द कवि का प्रिय (रूढ़) शब्द है। उसी प्रकार जैसे तुलसी ने शत एवं कोटि शब्दों की झड़ी लगायी है। पुराख्यानों में 11 रुद्र हैं– अज, एकपात, अहिबुध, पिनाकी, अपराजित, त्र्यंबक, महेश्वर, वृषाकपि, शम्भु, हरण, ईश्वर। हनुमान 11वें रुद्र हैं। वे श्रीराम के भाई भी हैं, इसलिए कि पुत्रेष्टि यज्ञ के समय कैकेयी के हिस्से का कुछ चारु लेकर जो गृद्धि भाग गयी थी, वह वायु में बिखरकर अंजना के गर्भ में समा गयी थी, जिससे हनुमान का जन्म हुआ था। रुद्र शब्द हनुमान और महाशिव दोनों के बीच सर्वसामान्य जातिवाचक शब्द है। घूर्ण और आवर्त में पुनरुक्ति दिखायी देती है। यों एक पृथ्वी का वात्याचक्र है और दूसरा समुद्री तूफान है, सुनामी जैसा। यहाँ घटना चरमसीमा पर पहुँच गयी है। तदुपरान्त अवरोध शुरू होता है और घटना में फिर नया मोड़ उपस्थित हो जाता है।

इस लम्बी कविता की चरमसीमा यहाँ समाप्त हो रही है। हनुमान ने सप्ताकाश पर आक्रमण कर दिया है। वह वर्जित क्षेत्र है। किसी का प्रवेश वहाँ सम्भव नहीं। किन्तु हनुमान, जो अपनी उड्डयन–शक्ति से समुद्र को लाँघ गए थे, उनसे निराला आकाश का उल्लंघन क्यों नहीं करा सकते? संजीवनी लाने के लिये भी तो उन्होंने उड़ान भरी ही थी। सम्भवतः यही निराला जी की प्रेरणा एवं उद्भावना का मूल आधार है। कवि ने यदि हनुमान का यह उड्डयन न दिखाया होता तो राम के प्रति उनकी अनन्य निष्ठा का प्रमाण न मिल पाता। किन्तु अतिक्रमण करा देने

के बाद इस कथा सूत्र का निर्वाह कठिन हो गया है। महाशिव एवं शक्ति को पराभूत (परास्त) दिखाया नहीं जा सकता था। हनुमान को भी और किसी युक्ति द्वारा मध्य मार्ग से लौटाया नहीं जा सकता था। अतएव कवि को एक नई उद्भावना करनी पड़ी। उसने वहाँ माँ अंजना को उपस्थित कर दिया, जिनका प्रबोध पाकर हनुमान शान्त हो गए तथा अपनी पूर्वस्थिति में लौट आए। कथा की यह बुनावट बहुत कुछ 'साकेत' जैसी है। वहां भी गुप्त जी लंका पर आक्रमण कराने के लिए भरत के सेना–प्रयाण की उद्भावना करते हैं। रणप्रयाण आरम्भ होने ही वाला हैं, तभी गुरु वशिष्ठ आ जाते हैं तथा सबको एक कौतुकी दृश्य दिखाकर शान्त कर देते हैं। यह नाटकीय परिणति है। अस्वाभाविक, किन्तु अनिवार्य–अवश्यमभावी भी। यदि रणसज्जा न कराते तो लक्ष्मण के प्रति भरत का अनुराग न व्यक्त हो पाता और यदि सैन्यप्रयाण दिखा देते तो लोक प्रचलित रामकथा का अतिक्रमण होता। अतएव कवि को वशिष्ठ की मंत्रयष्टि का उपयोग करना पड़ा, जो अनुपयुक्त नहीं है, अवैज्ञानिक भले ही मन ली जाए।

यहाँ एक सूक्ष्म संकेत और है। प्रकृति की सारी शक्तियाँ, समस्त पंचभूत राम के प्रतिकूल हैं। नभ को शक्ति ने आच्छादित कर रखा है। पृथ्वी पर राक्षसों का आतंक है–'राक्षस पद तल पृथ्वी टलमल।' जल तत्व–समुद्र तो 'शक्ति खेल सागर' ही बन गया है। सघन अंधकार ने प्रकाश (अग्नि) को छिपा लिया है। बस एक जलती मशाल मात्र है। ऐसी स्थिति में सहायता देते हैं–एकादश रुद्र, पवन के रूप में। वे पृथ्वी को हिला देते हैं, सिन्धु को मथ डालते हैं, गुरु गर्जन से नभ को निनादित कर देते हैं, यानी सारे पंचभूतों को प्रभावित कर लेते हैं। हनुमत् प्रकरण को इस कविता में रखने का शायद यही कारण रहा है।

इन पंक्तियों में कवि ने शिव और शक्ति की महिमा का तुलनात्मक मूल्यांकन किया है। शिव–शक्ति परस्पर पूरक हैं। शिव–शक्ति के बिना शव हो जाते हैं। वे अर्द्धनारीश्वर हैं। गौरी–पार्वती स्त्री–जगत् की श्रीसौभाग्य की प्रतीक हैं और सतीत्व की आदर्श भी। वे जगज्जनी हैं। दूसरी ओर रुद्र रूप शिव का प्रलयंकर रूप है। राम और रावण दोनों शिव–भक्त हैं। रावण ने एक–एक कर अपने दसों शीश शिवजी को अर्पित करके उनसे वरदान प्राप्त किया था। राम ने भी शिव का पार्थिव स्थापित करके उपासना की थी। आशुतोष शिव रावण की भक्ति से प्रभावित होकर श्यामा के रूप में उसकी सहायता करने आये हैं और दूसरी ओर राम की अविचल आस्था से अनुप्रीत होकर एकादश रुद्र हनुमान के रूप में वे स्वयं उनकी सेवा और सहायता कर रहे हैं। तात्पर्य यह कि दोनों पक्षों में शिव हैं और शिव की ही शक्तियाँ परस्पर संघर्ष कर रही है। 'दशस्कंध पूजित' लिखकर निराला जी ने स्पष्ट कर दिया है कि रावण को यह शिव शक्ति दस सिर चढ़ाने के बाद प्राप्त हुई है।

'श्यामा विभावरी अंधकार'– रावण चूंकि असत् है, इसलिए शिव की शक्ति (श्यामा) ने जो चाँदनी रात या रवि शशि प्रभा की तरह कान्तिमान है, उसे अंधकारग्रस्त बना दिया है। रावण निश्चर है, इसलिए इसके चारों ओर अंधकार है, दूसरी ओर पूजन का तेजः प्रसार है। इस ओर एकादश रुद्र हनुमान हैं, जो रामभक्ति के प्रताप से स्वयं ज्योतिर्मय हो उठे हैं और रावणी अंधकार पर तेजः प्रसार की तरह छा गए हैं। राम ने आस्थापूर्वक रुद्र की वन्दना की है। रावण ने हठयोग–साधना की है। इसलिए शिवजी राम के पक्ष में हैं और शक्ति रावण के पक्ष में। हनुमान महाकशा पर पहुँचकर बड़ी दृढ़ता के साथ सम्पूर्ण ब्रम्हाण्ड का ग्रास कर लेना चाहते हैं। इसका पूर्वाभास करके शिव को ऐसा लगा, जैसे महानाश का क्षण उपस्थित हो गया है। अचल होते हुए भी क्षण भर के लिए वे उद्विग्न हो उठे। कवि ने यहां शक्ति की जो मुद्रा प्रस्तुत की है, वह रक्तबीज वध के प्रसंग की है। 'देवी भागवत' और शिव–पुराण में यह वृत्तान्त आया है कि राक्षस का वध करते हुए देवी इतनी क्रोधोन्मत्त हो गयी कि असुर संहार के बाद भी उनके प्रहार रुके नहीं, जिससे चतुर्दिक् महानाश का दृश्य उपस्थित होने लगा। त्रिभुवन भयभीत हो उठा। जब किसी प्रकार उन्हें शान्त कराना सम्भव न रहा तो शिव ने उनके पैरों तले अपना शरीर डाल दिया। इससे तत्काल देवी को प्रबोध हो गया और वे शान्त हो गईं। 'श्यामा के पदतल भारधरण' का यही अर्थ है। यद्यपि महाकाश में बैठे हुए शिव इस समय उस मुद्रा में नहीं हैं। कवि ने इसे व्यक्तिवाचक संज्ञा के रूप में प्रयुक्त किया

है, जिसके भीतर एक अन्तःकथा है। यहाँ भगवान शिव ने बहुत गम्भीर और संयत मेघ मंद्र स्वर में कहा है। इन सप्तस्वरों में मंद्र को विशिष्ट माना जाता है। अन्य स्वर हैं षडज, गांधार, मध्यम, धैवत, पंचम, निषाद। उनके बीच की ध्वनि में मंद्र एक विशिष्ट स्वर है। यह एक गम्भीर मृदंगवत् ध्वनि है। इसी स्वर में शिव ने महाशक्ति को सम्बोधित किया।

7. शक्ति की करो मौलिक कल्पना

ऐतिहासिक समीक्षा प्रणाली के सहारे कुछ विद्वानों ने यह अनुमान प्रकट किया है कि **'शक्ति की करो मौलिक कल्पना'** के पीछे स्वराज्य आन्दोलन की विफलता का कोई अन्तःसूत्र है, किंतु 1936 के आसपास ऐसी कोई बड़ी घटना नहीं मिलती है। हाँ, प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना अवश्य हुई थी। निराला के इस कथन को प्रगतिवादी मेनोफेस्टो से जोड़ना दुराग्रह होगा, क्योंकि निराला राष्ट्रचेता थे, जबकि हमारा प्रगतिवादी आन्दोलन राष्ट्रीय संस्कृति से पराङ्मुख रहा है। निराला हिन्दुस्तानी के विरोधी और परिनिष्ठित हिन्दी के समर्थक रहे हैं, जबकि प्रगतिशील लेखक उर्दूदाँ रईस अधिकारियों द्वारा नियन्त्रित था। निराला अपना अध्यात्म–दर्शन और औदात्य बोधा छोड़कर तब तक जनवाद के स्तर पर नहीं उतर सके थे, इसलिए इस पंक्ति को मार्क्सवादी आन्दोलन से सम्बद्ध करना निरर्थक प्रयास होगा। यहाँ नई कल्पना से तात्पर्य नई साधना–पद्धति से है। राक्षसी शक्ति लेती है बलि, अभिचार आदि का सहारा। मानवीय शक्ति वरण कर रही है–नवधा भक्ति, षोडसोपचार और प्रपत्ति मार्ग को। यहाँ वामाचार के स्थान पर वैष्णवोपासना को खड़ा किया गया है। यहीं निराला 'कृतिवास' से भिन्न हो जाते हैं।

इन पंक्तियों में जो सैन्य विज्ञान प्रस्तुत किया गया है, उसमें भी कुछ बारीकियां हैं। यहाँ सेनानियों की नियुक्ति पूर्व–पश्चिम और दक्षिण–दिशा में की गयी है। उत्तर दिशा में कोई नहीं। लंका पर आक्रमण करती हुई सारी सेना दक्षिणाभिमुखी है, इसलिए सेना के पीछे किसी यूथपति की आवश्यकता नहीं है।

8. कुछ समय अनन्तर.................................... सोचते हुए विजय।

ध्यान में तल्लीन राम नेत्र बंद किये हुए अपने अभ्यन्तर में स्वर्गिक आनन्द का अनुभव करने के कुछ क्षण बाद सचेत हुए। उनके नेत्र खुल गये और एकटक वे अन्तरिक्ष की ओर निहारने लगे। शक्ति से युक्त राम का अभ्यन्तर परम–पवित्र हो गया है, जैसे भक्तिधारा की तरंगों में स्नान करके ऊपर उठे हों। उनके नेत्र अपनी सुन्दरता से नील कमलों की सुन्दरता को भी परास्त करने वाले हैं, जैसा कि अनेक स्थलों पर संकेत किया गया है। निराला जी ने उपमेयोपमान के रूप में राम के नेत्रों एवं कमलों का बारम्बार संकेत किया है। समस्त विवरण घटना के चरम–बिन्दु से इसीलिए जुड़ा हुआ है। वे इस समय निरुद्विग्न चित्त हैं। उनके स्वर में प्रचण्ड आशा और प्रगाढ़ विश्वास है। महाशक्ति को पूरी आस्था के साथ सम्बोधित करते हुए वे बोले–'हे मातः! हे दशभुजा, हे महाशक्ति! सम्पूर्ण विश्व को ज्योतिर्मय करने वाली है विश्व ज्योति! मैं तेरे अधीन, तेरा कृपापात्र सेवक हूं–तुझ पर पूर्णतः अवलम्बित। तुम महिषासुर नामक खल का मर्दन करने वाली हो। सर्वशक्तिमयी हो तुम! तुम्हारे कमल के समान चरणद्वय दर्शकों और भक्तों का अनुरंजन करने वाले हैं। तुम्हारे पदतल के नीचे गरजता हुआ सिंह है। हे सिंहवाहिनी, तुम धन्य हो। तुम्हारी यह मुद्रा मेरा पूजन–प्रतीक है। हे जगदम्बे! मैं यह इंगित अर्थात् संकेत समझ रहा हूँ। मुझे प्रतीत हो रहा है कि मैं भी तुम्हारे चरणों तले विद्यमान सिंह के समान हूँ। इसी भाव से मैं तुम्हारी उपासना के लिए कृतसंकल्प हूँ।

यहाँ देवी के श्री विग्रह का विवेचन किया गया है। इसमें अष्टभुजा दशभुजा और अष्टादशा भुजा 'महिषासुरमर्दिनी' की प्रतिमा चित्रित हुई है। राम ने स्वयं को महाशक्ति का वाहक माना है। लोक–विश्वास के अनुसार जिस व्यक्ति पर देवी का आविर्भाव होता है, उसको 'घोड़वा' कहा जाता है। उसे अपना सुपात्र मानकर

देवी आवेशावतार धारण करती है और उस पर सवारी करती हैं। राम ने मौलिक कल्पना के रूप में इसी प्रतीक को चुना है। इस इंगित को समझकर वे भावाकुल हो चले हैं। "यह–यह मेरा प्रतीक"– वाक्यांश में 'यह' दो बार आया है। इस आवृत्ति द्वारा कवि ने राम की लालसा एवं उत्कंठा–उत्सुकता का संकेत किया है। इस मनोमुद्रा में राम कुछ देर स्तब्ध या संज्ञाशून्य से बैठे रहते हैं, जैसे वे महाशक्ति की नैसर्गिक छवि में डूब गये हों। आखिर शक्ति की मौलिक कल्पना कर रहे हैं न! भाव–विभोर होने के कारण उनकी पलकें बंद हैं। कुछ क्षण पश्चात् अपनी कमलवत् पलकें, (जो कमल दल जैसी हैं) और प्रकाश की किरणों से ओतप्रोत हैं, साथ ही जो पलकें ध्यानस्थ होने के कारण बन्द थीं, सहसा खुल जाती हैं। मंत्री जाम्बवान, सेनापति सुग्रीव तथा अन्य अधिकारी राम की वीरासन मुद्रा को एकटक निहार रहे हैं और मुस्कुराहट से युक्त उनके मुख–मण्डल पर उभरते भावों को लक्ष्य कर रहे हैं। सहसा श्रीराम बोल पड़े। अब तक वे अपने मूल भावों में केन्द्रित हो चुके थे। कवि कह रहा है कि श्रीराम के मुख–मण्डल के समक्ष चन्द्रमण्डल फीका दिखाई दे रहा है, क्योंकि उनके मनोलोक में दैविक स्फुरणा हो चली है, इसलिए सम्पूर्ण व्यक्तित्व ज्योतिर्मय हो गया है। उन्होंने अपने प्राणों में पवित्र स्वरों की सिहरन भरकर अर्थात् ध्वनि श्वसन को संयत करके बादलों के जैसे धीर–गम्भीर स्वर में कहा–'बन्धुजनों! देखो! हमारे सामने जो पर्वत दिखाई दे रहा है, जो सैकड़ों हरे–भरे या हरे पीले लता–कुंजों से सुशोभित है, कुछ कुछ श्यामल सुन्दर–सा प्रतीत हो रहा है। इसकी कल्पना, परागवर्ती पार्वती के रूप में या पर्वतीय प्रकृति परिवेश रूप में की जा सकती है। शक्ति पार्वती सदृश हैं। उनकी मूर्ति पराग कणों से निर्मित हुई है। निराला जी ने 'वर्तमान धर्म' नामक निबन्ध में इसे शक्ति का 'उच्च भाव' कहा है। यही शक्ति की नूतन कल्पना है। इस विराट पर्वताकार प्रतिमा के नीचे जो समुद्र गर्जन कर रहा है, वह वस्तुतः देवी का वाहन सिंह है। दसों दिशाएं उनके हाथ हैं और ऊपर आकाश में मस्तक पर चन्द्रमा को धारण करने वाले शशि शेखर दिगम्बर शिव इनके अर्द्धांग हैं। सर्वत्र शक्ति का ही प्रसार है। अणु–अणु में उनके परमाणुओं का विस्तार है। यह बोध स्वयं में एक महाभाव है। यही लोक–मंगल का कारण है। इस महाभाव के जाग्रत हो जाने पर भौतिक प्राणी का अहंकार देवी शक्ति से पराभूत होकर पदतल में विलीन हो जाता है और मनुष्य के मन में बैठा हुआ असुर खर्व मंद यानी निस्तेज होकर नष्ट हो जाता है। हमारे शास्त्रों के अनुसार उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, ईशान, वायव्य, नेत्रऋत्य, आग्नेय दस दिशाएं हैं। इनके अलग–अलग देवता हैं। इनमें देवी के तीन रूप हैं–लिंग, योनि, नाम। ये प्रकृति पुरुष एवं काल के प्रतीक हैं। यहाँ इस विधान का सूक्ष्म संकेत है।

शक्ति की यह अभिनव कल्पना है। निराला जी ने यहाँ निराकार ब्रह्म की साकार रूप में स्थापना की है। वे ससीम भी हैं और असीम भी। पर्वत, समुद्र, क्षितिज, आकाश उसी परम तत्व के बहिरंग हैं। अपने उपास्य की स्थापना कर लेने के बाद साधना तीव्रगति से आगे बढ़ती है। शैवोपासना में सर्वप्रथम मूर्ति की प्राण–प्रतिष्ठा की जाती है। इसे पार्थिव कहते हैं। यहां निराला जी ने अपनी उद्‌भावना शक्ति के सहारे महाशक्ति का श्रीविग्रह निर्मित किया है। शक्ति–पूजा का अनुष्ठान करने के पूर्व उन्होंने प्रेम भरी दृष्टि अपने प्रिय सेवक हनुमान पर डाली और मृदु–मधुर वाणी में अपने प्रियतर स्वर से उनके हृदय को रस सिंचित करते हुए कहा–'हे कपि! मुझे पूजा के लिए कम से कम 108 नील कमल चाहिए। इससे और अधिक हों तो बेहतर है। अस्तु, तुम 'देवीदह' नामक सरोवर तक जाओ और प्रातःकाल होने से पूर्व 108 नील कमल तोड़कर शीघ्र ले आओ। तब फिर युद्ध में भाग लो।' हनुमान ने जाम्बवान से देवीदह सरोवर का मार्ग, दूरी आदि से सम्बन्धित जानकारियां प्राप्त कीं और अपने प्रभु की चरण–धूलि सिर पर धारण कर हर्षोल्लास के साथ वे गन्तव्य की ओर चल पड़े। श्रीराम ने यह समझकर कि अब बहुत असमय (अतिकाल) हो गया है, सभा विसर्जित कर दी। सभी सदस्य मन ही मन श्रीराम की विजय की कामना करते हुए अपने–अपने शिविरों की ओर चले गये।

इस प्रकरण में शिव शक्ति का समन्वित स्वरूप अंकित हुआ है। अम्बर में हुए दिगम्बर अर्चित शशि शेखर– इस पंक्ति में महाशिव का माहात्म्य मुखरित हुआ है। इसे देखकर दैवीभाव और आसुरी–भाव का अन्तर्द्वन्द्व स्वतः

समाप्त हो जाता है। सब एक महाभाव में परिणत हो जाते हैं। अन्तिम पंक्तियों में पर्याप्त सपाट बयानी है–'चाहिए हमें एक सौ आठ कपि इन्दीवर, कम से कम...।' ये वाक्य दैनिक बोलचाल के हैं।

9. देखा राम ने.. लीन।

कवि ने महाशक्ति के एक विराट श्रीविग्रह (त्रयम्बका रूप) की अवधारणा यहां प्रस्तुत की है। देवी का बायाँ पैर महिषासुर के कंधे पर प्रहार करता हुआ दिखाई पड़ रहा है और दाहिना पैर सिंह पर टिका हुआ है। यह रूप परम ज्योतिर्मय है। उनकी दसों भुजाएं विभिन्न प्रकार के अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित हैं। उनके मुखमण्डल पर आश्वस्तिसूचक मन्द–मन्द मुस्कुराहट छाई हुई है, जिसे देखकर विश्व की समस्त शोभा–सुन्दरता लज्जित हुई जा रही है। उनके दाहिनी ओर महालक्ष्मी हैं। बायीं ओर महासरस्वती हैं। अर्थशक्ति एवं बुद्धि बल दोनों एक साथ हैं। उनके दक्षिण भाग में गणेश विद्यमान हैं और वाम भाग में अपने रण–रंग–राग अर्थात् युद्ध मुद्रा के साथ देव सेनापति स्वामी कार्तिकेय सुशोभित हैं। महाशक्ति के मस्तक पर शंकर जी शोभायमान हैं। इन पंचतत्वों से परिपूर्ण महाशक्ति के दर्शन करके श्रीराम कृतकृत्य हो जाते हैं। देवी के चरण कमलों पर वे श्रद्धा से आपूरित अपनी प्रणति अर्पित करते हैं और मन्द–मन्द स्वर में उनकी वन्दना करते हैं। देवी श्रीराम की अविचल आस्था से अभिभूत और अनुप्रीत हो उठती हैं तथा अभयदान देती हुई कहती हैं 'इस युग (अर्थात् त्रेता) के नवीन पुरुषोत्तम! निस्सन्देह तुम्हारी विजय होगी।' यह कहती हुई महाशक्ति श्रीराम के मुख मण्डल या शरीर में तल्लीन हो जाती हैं।

इस प्रकरण में पर्याप्त आरोहावरोह अर्थात् घटना के अनेक घात–प्रतिघात चित्रित हुए हैं। आकस्मिकता एवं नाटकीयता का प्रयोग इस प्रकरण में अधिक हुआ है। यहाँ निराला जी की कुछ स्थापनाएँ विचारणीय हैं। जब एक सौ आठवां कमल लुप्त हो जाता है तो राम का मन बुद्धि के स्तर पर पहुँचता है। उसे निराला ने बुद्धि दुर्ग कहा है। इससे पूर्व राम का मन त्रिकुटी के ऊपर सहस्रार दुर्ग तक लगभग पहुँच चुका था। कवि ने सहस्रार को भी दुर्ग कहा है और बुद्धि को भी दुर्ग माना है। समाधि की स्थिति में बुद्धि की स्थिति पर आना साधक का विकास नहीं, बल्कि ह्रास है। साधना की प्रक्रिया में अन्नमय, प्राणमय, मनोमय कोशों के बाद विज्ञानमय एवं आनन्दमय कोशों की स्थिति आती है। सम्भव है कि बुद्धि दुर्ग का प्रयोग निराला ने विज्ञानमय कोश के अर्थ में किया हो। यहाँ दुर्ग का अर्थ 'दुर्गम' से ही ग्रहण करना उपयुक्त होगा। बुद्धि स्मृति की हेतु है। गीता में कहा गया है–'स्मृति भ्रंशात बुद्धिनाशो, बुद्धिनाशात् प्रणश्यति।' अर्थात् याददाश्त खो जाने पर बुद्धि नष्ट हो जाती है और बुद्धि–नाश हो जाने पर तो सर्वनाश अवश्यम्भावी है।

'राम की शक्तिपूजा' में स्मृति–संचारी का प्रयोग दो स्थलों पर किया गया है और यह आकस्मिक नहीं है कि ये दोनों स्मृतियाँ नारी शक्ति के दो रूपों से सम्बन्धित हैं। जनक–वाटिका में कुमारी सीता की स्मृति से राम को ओजस् की प्राप्ति होती है और यहाँ माता कौशल्या की स्मृति पाकर उसके मन में यह युक्ति (विकल्प बुद्धि) सूझती है, साथ ही संकल्प शक्ति का संचार भी होता है। तात्पर्य यह है कि दोनों बार स्मृति संचारी द्वारा बाध ा–निवारण कराया गया है। यह एक प्रचलित कथा रूढ़ि है। निराला ने अपने एक निबन्ध में नारी शक्ति और दैवी शक्ति की इसी प्रकार व्याख्या की है।

इस प्रकरण में निराला जी की काव्य–भाषा के कुछ विशिष्ट प्रयोग भी विचारणीय हैं, जैसे महाफलक के साथ लक–लक विशेषण। लकलकाना एक प्रकार का मुहावरा है। इससे चकाचौंध का आभास होता है। मूलतः यह देशज प्रयोग है। इसी से 'लूक, लूका' आदि शब्द विकसित हुए हैं। इसमें प्रतिबिम्बन है, साथ ही ध्वन्यात्मकता है। शब्द की आवृत्ति से परिमाण का बोध होता है। लकलक और महाफलक में वर्णमैत्री है। इसी प्रकार 'थाम' शब्द अवधी का एक विशिष्ट देशज शब्द है, जो स्थम्भन से विकसित हुआ है। निष्कर्ष यह है कि निराला जी ने जहाँ

तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है, वहीं कुछ तद्भव व देशज शब्दों का भी उपयोग किया है। यह लोकभाषिकी की दृष्टि से विशेषतः विचारणीय है।

सर्वाधिक उल्लेखनीय बात यह है कि निराला ने राम की यौगिक क्रिया की तुलना में भक्ति को उत्कृष्टतर सिद्ध किया है। राम अष्टांग योग साधना द्वारा सिद्धि प्राप्त करना चाहते थे। वे ब्रम्हाण्ड विजय करके सहस्रार चक्र का भेदन करने ही वाले थे कि तभी व्यवधान उपस्थित हो गया। तात्पर्य यह कि योग मार्ग निरापद नहीं होता है। किंचित् असावधानी के कारण यदि शक्ति का ऊर्ध्व गमन कहीं विपथगामी हो जाता है तो वह शक्तिपात स्वयं साधक को नष्ट कर डालता है। निराला के निकटवर्ती कुछ सुधी साक्षियों का यह मत है कि इसी अधोमुखी शक्ति–साधना के कारण निराला मनविक्षेप के शिकार हुए थे। वे रामकृष्ण मिशन के दक्षिणेश्वर मन्दिर में संन्यासियों की भाँति गैरिक वस्त्र धारण करके अर्से तक कुण्डलिनी उत्थान–क्रिया सीखते रहे। अपनी एक कहानी में उन्होंने 'स्वामी शारदानन्दजी महाराज' के इन यौगिक चमत्कारों का उल्लेख भी किया है। वस्तुतः उन्होंने वेदान्त का गम्भीर अनुशीलन किया था। 'समन्वय' के सम्पादन–काल में वे स्वयं को भगवान परमहंस रामकृष्ण का 'प्रजापुत्र' और 'अभिनव विवेकानन्द' कहने लगे थे। यौगिक प्रक्रिया में निःसन्देह उनकी रुचि थी और गति भी। 'प्रबन्ध प्रतिमा' के कई निबन्धों जैसे–'अर्थ, शून्य और शक्ति' में उन्होंने इसकी विवेचना की है। उनके कई गीतों में इसकी अनुगूँज है, जैसे–'कौन तम के पार।' 'कहाँ मेरा अधिवास कहाँ', 'पास ही रे हीरे की खान'– आदि में। इस अन्तिम गीत में वे पूरी प्रक्रिया का निदर्शन करते हुए लिखते हैं–

'चित्त के जल में चित्र निहार,
कर्म का कार्मुक कर में धार।
बेंधना तुझे मीन–शर मार,
मिलेगी कृष्णा सिद्धि महान
खोजता उसे कहाँ नादान।'

यहाँ मत्स्य भेद का पूरा रूपक प्रस्तुत किया गया है। धनुर्धर की स्वच्छ अन्तरात्मा ही तैल चित्र है। उसके पास कर्म का कार्मुक (धनुष) है। लक्ष्य संधान द्वारा ही उसे कृष्णा सिद्धि (द्रौपदी स्वयंवर की सफलता) प्राप्त हो सकती है। 'राम की शक्तिपूजा' में मात्र पुरुषार्थ को पर्याप्त नहीं माना गया है। सर्वाधिक महत्व दिया गया है प्रपत्तिवाद को। जिस प्रकार गोस्वामी जी ने 'ज्ञान–भक्ति–समन्वय' करते हुए भी भक्ति को अपेक्षाकृत अधिक प्रश्रय दिया था, उसी प्रकार उन्हीं से प्रभावित निराला जी ने यहाँ अन्तिम समाधान शरणागति को माना है। इसमें सात्विक श्रद्धा और शुद्धि–बुद्धि की विशिष्ट भूमिका होती है। नेत्र अर्पित करना हठ योग साधना है। देवी को जीभ काट कर चढ़ा देना, आत्मीय की बलि देना आदि इसी प्रकार के अभिचार हैं। रावण ने ऐसे ही अभिचारों का सहारा लेकर अर्थात् अपने दस शीश चढ़ाकर शिव–शक्ति को प्रसन्न किया था। इस कथा के पीछे कई गूढ़ मिथक और प्रतीकार्थ हैं।

निराला जी ने तान्त्रिक क्रियाओं की ओर संकेत अवश्य किया है, लेकिन सहजा भक्ति के सामने उन्हें गौण सिद्ध किया है। इसीलिए षटचक्र भेदन की प्रक्रिया विस्तृत विवरणों के साथ प्रस्तुत नहीं की है। उनका परम प्रतिपाद्य है–भक्तिमार्ग। यह भक्ति शैव, शाक्त, योग, वैष्णव आदि सम्प्रदायों का समन्वित रूप है। इस प्रक्रिया का परिपालन करते हुए राम शक्तिमान हो गए हैं। अब तक महाशक्ति रावण पर प्रसन्न होकर, उसे गोदी में धारण किये हुए थीं, अब वे राम पर प्रसन्न होकर उनके बदन में तल्लीन हो गई हैं। फलितार्थ यह है कि रावण के पास आरोपित (उध

ार ली गई) शक्ति थी, जबकि राम आभ्यंतरिक शक्ति से सम्पन्न हो गए हैं। यह मात्र दैहिक शक्ति नहीं है, बल्कि दैविक (आत्मिक) आध्यात्मिक शक्तियों से ओतप्रोत परा शक्ति है। इस प्रसंग में महाशक्ति की जो परिकल्पना प्रस्तुत की गई है, वह अत्यन्त सुविचारित है। शक्ति की अनेक छवियाँ हैं– इनमें पहली छवि है महिषासुरमर्दिनी की, दूसरी छवि है भुवन मोहिनी की, तीसरा रूप है ज्योतिष्मती का। 'दुर्गासप्तशती' में देवी की इस विराट प्रतिमा का विस्तृत विवरण आया है। असुर संहार करने के लिए विभिन्न देवता उन्हें भिन्न–भिन्न अस्त्र प्रदान करते हैं और देवी अष्टा दश भुजा, खड्ग दल–शूल, धनुष, बाण, पाश, शंख, गदा, मुण्डमाल, कमल, अक्षमाल, घण्टा पात्र कमण्डल आदि धारण करती हैं–

अक्ष स्रक, परशु गदेषु कुलिशं पद्म धनुष्कुण्डिकां
दण्डं शक्तिं मसिं च चर्म जलजं घण्टा सुरा भाजनम्।
शूलं पाश सुदर्शने च दधती हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सेरिभ मर्दिनीमिह महादेवीं मृगेन्द्र स्थिताम्।।

निराला जी ने महालक्ष्मी और चतुर्भुजा महासरस्वती को भी उनका प्रतिरूप माना है। इनके दायें–बायें होने के पीछे भी गूढ़ार्थ है। शास्त्रीय मान्यतानुसार देवी अष्टभुजा, महाकाली चतुर्भुजा हैं। उनके दाएँ चतुर्भुजा महासरस्वती विराजती हैं। शारदा दशभुजा पार्वती स्वरूपा है। शक्ति के दो पुत्र–गणेश और कार्तिकेय क्रमशः मांगल्य और शौर्य के प्रतीक हैं। ललाट पर महाशिव को प्रतिष्ठित किया गया है। यह रूप सचमुच रहस्यमय है। 'शक्ति–पूजा' में ही एक स्थल पर शिव को श्यामा के पैरों तले पड़ा दिखाया गया है–'श्यामा के पद तल भार ध ारण हर मन्द्र स्वर।' भारतीय मिथक के अनुसार शिव शक्ति अर्द्धनारीश्वर हैं और इस महाशक्ति के श्रीविग्रह में शिव का स्थान मस्तक पर है। निष्कर्ष यह है कि शिव–शक्ति का सन्निवेश नख से शिख तक सर्वत्र है। यहाँ देवी पति रूप में शिव को सर्वोपरि धारण किये हुए हैं। ज्ञातव्य है कि एक ही कथा में शक्ति की तीन छवियाँ निर्मित की गई हैं। राम ने शक्ति की जो नूतन कल्पना की हैं वे पार्वती रूपा हैं। स्मृति के सहारे जो रूप रचना की, वह भीमामूर्ति है। राम को जिनके दर्शन हुए, वे सभी शक्तियों से समन्वित महाशक्ति हैं। शक्तिपूजा में राम ने दो बार देवी के दर्शन किए हैं। एक बार उनको मानसी मूर्ति दिखी–'पार्वती कल्पना' रूप में महिषासुरमर्दिनी, सिंहवाहिनी, दशभुजा रूप में। कवि के शब्दों में–

'दशदिक् समस्त हैं हस्त और देखो ऊपर
अम्बर में हुए दिगम्बर अर्चित शशि शेखर।'

इस छवि को 'महाभाव मंगल' कहा गया है, जिसके पीछे 'जयंती मंगला काली भद्रकाली कापालिनी। दुर्गा शिवा क्षमा धात्री 'स्वाहा स्वधा'......।' का भाव है। दूसरी छवि है–

'सर्वमंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्रयंबके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते।।'

ज्ञातव्य है कि दोनों छवियों में ऊपर शिव विराजमान हैं, नीचे सिंह है। दोनों दशभुजा की छवियाँ हैं। अन्तर इतना है कि प्रथम छवि विराट–विभ्राट है, जिसे देखकर तमोगुणी आसुरी भाव का गर्व, खर्व हो जाता है। दूसरी छवि भुवन मोहिनी है। प्रथम मुद्रा को देखकर राम में ओज का उन्मेष हुआ। दूसरी प्रतिमा के कारण श्रद्धा का संचार

हुआ और फिर अभीष्ट वरदान प्राप्त हुआ। प्रथम छवि को उद्दीपन और द्वितीय को फलागम–फलश्रुति भी कहा जा सकता है। षट्चक्र भेदन की प्रक्रिया में भी देवी की आंशिक दर्शन राम को होते हैं। त्रिकुटी पर पहुँच जाने के बाद उन्हें देवी के चरण मात्र दिखते हैं। साक्षात् सर्वांग दर्शन अन्त में ही होते हैं। बीच में जब देवी हँसती हुई, छिपकर कमल उठाने हेतु आती हैं, उस समय ध्यानस्थ होने के कारण राम उन्हें नहीं देख पाते, जबकि पूजा का फल भगवती सहर्ष ग्रहण कर लेती हैं। प्रकारान्तर से यही सिद्धि है। देवी के इस रूप को महाशक्ति कहा गया है। पूजा हुई शिव शक्ति की, दर्शन हुए 'ष्यम्बका' महाशक्ति के।

देवी का 'नवीन पुरुषोत्तम' सम्बोधन इस बात का सूचक है कि वे राम को युग नायक के रूप में मान्यता दे रही हैं। यह शक्ति का हस्तान्तरण है। जिस प्रकार परशुराम ने राम के समक्ष शक्ति का हस्तान्तरण किया था, उसी प्रकार रावण को प्रदत्त शक्ति अब राम की ओर उन्मुख कर दी गई है। इसी भरत वाक्य अर्थात् मंगलाशा के साथ कविता समाप्त होती है। इसे (डॉ. रामविलास शर्मा के इच्छानुसार) दुःखान्त बना देना इष्टकर होता, किन्तु देखा जाए तो इसी से 'सत्यमेवजयते नानृतम्' की प्रतिष्ठा हुई है। संघर्ष की सुखान्त परिणति भारतीय रस सिद्धान्त की पहली शर्त है। यह सारा विधान उच्च–उदात्त मनोभूमि पर घटित हुआ है। इसीलिए विद्वानों का यह तर्क कि 'राम की शक्तिपूजा' का अंगी रस वीर है, पूर्णतः समीचीन सिद्ध नहीं हो पाता। इस कविता का मूल विषय है–शक्ति की पूजा, न कि राम–रावण युद्ध। पूजा आरम्भ करने के पूर्व राम अपने धनुष, बाण, तूणीर आदि अपने से अलग कर देते हैं। वे मन, बुद्धि, अहंकार तथा विभिन्न राग–द्वेषों, विभिन्न मनोविकारों से ऊपर उठकर (कवि के शब्दों में 'मज्जितमन' होकर) उपासना में प्रवृत्त होते हैं। पूजा आरम्भ करने से पूर्व शक्ति के न्याय के सम्बन्ध में उन्हें सन्देह था। 'अन्याय जिधर है उधर शक्ति' अथवा 'यह रहा शक्ति का खेल समर' कहकर वे व्यंग्य, विक्षोभ और वेदना व्यक्त करते हैं, पर जाम्बवान का निर्देश पाकर वे संयतप्राण होकर विजय को वरण करने का संकल्प धारण करते हैं। कवि ने बारम्बार उन्हें आवेग रहित, विश्वास स्थित, भावस्थ आदि विशेषण दिए हैं। देवी की छवि में निमग्न राम, उनका अन्तदर्शन करते हुए जिस तरह 'पुलकित हो रहे हैं, वह भक्ति का मूल प्रस्थान है। यहाँ भक्ति रस का उद्रेक सागपाङ्ग हुआ है। आश्रय राम हैं, आलम्बन महाशक्ति। उद्दीपन है–जाम्बवान का प्रबोधन। अनुभाव है–पुलक, ध्यानावस्थित मुद्रा। संचारी भाव है–स्मृति। प्रथम बार शक्ति के गौरी कन्या रूप का दर्शन तथा दूसरी बार सौभाग्यवती तथा वात्सल्यमयी मातृशक्ति का ध्यान। एक सृजन शक्ति है–दूसरी पालनकर्ता शक्ति।

इस भक्तिमार्ग में अनेक उपचारों का उपयोग किया गया है। यह साकारोपासना भी है, योगसाधना भी है और 'महाभाव' भी है। वीर रस का परिपाक इस कविता में स्मृति संचारी द्वारा किया गया है। वह भी आकस्मिक अट्ठारह बीस पंक्तियों में। उसके बाद निर्वेद है, करुण है और श्रृंगार है। श्रृंगार की परिणति वीर में, वीर की अद्भुत में, अद्भुत की रौद्र में, रौद्र की करुण में दिखाकर कवि ने भाव–सन्धि का विलक्षण उदाहरण प्रस्तुत किया है। भाव का उतार–चढ़ाव इतनी त्वरा के साथ किसी अन्य कविता में नहीं दिखाई देता।

हनुमान के भी दो रूप आयें हैं–एक भक्त रूप, दूसरा वीर रूप। वे सच्चिदानन्द के ध्यान और अजपा जाप में खोये हुए हैं। तभी उन्हें राम के अश्रु दिखायी देते हैं और वे उद्विग्न हो उठते हैं। फलतः पूरी शक्ति के साथ वे सप्ताकाश पर आक्रमण करने के लिए चल देते हैं, लेकिन अंजना का प्रबोधन पाकर शान्त हो जाते हैं और दैन्य अर्थात् भक्ति भाव को पुनः धारण कर लेते हैं। तात्पर्य यह है कि सबकी अन्तिम परिणति भक्ति में होती है, इसलिए भक्ति को इसका अंगीरस मानना सर्वथा न्यायोचित है। यह पूर्वग्रह लेकर चलना कि निराला मूलतः ओज के कवि हैं और 'शक्ति–पूजा' में ओजपरक महाप्राण शब्दावली का प्रयोग अधिक हुआ है, इसलिए यहाँ वीर रस की प्रधानता है, तर्क सिद्ध नहीं माना जायेगा। निश्चय ही इस कविता में आवेग तथा प्रवाह बहुत है। किन्तु प्रवाह मात्र वीर रस में ही नहीं होता। दिनकर ने 'उर्वशी' में श्रृंगार को ओजोदीप्त किया है। निराला जी की गई कविताओं में करुण

को ओजाप्लावित कर डाला है। विशेषतः 'सरोज–स्मृति' में। तो क्या उसे 'शोक गीत' को वीर काव्य माना जा सकता है? अंगीरस का निर्णय फलागम से होता है। यहाँ फलागम भक्तिमय है। शक्ति की प्राप्ति देवी को कृपा प्रसाद से हुई है।

निराला जी का अन्तिम मन्तव्य है–

'लख महाभाव मंगल पद–तल धँस रहा गर्व।

मानव के मन का असुर मंद हो रहा खर्व।।'

महाशक्ति की परिकल्पना मात्र से सर्व मांगल्य का भाव पैदा होता है, क्योंकि वे 'सर्व मंगल मांगल्ये' हैं। उन्हें देखकर व्यक्ति की अहन्ता नष्ट हो जाती है। इसी भाव से प्रेरित होकर राम अपने अहं का विसर्जन कर सके हैं। रावण कोई अन्य नहीं, बल्कि मानव मन की निहित आसुरी वृत्ति है। महाभाव उदित हो जाने पर उसका नाश अवश्यम्भावी है। राम रावण के अपराजेय समर का यही चिरन्तन रूपक है। आवश्यकता है–शक्ति की सर्वांगीण अवधारणा की। देवी का दक्षिण पैर सिंह पर है। यह सिंह राम का प्रतीक है। राम स्वतः कहते हैं–'यह यह मेरा प्रतीक माताः समझा इंगित।' कवि ने इसके पूर्व शक्ति की 'पार्वती कल्पना' की थी और उस पर्वताकार देवी के चरणों तले गरजते हुए सिंह के रूप में हिन्द महासागर की स्थापना (मानसी रचना) की थी।

महाशक्ति विश्वरूपा है। समस्त ब्रह्माण्ड उनका अवय व है। लक्ष्मी श्रीसम्पन्नता की देवी हैं। यह विध ेयात्मक शक्ति है। सरस्वती बुद्धि और विश्लेषण की अधिष्ठात्री हैं। यह तमस की ध्वंसक शक्ति है। गणेश विघ्न विनाशक हैं अर्थात् मांगल्य के प्रतीक हैं, इसलिए अनुकूल (दक्षिण दिशा में) प्रतिष्ठित हैं कार्तिकेय योधेय शक्ति हैं, इसलिए प्रतिकूल (बाएं) हैं। गणेश–लक्ष्मी का एक युग्म है, जिसमें परस्पर भाई–बहन का सम्बन्ध है। इसलिए उन्हें दाहिने और सरस्वती जी को उनकी विपरीत दिशा में बाएं रखा गया है। यह भी उल्लेखनीय है कि निराला जी ने अन्यत्र भी सरस्वती जी को वामांगिनी माना है। उनके तुलसीदास जब चिन्तन करते हुए उच्चाकाश में पहुँचते हैं तो उन्हें भी नीलवसना शारदा के दर्शन होते हैं। तभी शारदा जी का रूपान्तरण उनकी पत्नी रत्नावली के रूप में हो जाता है और तब 'वामा उस पथ पर हुई वाम।' तात्पर्य यह कि सरस्वती को बाएं प्रतिष्ठित करना बड़ा सुविचारित है। वस्तुतः साधक को सबसे पूर्व जो दिखता है, वह बाएं रखा गया है। दूसरा पक्ष दाएं प्रतिष्ठित किया गया है। 'मानस' के मंगलाचरण में गोस्वामी जी ने यही विधान रखा है। उनके सम्मुख पहले सरस्वती जी हैं, फिर गणेश जी हैं। सरस्वती जी वाग्देवी हैं, गणेश जी लिपिकार हैं। पहले शब्द का स्फोट होता है, फिर लिपि का प्रयोग किया जाता है। शिव को मस्तक पर प्रतिष्ठित करने का भी एक निश्चित मन्तव्य है। शिव का कैलाश धाम सप्ताकाश है। वह ब्रह्माण्ड की सर्वोच्च स्थिति है। महाशक्ति के पैरों तले असुर और ललाट पर शंकर हैं। यह एक गूढ़ मिथक और आद्य–बिम्ब है। पहले भी कवि ने–'अम्बर में हुए दिगम्बर अर्चित शशि शेखर' कहकर इसकी पुष्टि की है।

अस्तु! 'राम की शक्तिपूजा' कविता निःसन्देह एक 'क्लासिक' काव्य है। इसका अध्ययन विभिन्न समीक्षा–प्रणालियों के समवाय द्वारा ही सम्भव है। कोई एक पद्धति इत्यलम् नहीं है। सर्वाधिक आवश्यकता इस बात की है कि इसका अक्षरशः अर्थोद्‌घाटन किया जाए। निराला की कविता यों भी लीक से हटकर दिखाई देती है। दूसरे, इस कविता में तत्समबहुला समस्त पदावली है। तीसरे, इसमें छायावादी संगुम्फन या संगोपन भी है। इसलिए इस कविता का अर्थापन बहुत सहज नहीं है। इसके लिए कवि के पूरे व्यक्तित्व–कृतित्व तथा प्रकृति–परिवेश का अन्तर्मन्थन करना होगा। तभी 'कविता की राह से गुजरते हुए' इसका इदमित्थम् तो नहीं, किन्तु अपेक्षाकृत पर्याप्त प्रामाणिक अर्थबोध प्राप्त किया जा सकेगा। तथास्तु।

बोध प्रश्न--

1. निराला द्वारा रचित 'राम की शक्तिपूजा' का परिचय दीजिए। (पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए)
2. निराला की रस योजना को समझाइए। (पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए)
3. निराला की भाषा पर प्रकाश डालिए। (पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए)

1.6 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

महाकवि निराला की रचना 'राम की शक्तिपूजा' का हिन्दी जगत में महत्वपूर्ण स्थान है। निराला ने इस लम्बी कविता में रामकथा की कुछ नयी उद्भावनाएँ प्रस्तुत की है। शक्ति की पूजा करते हुए, कमल के अभाव में अपने एक नेत्र को अर्पित कर देने की घटना का संकेत कृतिवास रामायण से आया है, पर निराला ने उसे अधिकाधिक प्रभावोत्पादक बना दिया है। इसमें राम का शील निरूपण कहीं लोकोत्तर दिखाई देता है तो कहीं सामान्य मानव का। इसमें एक ओर यौगिक प्रक्रिया अपनायी गयी है तो दूसरी ओर वैष्णव भक्ति। इस प्रकार निराला ने 'राम की शक्तिपूजा' में कई उपासना पद्धतियों तथा दार्शनिक विचारों का सफल समन्वय किया है।

1.7 अपनी प्रगति जाँचिए

1. राम की शक्तिपूजा की समीक्षात्मक विवेचना कीजिए।
2. राम की शक्तिपूजा का वैशिष्ट्य प्रतिपादित कीजिए।
3. निराला के भाषा सौष्ठव पर प्रकाश डालिए।

1.8 नियत कार्य / गतिविधियाँ

राम की शक्तिपूजा कविता को कई बार पढ़ें तथा विभिन्न विद्वानों, समीक्षकों के मतों का अध्ययन करें, साथ ही पाठ्य सामग्री के सहारे उनके संदर्भों एवं गूढार्थों को समझने का प्रयास करें।

1.9 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

इकाई को पढ़ने के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं। उन बिन्दुओं को नीचे अंकित करें।

1.9.1 चर्चा के लिए बिन्दु

____

____

____

____

____

1.9.2 स्प टीकरण के लिए बिन्दु

1.10 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

1. कवि निराला– आचार्य नंददुलारे वाजपेयी।
2. निराला– डॉ. रामविलास शर्मा
3. निराला की साहित्य साधना (3 खंड) – डॉ. रामविलास शर्मा
4. निराला काव्य का अध्ययन– डॉ. भगीरथ मिश्र
5. राम की शक्तिपूजा, कुकुरमुत्ता, भाग्य–समीक्षा – डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
6. कला, सृजन प्रक्रिया और निराला – डॉ. शिवकराण थसंह
7. निराला काव्य में मानव मूल्य और दर्शन – डॉ. देवेन्द्र त्रिवेदी
8. निराला की काव्यभाषा – डॉ. शिव शंकर सिंह

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 1.3
2. देखिए 1.4
3. देखिए 1.4

निराला और सरोज स्मृति : आलोचना और व्याख्या

संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 सरोज स्मृति : वस्तुशिल्पगत समीक्षा

2.4 सरोज स्मृति : समग्र आकलन

2.5 व्याख्यांश

2.6 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

2.7 अपनी प्रगति जाँचिए

2.8 नियत कार्य/गतिविधियाँ

2.9 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

2.9.1 चर्चा के लिए बिन्दु

2.9.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

2.10 संदर्भ/अतिरिक्त पठन सामग्री

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.1 प्रस्तावना

महाकवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला आधुनिक हिन्दी कविता के शिखर हैं। उन्होंने छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता और नवगीत जैसे प्रायः समस्त काव्यान्दोलनों पर अपनी छाप छोड़ी है। भाव, भाषा, छंद सभी में कुछ न कुछ निरालापन अर्थात् वैशिष्ट्य दिखायी देता है।

निराला का जन्म सन् 1896 को महिषादल मेदनीपुर (बंगाल) में और निधन 1961 में प्रयाग में हुआ था। उनके पितृ–पितामहों की भूमि है– गढ़ाकोला, जिला उन्नाव (उत्तरप्रदेश)। निराला जी को विधिवत स्कूली शिक्षा नहीं मिल पायी। उन्हें बार–बार परिजनों का बिछोह झेलना पड़ा। आर्थिक स्थिति आरम्भ से ही दयनीय रही, फलतः जीविकोपार्जन हेतु निराला जी को बड़ा संघर्ष करना पड़ा। वैचारिक दृष्टि से वे विवेकानंद एवं टैगोर के वैदान्तिक–मानवतावादी दर्शन से प्रभावित थे। उन्होंने अपने साहित्य द्वारा भारतीय समाज की रूढ़ियों पर प्रहार

किए, जिससे उन्हें स्वयं अनेक आघात झेलने पड़े। किन्तु जीवन पर्यन्त निराला ने कोई समझौता नहीं किया। वस्तुतः इतना कड़ा क्रान्तिकारी, दार्शनिक और प्रयोगधर्मा साहित्यकार हिन्दी में कोई अन्य नहीं हुआ है। 'सरोजस्मृति' कविता इन कथनों की साक्षी है।

निराला जी की अनेक काव्यकृतियां प्रकाशित हैं। मुख्य हैं– परिमल, अनामिका, गीतिका, तुलसीदास, अर्चना, आराधना, बेला, कुकुरमुत्ता, अणिमा, गीतगुंज, नए पत्ते तथा सांध्यकाकली।

निराला रचित लम्बी कविता 'सरोजस्मृति' मूलतः अनामिका में संकलित है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का मूल उद्देश्य है, इस कविता के भाव पक्ष तथा कला पक्ष का विवेचन करते हुए मुख्य–मुख्य अंशों के वस्तु–शिल्पगत वैशिष्ट्य का विश्लेषण करना। इस अध्ययन के सहारे 'सरोजस्मृति' के संबंध में यथेष्ट सामग्री अर्जित की जा सकती है।

2.3 सरोज स्मृति : वस्तुशिल्पगत समीक्षा

अनामिका में संकलित 'सरोज स्मृति' निराला की प्रौढ़ रचनाओं में गिनी जाती है किन्तु अपनी प्रकृति और स्वरूप में यह सर्वथा भिन्न है। 'सरोज स्मृति' निराला के द्वारा अपनी पुत्री सरोज के असमायिक निधन पर लिखी गई शोक परक कविता है। यह कविता 'शोकगीति' या 'एलेजी' की श्रेणी में आती है। इसमें कवि की वैयक्तिक अनुभूति सीधे–सीधे व्यक्त हुई है, जब कि "राम की शक्ति पूजा" में यह अनुभूति परोक्ष रूप से राम के माध्यम से व्यक्त हुई है।

'सरोज स्मृति' हिन्दी में अब तक अपने ढंग की अकेली कविता है। यों, कुछ समीक्षकों ने इस कविता से पहले 'प्रसाद के आँसू' को 'शोकगीति' या 'विलाप काव्य' के रूप में रेखांकित किया था, किन्तु यह बात सर्वथा स्वीकृत है कि 'आँसू विरह काव्य और सरोज स्मृति' हिन्दी की प्रथम सार्थक शोक गीतात्मक कविता है। 'सरोज स्मृति' के संबंध में समीक्षकों के अपने अलग–अलग अभिमत रहे हैं।

सर्वप्रथम सन् 1946 ई. में 'डॉ. रामविलास शर्मा ने 'सरोज स्मृति' के बारे में अपने विचार कुछ इस प्रकार व्यक्त किए–

"'सरोज स्मृति' का अंत 'राम की शक्ति पूजा' के आशावाद से नहीं होता। निराला यहां मस्तक झुकाकर अपने कर्म पर वज्रपात सहने के लिए तत्पर हैं। शीत से भ्रष्ट होते हुए शतदल के समान वे अपने गत द्वार्यों से कन्या का तर्पण करते हैं। यथार्थ जीवन की यह एक नई और कटु अनुभूति थी, जो निराला हिन्दी को दे रहे थे। यह एक ऐसा महानाटक था, जो पाठक के हृदय में अपार करुणा और सहानुभूति की सृष्टि करता है।... सरोज की जीवन गाथा स्वयं कवि की दुःख गाथा बन जाती है। अपने आरम्भिक साहित्यिक जीवन में प्रकाशकों द्वारा वापस की गई रचनाओं से क्षुब्ध निराला, आगे चलकर लेखन से अर्थोपार्जन न कर पाने से निराश निराला और अंत में अपनी रुग्णा कन्या की परिचर्या न कर पाने से आहत निराला की वेदना इस कविता की भाव भूमि है। इसमें निराला का व्यक्तित्व पराजित होकर भी संघर्षरत दिखाई पड़ता है। कवि ने स्पष्ट शब्दों में तो यह नहीं कहा कि कन्या की परिचर्या के लिए अर्थाभाव रहा। वहां तक पहुँचते–पहुँचते मानों उनकी लेखनी जवाब दे जाती है और वह सहसा कविता को समाप्त कर देता है। जो कहा और अनकहा रह गया, दोनों ने इस कविता में ऐसा रिक्त और यथार्थ सत्य अंकित कर दिया है कि व्यक्तिगत जीवन सम्बन्धी रचनाओं में वह रचना सहज ही ऊँचे से ऊँचा स्थान प्राप्त कर लेती है।"

सरोज की मृत्यु पर निराला की मनःस्थिति का चित्रण करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा–

"सरोज की मृत्यु में निराला के सारे जीवन की सार्थकता और निरर्थकता का प्रश्न बड़े विकट रूप में उनके सामने प्रस्तुत कर दिया। जिएँ तो किसके लिए? अब तक जीकर जो कुछ झेलते रहे, उसका फल क्या मिला?... वह उसे पढ़ा–लिखा नहीं पाए, बिना माँ की बेटी, लंबी बीमारी, गंगा के किनारे अंतिम घड़ियां गिनती हुई सरोज! निराला ने क्या मदद की? उनसे ज्यादा निकम्मा बाप कौन हो सकता है?"

यहाँ कवि जीवन की गहरी आर्थिक विषमता का प्रश्न कुछ इस प्रकार उठाया गया है कि हम पूंजीवादी समाज की निरंकुशता पर क्षुब्ध हो उठते हैं। निराला ने स्वयं अपनी जीवन पद्धति को इस प्रकार रूपायित किया है–

"क्षीण का न छीना कभी अन्न,

मैं लख न सका वे दृग विपन्नः

अपने आँसुओं अतः विम्बित

देखे हैं अपने ही मुख–चित्त।"

इसी के साथ कवि अतीत की स्मृतियों में पहुँचकर अपने साहित्यिक संघर्ष की ओर संकेत करता है। इस तरह आलोचना के प्रहार पर प्रहार देखकर ही डॉ. शर्मा ने सन् 1969 में लिखा–

""मालूम होता है कि हिन्दी में लिखकर निराला ने भारी अपराध किया है। नेकनामी कम, बदनामी ज्यादा मिली।"

'सरोज स्मृति' में पूर्व दीप्ति (लेश बैक) का नाटकीय विधान है। कवि मृत पुत्री के माध्यम से अपने सम्पूर्ण जीवन की त्रासदी का स्मरण करता है। एक स्मरण चित्र के अन्दर अनेक स्मरण चित्र बड़े ही नाटकीय ढंग से अभिव्यक्त हुए हैं।

1969 में डॉ. राम विलास शर्मा ने पुनः कहा–

"कन्या की अकाल मृत्यु से शोक, कोलाहल करने वाले विरोधियों पर व्यंग्य, विरोधी भावों का संघर्ष, मन की अशान्ति का चित्रण! यह है उसका स्वगत कथन। इसके बाद नाटक के भीतर नाटक! सरोज जब सवा साल की थी, तब उसकी मृत्यु तक के दृश्य निराला कल्पना के नेत्रों से देख जाते हैं। यह नितान्त मूक अभिनय ही नहीं है। बीच में दूसरों के स्वर भी सुनाई देते हैं, फिर भी निराला देखते ही ज्यादा हैं।" (निराला की साहित्य साधना 302)

1969 में 5 मार्च सन् 1962 को कलकत्ता में डॉ. रामविलास शर्मा को दिए गए एक पत्र में निराला के जामाता श्री शिवशेखर द्विवेदी ने लिखा था–

"जीवन में सच्चे स्नेह के नाते उसे जो कुछ प्राप्त था, एक मात्र नानी से। उसी ने छह मास की उस मातृहीना बालिका का पालन किया था। उस वृद्धा के स्नेह की सीमा न थी और सरोज को किसी भी मूल्य पर उससे वंचित करना कठिन था।"

विवेच्य कथन से स्पष्ट है कि डॉ. रामविलास शर्मा ने 'सरोज–स्मृति' में वर्णित समाज में व्याप्त जिस 'स्वार्थ समर' का जिक्र किया है, उसका सम्बन्ध भी निराला की जीवन–पद्धति से है। उनके अनुसार निराला का कवि

पूँजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत विजयी होने को भी बहुत सम्मानप्रद नहीं समझता। अनर्थ पूर्ण रीति से धनोपार्जन में वह सदैव संकोच करता रहा और भीषण आर्थिक संकट का सामना करते हुए वह अपनी पुत्री को न्यूनतम सुविधाएँ देने में असमर्थ रहा। स्पष्टतः शर्मा जी ने संवेदना के स्तर पर इस कविता की सृजन–प्रक्रिया का विश्लेषण किया है।

डॉ. बच्चन सिंह (सन् 1946) ने 'सरोज स्मृति' पर अपने विचार कुछ इस प्रकार व्यक्त किए–

"यह बिम्ब कन्या के विवाह के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। इसलिए यह सामाजिक यथार्थ का एक महत्वपूर्ण पहलू भी रेखांकित करता है। कन्या का विवाह निराला को बहुत दयनीय और अशोभनीय स्थिति में करना पड़ा। किसी ने उनका साथ नहीं दिया। विवाह के समय कोई सगा संबंधी भी उपस्थित नहीं हुआ। निराला कण्व ऋषि की तरह एकदम अकेले अपनी शकुन्तला को विदा करते हैं।"

पुनः 1961 में डॉ. बच्चन सिंह ने अपनी पुस्तक के द्वितीय संस्करण में लिखा–

"'सरोज स्मृति' का विषय 'ग्रे' के विषयों की भाँति बड़ा ही करुण है। इसमें अनुभूतियों की गहराई अपनी संश्लिष्टता में विशेष रूप से द्रष्टव्य है।... अपनी कन्या सरोज के तारुण्य का वर्णन कर कवि ने सिद्ध कर दिया है कि वह लोक भूमि से कितना ऊँचे उठा है।" (क्रान्तिकारी कवि निराला 10)

विवेच्य कथन में डॉ. बच्चन सिंह ने 'सरोज स्मृति' में सरोज एवं शकुन्तला की विदायी का तुलनात्मक स्वरूप दिखाकर सामाजिक अव्यवस्था का बड़ा सुन्दर चित्रण किया है। 'सरोज स्मृति' में सरोज की विदायी शकुन्तला की विदायी की अपेक्षा अतिमार्मिक, पीड़ादायक, अवसादमयी और वैराग्यपूर्ण है। आदमी व्यक्तिगत भावनाओं में नियंत्रण कर सकता है, पर सामाजिक अभिशाप तो उसे बरबाद ही कर देता है। कन्या के विवाह के समय जिस आर्थिक अभाव की मनःस्थिति का वर्णन कवि करता है, उससे दहेज जैसी समस्या के अभिशाप का स्वर ध्वनित होता है। सरोज के तारुण्य वर्णन में कवि की तटस्थता पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी है। यही कवि की निर्वैयक्तिकता है। बच्चन जी का यह मत ठीक है। निराला जी ने उसी दृष्टि का परिचय दिया है, जिसका उल्लेख 'शक्ति–पूजा' के प्रसंग में दिया जा चुका है। 'शक्तिपूजा' के वीर और श्रृंगार की तरह यहां भी निराला करुण और श्रृंगार के दो अतिछोरों का स्पर्श कर विरुद्धों के अतिसामंजस्य का साहस करते हैं। यहीं उनकी असाधारणता है। दोनों स्थानों पर श्रृंगार वर्णन इतना उदान्त अवश्य है कि उससे किंचित् विकार की अनुभूति नहीं होती। वर्णन की सिद्धहस्तता प्रासंगिक विरोध को चुनौती देती है।

निराला ने अपनी बात प्रायः प्रतीकात्मक शैली में अभिव्यक्त की है, किन्तु अपवाद रूप में लिखी गई कविता 'सरोज–स्मृति' जैसी कतिपय रचनाओं में उनकी आत्मचरितात्मक शैली परिलक्षित होती है।

'सरोज स्मृति' में समूह के भाव नहीं आ पाए हैं। पर उसमें भी चलते–चलाते जो प्रसंग के कारण समूह से सम्बन्धित पंक्तियां हैं, वे प्रगतिवाद के वर्तमान तराजू पर आसानी से तोली जा सकती हैं। प्रगतिशीलता के भौतिक आधार पर भी उन्हें खड़ा करना चाहे तो वे खड़ी होने का सम्पूर्ण साधन, समर्थ शक्ति रखती हुई मिलेंगी। रूढ़ि या परम्परा का भयंकर विरोधी होने पर भी उसे उन्होंने किस रूप में स्वीकार किया है। यह 'सरोज स्मृति' की कुछ पंक्तियां बता देंगी। ब्राह्मण धर्म की प्रवृत्तियों तथा सामाजिक अन्तर्दशाओं का बड़ा सूक्ष्म निदर्शन इसमें मिलता है। युगधर्म का वातावरण भी इसमें वर्तमान हैं, यथा–

"ये कान्यकुब्ज–कुल कुलांगार
खाकर पत्तल में करें छेद,

ठनके कर कन्या, अर्थ खेद,

इस विषम बेलि में विष ही फल

यह दग्ध मरुस्थल नहीं सजल।"

"फिर सोचा– "मेरे पूर्वज गण'

गुजरे जिस राह वही शोभन।"

कभी–कभी द्वन्द्व की परिस्थितियों में लिखी गई कविताएं, दो भावों को इस प्रकार एक साथ ले चलती हैं मानों उन्हें उनका अन्योन्याश्रित सम्बन्ध दिखाना हो। अन्तिम दो पंक्तियों का यह आशय कभी ग्रहण नहीं करना चाहिए कि चली आती हुई विकृति का भी कवि समर्थक है। वस्तुतः रूढ़ियों का वह कट्टर विरोधी है। परन्तु सुधार के रूप में कुछ रूढ़ियां भी ग्राह्य हैं। कवि को अपने विचारों के स्पष्टीकरण में यह भी ख्याल नहीं रहता कि उनके समर्थक एवं विरोधी क्या कहेंगे। प्राचीन–नवीन, जिनके सम्बन्ध में उसे कुछ कहना होता है, वह निर्भयता पूर्वक कह जाता है।

'डॉ. रामरतन भटनागर' (सन् 1952) ने 'सरोज स्मृति' को आत्मपरक कविता बताते हुए अपना अभिमत इस प्रकार प्रकट किया–

"सच तो यह है कि 'सरोज स्मृति' और कवि की अन्य आत्मपरक कविताएं हिन्दी के इतिहास की अमोल निधि रहेंगी। इन कविताओं में हम निराला के स्वस्थ, लोहे की तरह कड़े, आँच में तपाए हुए व्यक्तित्व की झलक पाते हैं। अपने साहित्यिक जीवन के प्रतिदिन के सुख–दुःख के बीच कवि ने किस प्रकार भारती की पाठ–पूजा की है, कैसे भाव के फूल चढ़ाए हैं, यह इन रचनाओं में मिलेगा।" (कवि निराला–20)

स्मृति के द्वारा पुत्री के यौवनागम अर्थात् तरुणाई के प्रथम चरण का ऐसा मार्मिक चित्र हिन्दी साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है। पुत्री के सौंदर्य को यथावत् चित्रित करने के लोभ और पितृत्व के बोध के बीच गजब का संतुलन है।

सन् 1965 में डॉ. रामरतन भटनागर ने अपनी दूसरी पुस्तक में पिता एवं कवि के बीच कुछ इसी तरह का विचार इस प्रकार व्यक्त किया–

"'सरोज स्मृति' में कवि कन्या के प्रति वात्सल्य भाव का निर्वाह करता हुआ भी उसमें शृंगार की सार्थकता भर देने का कौशल दिखलाता है। परन्तु यह दिव्य शृंगार है और स्वर्गीया प्रिया से उसे जोड़कर कवि प्रेम की देहोत्तर गरिमा अथवा अदेहता की ओर भी इंगित करता है। निराला जिस विद्रोह को पल्लवित कर कान्य–कुब्ज–ब्राह्मण के संस्कारों के ऊपर उठते हैं, वह तो साहस की बात है ही, परन्तु तारुण्य प्राप्ति के साथ पुत्री के भाव–जगत के परिवर्तन को कवि जिस दिव्यता और दिवंगत पत्नी की स्मृति की मधुरता से बाँध देता है, वह एकदम अप्रतिम वस्तु है।" (निराला और नवजागरण 158)

आलोच्य कथन में 'सरोज स्मृति' में भटनागर जी ने निराला द्वारा अपनी ही तरुण बेटी का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण करते हुए कविता की उदात्त भावधारा को आगे बढ़ाना चाहा है। निराला का अस्खलित रागी–विरागी कवि ही ऐसी कसौटी पर खरा उतर सकता है। ऐसे स्थलों पर निराला का दिव्य भाव कहीं भी खण्डित नहीं हुआ है। माँ और पिता का माधुर्य मानों सरोज के स्वर में सहज रागिनी बन गया है।

डॉ. विश्वम्यर नाथ उपाध्याय (सन् 1953) ने एक स्थल पर 'सरोज स्मृति' के सम्बन्ध में कहा–

"अभावजन्य संवेदन का उसमें भारी प्रभाव पड़ा है। उसमें विवरण की प्रधानता है। कविता अत्यन्त साध्ाारण बन पड़ी है।"

सरोज के विवाह प्रसंग को लेकर निराला ने उन तमाम जर्जर रूढ़ियों पर प्रहार किया है, जो विवाह की पवित्रता को भ्रष्ट कर देती है। ये तमाम प्रसंग व्यक्तिमन के प्रचंड विश्वास एवं साहस का परिचय दिया है। (महाकवि निराला : काव्य कला और कृतियां 142)

'सरोज स्मृति' इस बात का भी प्रमाण है कि किस तरह व्यक्ति की पीड़ा के माध्यम से एक–एक कर सामाजिक रूढ़ियों और आधुनिक अर्थ पिशाचों पर प्रहार किया गया है।

डॉ. दशरथ ओझा एवं डॉ. विजयेन्द्र स्नातक (सन् 1958) ने 'सरोज स्मृति' के बारे में लिखा –

"निराला ने 'सरोज स्मृति' शीर्षक कविता शोक–गीति की शैली में लिखी है, जिसमें अपनी पुत्री के असामयिक निधन से उद्भूत शोकमयी भावनाओं को कवि ने 'ऐलेजी' की शैली में वर्णित किया है। पुत्री के निध्ान पर कवि को उसका बाल्यकाल स्मरण हो आता है। सवा साल की आयु में ही नन्हीं बच्ची की माँ का देहावसान हो गया था। इस कविता में विवाह सम्बन्धी रूढ़ियों पर भी कवि बे चोट की है। सरोज की मृत्यु पर कवि के मर्माहत शब्द पुकार उठे हैं–

"दु:ख ही जीवन की कथा रही
क्या कहूँ आज जो नहीं कही।"

आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी 'सरोज स्मृति' को निराला के समस्त काव्य के शीर्ष पर संस्थित मानते हैं। सन् 1965 में उन्होंने अपनी पुस्तक में लिखा–

"दीर्घ प्रगीत के असाधारण प्रसार में इतना समाहित संगठन निराला की किसी दूसरी रचना में शायद ही मिले। जान पड़ता है कि इस दु:ख के अवसर पर निराला की समस्त टूटती हुई वृत्तियाँ पुन: एकान्वित हो गई हैं और करुणा की भूमिका पर ऐसे काव्य की सृष्टि की जा सकती है जो समस्त हिन्दी काव्य में अपना सानी नहीं रखती।" (कवि निराला–20)

इसीलिए नन्ददुलारे बाजपेयी कवि की तटस्थ संवेदना और अपूर्व भाषिक संयम के बारे में लिखते हैं–

"कविताओं के भीतर से जितना प्रसन्न एवं अस्खलित व्यक्तित्व निराला का है, उतना न प्रसाद जी का है, न पंत जी का है। यह निराला जी की समुन्नत काव्य साधना का प्रभाव है।"

आचार्य बाजपेयी ने 'सरोज स्मृति' को अपेक्षाकृत–

"गंभीर के साथ कुरूप और व्यंग्यात्मक वर्णनों को अनुस्यूत करने वाला 'शिल्प' कहा है और उसे निराला के शिल्प पक्ष की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि माना है।" (कवि निराला–23)

प्रो. धनंजय वर्मा (1965) के अनुसार–

"सरोज स्मृति एक शोकगीत है। इसमें कवि की अन्तर्व्यथा चित्रित है। यह व्यथा जो पुत्री की मृत्यु के कारण उद्भुत हुई है। इसमें सरोज के बाल्यकाल से लेकर उसके विवाह और मृत्यु तक की कथा वर्णित है। यह

कविता कथात्मक शैली में लिखी गई है। निराला जी ने सरोज के जीवन की जो व्यथा–कथा कही है, वह अन्यतम है। 'सरोज स्मृति' में निराला का व्यक्तित्व और उनके जीवन की अधिकांश पीड़ा की मार्मित मुखर व्यंजना है।"

इसी क्रम में पुनः वर्मा जी लिखते हैं–

"निराला की इस रचना में काव्य के मर्म के साथ–साथ कवि का व्यक्तित्व सामाजिक प्रतिक्रियाओं के साथ–साथ व्यक्त हुआ है। विरोध और क्रान्ति के स्वर पूर्ण–रूपेण मुखरित हुए हैं। निराला जी ने अपने जीवन में जिन सामाजिक मान्यताओं का विरोध किया और जैसा कवि का आचरण हुआ, उन्हीं का आकलन है– 'सरोज स्मृति।

उन्होंने अपनी दूसरी पुस्तक में भी कहा कि 'सरोज स्मृति' में निराला के व्यक्तित्व और उनके जीवन की अधिकांश पीड़ा की मुखर अभिव्यंजना है।"

निष्कर्षतः डॉ. धनंजय वर्मा 'सरोज स्मृति' के बारे में यही कहना चाहते हैं कि कवि की घनीभूत पीड़ा अभिव्यक्ति पाने के निमित्त तड़प बन गई दिखती है। घनीभूत पीड़ा की यह व्यंजना 'आँसू' (प्रसाद) के बाद इसी में हुई है।

कई अन्य समीक्षक इस कविता को 'शोक गीति' मानते हुए पुत्री सरोज के सौंदर्य वर्णन का आध्यात्मिक अनुभूति की संज्ञा देते हैं। उनका तर्क है कि–

"कवि अपनी पुत्री के सौंदर्य में एक शाश्वत आह्लाद देखता है। क्योंकि पुत्री वियोग की ज्वाला ने कवि भावनाओं को उज्ज्वल और उदात्त बना दिया है। यही कारण है कि प्रत्यक्ष सौंदर्य में वह निराकार शृंगार का स्वरूप देख रहा है।"

हिन्दी–साहित्य का यह पहला स्वर है, जिसमें अभिव्यक्ति की पौराणिक, सामाजिक, स्वाधीनता और कवि के व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा का आग्रह स्पष्ट शब्दों में मुखरित हुआ है।

पं. गंगा प्रसाद पाण्डेय (सन् 1968) ने 'सरोज स्मृति' में सौंदर्य वर्णन को आध्यात्मिक रूप दिया है। उनके शब्दों में – "'सरोज स्मृति' में अपनी पुत्री के यौवन सौंदर्य का जो निरपेक्ष एवं वीतराग वर्णन निराला ने किया है, वह हिन्दी में ही नहीं, विश्व–साहित्य में भी अकेला है। सौंदर्य की ऐसी ही निष्काम अनासक्त प्रतीति कवि को विश्व की अनुभूतियों में आनंद की अनुभूति देकर कला को उदात्त और सम्पन्न बनाने में सहायक सिद्ध होती है।" (महाप्राण निराला–145)

यहाँ पाण्डेय जी ने यह कहना चाहा है कि कवि के इस आग्रह में अभिव्यक्ति की मुक्ति के साथ उसके आचरण और अभिव्यंजना का अटूट साहस भी सन्निहित है।

डॉ. ज्ञानकीबल्लभ शास्त्री (सन् 1969) 'शक्ति सौंदर्य और चेतना' नामक शीर्षक में 'सरोज–स्मृति' के बारे में लिखते हैं–

"'सरोज स्मृति' कवि की आत्मव्यथा की मर्मस्पर्शी 'काव्य–मंजूषा' है। उसकी शैली से भी घनिष्ठ आत्मीयता का परिचय मिलता है।"

जीवन के महासमर में कवि को जो भी कटु–तिक्त अनुभूतियाँ हुई हैं, उनका इस कविता में उन्होंने ईमानदारी और बड़ी सजगता से चित्रण किया है।

'सरोज स्मृति' के स्थापत्य को लेकर आलोचना की एक लम्बी परम्परा दिखायी देती है। इसकी पहचान कई महत्वपूर्ण आलोचकों ने 'शोक–गीति' के रूप में की है। डॉ. रामविलास शर्मा, पद्मसिंह शर्मा, धनंजय वर्मा आदि ने 'सरोज स्मृति' की पहचान प्रायः एक 'शोक–गीति' के रूप में की है। डॉ. रामविलास शर्मा के मतानुसार 'सरोज स्मृति' हिन्दी की एकमात्र प्रसिद्ध 'ऐलजी' या 'शोक गीति' है। पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' की दृष्टि में हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ शोक गीत होने के कारण 'सरोज स्मृति' का ऐतिहासिक महत्व है।

प्रसंगवश निराला साहित्य के प्रशंसक श्री गंगा प्रसाद पाण्डेय 'सरोज स्मृति' को एक महान शोक गीति मानते हुए भी उसकी महाकाव्योचित गरिमा, विराटता का उल्लेख भी करते हैं।

आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री ने पहले पहल 'सरोज स्मृति' को शोक–गीति के पारम्परिक शिल्प से कुछ भिन्न रूप में लक्षित किया। दूधनाथ सिंह के अनुसार यह "कविता के रूप में लिखा गया आत्मचरित है। 'धनंजय वर्मा' के अनुसार– "सरोज स्मृति में निराला के व्यक्तित्व और उनके जीवन की अधिकांश पीड़ा की मार्मिक अभिव्यंजना है।"

वस्तुतः 'सरोज स्मृति' निराला के अन्तस की घनीभूत पीड़ा अपनी मातृ–विहीना पुत्री सरोज की मृत्यु के शोक से उमड़ी व्यथा के नुकीले विषम दंशों, आर्थिक अभावों से ग्रस्त निराला के 'व्यक्ति' और 'कवि' जीवन के विरोधों और अन्तर्विरोधों, अपनी पुत्री सरोज के बचपन से लेकर विवाह, उसके बाद अपने कवि जीवन और गढ़ाकोला और डलमऊ की स्मृतियों में व्याप्त गहरे दुःख की अनकही कथा के संकेत देती है।

सन् 1935 में रचित निराला के इस मार्मिक शोक–गीत में जीवन की कटु मधु स्मृतियाँ चपल तरंगों सी तैरती हुई आती हैं और छिपे हुए घावों और अनकही पीड़ा के बेधक मर्मस्थलों को झझकोर जाती हैं।

निराला ने 'सरोज स्मृति' में मानवोचित भाव को व्यक्त करने के साथ ही अपनी बेटी सरोज के कारुणिक निधन के माध्यम से विषमता भरे समाज की संकुचित भेदपूर्ण मानसिकता पर आक्रामक मुद्रा में प्रहार किए हैं। जाति–विरादरी की अभिशापयुक्त वृत्ति पर– 'कान्यकुब्जकुलकुलांगार, 'विषम वेलि में विष ही फल', 'दग्धमरुस्थल–नहीं स0जल' जैसे कटाक्ष करके आहत करते हैं।

कन्या के विवाह के समय जिस आर्थिक अभाव की मनःस्थिति का कवि वर्णन करता है, उससे आज दहेज जैसी समस्या के अभिशाप का स्वर ध्वनित होता है। दहेज जैसी सामाजिक समस्या आज भी समाज को अभिशप्त बनाए हुए है। मनुष्य इसकी नाटकीय यंत्रणा से उबर नहीं पा रहा है।

'सरोज स्मृति' संघर्षों से हार न मानकर, अनवरत अपने कर्त्तव्यपथ पर अग्रसर रहने की प्रेरणा देती है, क्योंकि संघर्षों में ही मानव–जीवन निखरता है। इस तरह निराला 'सरोज–स्मृति' के माध्यम से हमारे समकालीन बनते हैं– यथार्थ, करुणा, आदर्श एवं विद्रोह के सम्मिलित संवेदन के साथ।

2.4 'सरोज स्मृति' : समग्र आकलन

'सरोज स्मृति' बहुआयामी कविता है। इसे दीर्घ प्रगीत कहा गया है। कुछ ने भावावेगवश 'महाकाव्योचित' तक कह दिया है। यों प्रगीत की अपेक्षा यह एक लम्बी कविता है। इसकी प्रमुख विशेषताएँ बिन्दुवार द्रष्टव्य हैं–

1. हिन्दी का विशिष्ट शोक काव्य–

यह कविता अंग्रेजी की विधा 'एलिजी' के काफी निकट है। इसे पूर्णतः ट्रैजिडी नहीं कहा जा सकता। क्योंकि शोक के साथ इसमें कई तर्क तथ्य भी हैं। विलापकाव्य से भी यह काफी भिन्न है। करुण अवश्य इसका

अंगीरस है। यों यह कविता मात्र शोकोच्छ्वासों में केन्द्रित न होकर बीच–बीच में सामाजिक, साहित्यिक समस्याओं पर विमर्श भी करती है, फिर भी शोक इसका स्थायी भाव है। इस कविता से पहले आँसू (प्रसाद) कौसल्या विलाप, कृषक क्रन्दन, शैव्या विलाप (सनेही) यशोदाविलाप (हरिऔध) आदि रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी थीं, किन्तु 'सरोज स्मृति' संवेदना के धरातल पर उनकी अपेक्षा शोकपरक ज्यादा है, अतः इसे हिन्दी की विशिष्ट शोक परक कविता मानना समीचीन होगा।

2. आत्मचरितात्मक कविता–

इसमें निराला जी के अस्तित्व संघर्ष की कथा विस्तारपूर्वक वर्णित हुई है। कवि ने अतीत स्मृतियों के सहारे अपनी आरम्भिक उठान की व्यथा–कथा कही है। उसे वे दिन याद आते हैं। जब लेखन को जीविकोपार्जन का साधन मानकर कवि रचना–क्षेत्र में उतरा था, किन्तु संपादकों ने उसके नए साहित्यिक प्रयोगों को महत्व न देकर उसकी रचनाएं लौटा दी थीं, बिना स्पष्टीकरण के। कवि के समक्ष था अंधकारपूर्ण भविष्य। फिर भी वह सृजनरत रहा। दूसरी ओर रूढ़िवादी साहित्यकार उस पर आक्रमण करते रहे, कभी 'जूहीकी कली' के छंद को लेकर, कभी छायावादी शिल्प के विरोध में और कभी "वर्तमान धर्म" जैसे लेख के योजनाबद्ध विरोध के रूप में। विराला जी का यह आत्मवृत्त इस कविता में अन्तर्व्याप्त है। इसी कारण यह कविता छायावादी काव्यान्दोलन का दस्तावेज बन गयी है।

3. इतिवृत्तात्मकता–

इस कविता में पुत्री सरोज से संबंधित कई घटनाओं का वर्णन है। वाल्यावस्था में सरोज जिस प्रकार भाई के साथ खेलती थी, घूमने जाती थी, झगड़ती थी, पिटती थी, जिस प्रकार उसका ख्याल करके निराला जी ने अपने पुनर्विवाह का विचार त्याग करके उससे जन्म कुण्डली फड़वा डाली थी, जिस प्रकार अपनी ससुराल से उसे वे गढ़ाकोला लाए थे, जैसे उसका विवाह सम्पन्न कराया और जिस प्रकार स्वयं उसकी पुष्पसेज सजाई– ये समस्त वृतान्त स्मृति संचारी के माध्यम से इस कविता में प्रस्तुत किए गए हैं।

4. विडम्बनापूर्ण स्थितियाँ–

इस कविता में अनेक प्रकार की विड़म्वनाओं का चित्रण हुआ है। कवि ने एक ओर सद्यः परिणीता सरोज के यौवनागम एवं अनाविल सौंदर्य का वर्णन किया है तो दूसरी ओर कान्यकुंज ब्राह्मणों के विवाई फटे, दुर्गन्धपूर्ण पैरों की कुरूपता का वर्णन भी किया है। इस कविता में कवि ने अपनी गर्वीली गरीबी का उल्लेख किया है तो अर्थशुचितापूर्ण अपने प्रचण्ड आत्मविश्वास का भी। यह दैन्य और दर्प– "भिक्षुक ज्यों लेकर स्वर्ण झनक", "मैं कवि हूँ, पाया है प्रकाश", "अस्तु, मैं उपार्जन में अक्षम" आदि पंक्तियों में प्रकट हुआ है।

इस कविता में पश्चात्ताप, अनुताप, पितृ धर्म का पालन न कर पाने की ग्लानि, कविकर्म की निरर्थकता, हताशा आदि के भाव बारंबार मुखरित हुए हैं।

इसमें करुण, व्यंग्य और विद्रोह की त्रिवेणी प्रवाहित हुई है। शोक की मनःस्थिति में 'चमरौधे जूते को सकेल' जैसी हास्य व्यंग्यपूर्ण उक्तियाँ भी इसमें आई हैं।

निराला जी ने इसमें कई सामाजिक अंधप्रथाओं का विरोध किया है, जैसे दहेज, जातीय भेदभाव, प्रजावर्ग, पुरोहित आदि का निषेध, वैवाहिक भोज और खर्चीली उत्सवधर्मिता की वर्जना। दूसरी और कवि ने यह कहकर कि जब मैं मृत्यूपरांत वैतरणी पार करूँगा तो सरोज ही पुत्रवत सहायता देगी, अपने मध्ययुगीन परलोकवादी चिन्तन

को स्वर दिया है। कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के प्रति उसमें अकारण घृणा प्रकट की गई है और दूसरी ओर कान्यकुब्ज युवक से ही विवाह कराया गया है। इस कविता में सादगी के साथ विवाह करने के कई तर्क दिए गए हैं, जबकि उसी बीच बड़ी धूम-धाम से पुत्र राम कृष्ण के विवाहोत्सव का लखनऊ में जो आयोजन हुआ था, वह सुविदित है। इस कविता में कहीं नियतिवादी स्वर है, कर्मसंन्यास, पलायन और गतकर्मों के अर्पण-तर्पण का उद्‌घोष है तो कहीं संघर्ष तथा विद्रोह का संकल्प भी है।

इस कविता के कई अंश काव्योत्कर्ष से परिपूर्ण हैं। यों, अधिकांश कविता कथात्मक, वर्णनात्मक एवं विवरणात्मक है। निराला के कई आत्मकथ्य संवेदना की सृष्टि करते हैं। कवि का तनाव, टकराव, आदर्श-यथार्थ का अन्तर्द्वन्द्व और सर्वोपरि यह मर्सियाशैली सहृदय पाठकों को प्रभावित करती है। कुल मिलाकर यह निराला के अन्तर्विरोधों से ओतप्रोत एक निराली कविता है।

2.5 व्याख्यांश-

1. धन्ये .... मुखचित

इस अवतरण में निराला जी ने अपनी गरीबी का विवरण देते हुए कहा है कि हे पुत्री, मैं अपने पितृ धर्म का विधिवत पालन नहीं कर पाया। मैं एक असफल पिता था, इसलिए तेरा कुछ भी भला नहीं कर सका। मैं अर्थोपार्जन के उपाय जानता तो था, किन्तु उन तरीकों को अपनाने में संकोच करता रहा। मैंने यह महसूस किया कि अर्थ के नाम पर अनर्थ हो रहा है। मैं इस स्वार्थ समर में बराबर पराजित होता रहा हूँ, क्योंकि मानवीय संवेदना ने मुझे अर्थ पिशाच की साधना नहीं करने दी। अस्तु, हे मेरी पवित्र कन्ये, तुझे कीमती रेशमी वस्त्र मैं नहीं पहना पाया। तुझे दधिमुख नहीं रख सका। अर्थात् षटरस व्यंजन नहीं खिला पाया। मैं कभी गरीब की रोटी छीनने का साहस नहीं कर सका। मैं विपन्नता, विवशता से मायूस उनकी आँखों से आँखें नहीं मिला पाया। मुझे उनके आँसुओं में अपना मुख और चित्त प्रतिबिम्बित होता दिखायी देता रहा है।

यहाँ निराला ने दरिद्र नारायण के प्रति अपनी भावना व्यक्त की है। यही भाव उनकी प्रसिद्ध कविता 'मैंने मैं शैली अपनाई' में व्यक्त हुआ है। इस अवतरण में उन्होंने कहना चाहा है कि जो भौतिक जीवन में आशातीन सफलता प्राप्त करते हैं, वे कहीं न कहीं गरीबों का शोषण अवश्य करते हैं। निराला जैसा संवेदनशील, दीनवत्सल और मानवतावादी कवि अपने सुख भोग के लिए अमानवीय व्यवहार नहीं कर पाया, इसीलिए अपनी कन्या का भरण-पोषण भी ठाठबाट के साथ नहीं कर सका। निराला जी ने अनेक प्रसंगों में यह लिखा है कि हिन्दी के कलमजीवी लेखक होने के नाते वे गरीबी की रेखा के ऊपर नहीं उठ पाए, इसलिए उनकी संतान सुख-सुविधाओं से वंचित रही।

2. एक साथ .... कण्ठ फल

इस अवतरण में निराला जी ने साहित्य क्षेत्र में किए जाने वाले अपने संघर्षों का उल्लेख किया है। उन्होंने छायावादी काव्यधारा का अवगाहन करते हुए जब नव्य प्रेम सौंदर्य, प्रकृति-चित्रण और नए शिल्प का प्रयोग किया, तो रूढ़िवादी पत्रकारों तथा आलोचकों ने उनपर योजनाबद्ध रूप से आक्रमण कर दिया। निराला जी के नए भाषिक प्रयोगों का और विशेष रूप से उनके मुक्त छंद का इन सबने उपहास किया। कवि उनका स्मरण करता हुआ कह रहा है कि जब एक साथ सैकड़ों घात प्रति-घात हो रहे थे, जब मुझ एकाकी व्यक्ति पर आचार्यगण सधे हुए व्यंग्यवाणों की बौछार कर रहे थे, तब काफी समय तक मैं एकटक स्तब्ध खड़ा हुआ, उनके शर-संधान को और उनके युद्ध-कौशल को देखता रहा। कारण, मैं समझ नहीं पा रहा था कि मेरा दोष क्या है! तब उनकी चिल्लाहट

पूर्णतः प्रकट हो चुकी है। उन्होंने क्रोधान्ध होकर जो युद्ध किया, उसका फल उन्हें यह मिला कि अब उनका कण्ठ अवरुद्ध हो गया है, यानी उनकी बोली–बानी बंद हो गयी है।

इस अवतरण में निराला जी ने अपने कवि, जीवन की आरम्भिक उठान में हुए संघर्षों का संकेत किया है। उन्होंने मुक्त छंद का प्रवर्तन किया था। उसका परम्परावादी आलोचकों ने बड़ा विरोध किया था। उसे रबड छंद, केंचुआ छंद, कंगारू छंद, जैसे नाम दिए थे। साथ ही भाँग की कली, गाँजे की कली जैसी पैरोडियाँ रचकर उनका उपहास किया था। इस कविता में चित्रित रहस्य–दर्शन को किसी ने महत्व नहीं दिया। निराला कविता की मुक्ति के लिए छंद की मुक्ति का जो आंदोलन चला रहे थे, उसको किसी ने नहीं सराहा। अपने एक निबंध 'मेरे गीत और कला' में उनकी यही वेदना मुखरित हुई है। दूसरी ओर 'वर्तमान धर्म' जैसा निबंध लिखकर उन्होंने भारतीय मिथकों के कई गूढ एवं सूक्ष्म प्रतीकों की जो बारीक व्याख्या की थी, वह भी विवाद का विषय बन गयी और निराला को साहित्यिक सन्निपात से ग्रस्त लेखक घोषित कर दिया गया। इस घटना का उल्लेख उनके निबंध 'साहित्यिकों से निवेदन' में हुआ है। इस प्रकार साहित्य क्षेत्र में किए गए संघर्ष के कई सूत्र संकेत इस अवतरण के माध्यम से प्राप्त होते हैं।

3. धीरे–धीरे .... साध साध

इस अवतरण में पुत्री सरोज की वयःसन्धि, उसके यौवनागम और सौंदर्य का चित्रण किया गया है। कवि कहता है कि बालिका सरोज क्रमशः चरण बढ़ाती हुई धीरे–धीरे बाल–लीलाओं का आँगन पार कर लेती है और यौवन के कुंज में प्रवेश करती हैं। उसके अंग–अंग में सौंदर्य का संचार होने लगता है। जिस प्रकार किसी नई वीणा पर जब मालकौश बजाया जाता है तो उसका तार–तार झंकृत हो उठता है, उसी तरह सरोज की कोमल काया में यौवन गत सौंदर्य झंकृत हो उठा। जिस प्रकार अर्द्धरात्रि के प्रहरों में देखा गया सुंदर सपना धीरे–धीरे उषा की लालिमा के रूप में फूट निकलता है और जागरण का छंद बन जाता है, उसी तरह तू मेरे लिए स्वप्न जैसी सुंदर और उषा कालीन लालिमा जैसी आकर्षक थी। तूने अपने आलोक भार से मेरे अंतर्मन को भर दिया। उस प्रकाश से समस्त जीवन वन और दिग–दिगन्त प्रकम्पित हो उठा। अर्थात् सर्वत्र सौंदर्य की सिहरन भर गयी। आकाश, पृथ्वी, वृक्ष, कली, पल्लव, सबमें लू समा गयी। अर्थात् प्रकृति के सौंदर्य में सरोज और सरोज के सौंदर्य में प्रकृति एकाकार हो गयी। तेरी दृष्टि सौंदर्य से इस प्रकार सराबोर हो गयी जैसे पाताल को तोड़कर आकाश गंगा की बेगवती ध ारा फूट निकली हो। जैसे उसका निर्मल जल लहराता हुआ ऊपर की ओर उमड़ रहा हो। उसकी नील लहरियाँ अठखेली कर रही हों, लेकिन शरीर के सुंदर बाँध से बँधी होने के कारण बहुत संयत रूप से नेत्रों के माध्यम से छलक रही हों।

यहाँ कवि ने नवयुवती सरोज के अंग–प्रत्यंग में संचरित होने वाले सौंदर्य की उत्प्रेक्षा वीणा पर बजाई जानेवाली रंगिनी मालकोश से दी है। दूसरे, सरोज के नेत्रों से छन–छन कर झरते हुए सौंदर्य की उत्प्रेक्षा कवि ने भोगावती (पातालगंगा) से दी है। ये दोनों उत्प्रेक्षाएँ सूक्ष्मता और पवित्रता की व्यंजना करती हैं।

इन पंक्तियों में निराला जी ने अपनी युवती पुत्री का जो सौंदर्यांकन किया है, वह कट्टर मर्यादावादी भारतीय समाज को देखते हुए एक साहसिक प्रयास रहा है। कवि को सरोज में अपनी प्रिया पत्नी मनोहरा की मध ुरिमा दिखायी देती है और साथ ही सरोज रूप में अपनी शंगिनी की आग भी सम्पूर्ण होती प्रतीत होती है।

4. उर में भर .... बना मही

इस अवतरण में कवि ने सरोज के विवाहोत्सव का वर्णन किया है। सरोज जब विवाह मण्डप के नीचे खड़ी होती है और उस पर मंगल कलश का जल छिड़का जाता है तो वह पिता की ओर देखते हुए धीरे–धीरे मुसकराती

है। कवि को ऐसा लगता है, मानों उसके होठों के भीतर बिजली धीरे–धीरे कौंध रही है। अपनी सद्यःपरिणीता को देखकर कवि को अपनी दिवंगता पत्नी की याद आ जाती है। उसका सौंदर्य हृदय में झूलने लगता है। ऐसा लगता है, जैसे प्रिया का मौन श्रृंगार आज मुखर हो उठा है। कुली एक उच्छवास के साथ जैसे पुनः लिख उठी है। तेरे अंग–अंग में आत्मविश्वास जाग्रत हो गया था। तू आँखें झुकाए हुए बेदी पर खड़ी थी। तेर नेत्रों से सौंदर्य की ज्योति झर रही थी और वह तेरे अधरों पर स्पन्दित हो रही थी। तेरी उस पवित्र छवि को देखकर मुझे प्रतीत हुआ कि तू मेरे जीवन बसंत की पहली रागिनी है। अब तक जो श्रृंगार निराकार या सूक्ष्म था, जिसे मैं रस सिक्त कविताओं में भावोच्छ्वासों के साथ अपनी स्वर्गीया प्रिया मनोहरा के संग गाया करता था तथा जिनके द्वारा दोनों के प्राणों में राग रंग का संचार किया करता था, वही श्रृंगार इस समय रति रूप प्राप्त करता प्रतीत हुआ, जैसे कि श्रृंगार जो अब तक आकाश से जुड़ा हुआ था, अब वह ठोस धरती से जुड़ गया है।

इन पंक्तियों में निराला जी ने श्रृंगार और सौंदर्य के कई चाक्षुष बिम्ब प्रस्तुत किए हैं। उनकी कल्पना है कि प्रिया पत्नी मनोहरा के प्रति जो श्रृंगार उनके मन में जाग्रत हुआ था, वही रति रूप में पुत्री सरोज में सम्मूर्त हो उठा है। यह सौंदर्यांकन निःसंदेह उच्च स्तर का है। इसमें छायावृत्ति अपनी परसकाष्ठा पर पहुँची दिखायी देती है। श्रृंगार और वात्सल्य, सम्मोहन और अनासक्ति, प्रिया और पुत्री, इन सबका सुंदर समाहार इन पंक्तियों में दृष्टिगत होता है। काव्यकला की दृष्टि से ये पंक्तियाँ उत्कृष्ट कोटि की हैं।

2.6 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

निराला द्वारा रचित सरोज स्मृति एक शोक गीत है। इसमें कवि की अन्तर्व्यथा चित्रित हुई है। यह व्यथा जो पुत्री की मृत्यु के कारण अद्भुत हुई है। इसमें सरोज के बाल्यकाल से लेकर उसके विवाह और मृत्यु तक की कथा वर्णित है। यह कविता कथात्मक शैली में लिखी गई है। निराला जी ने सरोज के जीवन की जो व्यथा–कथा कही है, वह अन्यतम है। सरोज स्मृति में निराला का व्यक्तित्व और उनके जीवन की अधिकांश पीड़ा की मार्मिक व्यंजना हुई है।

2.7 अपनी प्रगति जाँचिए

1. सरोज स्मृति कविता की वस्तुशिल्पगत समीक्षा कीजिए।
2. सरोज स्मृति कविता की विशेषताएँ लिखिए।
3. सरोज स्मृति में विडम्बनापूर्ण स्थितियों का चित्रण हुआ है, समझाइए।

2.8 नियत कार्य/गतिविधियाँ

सरोज स्मृति कविता को कई बार पढ़ें तथा विभिन्न विद्वानों, समीक्षकों के मतों का अध्ययन करें, साथ ही पाठ्य सामग्री के सहारे उनके संदर्भों एवं गूढार्थों को समझने का प्रयास करें।

2.9 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

इकाई को पढ़ने के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं। उन बिन्दुओं को नीचे अंकित करें।

2.9.1 चर्चा के लिए बिन्दु

2.9.2 स्प टीकरण के लिए बिन्दु

2.10 संदर्भ अतिरिक्त पठन सामग्री

1. क्रान्तिकारी निराला– डॉ. बच्चन सिंह
2. निराला की साहित्य साधना (3 खंड) – डॉ. रामविलास शर्मा

3. निराला समग्र – डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

4. निराला काव्य का अध्ययन– डॉ. भगीरथ मिश्र

5. राम की शान्तिपूजा, कुकुरमुत्ता, भाष्य–समीक्षा– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

6. निराला के काव्य में बिम्व और प्रतीक– डॉ. वीरव्रत शर्मा

7. निराला की काव्यभाषा – डॉ. शिवशंकर सिंह

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 2.3
2. देखिए 2.4
3. देखिए 2.4
4. देखिए 4.4

इकाई–तीन

निराला और कुकुरमुत्ता : आलोचना और व्याख्या

संरचना–

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 कुकुरमुत्ता : पूर्वाभास

3.4 कुकुरमुत्ता : समीक्षा का विकास–विश्लेषण

3.5 कुकुरमुत्ता का वस्तुशिल्पगत विवेचन

3.6 कुकुरमुत्ता का वैशिष्ट्य

3.7 कुकुरमुत्त की व्याख्याएँ

3.8 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

3.9 अपनी प्रगति जाँचिए

3.10 नियत कार्य / गतिविधियाँ

3.11 चर्चा तथा स्पष्टीकरण के बिन्दु

3.11.1 चर्चा के लिए बिन्दु

3.11.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

3.12 संदर्भ / अतिरिक्त पठन सामग्री

3.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.1 प्रस्तावना

महाकवि निराला के परवर्ती काव्य में, उनकी लम्बी कविता 'कुकुरमुत्ता' का विशेष महत्त्व है। इस कविता के द्वारा निराला जी ने नयी भाव–भाषा का प्रवर्त्तन किया है। इसके पूर्व 'राम की शक्ति पूजा' में उन्होंने विराट कथानक और उदात चरित्र की परिकल्पना की थी, जबकि इस कविता में दैनिक जीवन की एक अति सामान्य घटना और कुकुरमुत्ता जैसे नितान्त उपेक्षित उद्‌भिज को अपना नायक बनाया है।

इस कविता में एक ओर कथात्मकता दिखायी देती है जो दूसरी ओर अद्‌भुत नाटकीयला भी। इसमें कुकुरमुत्ता और गुलाब का संवाद रखा गया है। ये दोनौं प्रतीक पात्र हैं। कुकुरमुत्ता है सर्वहारा, किन्तु देशी (नेटिव) प्रतिभा का प्रतीक और गुलाब है अभिजातवर्ग, मुख्यतः विदेशी बौद्धिक फैशन का प्रतीक। निराला ने अपनी समकालीन कविता पर पड़ रहे इलियट पंथी रचनाकारों के प्रभाव पर यहाँ जमकर व्यंग्य–प्रहार किया है। इलियट

के "वेस्ट लैण्ड" के प्रयोगों को सराहने वाले बाबू वर्ग को ललकारता हुआ, कुकुरमुत्ता प्रचण्ड आत्म विश्वास के साथ अपनी विशेषताएँ बताता है। प्रकारान्तर से यह निराला की अपनी गर्वोक्ति है। वे आत्म मूल्यांकन करते हुए यहाँ दावे के साथ कहते हैं – "आप अपने से उगा मैं "और" तू नहीं मैं ही बड़ा।" कविता के दूसरे खण्ड में उसका दावा सिद्ध भी हो जाता है, जब नवाब यह हुक्म देते हैं, कि गुलाब को उखाड़ कर अब कुकुरमुत्ता लगाया जाये, ताकि उसके कबाव को स्वाद लिया जा सके। यह लघुमानव की विजय का उद्घोष है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य है, इस कविता के भावपक्ष तथा कला पक्ष का विवेचन करते हुए, इसके वस्तु–शिल्प – वैशिष्ट्य का विश्लेषण करना। इस अध्ययन के सहारे कुकुरमुत्ता के सम्बन्ध में अपेक्षित जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

3.3 कुकुरमुत्ता : पूर्वाभास

'कुकुरमुत्ता' निराला जी की लम्बी आख्यानक कविता है। इसका प्रकाशन सन् 1942 ई0 में हुआ था। 'कुकुरमुत्ता' के पहले संस्करण में 'कुकुरमुत्ता' के अलावा सात अन्य कविताएँ भी शामिल थी– गर्म पकौड़ी', 'प्रेम–संगीत', 'रानी और कानी', 'खरोहरा', 'मास्को डायलाग्स', 'स्फटिक–शिला' और 'खेल'। परन्तु बाद में 'कुकुरमुत्ता' की इन स्फुट कविताओं को 'नये पत्ते' में रखकर 1948 में इसे स्वतंत्र रचना का रूप निराला ने दे दिया।

वस्तुतः समाज के पीड़ित और शोषित वर्ग के प्रति निराला की सहानुभूति सदैव मुखर रही है। सामाजिक विषमताओं के चित्रण में उनकी कला ' कुकुरमुत्ता' से एक नया मोड़ लेती है। इसमें निराला जी ने व्यंग्य–वृत्ति को अपनाया है। इसीलिए 'प्रगति' और 'प्रयोग' की दिशा में यह रचना मील का पत्थर सिद्ध हुई हैं और इसीलिए यह कृति साहित्य–जगत में बहुत समादृत हुई है।

इसी लम्बी कविता के पहले भाग में मेहनतकश निर्माणकर्ताओं का मूर्त रूप हैं। वे सच्चे अर्थों में इस ध रती के स्वामी हैं। वहीं दूसरी ओर परजीवी 'गुलाब है, जो केवल धनिकों को आनन्द प्रदान करता है एवं जो आभिजात्य का प्रतीक है।

इसी लम्बी कविता का दूसरा भाग पहले का पूरक है। वस्तुतः इस कविता का मुख्य भाव है मेहनतकश वर्ग की सराहना। इस तरह निराला जी पाठक वर्ग को यह सोंचने पर विवश कर देते हैं कि सच्चा जननायक ध नी या रईस नहीं, बल्कि साधारण मेहनतकश ही हैं।

निराला की इस सर्वथा अनूठी रचना ' कुकुरमुत्ता' पर वैचारिक दिशा के बारे में मतैक्य नहीं है। कोई मानता है कि इस लम्बी कविता में ' कुकुरमुत्ता' और 'गुलाब' क्रमशः सर्वहारा वर्ग तथा पूँजीवादी वर्ग के प्रतीक है। कोई कहता है कि 'कुकुरमुत्ता' का लम्बा–चौड़ा भाषण, जिसमें अनुपात का अभाव है, राजनीतिज्ञों की बाजारू बकवास की याद दिलाता है, जिसके प्रति निराला का सदैव व्यंग्यात्मक रवैया रहा है।

कुछ समीक्षक 'गुलाब' और 'कुकुरमुत्ते' के विवाद में भारतीय संस्कृति और पश्चिमी संस्कृति के बीच टकराव देखते हैं एवं भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता की पुष्टि करते हैं। इस कविता की विस्तृत मीमांसा कई लेखकों ने की है, जिससे अब समस्त विवादों का निभ्रान्त समाधान हो गया है।

समग्रतः यह सिद्ध है कि निराला जी 'कुकुरमुत्ता' के माध्यम के आधुनिक समाज में व्याप्त अन्तर्विरोधों को अभिव्यक्ति देना चाहते थे। 'कुकुरमुत्ता' को पुनर्पाठ प्रस्तुत करना आवश्यक है।

3.4 कुकुरमुत्ता : समीक्षा का विकास–विश्लेषण

इस कृति का उद्देश्य या प्रतिपाद्य क्या है? इस पर समीक्षको के अपने अलग–अलग मत हैं।

विचारणीय यह है कि 'कुकुरमुत्ता' ने अपने निरालेपन के कारण वहक में कुछ ऐसी उपमाएँ दे दी हैं जो हास्यप्रद हैं। यों कुकुरमुत्ता ने आत्म गौरव गान ही किया है, आत्मोपहास नहीं।

इस संदर्भ में 'निराला' नामक ग्रंथ सन् 1946 ई0 में पहलेपहल डॉ0 रामविलास शर्मा ने लिखा कि यह व्यंग्य काव्य है। इसका व्यंग्य जहाँ गुलाब को मारता है, वहीं खुद अपने को भी हास्यास्पद बना देता है। उसका यह मत कि दुनिया से गुलाब हटा दिये जायें और उनके स्थान पर केवल कबाब बनाने के लिए 'कुकुरमुत्ते' रह जायें, इसे उपयोगितावाद का विकृत रूप ही कहा जायेगा।"

इसी बात को बढ़ाते हुए सन् 1954 में डॉ. रामविलास शर्मा पुनः लिखते हैं कि 'कुकुरमुत्ता' सब पर हँसता है, जबकि वह स्वयं हास्यास्पद है। निराला भी उस पर हँसते हैं। 'लेखकों में लंठ जैसे खुशनसीब' कहकर वे उसे चिढ़ाते हैं। कविता के अन्त में उसका कलिया–कबाब बनाकर वे उसकी अंत्येष्टि भी कर देते हैं। कविता की गुलाबी उर्दू 'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' की भाषा की तरह है। वह मानों– 'तुलसीदास' और 'राम की शक्ति–पूजा' की उदात्त शब्दावली पर हँस रही है। शर्मा जी के अनुसार–

'कुकुरमुत्ता' की तर्क योजना जिस वर्ग दृष्टि का परिचय देती है, वह 'प्रोलिटरिएट' की नही, 'लुम्पेन प्रोलिटेरिएट' की वर्ग–दृष्टि है। यह शहर के आवारा टुटपूँजियों का दृष्टिकोण है, जो क्रान्तिकारी संगठन और संघर्ष का रास्ता छोड़कर अराजकतावादी नीति अपनाता है।"

'कुकुरमुत्ता' में डॉ. शर्मा के मतानुसार–

1. निराला ने भाववादी दर्शन और छायावादी धारणाओं पर व्यंग्य किया है।

2. यह निष्कर्ष निकालना भी गलत न होगा कि यहाँ 'कुकुरमुत्ता' के माध्यम से उन्होने अपने वेदान्त दर्शन का भी उपहास किया है।"

मेरे विचार से ये टिप्पणियाँ खण्ड–दृष्टि से की गई हैं। परिणामतः 'कुकुरमुत्ता' कहीं उदात्त और 'सब्लाइम' की प्रवंचना से मुक्ति का प्रमाण बनता है और कहीं पर अराजकतावादी लुम्पेन प्रोलिटेरिएट अथवा कहीं छायावादी धारणाओं और वेदान्त दर्शन का उपहास करता हुआ व्यंग्यबाण दिख जाता है।

स्पष्ट है कि यह कविता शर्मा जी को बहुत नहीं जँची। वस्तुतः वे इसकी रचना प्रक्रिया एवं तत्कालीन निराला की परिस्थिति मनः स्थिति के प्रत्यक्ष द्रष्टा भी नहीं रहे हैं। दूसरे 'कुकुरमुत्ता' के इस व्यंग्य के शिकार उस समय के तथाकथित प्रगतिशील (प्रोग्रेसिव) लेखक भी हुए थे, अतः शर्मा जी पूर्णतः कैसे सहमत होते? निराला जी ने तथाकथित प्रगतिशीलों पर प्रहार करते हुए लिखा था–

1. "जैसे प्रोग्रेसिव के कलम लेते ही,

   रोके नहीं रुकता जोश का पारा।"

2. "भुक्खड़ फालोवर क्वेट।"

ये बातें निश्चय ही तथोक्त प्रगतिशीलों के प्रति व्यंग्यरूप में कही गई हैं, जिसकी पुष्टि डॉ. रामविलास शर्मा को '20 नवम्बर 1936' को इलाहाबाद से निराला द्वारा लिखे गये एक पत्र से होती है। इस पत्र में निराला ने लिखा था–

"यहाँ एक दल ऐसा है, जो उच्च शिक्षित है। शायद सोश्यलिस्ट भी है। इसके कुछ लोग योरोप भी हो आए हैं। स्त्री और पुरुष, हिन्दू और मुसलमान दोनों। इन्होंने प्रोग्रेसिव राईटर्स मीटिंग या एसोसियेशन नाम की संस्था कायम की है। ये उच्च शिक्षित जन कुछ लिखतें भी हैं, इसमें मुझे संशय है। शायद इसीलिए लिखने का एक नया आविष्कार इन्होने किया है, और वह इसमें जोर पकड़ता जा रहा है।" ज्ञातव्य है कि प्रगतिशील लेखक संघ से शर्मा जी का घनिष्ट संबंध था।

सन् 1935–42 ई0 का काल हिन्दी साहित्य में आन्दोलनों का काल रहा है। 1936 ई0 में प्रगतिवाद का आरम्भ हुआ। फ्रायउ जैसे मनोविश्लेषणवादियों तथा टी. एस. इलियट आदि से प्रभावित प्रयोगवादी रचनाओं के प्रचलन का भी समय यही था। इस समय निराला की मानसिकता काफी कुछ उथल पुथल पूर्ण दिखायी देती है।

सन् 1941 में डॉ. शर्मा पुनः लिखते है–

"सन् 1938 में 'सुमित्रानन्दन पंत' और 'नरेन्द्र शर्मा' ने कालाकाँकर से 'रूपाभ' पत्र निकाला। सज्जाद जहीर और इलाहाबाद के अन्य मार्क्सवादी नेता पंत को प्रगतिशील आन्दोलन के नजदीक खींच लाए थे। पंत जी इन दिनों अपनी कविताओं में सिद्ध कर रहे थे कि रूप ही भाव का मूल हैं। इसी दर्शन के अनुरूप उन्होने पत्र का नाम 'रूपाभ' रखा था।.....पंत का प्रगतिशील आन्दोलन के साथ जुड़ जाना भी 'निराला' को पसन्द न था। उनका विचार था कि वेदान्त की भूमि से जनता की जैसी सेवा की जा सकती है, जैसा क्रान्तिकारी साहित्य रचा जा सकता है, वैसा अन्य किसी दर्शन की भूमि से नहीं"।

उसी बीच प्रगतिवादी कविता का मजाक उड़ाते हुए निराला ने ये चार पंक्तियाँ लिखी थी–

"तुम चुरौ दालि महरानी,

हरदी परै ते जरदी आई, नमक परै मुस्कानी

मात–भतार से भेंट भई, तब प्रेम सहित लपट्यानी।"

इन पंक्तियों को अमृतलाल नागर ने 'चकल्लस' में छापा था।

निष्कर्ष यह कि कुछ आलोचकों की दृष्टि में प्रगतिवादी आन्दोलन के प्रति निराला के मन में उपहास, (मजाक) का भाव था। उनकी दृष्टि में वेदान्त की भूमि प्रगतिवाद की अपेक्षा कहीं ज्यादा क्रान्तिकारी थी और जनता की सेवा इसी भूमि से बेहतर ढंग से की जा सकती थी।

चार वर्ष बाद, निराला–काव्य के एक प्रमुख समीक्षक डॉ0 बच्चन सिंह ने 'क्रान्तिकारी कवि निराला' (सन् 1946 ई0) में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये–

"यहाँ गुलाब पूँजीपतियों का प्रतीक है। सर्वहारा के प्रतीक 'कुकुरमुत्ता' से उस की बातचीत रखी गयी है। इसमें यह दिखाया गया है कि साम्यवाद के समर्थक बकवादी हुआ करते हैं। दूसरों को खुली गाली देना उनकी प्रवृत्ति है। 'कुकुरमुत्ता' उगायें नहीं उगता कहकर यहाँ साम्यवादी सिद्धान्तों पर घातक प्रहार किया गया है। गोली और बहार की मित्रता मानववाद पर आधारित है। साम्यवादी विचारधारा के अनुसार दो विरोधी वर्गों में मैत्री नहीं

हो सकती, किन्तु मानववाद के अनुसार मनुष्य–मनुष्य का हृदय–सामीप्य और एक–दूसरे के प्रति बराबरी का व्यवहार, चाहे किसी वर्ग में पैदा क्यों न हो, सम्भव है।"

इलियट की 'ऊजड़ भूमि' की भाँति, उनके अनुसार इसे निराला का एक प्रयोग समझना चाहिए। सन् 1635–40 में हिन्दी में एक ऐसा प्रवाह आया कि लोग कविता और जीवन को मजाक मानने लगे। फलतः कविता का एक नवीन ढंग चल पड़ा।..... हल्की मनोवृत्तियों के साथ लोग व्यंग्यात्मक रचनाओं पर उतर आये थे।

वे आगे लिखते हैं –

1930 के आसपास अंग्रेजी में जो प्रभाववादी रचना का युग चला, उसका प्रभाव भी इस काल की रचनाओं पर पड़ा है। इस समय का कवि जो चाहे लिख सकता था, उसमें सुसमम्बद्धता की कोई आवश्यकता नहीं थी। इस प्रकार की कृतियों को वे अन्तश्चेतना का प्रतिबिम्ब कहते थे। यह उद्‌देश्यहीनता इस कविता पर भी अपना प्रभाव छोड़ गयी है।"

वस्तुतः अनेक आलोचकों की दृष्टि केन्द्रित हुई है 'कुकुरमुत्ता' के प्रतीकार्थ सर्वहारा पर । सर्वहारा के दुःख–दैन्य भरे चित्रण के साथ–साथ इस रचना में साम्यवादी सिद्धान्तों पर हुए प्रहार को देखकर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाल लिया कि इसमें सुसम्बद्धता नहीं है, बल्कि उद्‌देश्य हीनता है, और यह रचना प्रभाववादी या अन्तश्चेतनावादी है। यह विचारणीय है कि 'कुकुरमुत्ता अंग्रेजी प्रभाववादी कविताओं से प्रभावित होकर नहीं, बल्कि उनसे (विशेषतः इलियट के वेस्टलैण्ड से) प्रतिक्रिया प्रेरित होकर लिखी गयी थी। इसमें मार्क्सवादियों को बकवादी ओर इस कविता का मानववादी सिद्ध करने का भी कोई उद्‌देश्य नहीं दिखायी देता।

कई समीक्षकों ने इस कृति को निराला के काव्य का ह्रास माना है। डॉ0 विश्वम्भरनाथ उपाध्याय ने घोषित किया कि इसमें प्रतिक्रिया की नोक–झोंक में कहीं–कहीं अनर्गल बहुत कुछ कहा गया है। न ही व्यंग्य निखरा हुआ है, न उसका कोई स्तर ही है। प्रयोग नवीन अवश्य है, पर अवांछनीय नवीनता, प्राचीनता से हानिकर हो जाती है। ऐसा लगता है, निराला विरोधों के बीच से गुजरकर प्रत्येक वस्तु का उपहास करते हुये अपने प्रति किये गये अत्याचारों का बदला लेना चाहते हैं।

यह मत आज इसलिए स्वीकार्य नहीं हैं कि इससे एक नयी व्यंग्य धारा का विकास हुआ है, ह्रास तो कदापि नहीं।

विशेष बात यह है कि 'कुकुरमुत्ता' में भाषा की चुनौती को बड़े साहस के साथ स्वीकारा गया है। इसमें नयी जन भाषा खोजी गयी है।

यह बहुमान्य है कि 'कुकुरमुत्ता' निराला की एक श्रेष्ठ कविता है, जिसे समीक्षक यथासमय नहीं पहचान पाए।

कुछ समीक्षकों ने समझौता करते हुए कहा कि यदापि 'कुकुरमुत्ता' में निम्न कोटि के अश्लील हास्य के चित्र हैं, फिर भी समय की दृष्टि से 'कुकुरमुत्ता' का अपना महत्व है। कवि ने इसमें नवीन प्रयोग किया है।

यह ज्ञातव्य है कि व्यंग्य, विप्लव, विद्रोह और संघर्ष को व्यक्त करने के लिए निराला ने पहले भी कुछ कविताएँ लिखीं थीं, किन्तु उनमें इतना पैना दंश नहीं है। सुनियोजित विस्तृत प्रबन्धात्मक व्यंग्य के रूप में 'कुकुरमुत्ता' एक विशिष्ट देन है। व्यंग्य प्रहार इसमें चरम बिन्दु तक पहुँच गया है।

यह तर्क कि 'कुकुरमुत्ता' में कवि ने आध्यात्मिक एवं भौतिकवादी उपादानों पर तीव्र प्रहार किया है तथा अद्वैतवाद और पैराशूट दोनों का उपहास करते हुए निराला ने 'कुकुरमुत्ता' को प्रयोग की देहली पर ला खड़ा किया है, प्रमाण पुष्ट नहीं है। सामाजिक व्यंग्य की दृष्टि से 'कुकुरमुत्ता' का स्थान बहुत ऊँचा है। निर्धन बर्ग के जीवन को 'कुकुरमुत्ता' के समान चित्रित करते हुए कवि ने उसे अवश्य हीरो बना डाला है, पर अपने अद्वैतवाद का उपहास उन्होंने नहीं किया है।

कई लोगों ने यह महसूस किया कि जो संगीत माधुरी निरालाजी के छायावादी काव्य में थी, वह अब लगभग विलीन हो चुकी है। कवि ने आज कठोर क्रूर यथार्थ को वरण किया है। स्वप्नों का संसार उसे कभी वांक्षित नहीं था, किन्तु वह अब कुरूप जीवन का आलिंगन करने से भी नहीं हिचकिचाया। निराला का यह नया काव्य 'कुकुरमुत्ता' धरती के अधिक निकट है। वस्तुतः छायावादी सौन्दर्य बोध का 'ऐण्टीक्लाइमेक्स' और कुरूपता का सौन्दर्यशास्त्र इसमें पहली बार प्रकट हुआ है।

इस चिंतन क्रम में कई समीक्षकों ने 'कुकुरमुत्ता' के माध्यम से यथार्थवादी सामाजिक दृष्टि पर प्रकाश डाला है, जिससे प्रगतिशील दृष्टिकोण भी सर्वथा स्पष्ट हो गया है। निरालाजी ने व्यंग्य के माध्यम से जागरण का स्वर फूँकने का जो प्रयत्न किया है, उसे इस दौर में काफी सराहा गया। दूसरे, नवाब के नौकरों की नारकीय बस्ती का जो यथार्थ इसमें प्रस्तुत किया गया है, वह असाधारण है।

यह भी कहा गया कि निराला का दृष्टिकोण प्रगतिशील है। हाँ, वह मार्क्सवादी नहीं है। जनसाधारण का पक्ष उन्होंने सभी जगह मानवतावाद के आधार पर लिया है। वे गुलाब को इसीलिए कोसते हैं कि साधारणों से न्यारा रहने, सबकों गुलाम बनाने, सबका खून चूसने और गैरों की रोटी छीन लेने की प्रवृत्ति गुलाब में विद्यमान है। इसीलिए कवि गुलाब को 'कैपलिलिस्ट' सम्बोधन देता हैं –

इसकी पुष्टि 'नागार्जुन' ने सन् 1863 में की थीं। उनके शब्दों में –

"लाखों की तबाही पर जिस वर्ग के गालों की गुलाबी आभा बरकरार है, उसे विक्षुब्धों का प्रतिनिधि कवि चिकने सम्बोधनों में कैसे पुकारेगा।"

मेरे विचार से कवि का मूल उद्देश्य यह नहीं रहा होगा कि 'कुकुरमुत्ता' हास्यास्पद बन जाये, या कि वह निरर्थक लगे। इसमें डींग हाँकने के पीछे अपने अस्तित्व का आभास दिलाने का ही भाव रहा होगा। लोगों का ध्यान आकृष्ट करने का एक तरीका भी है यह, अन्यथा 'गुलाब' की दृष्टि 'कुकुरमुत्ता' पर कहाँ पड़ती ?

इस प्रकार क्रमशः 'कुकुरमुत्ता' के प्रति हिन्दी समीक्षकों की दृष्टि सकारात्मक होती गयी। आश्चर्य यह कि उसकी प्रतिष्ठा गैर प्रगतिवादी समीक्षकों द्वारा की गयी। निराला की काव्य–यात्रा में यह कविता उस पड़ाव पर स्थित है, जहाँ से पथरीले, ऊबड–बाखड़, किन्तु नवीन रास्ते की शुरुआत होती है। इस रास्ते पर चलता हुआ कवि सामाजिक यथार्थ की ठोकरों से कदम–कदम पर आहत होता है। अतः यह रचना उस मार्ग संकेत के रूप में हैं, जो लोगों को रास्ते से परिचित कराने– उन्हें आगाह करने के लिए मार्ग में प्रतिस्थापित किया गया है। सिद्ध है कि 'कुकुरमुत्ता' सामाजिक यथार्थ का वह केन्द्र बिन्दु है, जिसमें तत्कालीन वर्गीय दृष्टियाँ अपने सही रूप का इजहार करती हैं। यह निराला की परवर्ती काव्य–प्रतिमा की सशक्त सर्जना, उनकी उर्वर भूमि की प्रशस्त प्रेरणा तथा उनके विकासशील व्यक्तित्व की अनुपम प्रदक्षिणा है।

निस्संदेह इस रचना के आधार पर निराला ने सामाजिक आदर्श यथार्थ की स्थापना करनी चाही थी।

यह प्रायः स्वीकारा गया है कि 'कुकुरमुत्ता' प्रगतिवादी प्रयोगवादी विषय–वस्तु यानी नई काव्य–चेतना का परिचायक है। यह उस हिन्दी संस्कृति का बीज है, जो पूँजीवादी साम्राज्यवादी महाजनी, पुरोहिती यानी चौमुखी अन्यायी व्यवस्था का प्रतिरोध करता है। 'कुकुरमुत्ता' निराला के सामाजिक आदर्श का वह केन्द्र बिन्दु है, जिसमें तत्कालीन वर्गीय दृष्टियाँ अपने सही रूप को उजागर करती है।

अब तक निराला सांस्कृतिक उत्थान के प्रतिनिधि मान लिए गए थे। यही कारण है कि 'कुकुरमुत्ता' कविता सांस्कृतिक प्रगति का आदर्श बन गयी हैं, इसलिए कि उसका यह लक्ष्य रहा है कि मानव–संस्कृति अपने पुराने बन्धनों को तोड़कर नये विकास की ओर अग्रसर हो।

इस बात को आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने 'कवि निराला' (सन् 1965) में साहसपूर्वक स्वीकारा। उनके अनुसार –

"कुकुरमुत्ता" का आशय यह है कि न पुराना 'गुलाब', न नया 'कुकुरमुत्ता' ही आधुनिक सांस्कृतिक आदर्श की पूर्ति कर सकते हैं। हमारी वर्तमान संस्कृति 'कुकुरमुत्ता' की भूमिका से उठकर नयी सृष्टि और नया विकास करेगी। तब हम एक समुन्नत संस्कृति ला सकेंगे। नया गुलाब ही पुराने गुलाब का स्थान ले सकता है। नया समाज और उसकी नई संस्कृति ही पुरानी संस्कृति की स्थानापन्न बना सकती है। 'कुकुरमुत्ता' कविता निराधार व्यंग्य नहीं है। वह संस्कृति के सृजन में नये भौतिक तत्वों का संकेत देती है।" इस प्रकार वाजपेयी जी ने 'कुकुरमुत्ता' की रक्षा करते हुए कई तर्क दिये।

फलतः आलोचक यह मानने लगे कि उसके साम्य–स्वप्न मे केवल आर्थिक साम्य नहीं, सार्वत्रिक साम्य है, ताकि सांस्कृतिक विश्व मानव की प्रतिष्ठा हो। न गुलाब की भाँति सम्पन्न और न 'कुकुरमुत्ता' की तरह विपन्न।

वाजपेयी जी ने बहुत पहले आधुनिक साहित्य (1850) के एक निबन्ध में इसे यथार्थ से जोड़ा था। वहाँ वे कहते हैं 'कुकुरमुत्ता' में विनोद की सृष्टि अतिरंजित वर्णनों द्वारा की गई है, किन्तु यत्र–तत्र यथार्थवादी चित्रण की प्रवृति भी दिखाई देती है।" समाज के पीड़ित और शोषित वर्ग के प्रति निराला की सहानुभूति सदैव से रही थी। सामाजिक विषमताओं के चित्रण में उनकी कला 'कुकुरमुत्ता' से एक नया मोड़ लेती है। इसमें उन्होंने व्यंग्य–वृत्ति को अपनाया है।

यह व्यंग्य सर्वलक्षी है। डॉ. धनंजय वर्मा ने 1965 में घोषित किया कि इसके व्यंग्य के शिकार साम्यवादी, अवसरवादी और कुत्सित बुद्धिवादी भी हुए हैं। यों 'कुकुरमुत्ता' निम्नवर्ग का तथा 'गुलाब' उच्चवर्ग का प्रतीक है, किन्तु 'कुकुरमुत्ता' निम्नवर्ग के अतिरिक्त 'साम्यवादी नेताओं' का प्रतीक भी है, जो अपने समर्थन में वेदों से लेकर आज तक की ज्ञान–राशि को अपने चश्में से देखते है।"

इस प्रकार सातवें दशक तक यह मान लिया गया कि यह रचना निराला की सामाजिक चेतना, यथार्थ दृष्टि, प्रगतिशील विचारधारा और व्यंग्यवृत्ति का परिणाम है, जिसमें जीवन के विविध पक्षों पर व्यंग्य किया गया हों। इतना तो निश्चय के साथ कहा जा सकता है कि 'कुकुरमुत्ता' के पीछे कोई साधारण लक्ष्य नहीं रहा है। जितना तीव्र और मर्मभेदी उनका व्यंग्य है, उतनी ही व्यापक उनकी दृष्टि हे। और यह भी कि उनके व्यंग्य–लक्ष्य एक नहीं, अनेकोन्मुखी हैं।

यह भी कहा गया कि तत्कालीन प्रगतिवादी लेखकों में अनावश्यक जोश था। एक दूसरे के प्रति कुत्सा का भाव भर गया था। वे ऊँचे कुलाबे बाँधते थे। अतः उनके प्रति भी यहाँ व्यंग्य किया गया है।" इसी क्रम में निराला एक अध्ययन (1965) में डॉ0 'रामरतन भटनागर' ने 'कुकुरमुत्ता' के बारे में कुछ नए विचार व्यक्त किए। उनके

अनुसार– 'कुकुरमुत्ता' निराला के काव्य में एक नये मोड़ की सूचना है। इसमें वस्तून्मुखी कला का प्रकाश हमें पहली बार मिलता है। 'कुकुरमुत्ता' समतावादी है। उसका व्यंग्य दूर तक जाता है। गुलाब के प्रति उसकी चुनौती में कवि ने वर्गवाद को उभारा है। यद्धपि उसकी सहानुभूति दोनो पक्षों में बँटी है, परन्तु 'कुकुरमुत्ता' की जनशक्ति को उसने पहचान लिया है। दो सांस्कृतिक धरातलों का द्वन्द्व इस रचना में इतना मुखर है कि उसे अनसुना नहीं किया जा सकता। उनके अनुसार शायद सारी हिन्दी कविता में मेहनतकशों के जीवन का, उनके दुःख–दर्द एवं क्षणिक खुशियों का इतना सच्चा चित्र ढूंढ पाना कठिन है, जितना निराला की इस यथार्थवादी कविता में मिलता है।" इस प्रकार डॉ. भटनागर ने साहसपूर्वक इसके ऐतिहासिक महत्व की घोषणा की।

इसी संदर्भ में "महाप्राण निराला (सन् 1968) में गंगाप्रसाद पाण्डेय कहते हैं–

" 'कुकुरमुत्ता' बींसवी सदी का सबसे बड़ा व्यंग्य है। विपन्न और तिरस्कृत मानवता की आवाज है, और है छोटों का आत्मबोध। 'कुकुरमुत्ता' संसार के उपेक्षितों का प्रतीक और दोनों के प्रति निराला का काव्य–दान है। निराला की सामान्यों, साधारणों के प्रति जिस अगाध और अबाध ममता तथा विश्वास का प्रवाह सामने आता है, वही तो 'कुकुरमुत्ता' की आत्मा है।इसकी डाँट–फटकार और चोट–चपेट सामान्य जनों के जागरण का कोलाहल सा है।......'कुकुरमुत्ता' के रूप में कवि ने समाज को स्वर और नया उत्साह दिया है। इस कविता में निराला का समाजवादी दृष्टिकोण बहुत ही मार्मिकता और निर्भीकता से उभर कर सामने आया है।

उनका निष्कर्ष है कि यह व्यंग्य किसी एक व्यक्ति, वर्ग, समाज, राष्ट्र पर ही लागू न होकर जीवन की विविध क्षेत्रीय स्थितियों पर कुठाराघात करता है। निराला ने इसमें सारे विश्व को बाँधने और उसके विकास का पथ खोजने की चेष्टा की है। किन्तु, इस कविता में सन्निहित 'आत्मा' को पाण्डेयजी यथासमय नहीं पहचान पाए।

इसी अवधि में (सन 1868 में) 'कुकुरमुत्ता' के बारे में प्रो0 पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' ने अपनी यह मान्यता प्रकट की कि "निराला जी उन दिनों निश्चय ही प्रगतिवादी विचारधारा के प्रभाव में थे। पूँजीवाद के प्रति उनका आक्रोश बहुत तीव्र था। अतः निश्चय ही 'कुकुरमुत्ता' काव्य–कृति में पूँजीवाद की सहायक संस्कृति, सभ्यता और साहित्य पर भी चोट है। युग स्रष्टा कलाकार के काव्य में मूल स्वर यही है, परिणाम चाहे कोई कुछ भी निकले।"

ज्ञातव्य है कि 'कुकुरमुत्ता' की रचना करते हुए, डॉ. रामविलास शर्मा के अनुसार, निरालाजी साम्यवाद के विरोधी थे और वेदांत के समर्थक थे, इसलिए कमलेश जी का यह निष्कर्ष सही नहीं है।

इसमें सन्देह नहीं कि 'कुकुरमुत्ता' में आज के तथाकथित उच्चवर्ग पर सुन्दर व्यंग्य है। वह स्वयं निम्न वर्ग का प्रतीक है, जबकि गुलाब उच्च वर्ग का प्रतीक है। नवाब के बगीचे में 'कुकुरमुत्ता' सर्वथा उपेक्षित पड़ा हुआ था। गुलाब का ही एक मात्र आधिपत्य था। एक दिन बहार के कहने पर 'कुकुरमुत्ते' का बरबान सुनकर नवाब भी प्रभावित हुए। वे माली को बुलाकर गुलाब की जगह 'कुकुरमुत्ता' लगवाना चाहते हैं। प्रकारान्तर से यह वर्ग प्रति स्थापना का सन्देश है।

'कुकुरमुत्ता' के पूरे वक्तव्य पर विचार करने से यही स्पष्ट होता है कि निराला जी विदेशी साम्यवाद के नहीं, बल्कि वैदांतिक साम्य के पक्षपाती थे। उनका एक कथन है कि–

" किसी से हमारी मैत्री हो, उसका अर्थ यह नहीं कि हम बेजड़ एवं बेजर हैं।"

अस्तु, 'कुकुरमुत्ता' का सम्पूर्ण अध्ययन निराला काव्य–व्यक्तित्व की विराटता के सन्दर्भ में ही किया जाना चाहिए। उससे सिद्ध हो जाएगा कि 'सामान्य की प्रतिष्ठा' की उत्कट लालसा और प्रतिज्ञाबद्धता से निराला एक

सर्वथा नयी काव्य–शैली, नये काव्य–मान और एक अभूतपूर्व कविता शिल्प का उद्घाटन करते हैं। वस्तुतः 'कुकुरमुत्ता' उनके सम्पूर्ण काव्य और चरित्र में विद्यमान रहा है।

इस कविता के शिल्प पर विचार करते हुए डॉ. दूधनाथ सिंह ने 'आत्महंता आस्था' (1972) में स्थापित किया कि 'कुकुरमुत्ता' की रचना काव्य–आभिजात्य से मुक्ति तथा सामान्य की प्रतिष्ठा और उपेक्षित के उन्नयन के लिए हुई।...'कुकुरमुत्ता' में प्रगतिशीलता का आग्रह नहीं है। अपितु 'कुकुरमुत्ता' बेहद सहिष्णु (पैसिव) समाज व्यवस्था के शोषित सामान्य वर्ग का प्रतीक है, जो अपनी परम्परागत महानता, मूल्यवत्ता और निरन्तरता सिद्ध करने में लगा है। 'कुकुरमुत्ता' एक क्रान्तिदर्शी कवि की ही नहीं, अपितु सत्यद्रष्टा कवि की रचना है।

यहाँ यह भी विचारणीय है कि "नए पत्ते" के अतिरिक्त अन्य सभी परवर्ती कविताओं में निराला जी अधि ाकांशतः काव्य–आभिजात्य से जुड़े रहे हैं। वे मन की मौज के अनुसार कभी सरल हो जाते थे, कभी जटिल। आभिजात्य का अर्थ निकालना जन–साधारण के लिए संभव नहीं है। दूसरे, 'कुकुरमुत्ता' सहिष्णु कम है, आक्रामक ज्यादा। दरअस्ल ये कथन अविचारित भावोच्छ्वास जैसे हैं।"

इसी भावना को दृष्टि में रखते हुए, सन् 1973 में डॉ0 रामरतन भटनागर ने पुनः लिखा कि– 'कुकुरमुत्ता' आधुनिक युग की संस्कृति का प्रतीक है। निराला 'कुकुरमुत्ता' में जनवादी संस्कृति के चोंगे उतार रहे हैं। उसके खोखलेपन को उघाड़ रहें हैं।" मेरे विचार से यह कथन भी एकपक्षीय है। वस्तुतः 'कुकुरमुत्ता' जनवादी संस्कृति का पक्षधर है, उसका निन्दक नही। हाँ, वह इलियट पंथी आधुनिकता से कदापि सहमत नही हैं।

इसी क्रम में वे अन्यत्र कुछ और लिखते हैं। वे कहते हैं–

'कुकुरमुत्ता' क्षुद्र है। उसकी उपयोगिता क्षणिक है। वह सनातन सत्य नहीं हो सकता।.......निराला गुलाब के साथ हैं, 'कुकुरमुत्ता' के साथ नहीं।" यह कथन पूर्णतः अस्वीकार्य है। तथ्य यह है कि निरालाजी पूरी तरह 'कुकुरमुत्ता' के साथ है।

इस चिन्तन को बढ़ाते हुए 1973 में प्रकाशित 'निराला काव्य का अध्ययन' में डॉ0 भगीरथ मिश्र कहते हैं कि 'कुकुरमुत्ता' का व्यंग्य सिर्फ राजकीय व्यंग्य नहीं। वह सर्वस्पर्शी है। साहित्य और समाज में उभरने वाले उन सभी नये तथ्यों, वादों और प्रवृत्तियों पर निराला जी ने ताने कसे हैं, जो तत्कालीन साहित्य और समाज में धूम मचा रहे थे। जिनमें तथ्य कम और आडम्बर अधिक था। सत्य कम और प्रचार अधिक था।" वस्तुतः यह पाखण्ड प्रतिषेध ा पूर्ण काव्य है। मिश्र जी ने गुलाब तथा 'कुकुरमुत्ता' दोनों का मध्यमान निकालते हुए सही निष्कर्ष निकाला है। वह यह कि विलासिता में पला गुलाब और संस्कृतिहीन 'कुकुरमुत्ता' दोनों में से कोई भी मानवता की सामान्य संस्कृति का प्रतीक नहीं है। ऐसी दशा में दोनों ही निराला जी के व्यंग्य के पात्र हो जाते हैं। तथ्य यही हैं। निराला इसीलिए इन दोनों अतियों पर व्यंग्य प्रहार करते हैं।

नई समीक्षा में 'डॉ0इन्द्रनाथ मदान' ने 1975 में 'कुकुरमुत्ता' के सन्दर्भ में अपनी विचारधारा को भरसक काफी विकसित किया। अपने 'आधुनिकता और कुकुरमुत्ता' शीर्षक लेख में उन्होंने कई मौलिक स्थापनाएँ की हैं, जैसे आधुनिकता की दृष्टि से हिन्दी कविता की शुरुआत अगर 'कुकुरमुत्ता' से की जाये तो आज यह असंगत नहीं जान पड़ता। ..... इसमें छायावादी बोध का अस्वीकार था।

डॉ0 मदान यह कहना चाहते हैं कि 'कुकुरमुत्ता' तक पहुँचते–पहुँचते निराला छायावाद की सीमा से बाहर आ आते हैं। इस बीच जीवन और जगत को उन्होंने अच्छी तरह देख लिया था। इसीलिए यह रचना 'नये हिन्दी' 'जन काव्य' का उद्घोष बनकर सामने आई है। इसमें एक छोटी से प्रतीक कथा का विधान है, जिसमें समाज के

विविध पक्षों पर व्यंग्य किया गया है, किन्तु उनका यह निष्कर्ष सही नहीं है कि 'कुकुरमुत्ता' का आभिजात्य विरोध
ी तेवर एक नकारात्मक अंदाज को ही उभार पाया है। निराला के अधिकतर वक्तव्य विनोद प्रेरित हैं, न कि नकारवादी चिन्तन से। यह कविता काव्यबोध के बदलाव को रेखांकित करती है। इसे हिन्दी की प्रथम 'एन्ट्री–पोएट्री' भी कहा जा सकता है।

कुल मिलाकर ऐसा प्रतीत होता है कि इसके सृजन के मूल में जन कल्याण की भावना भी विद्यमान रही है।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद का प्रारम्भ 'कुकुरमुत्ता' से मानते हुए, साथ ही इसके व्यंग्य–प्रध
ान प्रयोग को स्वीकारते हुए अधिकतर विद्वानों ने निराला की सामाजिक यथार्थ पूर्ण दृष्टि को रेखांकित किया है। प्रायः सबने माना है कि छन्द और भाव भाषा की क्रांति के बाद यह दूसरी शिल्पगत क्रान्ति निराला ने की है।

आज यह सर्व स्वीकार्य है कि 'कुकुरमुत्ता' एक विशाल जनसमुदाय का प्रतिनिधि एवं प्रतीक हैं। उसकी जिजीविषा महान है। उसे अपने वजूद पर गर्व है। वह विपरीत परिस्थितियों में भी अपना सिर ऊँचा उठाये हुए है। 'कुकुरमुत्ता' धरती–पुत्र हैं, स्वयंभू है और अपनी तुच्छता में भी महान है। उसकी संकल्प–शक्ति अद्भुत है। निराला ने यहाँ इसी विशाल जन–समुदाय की इच्छा –आकाँक्षा का विजय–घोष मुखरित किया है।

रहा इसका शिल्प। प्रायः सबने माना है कि 'कुकुरमुत्ता' का रचना–विधान बेजोड़ है। एक नवाब की बाड़ी में अनगिनत फूलों के बीच गन्दे में उगे हुए 'कुकुरमुत्ता' पर कवि की नजर पड़ती है और उसके माध्यम से वह साध
ारणों और उपेक्षितों को उनकी पूरी सच्चाई के साथ इस तरह अंकित करता हैं कि वह कविता दलित चेतना का घोषणा पत्र बन जाती है। यह कविता अपने समय से बहुत आगे की चीज बन जाती है।

इसके मूल मंतव्य को पकड़ने के लिए धैर्य की जरूरत हे। सरसरी दृष्टि से देखने पर 'कुकुरमुत्ता' की लम्बी–चौड़ी डींग निरर्थकता की प्रतीति कराती है, जबकि इसकी व्यंजनाएँ बड़ी गहरी हैं। विचार के स्तर पर वह कवित अद्वैत की दृष्टि से जुड़ जाती है। दूसरी तरफ निराला यह भी ध्वनित करते हैं कि जन सामान्य कितना मुखर होता है, क्योंकि वह आत्म–प्रशंसा का इच्छुक होता है। कारण, वह हीनताबोध प्रेरित होता है। 'कुकुरमुत्ता' द्वारा किया गया अपना अतिरंजित महत्वांकन, प्रकारान्तर से उसका बड़बोलापन भी है और एक वर्ग विशेष का समाज वैज्ञानिक सत्य भी।

निस्संदेह एक युग–द्रष्टा कवि की भाँति निराला ने इस कविता में जन–साधारण की शक्ति को पूरे विस्तार में प्रस्तुत किया है।

यह भी विचारणीय है कि इस कविता के दो भाग हैं। दोनों भागों में कवि 'कुकुरमुत्ता' के माध्यम से सर्वहारा वर्ग की सार्थकता एवं उपयोगिता सिद्ध करना चाहता है। 'कुकुरमुत्ता' अपनी सर्वत्र व्याप्ति की घोषणा करता है। वह भूत, वर्तमान एवं भविष्य की उपयोगिता बताते हुए राजनीति, समाजनीति, नये साहित्य प्रचलन, विशेषतः अंग्रेजी फैशन पर व्यंग्य करता है। निश्चय ही इसकी पृष्ठभूमि में बौद्धिक चोचलों की गहरी प्रतिक्रिया भी रही है। समीक्षक घर के जोगियों को जोगड़ा सिद्ध करने और अंग्रेजी प्रयोगों की चटखारी लगाने में मशगूल थे। इससे क्षुब्ध होकर निराला ने यह रचना की।

'कुकुरमुत्ता' की रचना का मूलोद्देश्य रहा है नया भाव, नयी भाषा तथा काव्य कला का आधुनिकीकरण। निराला जी ने प्रकट रूप में युग–प्रवर्तन की बात भले न कहीं हो, किन्तु प्रकारांतर से तो कह ही दी है।

इसकी कथा–रचना ग्राम्य–कथा जैसी है और अपने भाव, भाषा–संस्कार से अत्यंत सहज है। इस कविता की महत्ता आज इसीलिए विशेष है कि इसने हिन्दी–काव्य में नई प्रयोगवादी काव्य–संरचना की भूमिका प्रस्तुत की है। इसकी रचना–प्रक्रिया में विदेशी आधुनिकता का प्रत्याख्यान है। उसके पीछे हिन्दी–जाति का स्वाभिमान मुखरित हुआ है। यहाँ स्वयं निराला का आत्मदर्प बोल उठा है और व्यक्त हुआ है गरीब का पक्ष, जिसकी इलियट पंथी बाबू लोग प्रायः उपेक्षा करते रहते हैं।

यहाँ विसंगतियों के प्रतिरोध की भावना कवि मन में प्रबल से प्रबलतम हो गई है। समाज के पीड़ित उपेक्षित एवं शोषित वर्ग के प्रति कवि मन में गहरी सहानुभूति पैदा हो गई है। अस्तु, कवि की विचारधारा जनजन के साहित्य की ओर उन्मुख हो गयी है। अब छायावादी श्रृंगारिकता एवं आध्यात्मिकता की दीप्ति, नए कठोर यथार्थवाद के सम्मुख धुँधली पड़ गई है और निराला का मन पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति विद्रोह से भर उठा है। व्यंग्य ही उसका प्रभावी अस्त्र है।

यह विचारणीय है कि 'कुकुरमुत्ता' के उपमानों में न सर्वत्र रूप–साम्य है, न धर्म–साम्य। यहाँ साम्य नहीं, वाचालता से उत्पन्न आत्महीनता की भावना अभिव्यक्त हुई है। 'कुकुरमुत्ता' को ब्रह्मा की भाँति सर्वव्यापी बताना पारंपरिक तत्व –चिन्तन की पैरोड़ी जैसा लगता है। 'कुकुरमुत्ता' के माध्यम से कवि ने जन–सामान्य की चिरन्तनता, सर्वव्यापकता और उपयोगिता के प्रति जो उद्‌गार व्यक्त किए हैं वे श्रीमद् भगवद्–गीता में वर्णित ईश्वर की सर्वव्यापी विराट विभूति के समान होते हुए भी असंगत हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 'कुकुरमुत्ता' कविता की आलोचना की एक लम्बी परम्परा रही है। कभी 'कुकुरमुत्ता' काव्यकृति की पहचान एक व्यंगय–काव्य के रूप में हुई तो कभी विद्रूप रूप में। किसी ने इसे निराला के जीवन की विसंगतियों से जोड़ा। किसी ने इसमें वर्ग–संघर्ष की चेतना देखी। किसी ने ऐतिहासिक एवं राजनीतिक स्थिति का आंकलन किया। कभी 'कुकुरमुत्ता' काव्य–कृति को संस्कृति एवं मानवता से सजाया गया तो कभी शोषक प्रवृत्ति द्वारा काव्य रूढ़ियों पर प्रहार किया गया। कभी 'कुकुरमुत्ता' को खुद हास्यास्पद बताया गया तो कभी उसे बैठे ठाले की छेड़खानी समझा गया।

वस्तुतः सन् 1942 में रचित 'कुकुरमुत्ता' एक नया प्रस्थान है। यह व्यंग्य–प्रधान लम्बी कविता है, जिसने ऐतिहासिक दृष्टि से हिन्दी–काव्य को एक नयी दिशा दी। दीनहीन जनता का जीवन अभी तक काव्य का विषय नहीं बना था। 'कुकुरमुत्ता' में हिन्दी जाति प्रथम बार पूरी तरह से प्रतिबिम्बित हुई है। कवि ने इसमें अनेक सामाजिक समस्याओं को सुलझाने एवं उनके लिए सही सरणि खोजने का प्रयास किया है। समग्रतः कहा जा सकता है कि आलोच्य कविता का कथाधार हैं कवि की सामाजिक–चेतना, यथार्थ–दृष्टि एवं प्रगतिशील चिन्तनधारा । उसमें नयी चेतना है, जनजीवन के यथार्थ के प्रति पूरी जागरूकता है, जो देश के भावी लोकतंत्र की संवाहिका है। टूटते हुए सामन्तवाद की झलक इसमें अनेक स्थानों पर दिखाई देती है। यह झलक हर क्षेत्र में दिखायी गयी है। संगीत, कला, नृत्य, रहन–सहन, भोजन, पोशाक आदि सभी क्षेत्रों में इस नए लोकमत का प्राधान्य चित्रित किया गया है।

इस कविता में 'गुलाब तथा 'कुकुरमुत्ता' दोनों की संस्कृति के भी पक्षधर बनकर निराला यही स्थापित करते हैं कि दोनों वर्गों में सामंजस्य जरूरी है। जाहिर है कि निराला जातीय आभिजात्य के नितांत विरुद्ध न थे, किन्तु लघु मानवों के समर्थक थे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि निराला की यह कविता समीक्षकों के बीच जिस रूप में चर्चित रही हैं, उसका अनुपात निकालकर ही इसकी पूरी परख–पहचान सम्भव तथा समीचीन होगी।

3.5 'कुकुरमुत्ता' का वस्तु शिल्पगत विवेचन

निराला रचित 'कुकुरमुत्ता' एक विशिष्ट प्रयोग है। लगभग सात दशक पूर्व किया गया यह प्रयोग उन दिनों निश्चय ही बहुत क्रान्तिकारी रहा होगा। इसने दुहरी क्रान्ति की है। एक विचारधारा के स्तर पर, दूसरी,शिल्प के स्तर पर। वैचारिक स्तर पर निराला का प्रतिपाद्य यह है कि 'कुकुरमुत्ता' जनसामान्य का प्रतीक है और कुछ गुणग्राही लोग ही उसका महत्व समझते हैं। यों, वह सबसे उपेक्षित है। वर्तमान पदार्थवादी व्यवस्था गुलाब (कुलीनतन्त्र) को महत्व देती है। बेचारे कुकुरमुत्ते को किसी का संरक्षण प्राप्त नहीं है, किन्तु उसे अपने अस्तित्व का बोध अवश्य है। उसी आत्मबोध के सहारे वह एक दिन मारे ऐंठ के, गुलाब की कदर्थना कर बैठता है और बरबस आत्मप्रतिष्ठा करता है। प्रथम खण्ड में कुकुरमुत्ता का इसी आशय का एक दीर्घ वक्तव्य प्रस्तुत किया गया है, जिसमें कुकुरमुत्ता अपनी सर्वव्यापकता सर्वशक्तिमत्ता का दावा करता है। दूसरे खण्ड में कुकुरमुत्ते का मूल्य और महत्व समझने वाली बंगालिन मालिन जब उसका कलिया कबाब बनाकर खाती खिलाती है, तो नवाबजादी नवाब और बाँदी यानी सभी कुकुरमुत्ते से इतने अभिभूत हो जाते हैं कि गुलाब की जगह नवाब कुकुरमुत्ता लगाने का निश्चय कर लेते हैं, लेकिन तभी माली यह कहकर घटना का सहसा पटाक्षेप कर देता है कि कुकुरमुत्ता उगाये नहीं उगता। "अर्थात् जिसे लोग निर्मूल्य समझ बैठे हैं वह अमूल्य है, या सर्वथा दिव्य वस्तु है। नाम से उपेक्षित उपहासस्पद, किन्तु गुणों में अतुलनीय!

इस कविता के प्रतीकार्थों को लेकर समय समय पर कई विवाद उठे हैं, जैसे–

1. कुकुरमुत्ता सर्वहारा तथा गुलाब कैपटलिस्ट वर्ग का प्रतीक हैं। निराला जी ने यहाँ सर्वहारा की दिग्विजय घोषित की है।

2. कवि ने कुकुरमुत्ता का कलिया कवाब बनाकर प्रगतिवादी दर्शन की अत्येष्टि कर दी है।

3. कवि ने इसमें सर्वहारा तथा पूँजीवाद दोनों का मजाक उड़ाया है।

4. 'लेखकों में लंठ जैसे खुशनसीब' कहकर स्वयं अपना भी उपहास किया है।

5. कुछ लेखकों के अनुसार यह कवि की विकृत (विक्षेपपूर्ण) मानसिकता की उपज है या यह मात्र नयापन दिखाने का एक कला करतब है। यानी गंभीर सृजन नहीं है ।

मेरे विचार से यह हिन्दी नवकाव्य का महत्वपूर्ण प्रस्थान है और सर्वथा सोद्देश्य रचना है। यहाँ कुकुरमुत्ता सर्वहारा का नहीं, बल्कि निराला जैसी अनमोल "नेटिव" प्रतिभा का प्रतीक है, जिसे बिलायती मनोवृत्ति या तत्कालीन पाश्चात्य कलात्मक चकाचौंध से दिग्भ्रमित शहरी बाबू वर्ग यथासमय नहीं पहचान पाया था। छायावाद के अन्तिम चरण (1935–40) के आस पास कुछ "विलायत रिर्टन बुद्धिजीवी हिन्दी में "मास्को डायलाग्स की चर्चा कर रहे थे। वे 'प्रगतिशील लेखक संघ' चला रहे थे। अधिकतर समीक्षक अंग्रेजी कवि इलियट की कविता 'वेस्ट लैण्ड' जैसी रचनाओं की बलैया ले रहे थे और अपने ही इर्द–गिर्द के कवि, लेखकों, विपन्नता में जीवन यापन करने वाले किन्तु युगप्रवर्तक देशी (हिन्दी) रचनाकारों की उपेक्षा कर रहे थे । निराला ने यह दंश झेला था। वे साहित्यिक राजनीति से पीड़ित थे। इन परिस्थितियों पर उन्होंने बहुशः लिखा है –

'बाहर मैं कर दिया गया हूँ।'

'ब्राह्मण समाज में ज्यों अछूत।'

'मैं रहा आज ज्यों पार्श्व छवि।'

'मैं अलक्षित हूँ, यहीं कवि कह गया है"

'मैं पढ़ा जा चुका पत्र–न्यस्त'', आदि।

उपर्युक्त आत्मकथ्यों से स्पष्ट है कि तत्कालीन साहित्यिक वातावरण से बहिष्कृत किये जाने पर निराला का आत्म–दर्प ही प्रकारान्तर से कुकुरमुत्ता के स्वरों में प्रस्फुटित हुआ है। उन्होंने पूरे बैसवारी तेवर के साथ गुलाब के बहाने अभिजात समाज और नए साहित्य के तथाकथित सूत्रधारों की अहमन्यता का उद्घोष किया है। कलिया कबाब बनाने का तात्पर्य इस विचारधारा की हँसी उड़ाना, उसकी मृत्यु–घोषणा करना या आत्म–उपहास करना कदापि नहीं है। कवि ने इसके बहाने अपनी उपयोगिता एवं सार्थकता सिद्ध की है। उसने यह स्थापित किया है कि अपनी भाषा का जो रसास्वाद के "वेस्ट–लैण्ड" में नहीं मिल सकता है। यह नगरीय आभिजात्य और सुरुचि सम्पन्न सौन्दर्यबोध के प्रतिनिधि पंत जैसे समानधर्मा कवियों का प्रतिरूप भी है। यह ज्ञातव्य है कि प्रगतिपंथियों ने चौथे दशक में कवि पंत का आहरण कर लिया था। फलतः वे 'रूपाभ' का सम्पादन करते हुए नक्षत्र (कालाकाँकर) में रहते हुए 'ग्राम्या' रचते हुए मार्क्सलेनिन आदि विदेशी विचारकों का स्तवन करते हुए प्रगतिशील हो गये थे। निराला को अपने उस संगी साथी की यह अवसरवादी फैशनपरस्ती रास नहीं आयी। पंत की तुलना में की गयी इस आत्म अवमानना को वे आगे झेल नहीं पाये। उन्होंने 'कुकुरमुत्ता' का समर्पण कालाकाँकर नरेश श्री सुरेश सिंह को किया और पंत की स्पर्धा में बहाने बहाने ही अपने सर्वव्यापकता का बढ़–चढ़कर उद्घोष किया। इस प्रसंग में उन्होंने 'पहाड़ी' शब्द का प्रयोग किया है–"पहाड़ी से उठा सर ऐंठकर बोला कुकुरमुत्ता।" ज्ञातव्य है कि इस कविता में कुकुरमुत्ता गुलाबबाड़ी में उगा है, इसलिए पहाड़ी शब्द पंत जी के लिए प्रयुक्त होता दिखता है। कवि ने उन्हे "गुलाब से तथा स्वयं को कुकुरमुत्ते से उपमित किया है। 'पहाड़ी' शब्द यहाँ श्लिष्ट है। बीच–बीच में, अपने निरालेपन के कारण, बहक में आकर, कवि ने कुछ अतिरिक्त, अनावश्यक ऐसी उपमायें भी इसमें डाल दीं, जिससे कविता में हल्का फुल्का हास्य विनोद ज्यादा भर गया है। यों समूची कविता कवि की अपनी सर्वांगीणता का मुखर घोषणा पत्र है। यथा–"लेखकों में लंठ।" ज्ञातव्य है कि निराला को अपने देहातीपन और दबंग व्यक्तित्व पर गर्व था। वे यहाँ पंत को धमकाते हुए कहते हैं कि काम मुझसे ही सधेगा । मैं चाहूँ पार लगा दूँ, चाहू मझधार में डुबो दूँ। प्रकारान्तर से पंत को कोसते हुए वे कहते हैं कि तू शाहों, राजाओं, अमीरों का प्रिय है, जनता से दूर है, बहुत मुदृभाषी है। (जुबां पर लब्ज प्यारा) ख्वाब में डूबा (स्वननदर्शी) है और तनमन वचन से जनखा (स्त्रैण) है। उल्लेखनीय है कि ये सारे लक्षण पंत जी पर घटित होते हैं।

सिद्ध है कि यह कविता प्रगतिवादी और पूँजीवादी संघर्ष की न होकर या "भीड़ में फेंका हुआ ठेला" न होकर एक सुविचारित, आत्मबोध प्रेरित कविता है। "कुकुरमुत्ता उगाये नहीं उगता" वाक्य द्वारा कवि यह नहीं कहना चाहता है कि समाजवाद यहाँ लाया ही नहीं जा कसता । वह जोर देकर यह कहना चाहता है कि कुकुरमुत्ता सहज उत्पाद है। कुकुरमुत्ते की तरह निराला का व्यक्तित्व भी स्वयंम्भू है, यानि निसर्ग प्रदत्त या स्व निर्मित है। गांधीजी को उत्तर देते हुये निराला ने कहा था कि मुझे हिदी जगत में भलीभाँति पहचाना नहीं जा सका है। अतः उन्हें विरोध के रास्ते चलना पड़ा है। हिन्दी पुरोधाओं का रूढ़िग्रस्त समाज उनका अवमूल्यन करता रहा है। उनकी दर्पोक्ति है" दिया है मैंने जगत को फूलफल किया है अपनी प्रभा से चकित चल।" एक स्थल पर वे सगर्व कहते हैं–" उलट दिया अर्थागम बनकर तूफान ।" उनकी यही निराली प्रगल्मता कुकुरमुत्तों के शब्दों द्वारा व्यक्त हुयी है। निराला अपने कर्तृत्व के प्रति आश्वस्त हैं और कहते हैं –

'मुझे किसी की आलोचना से आगे आने की अपेक्षा नहीं रही।'

'मैं खुद तमाम मुश्किलों को झेलता हुआ, अड़चनों को पार करता हुआ सामने आया हूँ ।'

यों उन्हें यह व्यथा वेदना बराकर सालती रही है कि 'लिखते हुए जितना श्रम किया, उसका प्रतिफल हिन्दी जगत से नहीं मिल पाया है।' निराला जी ने विभिन्न सन्दर्भो में कई बार लिखा है कि मेरी चीजों की आम जनता में कद्र नहीं हुयी है। वे गर्व के साथ कहते हैं कि मैं खड़ी बोली का बाल्मीकि नहीं, पर " भयो सिंद्ध करि उलका जापू" अगर किसी पर खप सकता है तो हिन्दी के इतिहास में मात्र मुझ पर।"

इन आत्मकथ्यों से प्रकट है कि निराला 'कुकुरमुत्ता' के रचनाकाल में गुलाब सरीखे कोमलकांत एवं संभ्रान्त, इलिएट पंथी रचनाकारों की विदेशी मानसिकता से क्षुब्ध थे और अपनी प्रयोगधर्मिता की उपेक्षा से आहत भी थे। पन्त –महादेवी की तरह न उन्होंने काव्य कृतियों की लम्बी भूमिकाएँ लिखीं और न सुनियोजित चर्चायें करायीं। जब मुक्त छन्द के प्रवर्तन का श्रेय उनसे छीना जाने लगा तो उन्हें 'पंत जी और उनका पल्लव' नामक लेख लिखना पड़ा। जब "भावों की भिड़न्त तथा साहित्यिक सन्निपात के बहाने उन पर भावापहरण, अस्पष्टता एवं क्लिष्टता का सुनियोजित आरोप किया गया तो स्पष्टीकरण हेतु निराला ने 'साहित्य का फूल अपने ही वृन्त पर' एवं 'मेरे गीत और कला' नामक कुछ निबंध लिखे। उसी मनोभाव और उसी दौर की कविता है – कुकुरमुत्ता, जिसमें उन्होंने दो दावे किये हैं –

1. आप अपने से उगा मैं,

2. तू नहीं, मैं ही बड़ा

रचनातंत्र के स्तर पर यह कविता नए सौन्दर्यबोध, नयी काव्यभाषा और नयी शिल्प विधि की संवाहिका है। मेहरुन्निसा से नेहरू तक को सम्मोहित करने वाला गुलाब सौन्दर्य, सौरभ, सौकुमार्य का प्रतीक रहा है। उसकी तुलना में निराला ने कुरूपता बोध के प्रतीक कुकुरमुत्ते की स्थापना की है, उसे सुंदर सिद्ध करते हुए। जानकी बल्लभ शास्त्री को लिखे गये पत्र में निराला ने दावा किया है कि "इसकी भाषा हिन्दुस्तानी है, किन्तु यह तुलसीदास की कोटि की है। " ज्ञातव्य है कि 'तुलसीदास' शुद्ध संस्कृतनिष्ठ तत्सम भाषा में रचा गया काव्य है और कुकुरमुत्ता जनभाषा की कविता है। दूसरे निरालाजी इसको हास्य रस की कविता मानते हैं। तीसरे, वे इसकी भूमि का –"आवेदन" में यह तर्क देते हैं कि साहित्य का धर्म है–"निरर्थकता को समूल नष्ट करना" अर्थात् अर्थोपार्जन। अतएव अणिमा से भिन्न यह स्वतंत्र कृति छपी युगमंदिर, उन्नाव से, अच्छी रायल्टी हेतु। ज्ञातव्य है कि इसका नया संस्करण 4 जून 1942 को सात अन्य कविताओं के साथ चौधरी राजेन्द्र सिंह द्वारा उन्नाव से प्रकाशित किया गया था। उसकी भूमिका 'जिआफत' में निराला ने लिखा था–

'मेहनत की कमाई हम भी खायें और वो भी।

कलमजीवी कवि न कंगाली का कायल है और न सम्पन्नता का । यहाँ वह लेखक, प्रकाशक, पाठक की पारस्परिक समता का समर्थक है। इसके 1945 वाले संस्करण में निराला ने इसमें युगानुकूल सुधार लगाने की बात की है, यों कोई पाठभेद नहीं। इसमें नयी काव्यभाषा का उद्‌घोष बार बार किया गया है।

यह स्मरणीय है कि निराला जी गांधी की हिन्दुस्तानी से अरसे तक असहमत रहे हैं । 'कुकुरमुत्ता' में उन्होंने हिन्दुस्तानी को, और उससे भी ज्यादा बोलचाल की देशज भाषा को विशेष प्रश्रय दिया है। इसमें उर्दू, फारसी के अनेकानेक शब्द हैं, जैसे – मुआफ (क्षमा), रकीब (प्रतिद्वन्दी प्रेमी), शैदा (मुग्ध), हसीना (सुन्दरी), चोबदार (प्रतिहारी), फीलवान (महावत) तामझाम (खुलीपालकी) नाचीज (अकिंचन) अदा (चेष्टा) सिन (उम्र) जानिब (दिशा) पोच (तुच्छ), सराक (सुडौल) वसीलोई (सहारा) माझा, रफर, रोबोदाब, रंगोआब्र, आशियाँ, जुबां, लफ्ज, ख्वाब, फर्माएँ, खता, अर्ज,

मंजूर, वक्त, खुशबू, निसार, लजीज, जहन्नुम, बिहिश्त आदि। कुछ चालू शब्दों का सप्रयास तत्सम रूप भी रखा गया है, जैसे सुबह के लिये सुब्ह फारस के लिए 'फारिस', मौसम का 'मौसिम' आदि यों सर्वत्र जनभाषा की शब्दावली ही प्रयुक्त हुयी है। यथा स्वाद का तद्भव सवाद। इनमें कुछ शब्द नितान्त क्षेत्रीय हैं, जैसे – बुत्ता (अर्थात झाँसा), दुम्बा (मेढ़ा, भेंड का बच्चा), तबेला (घुडसाल, पशुशाला), तंग (घोड़े की बँधी हुयी रस्सियाँ), माझा (कटि–रस्सी), कैंड़ा (तिरछा, चालाक, सुदृढ़) अधन्ना (पुराने दो पैसों का सिक्का), डुचना (डूबना, छीना जाना) आठो गाँठ (साष्टांग) पसंधा (तोल) टुकुर टुकुर (निनिमेष) मोरी (नाली) सेल्हर (अस्थिपंजर) अडगड़ा (मुक्त शौच स्थल) परिंदा (पक्षी), कल्ला (बांस का नवांकुर) ताताधिन्ना (वाद्य स्वर), डोंगी (छोटीनाव) आदि।

इनके अतिरिक्त निराला ने तत्सम शब्दावली भी प्रयुक्त की है, जैसे अशिष्ट, शिष्ट, वक्र, चक्र, सागर, अकूल, समादर, निधि आदि।

अंग्रेजी की शब्दावली भी इस कविता में मुक्त रूप से आयी है। उदाहरणार्थ– फैलेसी, ओमफल, बेन्जोइन, वायलिन, बाल डार्न्स, किलयोपेट्रा, रोमांस, क्वेट, प्वेट, स्टीमबोट, डिक्टेटर, फालोवर, प्रोग्रेसिव, कलाइमेक्स, कैपविटलिस्ट, स्पेशलिस्ट, प्रोग्रेसिव, बेंच, रेंज, आर्च,टार्च, लिरिक, फ्राड, कैपिटल, लायर, पैराशूट, प्लोटेरियन, कास्मोपॅालिटन, मेट्रोपोलिटन, प्रोज, पोयट्री, ड्रम, गिटार, फ्लूट, कारनेट, इस्ट्रूमेंट, हैट, ट्रैप इत्यादि ।

निराला जी ने इसमें देशी मुहावरों, लोकोक्तियों का भी मुक्त प्रयोग किया है। जैसे–

पेट में डण्ड पेलते चूहे, बिना दाने के चुगा, पैर सिर पर रखकर भगा, शेर भी मुझसे गधा, एक की है तीन दी, मानते बाँये से, जानते दांये से, कहीं का रोड़ा कहीं का पत्थर, डूबे उतराये गोते लगाये, सारंगी सी चढ़ी, खिले गयी,, डांडी में पसंगे में बंधी कौड़ी, बातों में मँजी, भैंस भड़की, आँख का उतरा पानी, पानी भरना, लगे आग, आँख बचाकर, आँख आँख में भाव बरसे, आँखें चार होना, जीभ में पानी आना, काँख में बांधना इत्यादि।

कवि ने ध्वनि गति बिबों वाले कृदन्त शब्दों का सटीक प्रयोग किया है, जैसे–खुशामद से तनतनाई, सिर पिटाई, सकापकाई, कड़े ठनकाती आदि। कुछ प्रयोग गूढ़ है जैसे गोली की माँ के लिए कहा गया– "बातों में मजती थी अर्थात् मृदुभाषिणी (मार्जित) जिससे अनुप्रीत होकर बहार वीजा सी स्वतः बज उठती थी । एक और गूढ़ोक्ति है– बहार पोइट्री में बोलती थी, प्रोज में अँड़ (अवरुद्ध हो) जाती थी। कारण, स्वभावतः भावुक एवं नाजुक थी । गद्य को निराला ने "जीवन संग्राम की भाषा" कहा है, अतः वह प्रोज से परे है। इसी प्रकार की गूढ़ोक्ति प्रोग्रेसिव के लिए रखी गयी है, जिसका पारा कलम पड़कते उछलने लगता है, क्योंकि वह प्रतिक्रिया प्रेरित होकर प्रायः नाराज एवं नारेबाज लेखन करता है– स्टीरियो टाइप।

इस कविता के कुछ प्रयोग अविकल हैं और कुछ रूपान्तरित। निराला जी ने स्वयं कुछ गढ़ लिये हैं। जैसे– मुँह में पानी आना, की जगह जीभी में पानी । या "कहीं की ईट कहीं का रोड़ा" की जगह कहीं का रोड़ा कहीं का पत्थर। कुछ शब्द अशुद्ध भी हैं, जैसे रक्खा, रक्खे, सिरगम आदि। कुछ प्रेरणार्थक शब्द प्रयोग भी गलत हैं, जैसे – 'सहाया' अर्थात् सहने के लिये बाध्य किया। कुछ वाक्य विन्यास भी जटिल है– यथा सूखकर काटा हुयी होती कभी।" यों इसकी भाषा प्रयोगधर्मा है, इसीलिये विशिष्ट है। उन्होंने जानबूझकर (मात्र तोड़ने के लिए) पुराने भाषिक, ढाँचे को नहीं तोड़ा है, बल्कि विषयानुकुल भाषा का आह्वान किया है और बोलचाल की मुहावरेदार जनभाषा को काव्योपम बनाया है। 'कुकुरमुत्ता' द्वारा यदि उन्होंने काव्य भाषा के आभिजात्य से मुक्त होने का कोई अभियान चलाया होता तो परवर्ती रचनाओं में तत्सम शब्दावली का प्रयोग फिर वे न करते। निराला तो तरह–तरह के प्रयोग परीक्षण कर रहे थे। उन्होंने मुक्त छंद का आविष्कार करके भी आजीवन तुकांत छन्दोबद्ध रचनाएँ (गीत गजल आदि) प्रस्तुत की हैं। तात्पर्य यह कि बड़ा वैविध्य है निराला की काव्य भाषा में। 'कुकुरमुत्ता' भाषिक स्तर पर 'राम की

शक्ति पूजा' एवं तुलसीदास का 'ऐण्टीक्लाइमेंक्स' है। आत्मोपेक्षा, आत्मदर्प एवं अन्तर्वेदना की यह प्रतीति उनकी एक प्रिय कथ्य या कथानक रूढ़ि सी बन गयी थी। छायावादी काव्य की रचना प्रक्रिया में कुकुरमुत्ता जैसा ही आक्रोश आक्षेप 'बनबेला' कविता में व्यक्त हुआ है। वहाँ उनके प्रतिस्पर्धी हैं नेहरू और यहाँ उनका लक्ष्य है 'इलीट' इन्टलीजेन्सिया।'कुकुरमुत्ता' इसी वर्गबोध का विस्फोट है।

इस कविता में कई सूक्ष्म ऐतिहासिक संदर्भ हैं, जैसे (1) कवि ने नवाब के बाग को "गजनवी महमूद का सा बाग मनहर" कहा है। इतिहास साक्षी है कि महमूद ने अपनी राजधानी गजनी में कई बागों, झालों, महलों का निर्माण कराया था। वह अपने युग का विख्यात वास्तुप्रिय, कला प्रिय शासक–था। (2) निराला जी एक संदर्भ मेहरुन्निसा का भी दिया है– "चाहिए तुझको सदा मेहरुन्निसा, जो निकाले इत्र रूह"। इतिहास इसकी पुष्टि करता है कि उसकी माँ ने गुलाब से इत्र निकालने का प्रथम आविष्कार किया था। नूरजहाँ नाम से प्रसिद्ध जहाँगीर की इस बेगम के चित्रों में उसे सर्वत्र हाथ में गुलाब लिये दिखाया गया है। कुकुरमुत्ता कविता ऐसे कई ऐतिहासिक तथ्यों से ओतप्रोत है।

इस कविता की एक विशेषता है– 'कवि की बहुज्ञता, इसे भ्रमवश कुछ समीक्षकों ने 'बड़बोलापन मान लिया है। यों बैसवारी वाचालता तो इसमें है ही ।

निराला जी ने इसमें कई युग्म इंगित किए हैं, जिनमें एक गूढ़ है, दूसरा हल्का फुल्का या सुविदित । कुकुरमुत्ता का दावा है कि जैसे चिन्तन, मनन से दर्शन शास्त्र बन जाता है, उसी तरह मुझसे ही बेन्जोइनजावा में प्राय गुग्गुल लोछन नामक सुगंधित पदार्थ बनता है। यह कथन तथ्याधारित नहीं है। वृक्ष विशेष से निकले प्रत्येक रस को वह जबरदस्ती अपने से जोड़ लेता है। वस्तुतः इस कथन में वनस्पति शास्त्र की बांरीकी तो है, किन्तु गलत जानकारी भी है।

भारतीय आयुर्वेद में कुकुरमुत्ता शाक वर्ग की संस्वेदन जाति और क्षत्रक कुल की वनस्पति है, जिसे सुम्भ, दिगर,क्षत्रक कहते हैं। गुच्छी जुमला होती है। यह शुक्र दौर्बल्य की ओषधि है। आज इसे मशरूम नाम से बहुमूल्य सब्जी की मान्यता मिली हुई है। वनस्पति शास्त्र में इसे अमरेला/एगरिस कहा गया है। इसकी कुछ प्रजातियाँ छुवारे की तरह, या गेंद की आकृतिवाली भी होती हैं, जिसे फेयरीवाल कहते हैं। संप्रति, उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश और कुछ दक्षिणी राज्यों में इसकी खेती काफी लोकप्रिय हो गयी है। वस्तुतः शाकाहारियों को इसका कलियाकवाब साभिष व्यंजन का जैसा स्वाद देता है। अस्तु; अब यह सर्वथा महिमामण्डित है।

यहाँ शरीर शास्त्र का भी एक सूक्ष्म संकेत है –

"ओमफलस और ब्रह्मावर्त, वैसे ही दुनिया के गोले और पर्त।" कुकुरमुत्ता का दावा है कि जातक का नाभिनाल काटने से तोंदी में जो गोलाकार पपड़ीदार परत बन जाती है, वह "ओमफलस है। यह गोलक ब्रह्मावर्त (बिहूर, कानपुर का एक तीर्थ) अथवा ब्रहाण्ड–गोलक जैसा है । उसे सृष्टि का केन्द्र कहा जा सकता है।

निराला जी ने यहाँ तीन विश्वविश्रुत विद्वानों का नामोल्लेख किया है। एक मनोविश्लेषण के पुरोधा 'फ्रायड' का, दूसरा 18वीं शती के अंग्रेजी के प्रसिद्ध ऐतिहासिक रोमांस के कथाकार लिटन का, तीसरे है यूक्ली (यूनानी ज्यामिति–विशेषज्ञ, जिनकी स्थिति 300 वर्ष ईसा पूर्व कहीं गयी है। यह उल्लेखनीय है कि निराला ने बहुत सुविख्यात ने लेखकों के नाम नहीं रखे, मानों वे पाठकों के सामान्य ज्ञान की थाह ले रहे हों। शायद सब पर अपनी बहुज्ञता की छाप छोड़ना चाहते हैं। यथा संदर्भ यहाँ फैलसी (तर्क लाजिक) फिलसफा (फिलास्फी–दर्शन) और तत्कालीन शक्ति केन्द्र लेनिन की कर्मभूमि राजधानी लेनिन ग्राड की ओर भी संकेत है। कवि ने यहाँ अनेक प्रकार

के फूल, फल, रंग, वाद्य यंत्र, नृत्य, इमारतें, पहनावे, कलाकार, साहित्यकार, भाषाएँ, विधाएँ आदि गिनायी हैं। इसमें सूफियों के वर्णक काव्य एवं संतों की उलटवासी का मिला जुला प्रयोग किया गया है। कुछ उपमाएँ निरालेपन की झोंक में आ गयी है। यों अधिकतर वर्ण साम्य (सफेद रंग) आकृति साम्य (कुकुरमुत्ते का गोलाकार)गुण साम्य (काष्ठ रहित रसार्द्रता युक्त है। कुकुरमुत्ता (अर्थात् कुत्ते के मूत्र से उत्पन्न पौधा) नाम ही हास्यास्पद और इसीलिए ध्यानाकर्षक है। इसे वरण करने का अर्थ यह हुआ कि अब निराला की छायावृत्ति समाप्त प्राय है और प्रगतिशीलता से प्रेरित आंचलिकता उनके निरालेपन से जुड़कर मुखर हो गयी है। वह दौर था, जब प्रसाद जी ने संसार त्याग दिया था और पंत ने छायावाद को। (द्रष्व्य, आधुनिक कवि–पंत की भूमिका) निराला जीवन की कुत्सित परिस्थितियों से ग्रस्त थे, फिर छायावाद के सुलिलत कल्पना कलित काव्य वितान को अकेले कहाँ तक संभालते। उनका निरालापन व्यंग्याविद्रूप में परिणत हो गया, फलतः यह काव्य कृति।

इस कविता के पूरे स्थापत्य में सात मोड़ हैं –

1. नवाब के बाग का वर्णन
2. उनके सेवकों की बस्ती का वर्णन
3. गोली और बहार का बाग में भ्रमण
4. गोली के घर में बहार का खाना–खेलना
5. नवाब एवं माली का वार्तालाप
6. कुकुरमुत्ते का एकालाप – आत्म परिचय एवं गुलाब की भर्त्सना
7. कवि का अन्तर्निहित संदेश।

कविता का आरंभ तथा अंत लोक कथा शैली से अथवा किस्सागोई से प्रेरित है। बीच बीच में इसमें वर्णनों की भरमार है। सर्वप्रथम बाग का वर्णन हुआ है। इस प्रसंग में कवि ने कई देशी–विदेशी, फूलों–फलों के नाम गिनाये हैं। जैसे बेला, चमेली, जूही, चम्पा, मौलिश्री, गुलबकावली, रातरानी, गेंदा, नेवाड़ी, गुलमेहंदी, गुलशब्बा, गुलअब्बास, साथ ही संतरा, शहतूत, फालसा, जामुन, आम । ज्ञातव्य है कि पंत जी ने ग्राम्या की एक कविता में फूलों के नाम गिनाए हैं, जबकि निराला ने यहाँ 20 फूल रखे हैं । दूसरा वर्णन – विवरण है, देश –देशान्तर की मशहूर इमारतों का; जैसे मिश्र के पिरामिड, सेण्टपीटर्स का गिरजाघर, रामेश्वर मंदिर, कुतुबमीनार, भुवनेश्वर कोणार्क का सूर्य मंदिर , ताजमहल, मीनाक्षी मंदिर, लाल किला, चिनार दुर्ग, विक्टोरिया मेमोरियल, ईरानी जुम्मा मुस्जिद तथा बीजापुर का गोल गुम्बद। इनके स्थापत्य विवरण के क्रम में कवि ने एरियन, पर्शियन, गथिक आर्च का भी नामाल्लेख किया है। तीसरा वर्णन – सूची, पहनावें की है, जैसे– ट्रेप, तुर्की टोपी, स्ट्रामैट, गांधी कैप, हैट इत्यादि। चौथी सूची वाद्ययंत्रों की है, जैसे डमरू, वीणा, मृदंग, तबला, सितार, तानपुरा, बायलिन, बेन्जो, घण्टा, ढ़ोल, घड़ियाल, शंख, तुरही, कारनेट, ड्रम, गिटार आदि। एक सूची देशी विदेशी नृत्यों की है। कवि ने कथक, कथकली, क्लयोपेट्रा, गरबा, अफ्रीकन, बहेलिया मोरनी, मणिपुरी तथा यूरोपियन नाच के नामोल्लेख किये हैं। देश–विदेश के कवियों का उल्लेख करते हुये इसमें वाल्मीकि, व्यास, भास, कालिदास, हाफिज, रवीन्द्र, इलियट आदि की गणना करायी गयीं है। गरीब बस्ती का वर्णन करते हुये कवि ने नवाब के खादिम–खानसामा, बावर्ची, चोबदार, सिपाही, साईस, मिस्त्री, घुड़सवार, कहार, नाई, धोबी, तेली, तमोली, कुम्हार, फीलवान, ऊँटवान, गाड़ीवान आदि के विवरण दिए हैं। एक सूची इसमें विदेशों की दी गयी है, जैसे – चीन, फारिस, जापान, अमेरिका, रूस, इटली, इंग्लिस्तान,टर्की आदि। विशेष रूप

से विदेशी विद्वानों की, जैसे लिटन, यूक्लीड, फ्रायड। उसने कुकुरमुत्ते को सबका केन्द्र माना है। उसकी तुलना की है– बेंनजाई, ओम्फ़लस ब्रह्मावर्त्त से। यहाँ कुछ विदेशी भाषायें भी हैं, जैसे – अरबी, फारसी, ग्रीक, लैटिन। कुछ काव्य रूप भी हैं, जैसे – मंत्र, गज़ल, गीत आदि। कवि ने कई गायक–वादक गिनाए हैं, जैसे– चुन्नेखाँ, दिगम्बर, हसीना, हसन खाँ, बुद्धू पीटर आदि। तात्पर्य यह है कि इस कविता में एक ओर वर्णनात्मकता की भरमार है और दूसरी ओर नाटकीयता की। इसके वर्णनों में नाम गणना भी है और सूक्ष्म सटीक चित्रण भी जैसे –बस्ती का कटु यथार्थपूर्ण वर्णन करते हुये कवि ने लिखा –

"जगह गंदी रुका सड़ता हुआ पानी
मोरियों में, जिन्दगी की लंतरानी।
बिलबिलाते कीड़े, बिखरी हड्डियाँ।
सेल्हरों की, परों की थी गड्डियाँ।
कहीं मुर्गी, कहीं अण्डे, धूप खाते हुए कंडे."

यह वर्णन जुगुप्सा के बावजूद निस्संदेह सूक्ष्म एवं जीवन्त है। नाटकीयता इस कविता में कथा के माध्यम से आयी है और संवाद के माध्यम से भी। कवि ने एक ओर कुकुरमुत्ता का दीर्घ एकालाप प्रस्तुत किया है, दूसरी ओर मोना–बहार, नौकरानी, मोना की माँ, बस्ती की औरतों तथा नवाब और माली के बीच कई कथोपकथन प्रस्तुत किये हैं । इस कविता का काफी अंश भदेसपन से ग्रस्त है। संवादों में अपशब्दों (जैसे –अबे, पोच, हरामी आदि) का मुक्त प्रयोग रोचकता के साथ ही असंसदीय भी है। यों इसमें चिन्तन ज्यादा है। इसका समापन संवाद द्वारा ही किया गया है –

"बोला माली–"फरमायें मुआफ खता,
कुकुरमुत्ता उगाये नहीं उगता।"

इस आकस्मिकता के द्वारा नाटकीयता में वृद्धि हुयी है।

अस्तु , स्पष्ट है कि यह कविता निराला के नव चिन्तन और अद्यतन काव्य–शिल्प की देन है। इसके माध्यम से उन्होंने प्रगतिवाद तथा प्रयोगवाद के समानान्तर, विकसित या संभावित जन–जन की कविता" का स्वरूप–संधान किया है। यह बैठे ठाले के प्रमादपूर्ण या चौंकाने वाला प्रयोग मात्र नहीं है, वरन् इक्कीसवीं सदी के उपयुक्त भावी कविता का एक नया उपक्रम है। इसमें हास्य उतना नहीं, जितना विक्षोभ है, विद्रूप है और विडम्बनामूलक व्यंग्य है। 'कुकुरमुत्ता' के आत्मकथ्यों के बहाने निराला ने इसमें अपनी देशी कलम के स्वत्व एवं स्वाभिमान को स्वर दिया है और अपनी बहुज्ञता का बहुविधा प्रदर्शन किया है। उन्होंने बहक में आकर कई ऐसे उपमान भर दिये हैं, जिनसे कुकुरमुत्ता का पूरा सही सुसंगत साम्य नहीं बैठता। फिर भी कवि के कुछ बिम्ब तो बहुत ही सराहनीय हैं, जैसे –

"नाचता है सूदख़ोर
जहाँ कहीं ब्याज डूबता।"

यहाँ ऋणी और महाजन के मध्यवर्ती संलाप की देहभाषा का दृश्य इंगित किया गया है।

इसी तरह बस्ती की औरतें मोना बंगालिन को देखकर द्वेषवश जब बड़बड़ाती हुयी अपने अपने घरों की ओर चलती हैं तो वह गतिबिंब कवि के शब्दों में इस प्रकार ध्वनित हुआ है–

"झटके से सिर काँख पर फिर ले धड़े,

चली खनकाली कड़े ।"

इसी प्रकार "भँवरा उड़ा मकड़ी के जाले से" का दृश्य विधान बड़ा सजीव स्वाभाविक है। एक पंक्ति में वृक्षों की फुनगी पर प्रतिबिंबित सूर्य किरण के लिए कवि लिखता है–

'पेंड धूप का ताज पहने'।

यह एक श्रेष्ठ चाक्षुष बिंब है। कुछ बिंब बहुत गुढ़ हैं, जैसे 'भैंस भड़की', इन दो शब्दों द्वारा का मातुर महिषी का आँखों देखा दृश्य व्यंजित किया गया है। स्पष्ट है कि इन बिम्बों में नवीनता, सहजता और निजता है। ये ही 'कुकुरमुत्ता' की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं, जिनके कारण आज यह एक कालजयी कृति के रूप में समादृत है।

बोध प्रश्न–

1. कुकुरमुत्ता कविता का संक्षिप्त परिचय दीजिए। (पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए)
2. कुकुरमुत्ता की संक्षिप्त समीक्षा लिखिए। (सात पंक्तियों में उत्तर दीजिए)

3.6 कुकुरमुत्ता का वैशिष्टय

निराला अपने रचनात्मक जीवन के प्रथम चरण में छायावादी और दूसरे चरण में प्रगतिशील कविता से जुड़े रहे हैं। परवर्ती काव्य में उनकी यथार्थवादी दृष्टि से तथाकथित ज्ञानात्मक संवेदना जब अधिक प्रबल हो उठी तो उन्होंने वैदान्तिक दर्शन को छोड़कर ठोस मानवतावादी दर्शन को अपना लिया। उनका युगबोध और परिवेश उनकी कविता में एकात्म हो गये । कहीं व्यथा, कहीं आक्रोश । नियति, कल्पना प्रवणता आदि से मोहभंग हो गया। उनके मन में अकिंचन, वंचित, मेहनतकश वर्ग के प्रति सहानुभूति की हिलौरें उठने लगीं।

इस नव यथार्थ की ठोस और व्यंग्यपूर्ण प्रारंभिक परिणति "नये पत्ते" और कुकुरमुत्ता में हुई है। मँहूगा महँगा रहा, न आये वीर जवाहर लाल, कुत्ता भूकने लगा, झींगुर डटकर बोला' आदि कविताओं में ऐसा ही भाव व्यक्त किया गया है। यहाँ भाव भाषा और संवेदना अपने आभिजात्य से मुक्त होकर जनवादी आकृति–प्रकृति में रूपान्तरित हो गयी है। इस स्तर पर व्यंग्य और अक्खड़पन का चरम रूप कुकुरमुत्ता में देखने को मिलता है।

वस्तुतः 'आइरनी' (विडम्बना) विधा का जनक निराला को ही कहा जा सकता है। उन्हीं की परम्परा में नागार्जुन, रघुवीर, धूमिल आदि कवि उभरे हैं। हिन्दी प्रगतिशील साहित्य में व्यंग्य के ऐसे कई उदाहरण विद्यमान हैं, जिन्हें सुनने वाला तिलमिला जाता है। निराला ने यहाँ प्रकट एवं प्रच्छन्न रूप से अपने विरोधियों की अच्छी खबर ली है, साथ ही साथ सामाजिक कुरीतियों पर भी कशाघात किये हैं। निराला ने अनेक वर्गों को अपना लक्ष्य बनाया है। जैसे 'सरोज स्मृति' कविता में खेमेबाज, मीडियाकर लेखकों और संपादकों के प्रति वे कहते हैं —

" पर संपादक गण निरानंद...।

"पढ़ लौटा देते वे सत्वर, दे एक पंक्ति दो में उत्तर...।"

"एक साथ जब शत घात पूर्ण, आते थे मुझ पर तुले तूर्ण।"

इसी तरह कान्यकुब्जों पर व्यंग्य करते हुए वे लिखते हैं —

वे जो यमुना के से कछार
पद फटे बिवाई के, उधार
खाये के मुख ज्यों, पिये तेल
चमरौधे जूते से सकेल
निकले जी लेते घोर-गन्ध,

इस तरह व्यंग्य, विनोद, हास-परिहास के कई प्रसंग स्फुट रूप से निराला ने सिरजे हैं, किन्तु "कुकुरमुत्ता" का वैशिष्ट्य तो कुछ अलग ही है। "कुकुरमुत्ता" वर्ग प्रधान सामाजिक ढाँचे के विरुद्ध रचनात्मक प्रतिक्रिया है। यहाँ गुलाब और कुकुरमुत्ता का भेद एक सचेष्ट वर्ग-दर्शन पर आधारित है। इस प्रतीकात्मक सम्बन्ध । की अवधारणा में सामन्तवाद और सर्वहारा का संघर्ष छिपा हुआ है। जैसा कि निराला ने भूमिका में ही स्पष्ट कर दिया है—"इस जियाफत में वे ही शरीक होंगे, जिन्हें न्यौता भेजा गया है। "यहाँ उपभोक्तावादी संस्कृति पर गहरे कटाक्ष स्वगत संवाद शैली में किये गये हैं। गुलाब और कुकुरमुत्ता का परस्पर ईर्ष्या का सम्बन्ध है। कुकुरमुत्ता कई तर्कों और प्रमाणों द्वारा अपनी सार्थकता उपयोगिता सिद्ध करता है। वह गुलाब को अपने समकक्ष नहीं मानता है। उसे ऐंठ भरे लहजे से सम्बोधित करता है। वह अपनी वक्तृता से तथा संभाषण से गुलाब को निरुत्तर कर देता है। "अबे सुन बे" में विशेष प्रकार का अक्खड़पन है।

हास्य विनोद उत्पन्न करने के लिए निराला ने यहाँ एक मौलिक पद्धति अपनायी है। कुकुरमुत्ते की डींग में निराला एक पूरा बंद ऐसा रख देते हैं, जो निरर्थकता का आभास देता है और हास्योत्पादक साबित होता है। व्यंग्य की लपेट में प्रच्छन्न रूप से कहीं-कहीं कुकुरमुत्ता स्वयं भी आ जाता है। यों वह सबको तुच्छ सिद्ध करके स्वयं बड़ा बनता है। वह सिर उठाकर, ऐंठ कर बोलता है। बोलने की इस अदा से साबित होता है कि जितना बड़ा बन रहा है, उतना बड़ा वह है नहीं। अपनी ऊँचाई नापकर वह कहता है —"डेढ़ बालिश्त और ऊँचा हूँ चढ़ा । यहाँ निराला ने भाववादी दर्शन और छायावादी बोध पर व्यंग्य किया है। छायावादी काव्य और "हास्य-व्यंग्य" परस्पर विरोधी माने जाते हैं किन्तु छायावादी रचनाकाल में निराला ने 'मतवाला' की टिप्पणियों से लेकर 'सुधा' और 'माध ुरी' में प्रकाशित अपने आलोचनात्मक लेखों तक में निरंतर हास्य व्यंग्य का परिचय दिया है। यह चिन्तवृत्ति 'देवी' चतुरी चमार, बिल्लेसुर बकरिहा आदि गद्य रचनाओं के साथ परिमल, अनामिका आदि में भी जहाँ-तहाँ दिख जाती हैं। यह निराला के भावबोध की सहज विशेषता है, जो छायावादी कवियों में अन्यत्र दुर्लभ है। उदाहरणार्थ कुछ प्रयोग द्रष्टव्य हैं –

"ढके हृदय में स्वार्थ, लगाये ऊपर चन्दन।
करते समय नदीश-नंदिनी का अभिनंदन ।।

(परमल, 'रास्ते के फूल')

'अनामिका' की "दान" कविता में उन्होंने ढोंग करने वाले पोंगा पंथियों के पाखंड की निंदा तथा भिखारियों के प्रति करुणा व्यक्त की है। "बदला" शीर्षक कविता भी कुकुरमुत्ता का पूर्वाभास कराती है —

सुनो, अहफूल

जबकि यहाँ दम है —

इस तरह का हास्य–व्यंग्य निराला के अंदर क्रमिक रूप में विकसित होता दिखता है। जो वृत्तियाँ हास्य–व्यंग्य की विरोधी समझी जाती हैं, निराला उनसे भी हास्य और व्यंग्य का सामंजस्य स्थापित कर लेते हैं। यह उनके भाव बोध की अन्यतम विशेषता है। "जलद के प्रति "कविता मे पृथ्वी और बादल के प्रति अपनी करुणा से वे हास्य व्यंग्य को मिला देते हैं। उन्होंने 'महाराज शिवाजी के पत्र' में वीर भावना के साथ जय सिंह के प्रति तीव्र व्यंग्य का पुट देकर दोनों में सामंजस्य स्थापित किया है।

इसका एक मनोविज्ञान है। जब आदमी बहुत दुःखी होता है तो कम बोलता है, और कभी–कभी परिस्थितियों पर हँसनें भी लगता है। ज्यादा क्रोध होने पर वह कभी सीधी बात न कहकर प्रायः व्यंग्य का सहारा लेता है। कमोवेश ये सब रूप निराला के अंदर विद्यमान है। जैसे, अनामिका की "सच है" कविता में विरोधियों की निन्दा सुनते–सुनते निराला व्यथित हो गये हैं। हृदय में जितना क्रोध है, उतनी ही वेदना है। वे खुलकर नहीं हँसते, बल्कि क्रोध और शोक को दबाते हैं और तब यह दबाव अन्तर्मुखी व्यंग्य के रूप में प्रकट हो जाता है। अन्तर्मुखी इसलिये कि वे आक्रामक होकर व्यंग्य का प्रयोग नहीं करते, बल्कि रक्षात्मक उद्देश्य से विरोधियों की कही हुयी बात को नयी भंगिमा के साथ दोहराते हैं और उसकी व्यर्थता सिद्ध करते हैं ।यथा —

"तुमने जो दिया दान वह,

हिन्दी के हित का अभिमान वह,

जनता का जनताका ज्ञान वह,

सच्चा कल्याण वह अथच है —

यह सच है।"

इस तरह का मर्मबेधी व्यंग्य साहित्यिक मंच पर अभिनय करने वालों को वेध डालता है। कवि चुपचाप सब सहन करके आगे बढ़ जाता है। निराला "स्वतः संभाषण" और "कूट शैली" में अपने व्यंग्य को पैना बनाते रहे हैं। जैसे वे एक निबंध में लिखते हैं — दुनिया में दीन, ईमान, कविता–कला, नाते–रिश्ते सब कहीं न कहीं अर्थ की डोर से बंधे हैं। मनुष्य अपने को विशुद्ध धर्मात्मा समझता है। अपने कलाकार होने का दम भरता है। निराला इस परिस्थिति पर हँसते हैं, किन्तु हँसी बहुत संयत है, क्योंकि मनुष्य की विवशता उसके ज्ञान की सीमाओं को देखकर उनके मन में अवसाद भी उत्पन्न होता है। वे कहते हैं —

"चूंकि यहाँ दाना है

इसीलिये दीन है, दीवाना है।"

यह शैली अनायास "कुकुरमुत्ता" की याद दिलाती है। उन्होंने त्रिकोणात्मक स्थिति अपनायी (1) दुनिया से लडाई, (2) बचकर निकल जाने के दाँवपेंच, (3) सिद्धांतों के मामले में समझौता न करने का संकल्प। 'सरोज स्मृति' में जिस शरक्षेप और रणकौशल का चित्रण उन्होंने विवरणात्मक शैली में किया था, 'बेला' में उसी का चित्रण वे आत्मसंभाषण शैली में करते हैं ।

"हाथ बचा जा, कटने से माथ बचा जा,

अपने को सदा लचा जा,

सोच न कर मिला अगर न कोना।"

यहाँ भय, सतर्कता, संकल्प, व्यंग्य, बाँध, सब संक्षिप्त रूप में एक साथ व्यक्त हुए हैं। निराला के काव्य में हीं नहीं, वरन कथा कृतियों कुल्लीभाट, बिल्लेसुर बकरिहा आदि में भी हँसी के फब्वारे छूटते हैं, किन्तु इनकी अपेक्षा व्यंग्य का सहारा "कुकुरमुत्ता" में निराला ने ज्यादा लिया है। कुकुरमुत्ता गुलाब की कैसी–कैसी कदर्थना करता है ? उसके कटीलेपन पर चोट करता हुआ कुकुरमुत्ता जब कहता है –

हाथ जिसके तू लगा,

पैर सर रखकर वो पीछे को भगा,

औरत की जानिब मैदान यह छोड़कर

तबेले को टट्टू तंग जैसे तोड़कर ।"

इसमें निहित व्यंग्य विनोद की काव्यात्मक अर्थवत्ता की अनदेखी नहीं की जा सकती है। कुकुरमुत्ता "गुलाब के परजीवीपन पर कटाक्ष करते हुए अपनी जो मुखरता दर्शाता है वह बेजोड़ है।

कवि ने गुलाब की भर्त्सना के बाद कुकुरमुत्ता का वैशिष्ट्य बताया है। यहाँ भाषा की सपाटता द्वारा व्यक्तित्व विधायन किया गया है। कुकुरमुत्ता की आत्म निर्भरता 'बन बेला' (जंगली पेड) की तरह है, न कि गमले में लगे पुष्प की तरह। वह गाँव –देहात के बच्चे की तरह से धूल मिट्टी में रहकर बड़ा हुआ है, न कि उस शहरी बच्चे की तरह, जो वातानुकूलित कार के बाहर जरा सी धूप में कुम्हला जाता है।

कुकुरमुत्ता जब अपनी तारीफ के पुल बाँधता है तो अजीबोगरीब स्थिति उत्पन्न हो जाती है। वह सृष्टि व्यापी विस्तार में अपने को विद्यमान मानता है। चीन का छाता, भारत का छत्र, महायुद्ध का पैराशूट, विष्णु का सुदर्शन चक्र, यशोदा की मथानी, राम का धनुष, बलराम का हल, सभी में उसकी सत्ता अर्न्तव्याप्त है। इतना ही नहीं, इतिहास, भूगोल, दर्शन, संगीत, साहित्य भाषा अर्थात दुनिया की हर चीज उसके प्रभाव क्षेत्र में है। यहाँ कवि का संदर्भ ज्ञान और पर्यवेक्षण प्रशंसनीय है।

कुकुरमुत्ता के इस महत्व को स्थापित कर कवि क्या कहना चाहता है ? यह एक विवादास्पद प्रश्न रहा है। ऊपरी दृष्टि से देखने पर तो कुकुरमुत्ता की इस लम्बी–चौड़ी डींग से निरर्थकता का आभास होता है, किन्तु इसकी व्यंजनायें बड़ी गहरी हैं । एक स्तर पर यह कवि की अद्वैत दृष्टि हो सकती है, जिसके कारण वह सभी वस्तुओं के मूल में कुकुरमुत्ता को देखता है। काव्य के स्तर पर सर्व सामान्य की सार्वभौम प्रतिष्ठा सर्वथा संभव और समीचीन है। दूसरे मोड़ पर निराला यह ध्वनित करते हैं कि सामान्य जन कितना मुखर होता है। आत्मश्लाधा के रूप में कुकुरमुत्ता के अतिरंजित महत्व का कथन कर वह प्रकारान्तर से उसके बड़बोलेपन के कारण उसे उपहासास्पद भी बना देता है। निष्कर्ष यह है कि निराला इस कविता में जनसाधारण की शक्ति को उसकी पूरी बारीकी और विस्तार से प्रस्तुत करते हैं। बीच –बीच में छोड़ी गयी व्यंग्य की छीटें पूरी कविता में एक विनोदमय वातावरण को कायम किए रहती हैं।

यह इलियट के अंध भक्तों पर किया गया एक करारा व्यंग्य भी है।

—कुकुरमुत्ता के दूसरे भाग में नब्वाब के बाग के बाहर पड़े झोपड़ों की दीन दशा का वर्णन है। निम्नवर्गीय मनुष्यों के दयनीय जीवन को प्रामाणिक बनाने के लिए कवि की दृष्टि सूक्ष्मता–सघनता का परिचय देती है। साथ ही यहाँ कवि की जनतांत्रिक दृष्टि भी प्रतिफलित हुई है। लखनऊ, कलकत्ता एवं इलाहाबाद के मोहल्लों में आते–जाते रहते हुये महानगरीय जीवन का व्यापक अनुभव निराला ने अर्जित किया था। उच्च वर्ग की बस्तियों में जहाँ बड़ी–बड़ी अट्टालिकायें हैं, 'अट्टालिका नहीं रे आतंक भवन' है, उनमें शाद्वल वृक्षों से आच्छादित वाटिकायें अर्थात तरुमालिकाएँ हैं, वहीं निम्न वर्ग की झोपड़ियाँ भी हैं। वहाँ ताजा हवा भी मुश्किल से पहुँचती है, वहाँ बजबजाती हुयी गन्दी नालियाँ हैं। उस स्थान से गुजरते हुये आम आदमी अपनी नाक पर रूमाल रख लेते हैं। वहाँ गंदगी के ढेर हैं, जिन पर मुर्गियाँ, सुअर और कुत्ते विचरण करते हैं। यह हमारी नागरिक व्यवस्था का एक कड़वा सच है। यह उल्लेखनीय है कि इसी प्रकार के कलकतिया कबाड़ का वर्णन 'सुकुल की बीबी' में भी किया गया है। निराला ने उस परिस्थिति को हूबहू उतार दिया है। भाषा ऐसी है कि लगता है कि सब कुछ आस पास ही घटित हो रहा है।

ऐसी युगबोधी दृष्टि उनके समकालीन छायावादी कवियों में नहीं मिलती है। निराला ने अपने परिवेश के यथार्थ को पूरी तरह उजागर किया है। उन्होंने निम्नवर्गीय मनुष्यों के दयनीय जीवन को प्रामाणिक बनाने के लिए उन्हीं उपादानों का उल्लेख किया है –

"जगह गंदी, रुका सड़ता हुआ पानी

मोरियों, में जिन्दगी की लन्तरानी

बिलबिलाते कीड़े, बिखरी हड्डियाँ,

सेल हडों की परों की थीं गड्डियाँ।"

यहाँ निम्नवर्गीय मनुष्य अभिशापयुक्त जिन्दगी जीने पर मजबूर है। कवि ने पूरी निर्ममता से, बिना किसी संकोच के, इस भयावह यथार्थ को विवरणात्मक शैली में उजागर किया है। इस विषम वातावरण की परिणति वीभत्स में होती है।

यह निराला की भाषा का निरालापन है कि जहाँ तत्सम शब्दों का भरपूर उपयोग करके कभी पहले कवि ने प्रांजल हिन्दी की पुष्टि की, वहीं कुकुरमुत्ता के माध्यम से मामूली भदेस और अनगढ़ शब्दों से हिन्दी को सिरजा। उन्होंने इस धारणा को निर्मूल कर दिया है कि कविता की रचना के लिए संस्कार शील शब्द ही उपयुक्त होते हैं। निराला ने जिन रेखाओं को बनाया था, अब यहाँ उनसे बड़ी रेखाएँ बना दी हैं। छायावादी संस्कारों की परवर्ती प्रतिलोम भाषा प्रयुक्ति प्रस्तुत की गयी है, कुकुरमुत्ता में । बै सवारी लहजे का आनंद लेता हुआ कवि एक टकसाली विशेषण के माध्यम से गोली तथा नौकरानी पर व्यंग्य करता हुआ कहता है –

"नहीं ऐसा कहते री, मालिन की

छोकड़ी बंगालिन की ।"

डाटा नौकरानी ने चढ़ा आँख कानी ने,"

इसमें "रानी और कानी" कविता का भी कुछ अंश सन्निहित है। जब बहार के साथ गोली झोपड़ी में आती है, तो उसका परिहासमय चित्रण करता हुआ कवि कहता है –

"चली गोली जैसे 'डिक्टेटर'
बहार उसके पीछे जैसे 'भूक्खड फालोअर'
उसके पीछे दुम हिलाता टैरियर
आधुनिक पोयेट
पीछे बाँदी बचत की सोचती
कैपिटलिस्ट क्वेट।"

यही "डिक्टेटर", भुक्खड़, फालोवर, क्वेट जैसे शब्दों द्वारा आधुनिक कवियों की खबर ली गयी है।

इन व्यंग्यों के माध्यम से जनसाधारण और सर्वहारा की जीवनी शक्ति और उसकी अकृत्रिम जीवन पद्धति का उद्घोष यहाँ कवि ने किया है। जन साधारण के जीवन में रची–बसी भाषा उससे जुड़ी हुयी है। हिन्दी काव्य भाषा के इस नये और अपेक्षाकृत अकृत्रिम आयाम का गहराई में संस्पर्श कर निराला ने परवर्ती कविता की स्वायत्त और गद्यात्मक प्रकृति के लिए जो पृष्ठभूमि तैयार की, उसका ऐतिहासिक महत्व है।

"परिमल", गीतिका, 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' के भाषागत आभिजात्य के बाद 'कुकुरमुत्ता' की ठेठ शब्दावली पर आधारित यह भाषा संरचना निराला काव्य और साथ ही आधुनिक हिन्दी काव्य का एक सुखद आश्चर्य है, जिसमें यथार्थ भाषा को समस्त आभरणों से मुक्तकर अधिक स्वायत्त एवं आत्म निर्भर तथा यथार्थग्राही बनाने की पहली महत्वाकांक्षी और साहसिक कोशिश की गयी है। पिछली रचनाओं में सर्जनात्मकता को विकसित करने के लिए तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है। पराकाष्ठा पर पहुँचकर अब उसकी क्षतिपूर्ति "कुकुरमुत्ता" कर रहा है।

"कुकुरमुत्ता" में काव्य के परम्परित मानदण्डों को चुनौती दी गयी है। यहाँ नाम से ही नगण्य "कुकुरमुत्ता" जैसी बदरूप वस्तु की अवतारणा चरितनायक के रूप में की गयी है। भाषिक आभिजात्य के सभी उपादानों, जैसे सुघर शब्दावली, विराटबिंब, सुकुमार छंद, लोचदार लय आदि की वर्जना के साथ ऐसे प्रणयन का साहस निराला ही कर सकते थे । कुकुरमुत्ता में एक सामान्य को उसकी सारी क्षुद्रताओं विशालताओं के साथ निराला ने उघाड़ा है तथा जीवन की पुनर्रचना की कोशिश की है। इसमें जो भाषा प्रस्तुत की गयी है, वह जन जीवन से रची गयी है।

वस्तुतः इसका रचनातंत्र बेजोड़ है। विषयवस्तु विडम्बनाओं से भरी हुई है। यहाँ भाषिक संरचना के दो रूप दिखते हैं । फारस के गुलाब का अंकन फारसी शब्दों के आभिजात्य से युक्त है। कुकुरमुत्ता का वर्णन ठेठ देशी शब्दों के प्रयोग से किया गया है । कुकुरमुत्ता की भाषिक संरचना सर्वथा नये प्रकार की है। माधुर्य, ओज और लालित्यपूर्ण भाषा की जगह ठेठ बीहड़ शब्दावली में पूरी कविता लिखी गयी है। यहाँ कुछ नए शब्द गढ़े भी गए हैं। तात्पर्य यह कि वस्तु–शिल्प, दोनों दृष्टियों से विलक्षण है यह कविता।

3.7 कुकुरमुत्ता की व्याख्याएँ

एक नवाब थे, जिन्होंने फारस से गुलाब के पौधे मँगवाए थे और बड़ी बाड़ी में लगवाए थे। उसमें एक गुलाब बाड़ी थी, जिसमें विदेशी गुलाब की कलमें भी लगाई गईं थीं। यत्र तत्र क्यारियों में देशी पौधे बोए या उगाए गए थे। इन सबके लिए कई माली नौकर रखे गए थे। उनकी स्वप्निल आकांक्षा इस बाग में प्रतिफलित हुई थी।

एक–एक तरतीब (शृंखला या पंक्ति) से जुड़े ये पौधे वहाँ तहजीब (शिष्टाचार) पूर्वक साँसे ले रहे थे। पूरी फुलवाड़ी में सघन फूलों की क्यारियाँ फैली हुईं थीं। फूल बड़े ही सुंदर लग रहे थे– लाल, हरे, नीले, गुलाबी, सफेद, पीले, बादामी, केसरिया यानी वर्ण वर्ण के। बाग में फलों के भी पेड़ थे, मुख्यतः आम, लीची, संतरे, फालसे वहाँ हर क्षण कलियाँ चटकती प्रस्फुटित होती रहती थीं। उनकी सुकोमल खुशबू को अपने गले लगाकर वायु लहरियाँ धीमी–धीमी गति से बहती रहती थीं। पेड़ों में बुलबुल पक्षी जब चहकते थे, तो डालियाँ हिलने लगती थीं। इस तरह सारा बाग चिड़ियों का आशियाना सा बना हुआ था। इस बाग में साफ सुथरी सुडौल सड़कें दोनों छोर तक दूर दूर तक फैली हुईं थीं। बाग के बीचोबीच एक आराम गाह (विश्राम स्थल) था, जो नवाब के बड़प्पन का सूचक था। वहाँ किसी तरह कृत्रिम झरना बनाया गया था। कहीं छोटी सी पहाड़ी थी। कहीं साफ सुथरी वाटिका थी और कहीं नकली झाड़ी थी।

जब मौसम बदला (शरद ऋतु आई) तो फारिस से मँगाया हुआ गुलाब खिल उठा और पूरे बाग पर उसका रौबदाब छा गया। तभी वहीं एक गंदे गड्डे में उगे हुए कुकुरमुत्ते ने ऊपर सिर उठाकर "पहाड़ी" को झाँसा देते हुए, गुलाब से ऐंठकर कहा कि ऐ रे गुलाब, सुन! जो रूप रंग और खुशबू तुझे मिली है, उससे इतरा मत। यानी तू गलतफहमी में न पड़। तू अशिष्ट है। तुझे अब याद भी नहीं कि तूने खाद का खून चूसा है। आज तू पूँजीपति की तरह अपनी डाली में इतराता हुआ झूम रहा है। तूने कितनों को ही गुलाम बना रखा है? कितने ही माली कड़ाके का जाड़ा और धाम झेलते हुए तेरी सेवा करते रहते हैं। इसके बावजूद जिसके हाथ में तू लग जाता है, वह घायल होकर तेजी से पीछे की ओर भागता है, अन्तःपुर की ओर, औरतों की तरफ। उसी तरह जैसे लड़ाई का मैदान छोड़कर और अपनी लादी तोड़कर कोई टट्टू घुड़साल की ओर भागता है। तू अर्से से बादशाहों का, राजाओं और अमीरों का प्रिय रहा है, इसलिए जनसाधारण से तू अलग रहा है। अन्यथा तेरी औकात ही क्या है? निस्संदेह तू बड़ा नीच है। तू बहुत सादा सुख सुविधाओं में पला है। अभी जो तेरी कली प्रस्फुटित हुयी है, वह कबकी सूख कर काँटा हो गयी होती, यदि उसमें रोज खाद एवं पानी न डाला गया होता। तुझे नित्य पानी से सींचना पड़ता है। तू खानदानी हरामखोर है, अर्थात् परजीवी है। तुझको सदैव मेहरुन्निसा जैसी सुन्दरियाँ चाहिए, जो तुझसे इतर और रूह निकालें और तुझे अपने दिलो दिमाग में बिठाये रखें। ऐसी दिशा में वे लोगों का बहा ले जायेंगी, जहाँ उन्हें कोई कूल किनारा नहीं मिलेगा, जहाँ उन्हें कोई अपना सहारा नहीं मिलेगा। तेरे संग दोष के कारण वे हर समय सपनों में डूबे रहेंगे। तुम्हें सौभाग्य को सितारा चमकता हुआ दिखाई देगा, वे भूखे पेट रहकर मीठी–मीठी बातें बोलते रहेंगे और इस प्रकार जीवन के यथार्थ से वंचित रहेंगे।

कुकुरमुत्ता आत्म विश्लेषण करते हुए कहता है कि तू मुझको देख। मैं इस बीच कई बालिस्त बढ़कर ऊँचे चढ़ गया हूँ। मैं अपने आप पैदा हुआ हूँ। न मेरा कोई बीज होता है, न मेरा कोई कलम लगता है। मेरा जीवन स्वयंभू है। तू नकली है, मैं असली हूँ। मेरे–तेरे बीच बध्य और बधिक का संबंध है। जैसा संबंध कौल मत की तांत्रिक साधना करने वाले कौलिक और बलि के बकरे का होता है। तू रंगे हुए स्यार जैसा है। मैं घुला यानि साफ़–सुथरा, पवित्र स्वच्छ व्यक्तित्व हूँ। मैं पानी की तरह एक वास्तविक पदार्थ हूँ। तू बुलबुले की तरह मात्र उसका भ्रम है। तूने ऐश्वर्य भोग का सहारा लेकर दुनिया को बर्बाद किया है। तूने जनसाधारण को जनरवा (स्त्रैण) बनाकर उसकी रोजी–रोटी छीन ली है। मैंने एक–एक को दुगुना तिगुना लाभ पहुँचाया है। इस तरह सारे दुःसाहसिक कार्य मेरे द्वारा ही सम्पन्न हुए है। मेरी इस उपयोगिता के कारण मेरे समक्ष शेर भी गधा जैसा नजर आता है।

कुकुरमुत्ता ने अपने आकार की तुलना विश्व की विभिन्न गोलाकार वस्तुओं से करते हुए आगे कहा कि चीन में बना हुआ छाता मेरी ही नकल है। भारत के राज सिंहासन पर जो छत्र तना हुआ है, वह भी मेरी अनुकृति है। ऐ गुलाब ! तू सब जगह ध्यान से देख। हवाई जहाज से उड़ाकू सैनिकों द्वारा गिराते जाने वाले पैराशूट मुझे

ही देखकर बनाये गये हैं। मैं ही भगवान विष्णु के हाथ में विराजमान सुदर्शन चक्र हूँ, जिससे दुनिया वालों का जब तक काम पड़ता रहता है। जब यह चक्र कहीं वक्र हो जाता है तो अघटित भी घटित हो जाता है। अगर मुझको उलट कर देखोगे तो मेरी आकृति माँ यशोदा की मथानी जैसी दिखायी देगी। यही नहीं, मेरी कहानी और भी लम्बी है। मुझे सामने लाकर और फिर कुछ टेढ़ा करके देख। मैं राम के धनुष जैसा या कामदेव के धनुष से खींचे गये सुदृढ़ तीर जैसा दिखायी दूँगा। यद्यपि इसकी आकृति से कुकुरमुत्ते का साम्य नहीं बैठ पा रहा है, फिर भी अपनी बहुरूपता का दावा करता हुआ वह नए-नए संदर्भ मण्डल जुटाता जा रहा है, अपनी उत्प्रेक्षा या उद्भावना शक्ति की बानगी देने हेतु ।

आगे कुकुरमुत्ता कहता है कि– मैं बड़े काम का हूँ। एक विशेष मुद्रा में मैं कंधे पर रखे हुए, बलराम के हल जैसा दिखायी देता हूँ। मेरी आकृति प्रातःकालीन सूर्य के गोलक की तरह है, अथवा संध्याकालीन चन्द्रमण्डल जैसी है। मैं कलयुगी ढाल जैसा दिखता हूँ । मेरा आकार नीचे से नाव के तल्ले से मिलता–जुलता है और ऊपर से नौका के ऊपर पड़े हुए पाल जैसा दिखता है। मेरा गोलाकार रूप ऐसा लगता है, जैसे तराजू से पल्ला (पलड़ा) लटका हुआ है, जिसमें सारी दुनिया गल्ला (अनाज) तोलती है। मेरे कारण ही मर्दों की मूँछे तनी रहती हैं यानी मर्दानगी बनी रहती है। मेरे बल पर ही नये कल्ले अर्थात् मँछों के नये–नये रोयें निकलते रहते हैं । मेरे कारण ही ये सब लल्लू लल्ला अर्थात् ऐरे गेरे लोगों को महत्व मिला हुआ है। मेरा श्वेत वर्ण रुपये से लेकर अधन्ने (पुराने दो पैसे) अर्थात् हर सिक्के में दिखायी देता है। मेरा रूप बनारस से न्यवन्ना गाँव तक सर्वत्र चमक रहा है। हर जगह मेरा गोला बमकता रहता है। मैं जब चाहता हूँ पार लगा देता हूँ, जब चाहता हूँ मझधार में डुबो देता हूँ । मेरी आकृति पनडब्बे का नमूना बन गयी है। मैं उसमें रखे हुए गोल पान बीड़ा जैसा हूँ । अथवा श्वेत वर्ण के कारण पनडब्बे में रखे गीले चूने जैसा लगता हूँ ।

कुकुरमुत्ता आत्म परिचय देता हुआ आगे कहता है कि जैसे बेनजोइन से रस बन जाता है, अथवा जैसे सारा चिन्तन, मनन एकीकृत होकर दर्शन बन जाता है, उसी तरह का मेरा सर्वतोमुखी व्यक्तित्व है। कुकुरमुत्ता अपनी उपमा "ओम फलस" यानि गोलाकार नाभिचक्र से देता है और कहता है कि जिस तरह ब्रह्मावर्त उस पूरे ब्रह्माण्ड का केन्द्र है, उसी तरह मैं भी पूरी धरती की धुरी हूँ। संसार से मेरा वैसा ही नाता है, जैसे साड़ी और सिकुड़न उसकी सफाई, धुलाई और माड़ी के बीच होता है। इस दुनिया में चाहे वैश्विक व्यवस्था वाले नगर हों कॉस्मोपोलिटेन, चाहे मेट्रोपोलिटेन (महानगरीय) व्यवस्था वाली बस्तियाँ हो, सर्वत्र मेरी ही साँठ गाँठ चल रही है।

कुकुरमुत्ता विश्व के दो बड़े विचारकों का नाम लेता हुए कहता है कि मनोविश्लेषण सिद्धांत का प्रवर्तक फ्रायड और ऐतिहासिक रोमांस का अंग्रेजी लेखक लिटन मेरी ही देन है। फैलेसी (तर्कशास्त्र) फिलसफा (दर्शन शास्त्र) जैसी विधायें प्रत्येक आवश्यकता और उसका रफा दफा (निस्तारण) मेरे द्वारा ही संभव है। मैं सरसता से ओतप्रोत हूँ, क्योंकि मेरे तने में कही काठ का अंश नहीं है। केवल जलीयतत्व एवं फाइवर है, जो बहुत कमजोर होने के कारण 'फ्राड' (छल) जैसा प्रतीत होता है। विश्व की महत्वपूर्ण राजधानियों में जो स्तर रूस के लेनिनग्राड का है, कुछ वैसी ही दशा मेरी है। मैं प्रतिद्वन्द्वी किन्तु सही सोच समझ वाले लेखकों के बीच लण्ठ (उजड) जैसा दिखता हूँ, पर हूँ बहुत सौभाग्यशाली।

पुनः अपनी आकृति की उपमायें सँजोता हुआ, कुकुरमुत्ता कहता है कि अगर मेरे साथ दो कुकुरमुत्ता जोड़ दिये जाये तों मेरी आकृति डमरू जैसी बन जायेगी। यदि मुझे एकतरफ बगल में रख लिया जाये तो मैं वीणा जैसा दिखूँगा। कभी मैं उससे मंद (गुरु गंभीर) ध्वनि में निनादित हूँगा और कभी क्षीण ध्वनि में प्रकट होऊँगा। वह कहता है कि मेरा रूप अर्धनारीश्वर का है। मैं पुरुष भी हूँ और अबला स्त्री भी। मैं मृदंग जैसा दिखता हूँ और तबला जैसा भी। मैं दिगम्बर के तानपुरे जैसा दिखता हूँ। हसीना का प्रिय बाद्य 'सुरबहार' मुझसे बहुत मिलता जुलता हं। संगीत

से मेरा घनिष्ठ संबंध है। सभी गीतकार और गायक वादक मुझसे ही बने हैं। संस्कृत, फारसी, अरबी, यूनानी, लैटिन भाषाओं में विरचित मंत्र, गजल, गीत मुझ पर मुग्ध रहे हैं। सब मुझ पर मरते हैं, जीते हैं और मुझसे पैदा होते हैं। वायलिन मुझसे ही बजता है। तारों से बना बेंजो मेरे ही सहारे सजता है। घण्टा–घण्टी, ढोल, डफली, घडियाल, शंख, तुरही, मजीरे, करताल, कॉरनेट (पिपहरी) कलरिओनेट, ड्रम (बड़ा ढोल), फलूट, आदि वाद्य यंत्र, जिनको हसन खाँ, बुद्धू पीटर यानि हिन्दू, मुस्लिम,ईसाई सभी वर्गों, मजहबों के वादक अपनी रुचि के अनुसार बजाते हैं, वे सब मेरे दांये –बांये रहते हैं। मेरे सहारे ही संगीत की सारी ता ता धिन्ना या गतिविधि चल रही है। तू देख, सबमें मेरी ही गोल गाँठ लगी हुई है। स्पष्टतः यहाँ उपमाओं की अति व्याप्ति है।

कुकुरमुत्ता देश–विदेश की विभिन्न नृत्य–कलाओं का परिचय देता हुआ कहता है कि प्रत्येक नृत्य में मेरा जीवन व्यक्त हुआ है। मैं जैसे अपने तेज पर तुला हुआ हूँ, मुझे देखकर उसी प्रकार ये नर्तक अपना संतुलन संभालते है। भारतीय नृत्य कथक, कथकली, कमलभँवरा, बहेलिया, मोरन्, मणिपुरी, गुजराती गरबाँ, पश्चिमी नृत्य–बाल डांस, क्लियोपेट्रा, रोमांस तथा अन्य सभी अफ्रीकन, यूरोपन नृत्यों में हाथ, पैर, कमर, गर्दन और भौंहों की मटकन मेरी ही गढ़न के अनुसार प्रदर्शित की जाती है। नर्तक के हर हाव–भाव में मेरा अपना ताव और तेवर विद्यमान रहता है। मैं जहाँ पैतड़े बदल देता हूँ, वहाँ शासक परस्पर लड़ भिड़ जाते हैं। सामान्य जनों में जहाँ मियाँ–बीवी के झगड़े होते है, वहाँ मेरे नृत्य के क्या कहने? इसी तरह जब ब्याज को घटता बढ़ता देखकर महाजन एवं देनदार व्यक्ति नाचने लगते हैं तो मेरा नृत्य चरम सीमा पर पहुच जाता है।

नही मुझमे हाड़ .... अम्मा से बुआ

अपनी आकृति–प्रकृति की विशेषतायें बताता हुआ कुकुरमुत्ता कहता है कि मेरे शरीर में हड्डी, काँटा और काष्ठ नहीं है। मेरा शरीर आठों गाँठ वाला (साष्टांग) न होकर मात्र रस युक्त है। जैसी सफेदी मुझमें है, उसे पाने के लिये जहन्नम (परलोक नरक) भी रोता रहता है। दुनिया में सब ने मुझसे बराबर रस चुराया है। तो भी मैं हर क्षण रस में डूबता–उतराता रहता हूँ। बड़े–बड़े कवियों जैसे– आदिकवि बाल्मीकि तथा वेद व्यास ने मेरे ही रस में गोते लगाये हैं। भास महाकवि कालिदास ने मेरे ही भीतर से पौधे निकाले हैं। हाफिज और रवीन्द्र नाथ ठाकुर जैसे बड़े–बड़े विश्व कवि मेरे रस–सागर में पैठ तो नही पाये, पर वे किनारे खड़े–खड़े मेरे रस स्रोत को टुकुर–टुकुर (एकटक) देखते अवश्य रहे है। मेरी ही प्रेरणा से कहीं का ईट, कहीं का रोड़ा लेकर टी. एस. इलियट जैसे प्रसिद्ध अंग्रेजी कवि ने 'वेस्टलैन्ड' की रचना के बहाने भानुमती का जो कुनबा जोड़ दिया है, उसको पढ़कर इलियट पंथी बाबू लोगों ने अपने कलेजे पर हाथ रखकर यही मान लिया कि इलियट ने इसमे सारा संसार लिख मारा है। जिस तरह एक आँख दबाकर आकाश की ओर देखने पर किसी को एक तारा दिख जाये और उसे लगे कि सारा ब्रम्हाण्ड दिख गया है, वैसे ही नवीनतावादियों को "वेस्टलैण्ड" में सब कुछ दिख रहा है।

जिस प्रकार प्रोग्रेसिव (प्रगतिवादी) लेखक हाथ में कलम लेते ही अपने जोश के कारण होश गँवा बैठता है, उसका भावोच्छवास रोके नही रूकता है, उसी तरह नये साहित्य के इन पारखियों का बिलायती प्रेम विस्फोट कर गया हैं। यह सब उसी तरह हुआ, जैसे अम्मा से बुआ, अर्थात भाभी–ननद का अथवा बुआ–भतीजे का सम विषम सम्बन्ध हुआ करता है। तात्पर्य यह कि परम्परा से जिस रिश्ते को पूरक एवं विलोम माना जाता है।

मेरी सूरत.... मैं ही बड़ा

कुकुरमुत्ता अपनी सूरत से मिलती जुलती कुछ इमारतों की गिनती कराता है। पहला उल्लेख करता है वह मिस्र के पिरामिड का और उसी क्रम में नाम लेता है यूनानी गणितज्ञ यूक्लीड का, जिसने तीन सौ वर्ष ई0पू0 दूरी और दिशा की एक ज्यामितिक सिद्धान्त स्थापित किया था। कुकुरमुत्ता कहता है कि मेरे भीतर एक ज्योमेट्री है।

इसी को देखकर "यूक्लीड" ने इस सिद्धान्त की खोज की थी, इसलिए वह मेरा सुशिष्य है। देश के बड़े–बड़े मन्दिर– रामेश्वरम, मीनाक्षी, भुवनेश्वर, कोणार्क का सूर्य मन्दिर, जगन्नाथ मन्दिर– सब उसी ज्यामिति के अनुसार बने हैं। मैं ही सबका जन्मदाता हूँ।जैसे सोने से गहने बनते है, उसी तरह मुझे देख–देखकर ये सब बने हैं। दिल्ली का कुतुबमीनार, आगरा का ताजमहल, लालकिला, चुनार दुर्ग, कोलकाता का विक्टोरिया मेमोरियल, ईरान की मस्जिद जुम्मा, सेन्टपीटर्स का गिरजाघर, देश के अनेक घण्टाघर, बड़े–बड़े गुम्बद, (जैसे बीजापुर का गोल गुम्बद आदि के स्थापत्य में मेरी ही छाप पड़ी हुयी है। सम्पूर्ण विश्व के वास्तु शास्त्र में जो महत्वपूर्ण तीन मेहराबें पर्सियन, गाथिक, चर्चित हुई हैं, उन सबको मैने ही उजागर किया है। चाहे प्राचीन हो या मध्ययुगीन या नवीन, चाहे देहने से पिद्दी (बया पक्षी जैसे लघु) दिखता हो या बाज जैसा भयावह आक्रामक, सब मुझपर ही निर्भर हैं। चीन, फारस, जापान, अमरीका, रूस, इटली, इंगलिस्तान आदि देशों के ईंट–पत्थर और लकड़ी के बने मकान, जिनमें मकड़ी के बुने छत्ते जैसे जाले बने हुए हैं, सब मुझसे कहीं न कहीं प्रेरित और प्रभावित हैं। ये सारे दावे औचित्य पर आधारित न होकर बहुज्ञता–प्रदर्शन के उद्देश्य से प्रेरित प्रतीत होते है।

अब कुकुरमुत्ता सर पर धारण की जाने वाली टोपियों से अपनी समता करता हुआ कहता है कि मैं सभी के सिर को फँसा लेने वाला 'ट्रेप' हूँ। चाहे तुर्की टोपी हो, चाहे दुपहिया टोपी हो, चाहे गाँधी कैप हो और चाहे सिर पर रखी जाने वाली कोई टोपी हो जिसमें स्वर पतवार (स्ट्रा) और चटाई (मैट) लगी हुई हो। ये सब, यहाँ तक कि अग्रेंजी हैट भी मेरी ही नकल है। मैं सबके सिर पर चढ़ा हुआ विचरण करता रहता हूँ, इसलिए ऐ गुलाब, तू नहीं मैं ही बड़ा हूँ। तुझसे तो बहुत बड़ा हूँ।

यहाँ कुकुरमुत्ते का एकालाप समाप्त हो जाता है। यह उल्लेखनीय है कि यहएकल एकपक्षीय संवाद है। गुलाब से कोई उत्तर नहीं दिलाया गया है। कुकुरमुत्ता जी भरकर उसकी भर्त्सना करके आखिर शान्त हो जाता है। यहीं कविता का एक चरण पूरा हो जाता है।

दूसरे चरण में किस्सागोई हावी हो जाती है। कविता का आरम्भ इसी किस्सागोई से हुआ था– "एक थे नवाब"...... किन्तु गुलाब के दीर्घ आलाप के कारण वह कथासूत्र बहुत पीछे छूट गया। लेखक अब उसे पुनर्नियोजित करता है। वह पाठक को ले चलता है– बाग के बाहर बनी हुयी उस झोपड़पट्टी की ओर, जहाँ नवाब के नौकर–चाकर रह रहे है। जहाँ नवाबजादी (बहार) की सहेली मोना मालिन बंगालिन की बेटी गोली रह रही है। आगे के कथाक्रम में बहार और गोली एक दिन बाग में साथ–साथ घूमने जाती है। गोली वहाँ से कुकुरमुत्ता तोड़ कर लाती है और घर में उसका कलिया–कवाब माँ से बनवाकर बहार को खिलाती है। फलस्वरूप कुकुरमुत्ता का वर्चस्व पूरे राजमहल पर छा जाता है। नवाब उसके आस्वादन के लिए लालायित होकर माली को आदेश देते हैं कि सारे ताजे ताजे कुकुरमुत्ते तोड़ लिए जाएँ और गुलाबों को उखाडकर सब जगह कुकुरमुत्ता लगा दिया जाएँ। माली के इस सविनय निवेदन के बाद कि "कुकुरमुत्ता उगाये नही उगता", यह कविता इस संदेश के साथ समाप्त हो जाती है कि कुकुरमुत्ता वस्तुतः एक नैसर्गिक निधि है। प्रकारान्तर ये कवि यही स्थापित करता है कि हमारी 'नेटिव' (देशी) प्रतिभा परदेशी 'प्रोफाइल' की अपेक्षा कई गुना बेहतर है। बस पारखी नजर की आवश्यकता है।

एक दिन...... नकाती कड़े

एक दिन की घटना है, बहार ने हँसते हुए गोली से कहा– "चलो बाग घूम आएँ।" दोनों चल पड़ीं। एक दूसरे से सटी हुई धूप छाँह जैसी या बिम्ब–प्रतिबिम्ब की तरह। बहार ने गोली के गले में अपनी बाँह डाल रखी थी। साथ साथ टैरियर कुत्ता चल रहा था। सबसे पीछे एक नौकरानी थी। वहीं सामने कुछ औरतें पानी भर रही थीं। इनको आते देखकर उनकी सिट्टी–पिट्टी गुम हो गई। उसी तरह जैसे जनाने शौचस्थल (चौमासे खेत) की

ओर सहसा आने वाले मर्द को देखकर औरतें औचक उठ खड़ी होती है और हतप्रभ सी हो जाती है अथवा जिस प्रकार राह में उड़ती हुई गर्द को देखकर बेचारा शहरी बाबू अस्त व्यस्त (परेसान) सा हो जाता है। नवाबजादी के उधर से गुजर जाने के बाद एक औरत दूसरी से बोली– 'देखो वही गोली है– मोना बंगालिन की लड़की। उसकी माँ की शक्ल–सूरत भड़की (बिगड़ी) हुई बेडौल उन्मन्त भैंसें जैसी दिखती है, फिर भी वह नवाब की आँखों में प्रेम की मूर्ति जैसी बस गई है। उसका तो जैसे भाग्योदय ही हो गया है। वह रोजमहल में जाती है। उसकी आँख का पानी अर्थात् शर्म–लिहाज ही जब नही रहा, तो बेहतर है, सबमें आग ही लग जाए। भीतर–भीतर महल का माल असबाब भले ही वह ढोले, भले ही गहने जेवर–गढ़ाले और कलियाँ–कबाब पकाये, पर इज्जत गँवाकर यह सब किस काम का? यह कहती हुई झटके से एक घड़ा सिर पर रखकर, एक काँख में दबाकर अपने पैर के कड़ों अथवा हाथ के कंगनों को ठनकाती खनकाती हुई वे चल पड़ीं।

बाग में आई .... कुकुरमुत्ता–

उधर बहार बाग में पहुँची। वह चम्पे की लम्बी लाइन देखती हुई आगे बढ़ती गई। जहाँ अच्छे फूल दिखते, वहाँ रुक जाती। मौलि श्री की छाया में वहीं नीचे पड़ी हुई बेंच पर वह कुछ देर बैठी, फिर उसने बाग की क्यारियों एवं कतारों पर दृष्टि डाली। उसने देखा कि कुछ तितलियाँ इधर–उधर उड़ रही है। डालों पर चिड़ियाँ चहक रही हैं। फूलों की गन्ध से मदोन्यत भँवरे गुंजार कर रहे है। एक भँवरा मकड़ी के जाले में फँसते–फँसते बचकर निकल आया और दूर कहीं उड़ गया। बहार ने दूर दृष्टि उठाई। आकाश की ओर देखती रही। कितनी दूर तक इसका ओर–छोर फैला हुआ है। बाग के बाहर कई झोपड़े डाले गए थे। वे दूर से अधबने (हिलते डुलते) अधगड़े से दिखाई दे रहे थे। आस–पास का क्षेत्र बहुत गन्दा था। वहाँ नालियों में रुका हुआ पानी सड़ता रहता था। पूरा परिवेश जीवन की अस्तव्यस्तता का सूचक था। नालियों में कीड़े बिलबिलातें रहते थे। चारों ओर जीव–जन्तुओं के अस्थि पंजर बिखरे हुए थे। उनके गिरे पंखों की गड्डियाँ पड़ी हुई थीं। कहीं मुर्गियाँ चुग रहीं थीं। वहाँ नवाब के नौकर–चाकर अफ्रीकी आदिवासी नीग्रो जैसे लोग रह रहे थे। उनमें ये दस्तर खान–प्रबंधक खानसामें, रसोइऐं, दरबान (चोबदार), सिपाही, घोड़ो के रखवाले, मसक में पानी भरकर सफाई, धुलाई एवं तरावट करने वाले भिस्ती, घुड़सवार, खुली पालकी में पर्दानशीं बेगमों के तामझाम को ढोने वाले कुछ देसी कहार, नाई, धोबी, तेली, तंबोली, कुम्हार, फीलवान (महावत) ऊटवान, बैलगाड़ी हाँकनेवाले, हलवाहे इत्यादि। एक अच्छा खासा परिवार, जो हिन्दू–मुस्लिम साझा संस्कृति में जी रहा था, जिनका भाग्य एक ही रस्सी से बँधा हुआ था और जो गिरता ठहरता जिन्दगी की अवधि ा बिला रहा था। अर्थात् दिन काट रहा था। उस बस्ती में बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ, नवयुवक सब थे। कुछ माली भी वहाँ पेट के मारे (रोजी रोटी के ध्येय से) आकर बस गए थे। वे भी इन नौकरों के साथ रहते थे और यथाबसर रोते–हँसते रहते थे। उन्ही में थी मोना बंगालिन मालिन, जिसके गोली नाम की एक लड़की थी। वह नवाबजादी की हमजोली थी। नवाबजादी का नाम था बहार। वह सारंगी के झन्नाटेदार तारों की तरह चढ़ी–खिंची रहती थी। जब बोलती थी, तब लगता था जैसे संगीतात्मक कविता बोल रही हैं। गध संभाषण की वह अभ्यस्त न थी। यानी लोक व्यवहार से अनवगत थी।

वह बोलते–बोलते रूक जाती थी। निराला जी ने गद्य को जीवन "संग्राम की भाषा" कहा है। बहार स्वभावतः ज्यादा ही संवेदनशील थी। संघर्षो से परे थी, इसलिए वह काव्योपम अपेक्षाकृत ज्यादा थी। गोली की बंगालिन माँ बहुत शिष्ट, अत्यंत दुनियादार, बहुत सलीकेमन्द थी। वह बहार की नस–नस पहचानती थी। यानी उसकी काव्य–संवेदना की विशेषज्ञ थी। गोली की माँ उससे बड़ी परिमार्जित मीठी बोलीबानी में बोलती थी। प्रायः मँजी हुई बातें करती थी। सारंगी वाद्य जैसी बहार उसके वशीभूत थी। प्रायः उसके इशारों पर ही बजती रहती थी। मालिन माँ का स्वर, तान, ताल, लय, उच्चारण आदि इतना संगीतात्मक था कि उसकी स्वर लहरी में बहार को पूरा

सरगम सुनाई देता था। उसे सुनकर बहार की तबियत खिल जाती थी। गोली की माँ भी भीतर–भीतर सोचती रहती थी कि इस सारंगी को नियंत्रित करने का फार्मूला उसे मिल गया है। अतः अपनी बोली–बानी द्वारा उसे पकड़े हुए उसके कान ऐंठती रहती थी अर्थात् उसे पूरी तरह काबू में किए हुयी थी। माँ की इस बोली–बानी की नकल करते हुए धीरे–धीरे गोली ने भी वे अदाएँ और सारी कलायें सीख लीं, इसलिए बहार उस पर फिदा हो गई। वह बारहों महीने कभी माँ के पास, कभी गोली के पास डटी रहती थी। उसके घर सुबह–शाम दोनों वक्त जाती थीं। गोली भी बहार से इस तरह जुड़ी हुयी थी, जैसे तराजू के पलड़ों में बराबर–बराबर वजन लाने के लिए डांडी में पसंघों के रूप में कुछ कौड़ियाँ बाँधी जाती हैं अथवा जैसे स्टीम बोट के साथ डोंगी (छोटी नाव) लगी रहती है और साथ–साथ बहती जाती है। उसी तरह ये दोनों साथ–साथ रहतीं थीं और अपनी–अपनी कहती थी। दोनों के दिलों में मेल जोल का भाव था। दोनों की आखों के तारे एक दूसरे को देखकर खिल उठते थे। वे दिन भर एक दूसरे का हाथ पकड़े घूमती रहती थीं। बात–बात पर हँसती–झूमती रहतीं थीं। वे परस्पर मजाकिया चोट (व्यंग्य प्रहार) करती थीं और हँसते–हँसते लोट–पोट भी हो जाती थीं। दोनों की उम्र थी सात साल। दोनों के दिन बड़ी हँसी–खुशी के साथ बीत रहे थे। जिस तरह बहार झोपड़ी में आया करती थी, उसी तरह गोली महल में जाया करती थी। बहार ने लक्ष्य किया कि धूप अब जा रही है। सूर्य की किरणें अब वृक्षों की फुनगियों पर पड़ रही हैं। उनकी सुनहरी आभा जगमगा रही है। शरद की संध्या में सुनहली किरणों से प्रतिबिम्बित यह वृक्षावली उसे ऐसी लगी जैसे एक से एक बढ़कर बादशाह वहाँ सिर पर सोने के ताज पहने खड़े हैं। इसी बीच बाग का माली हाथ में एक गुलदस्ता लेकर आया और झुककर, बड़े अदब के साथ उसे बहार को पकड़ा दिया। बहार ने उसे सूंघकर, हँसते हँसते, वही गुलदस्ता गोली को दे दिया। दोनों वहाँ थोड़ी देर रुककर फिर तिरछे रास्ते से कुंज की ओर चल पड़ीं। वहाँ फ्रांसीसी लिली और गुलबकावली की ओर बढ़ती चली गईं। वहाँ देखा, गुलाब के बड़े–बड़े फुल खिले हुए है। उन्हें देखकर बहार का हृदय सागर अपने तटों से ऊपर उछलकर तरंगायित होने लगा। तभी उसने देखा कि टेरियर कुत्ता उस दिशा में भागता जा रहा है, जिधर "कुकुरमुत्ता" का नाम चिल्लाती हुई गोली झपट रही है।

सकपकाई...... आँख कानी

यह देखकर बहार सकपका गई। कुकुरमुत्ते के आकर्षण से भाव–विभोर होकर जैसे ही गोली उधर भागी, वैसे ही गुलाब के प्रति जो प्यार बहार के मन में उमड़ रहा था, वह विस्मृत हो गया। वह भी गोली से आँखें चार करती हुई उसे देखने लगी। उसने देखा कि गोली वहाँ उगे हुए कुकुरमुत्तों पर उसी तरह टूट पड़ी है, जैसे बिल्ली अपने शिकार पर टूटती है। वह कुकुरमुत्ते तोड़ती जाती थी और स्वयं उन पर न्योछावर हुई जा रही थी। वहाँ जितने कुकुरमुत्ते उगे हुए थे, गोली ने देखते–देखते सबको तोड़कर अपने आँचल मे भर लिये, फिर वह बड़ी आत्मीयता के साथ पीछे की ओर मुड़ी और मुस्कुराती हुई बहार से बोली कि तुम तबीयत भर कर गुलाब देखो, मै तो इसका कवाब खाऊँगी। बहार ने जो तारीफ गोली से सुनी तो उसके मुँह में पानी आ गया। उसने पूछा कि इसका कबाब सचमुच बहुत स्वादिष्ट होता है? गोली ने जवाब दिया कि दुनिया भर की सारी सब्जियाँ इसके समक्ष नगण्य हैं। इसकी जैसी खुशबू, वैसी ही स्वाद। जो खाता है, उसे स्वर्ग की याद आ जाती है। इसका फलिया और तेल में भुना कबाब सब्जी भाजी में उसी तरह विशिष्ट है जैसे जन साधारण में नवाब हुआ करता है। शाकभाजी से नवाब की तुलना सुनकर संग–संग चल रही कानी नौकरानी ने आँखें तरेरकर डाँटते हुए गोली से कहा– ऐरी, बंगालिन, मालिन की छोकरी, ऐसा नहीं कहा करते। "लेकिन इस बीच लार के कुछ घँट बहार के पेट में जा चुके थे, अतः उसने पलट कर नौकरानी को डाटा– "खबरदार! इसे कुछ कहा तो बुरा होगा। मैं अभी इसके घर जाऊँगी और कुकुरमुत्ते का कबाब खाकर रहूँगी। उसने गोली से पूछा, क्या इसका कबाब गुलाब जैसी खुशबू देता है? गोली ने मुँह बनाते हुए, बांये घँमकर "उह" की एक छोटी आवाज निकाली और कहाँ की चाहे बकरा हो या दुंबा (मेढा) चाहे मुर्गी हो या अन्य कोई पंक्षी। इसके सामने ये सब छूः मंतर यानी व्यर्थ हो जाते हैं। इसकी खुशबू सर्वोपरि

है। गुलाब इसके सामने ठहर ही नही सकता। सभी पदार्थ इसके समक्ष नगण्य हैं। गोली बड़ी रूचि के साथ घर की ओर बढ़ी। पीछे–पीछे बहार थी। उसके पीछे टैरियर कुत्ता, उसके पीछे नौकरानी, जो डांट खाकर अपनी आँख पोछती चली आ रही थी।

चली गोली..... सेंक लेना

गोली 'डिक्टेटर' की तरह आगे–आगे जा रहा था। बहार भुखमरे 'फालोवर' (कामरेड) की तरह उसके पीछे चली जा रही थी। उसके पीछे चलता, दुम हिलाता टैरियर कुत्ता, आधुनिक पोयट (कवि) जैसा शांत यानी दयनीय दिख रहा था। सबसे पीछे चल रही थी नौकरानी, आत्मरक्षा के उपाय सोच रही थी, उसी तरह जैसे वर्तमान अर्थव्यवस्था में काबिज पूँजीपति अपनी बचत की सोचता रहता है।

जल्दी–जल्दी चलकर गोली झोपड़ी में पहुँची। जोर से 'माँ' कहकर आवाज लगाई। माँ ने दरवाजा खोलकर इन सबको ध्यान से देखा–परखा। तभी गोली ने कुकुरमुत्ते निकालकर डलिया में रखे, जिसे देखकर माँ की तबियत ऐसी खिल गई जैसे कोई बहुमूल्य निधि मिल गई हो। तभी गोली ने कहा– 'माँ', कलिया–कबाब जल्दी से बना दें, खूब बढ़िया मसालेदार बनाना। बहार भी खायेगी। कुछ पतली चपातियाँ भी सेंक लेना।

जला ज्यों ही चूल्हा.... बिदा किया

जैसे ही उधर माँ का चूल्हा जला, ये दोनों बाँदी से नजर बचाकर दुल्हन–दूल्हा का खेल खेलने लगीं। आज गोली का एक मात्र साथी टैरियर ही बराती था। दुल्हन बहार से गोली की शादी हो गई। दोनों प्यार से बतयाने लगी। इस तरह कुछ समय और बीता। उधर खाना भी तैयार हो गया। उन्हे खिलाते हुए गोली की माँ की आँखों से ममता एवं आतिथ्य की वृष्टि होती रही। बड़े आदर से उसने थाली सजायी, जिसे खाकर बहार ने घोषित किया कि ऐसा खाना आज तक नहीं खाया। दोनो बड़े शौक से, चटकारी ले–लेकर काफी देर तक कुकुरमुत्ते का कलिया कबाब खाती रहीं। गोली की माँ ने नौकरानी को भी थोड़ा सा कलिया कबाब दिया। इस प्रकार उसने बहार को खिलाकर, हाथ–मुँह धुलाकर और फिर पान देकर बिदा कर दिया।

कुकुरमुत्ते की कहानी... नहीं उगता

इस घटना को बहार के मुँह से नवाब ने सुना तो उनका मन भी ललचा उठा। इसकी पुष्टि करने के लिए उन्होंने नौकरानी से पूछताछ की। जब पूरा विश्वास हो गया तो उन्होने माली को बुलवाया और हुक्म दिया कि बाग से ताजा कुकुरमुत्ते तोड़ लो। माली ने बड़ी विनम्रता से कहा कि अब वहाँ कुकुरमुत्ते नहीं हैं, सिर्फ गुलाब बचे हैं। नवाब क्रोध से काँपने लगे और बोले– "जहाँ–जहाँ गुलाब थे, वहाँ चलकर कुकुरमुत्ता लगा।" माली बोला, यदि मुझसे अपराध हुआ हो तो क्षमा कर दिया जाय, किन्तु सच यह है कि कुकुरमुत्ता उगाने से नही उगता। वह स्वयं पैदा होता है।

कुकुरमुत्ते की इस असाधारणता एवं दिव्यता के गुणगान से साथ यह कविता समाप्त हो जाती है। सिद्ध है कि भाव, भाषा एवं विचारधारा– सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न–

3. कुकुरमुत्ता का वैशि टय बताइए। (पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए)
4. कुकुरमुत्ता और गुलाब के संवादों को लिखिए। (पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए)

3.8 इकाई सारांश : स्मरण योग्य बातें

महाकवि निराला द्वारा रचित 'कुकुरमुत्त' कविता का विशेष महत्व है। इसमें कुकुरमुत्ता तथा गुलाब का संवाद है। ये दोनों प्रतीक पात्र हैं। कुकुरमुत्ता सर्वहारा वर्ग का प्रतीक है और गुलाब अभिजात वर्ग का। कुकुरमुत्ता गरीब और तिरस्कृत मानवता की आवाज है और कुकुरमुत्ता संसार के उपेक्षितों का प्रतीक है। निराला की सामान्य साधारण के प्रति जिस अगाध ममता तथा विश्वास का प्रवाह सामने आता है, वही तो कुकुरमुत्ता की आत्मा है। इसकी डाँट–फटकार और चोट–चपेट सामान्यजनों के जागरण का कोलाहल सा है। कुकुरमुत्ता के रूप में निराला का समाजवादी दृष्टिकोण बहुत ही मार्मिकता और निर्भिकता से उभरकर सामने आया है।

3.9 अपनी प्रगति जाँचिए

1. कुकुरमुत्ता कविता की विवेचना कीजिए।
2. कुकुरमुत्ता सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, समझाइए।
3. कुकुरमुत्ता के वस्तु–शिल्प पर प्रकाश डालिए।

3.10 नियत कार्य / गतिविधियाँ

किसी कवि को पूरी तरह हृदयगम करने के लिए आवश्यक है कि उसकी रचनाओं को कई–कई बार पढ़ें और फिर समीक्षा ग्रन्थों अथवा पाठ्य सामग्री के सहारे उनके संदर्भों, गूढ़ार्थों और मन्तव्यों को समझने का प्रयास करें।

3.11 चर्चा तथा स्प टीकरण के बिन्दु

इकाई को पढ़ने के बाद कुछ बिन्दुओं पर चर्चा तथा स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं। उन बिन्दुओं को नीचे अंकित करें।

3.11.1 चर्चा के लिए बिन्दु

3.11.2 स्पष्टीकरण के लिए बिन्दु

3.12 संदर्भ अतिरिक्त पठन सामग्री

1. कवि निराला – आचार्य नंददुलारे वाजपेयी।
2. निराला – डॉ. राम विलास शर्मा
3. निराला की आत्मकथा – डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

4. निराला काव्य का अध्ययन – डॉ. भगीरथ मिश्र

5. राम की शक्तिपूजा कुकुरमुत्ता, भाष्य–समीक्षा– डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

6. निराला अभिनंदन ग्रंथ – हेम बरुआ

7. निराला के काव्य बिम्ब और प्रतीक– डॉ. वीरव्रत शर्मा

8. निराला की काव्यभाषा – डॉ. शिवशंकर सिंह

3.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 3.3
2. देखिए 3.4
3. देखिए 3.6
4. देखिए 3.7

MPBOU

SELF LEARNING MATERIAL

म.प्र. भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय, भोपाल
राजा भोज मार्ग, कोलार रोड, भोपाल